स्वामी ... पुस्तकालय
परिग्रहण क्रमांक 833
ओ३म् आनन्द महिला ...

नमः सर्वात्मने श्री जगदीश्वराय

श्रीमत्

दयानन्द दिग् विजयार्क

प्रथमखण्ड

यह सद्ग्रन्थ ज़िला फ़र्रुख़ाबाद के पाठशालाधीश और
आर्य समाज मीमांसक सभा के संस्थापक व सभासद

पंडित गोपाल शास्त्री शर्म्मा

ने

सकलार्यावर्त निवासियों के प्रमोद और सशंकितों

के

भ्रम निवारणार्थ

बनाकर

आगरा सत्यप्रकाश यंत्रालय में पं॰ ज्वालाप्रसाद भार्गव के प्रबंध से

मुद्रित कराया

प्रथमवार ५०० जिल्द

संवत् १९३८ विक्रमी

सन् १८८१ ई॰

मौल्य प्रति पुस्तक ॥)
महसूल)॥

सुश्लोक

दीप्याति निर्म्मल मयूखचयैर्नितान्त माल्हादयन् सुमनसां हृदयाम्बुजानि
ध्वान्तं धुनोतु गुरु दिग्विजयाभिधोर्को गोपालराव हरि वर्णित वर्णवृत्तः १

ॐ

तत्सत्

सर्वात्मा सच्चिदानंदो सर्वेशो सर्व कृच्छुभः ॥
भूयान्नमां सहायोनो दयालुःसर्व शक्तिमान् ॥ १॥

भूमिका

विदित हो कि श्री मत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रीमान्स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी महाराज को इस देश में सत्य धर्मोपदेश करते १४ चतुर्दश वर्ष हो चुके परन्तु बहुत लोग अब तक गाढ़ अंधकार ही में पड़े सड़ रहे हैं ऐसों का भ्रम दूर होने के अर्थ यह सद्ग्रन्थ बनाया गया है निश्चय है कि जो लोग परमात्मा के दिये आंख कान और बुद्धि को अणुमात्र काम में लावेंगे वे अवश्य जान जावेंगे कि वास्तव्य में श्रीमान्स्वामीजी महाराज का सारा उद्योग और परिश्रम केवल हमी लोगों के हितार्थ है और जब उनके उपदेशों को मान अपनी स्थिति सुधारेंगे तो तुरंत अपरमित सुख लहेंगे जभी इस देश की दुर्दशा भी मिटेगी आशा है कि सभ्यगण इस पुस्तक को अपनी कृपा दृष्टि से अवलोकन कर मुझ अल्पमति को उपकृत करेंगे ॥ विद्वत्सु किम्बहुनेत्यलम्

मुनिरामांक भूवर्षे माघे मासे सिते दले ॥
पंचम्यां च गुरौ सिद्धे ग्रन्थारंभः कृतोमया ॥
३।२।८१

सूचना

विदित हो कि इस दिग्बिजयार्कीय प्रथमांक में सब ६ छः मयूख (अध्याय) हैं उन के नाम नीचे लिखे गये हैं उन का अर्थ भी वही है जो नाम से सिद्ध होता है ॥

१	श्रीपरमेश्वरप्रार्थनोक्ति विवर्णनम्	४	जैन मत मिथ्यात्व प्रदर्शनम्
२	जीवन चरितम्	५	यावनी मत खंडनम्
३	पौराण मत खंडनम्	६	किरानी मत खंडनम्

विज्ञापन

विदित हो कि यह ग्रन्थ संस्कृत में होना अवश्य था परन्तु प्रथम तो उस के जानने वाले ही कम और जो हैं वे बहुधा निन्दक इस कारण इस का भाषा ही में बनाना उचित जाना गया और भाषा भी स्पष्ट वही रक्खी है जो इन दिनों श्लाघ्य और उपयोगी जान सर्कार ने प्रचारित की है ॥

अथ

श्रीमद्दयानन्ददिग्विजयार्कीय

प्रथमांकः

प्रार्थना

ॐ शंनो मित्रः शंवरुणः शंनो भवत्वर्य्यमा, शंनइन्द्रो बृहस्पतिः शंनो विष्णुरुरुक्रमः– शंनो अस्तु द्विपदे शंचतुष्पदे १

ॐ नमो ब्रह्मणे नमो अस्त्वग्नये नमः पृथिव्यै नमः ओषधीभ्यः॥ नमो वाचे नमो वाचस्पतये नमो विष्णवे महते करोमि ॥ भद्रं नो अपि वातय मनः ॐ शांतिः शांतिः शांतिः॥

श्रीजगदीश्वरोक्तिः

ॐ संगच्छध्वं संवदध्वं संवो मनांसि जानताम् ॥ देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते ॥१॥ समानो मंत्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषां ॥ समानं मंत्रमभिमंत्रयेवः समानेन वो हविषा जुहोमि ॥२॥ समानीव आकूतिः समाना हृदयानिवः समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ॥३॥ ऋ० अ० ८ अ० ८ व० ४९ मंत्राः २, ३, ४

ईश्वर की प्रार्थना और उक्ति
का
भाषार्थ

आर्य गण वेदोक्त मंगला चरणादिक का आशय यह है कि सर्वा न्तर्यामी श्रीजगदीश्वर हमसब आर्य जनोंको सदैव मङ्गलोन्मुख रक्खे ॥ वह सर्वशक्तिमान सर्वाधार सर्वेश्वर सर्वात्मा सच्चिदानन्द स्वरूप हमारा सच्चा माता पिता अवश्य अपने दयालु स्वभाव से हमारा वैसाही लालन पालन भरण पोषण और शुभ चिंतन तथा हम को और हमारे पशुओं को प्रति पद शोभन करेगा जैसा कि उस सर्वजनक का धर्म है - हम उस करुणा सागर का जितना कुछ धन्य बाद और स्तुति करें वह अतीव स्वल्प और अति तुच्छ है तथापि निश्चय है कि वह अपने पुत्रों का बालभाषण सुन प्रसन्न ही होगा हमारा धर्म है - कि प्रति क्षण प्रति समय उसकी तरफ़ ध्यान रख उस को असंख्य अभिवादन करें और (सङ्गच्छध्व मित्यादि) मंत्र त्रयोक्त उसकी आज्ञा को बड़े आदर और सत्कार के साथ मानें॥उक्त मंत्रों का ठीक २ सार यह है - कि प्रत्येक मनुष्य और मनुष्य समाज आपसमें एक मन एक चित्त एक अंतः करण हो बर्तें कभी कोई किसी से किसी प्रकार का छल कपट और द्वेष्य भाव न करे और उसी मार्ग पर चले जो कि उसने हम को बताया और हमारे लिये बना रक्खा है ॥

अब देखना चाहिये कि अपनी क्या अवस्था अर्थात् हम उस मार्ग पर चलते हैं वा नहीं तो देश की सीमा तक यही सूझ पड़ेगा कि कहीं कोई अपने उस शुद्ध और परम पवित्र मार्ग पर नहीं चलता कहो कैसे-

कल्याण होय और मन चाहा सुख मिले — देखो जैसे कोई कलकत्ते जाने वाला अपनी भूल वा किसी की बहकावट से पश्चिम की ओर चलकर कभी कलकत्ता नहीं पहुंच सक्ता बल्कि प्रतिपद उससे वह दूर होता जाता है उसी प्रकार यहां भी समझो और साथ ही उसके यह भी जानलो कि जिस रीति वह कलकत्ता पहुंचेगा उसी प्रकार हम भी चाहते सुख को अवश्य पासकेंगे अन्यथा कदापि नहीं हे प्रिय भारत निवासी आप लोग थोड़ी दृष्टि देकर देखें कि जब हमारे पुरुषा सत्य सनातन वैदिक धर्म पर चलते थे तब हमारा कैसा मान गौरव और प्रतिष्ठा थी सारे भूगोल में हमारा दर्प्प और आतंक छा रहा था, और हमारी विद्या, बुद्धि, चतुराई, साहस और पौरुष सराहा जाता था भला कोई कहे तो सही कि उन दिनों वह कौन ऐसा देश था जहां के लोग हमारा सन्मान नहीं करते थे वा हमारे राजगणों का बल, तेज, प्रभाव, पराक्रम, बीर्य, शौर्य और प्रताप को याद कर नहीं थर्राते थे वा इन को बड़ा और अपना महाराजाधिराज नहीं जानते थे वह कौन बड़े से बड़ा देश ऐसा था जहां के निवासी हमको धनाढ्य और अपने तई निर्धनी नहीं जानते थे वा वे लोग बिना यहां के धन के धनी होगये वा अब होते हैं वह कौन देश है जहां वालों को इस देश की सहायता अपेक्षित नथी और बिना यहां की विद्या के कोई विद्वान, बुद्धिमान वा चतुर होगये, वह कौन देश है जहां यहां के शास्त्र, शस्त्रास्त्र संगीत चिकित्सा शिल्प पदार्थ विद्या और सुख सौभाग्य आदि की प्रशंसा नहीं होती थी वा और ठौर के निवासी बिना हमारे सिखाये पढ़ाये उन कामों में निपुण कहाए, वह कौन देश है जहां हमारा व्यापार वाणिज्य और व्यवहार न था वह कौन मुल्क है जहां यहां की रीति प्रीति ऐक्य और न्याय नीति सुप्रसिद्ध न थी सारांश सब देश

निवासी गुण विषयों में हमारे ऋणी हैं पर हम किसी के नहीं कहांतक लिखें खूब जानलो कि संसारभर में कोई काम, गुण, और विद्या ऐसी नथी जिस को हम नहीं जानतेथे वा उस के लिये हम और देश निवासियों के सदृश ललचाते थे बहुतेरी बातें तो अबभी ऐसी हैं कि उनके लिये विदेशीय जन सिर धर २ पटकते पर नहीं पाते और वे सब यहां के लोगों के करतल थीं इन्हीं कारणों से हमारा नाम आर्य (सर्वश्रेष्ठ) और हमारे देश का नाम आर्यावर्त पड़ा शोक कि उन महा पुरुषों की संतान अब हिन्दू अर्थात् गुलाम, काफ़र, बेईमान, बेवकूफ़, गधे, पागल, अहमक़, झूठे और उल्लू कहावें पर नेक न शर्मावें और जो उन को चितावें वे नास्तिक और ईसाई ठहरें (१) हे दीन वत्सल तू हमारी पुकार सुन और हमारे भाई समस्त भारत वासियों पर अनुकंपा करके सुदृष्टि दे हम अपने सत्य प्रेम से तुझ को इसी लिये शतशः बरंच सहस्रशः प्रणाम करते और बारंबार हाथ जोड़ कर प्रार्थना भी करते हैं हे सत्य प्रिय भगवन् हम तोहि छोड़ किस की शरण पकड़ें कौन ऐसा है जो हम को इस महा संकष्ट से उबारे जब हम अपनी पूर्व और आधुनिक स्थिति को देखते तो हमारा सच मुच हृदय विदीर्ण होता है हे प्रणत पाल तूही ऐसा है जो राई से पहाड़ और सूखे से हरा भरा कर दिखाता है हे भक्त वत्सल बहुत हो चुकी अब मत उपेक्षा कर हे करुणा निधान हे अधमोद्धारण हे दीन बंधो तेरी ही अनुकूलता से हमारी डूबती नाव इस संकष्ट सागर को तर सकती है हे सर्वशक्तिमान् अब शीघ्र अपने प्यारे भारत की ओर अपनी प्रेमसनी दृष्टि से निहार जिससे फिर उस का सिर ऊपर को उठे प्यारे भारत वासियो अपने देश का सब ऊंच नीच आप के ध्यान में आही चुका होगा अब

नोट (१) मूर्ख और पद भक्त तो हम कहते नहीं परंतु कोई सत्य विद्वान वेदानुकूल उपदेश करने वालों को नास्तिक और ईसाई नहीं कह सक

कर्त्तव्य सोचना चाहिये वह यह है कि जितने कुछ अपने असत् कर्म हों वे सब धीरे २ छोड़ छाड़ सत् कर्मों में अपना तन मन धन लगाना चाहिये परंतु संसार की रीति है कि अपनी बुराई आप को नहीं सूझती वह औरों पर छोड़ना चाहिये अर्थात् जब कोई उन को दिखावे तब अवश्य उन पर अपना ध्यान धर कर सोचे कि वास्तव्य में यह कहना उन का ठीक है वा नहीं जो विशेषों की दृष्टि से ठीक ठहर जाय तो झटपट उन के मिटाने में सन्नद्ध हो जावे परंतु यह बड़ा भारी काम है किसी एक के बूते का रोग नहीं प्रथम प्रजा का सुधार राजा के आधीन रहा यदि वह अन्य मतीय होने के कारण हस्तक्षेप न करे तो उस का दूसरा उपाय यह है कि हम लोगों को ख़ुद आप ही अपने नगर में एक सत्सभा बना लेनी चाहिये और उस में ऐसे सभासद् स्थापित किये जावें कि जो अपने मन के हों और उन को किसी प्रकार पक्षपात न छूता हो तथा उन की प्रकृति निर्मल और पवित्र हो सिवाय इसके वे विद्वान् भी होवें उन में से एक जो सभा की समझ से विशेषज्ञ हो वह उसका सभापति किया जाय ऐसी जब सभा अपने यहां बन जाय तब उस नगर के सब आदमी उसकी आज्ञा में चलें और सार्वकाल उसके सहायक रहें और उस के नियमों पर चलें इस रीति की बनी हुई सभाओं को भी चाहिये कि वे आपस में मित्रता रख परस्पर संशोधन का परामर्श करती रहें और जो अपने देश भर में निपुण धर्मज्ञ और सच्चा देशहितैषी विद्वान् कहीं होय उस को अपना अधिष्ठाता बनावें और उस के अनुकूल चलें और उस के देशोपकारक कामों की तन मन धन से सहायता भी करें समय के राजा की भक्ति भी अच्छे प्रकार दर्साई जावे क्योंकि सुखी वही प्रजा रहती है जिस को राजभक्ति करनी आती है

वेद ईश्वर और परलोक को मानने वालों का निन्दक नास्तिक और ईसा के उपदेशों को मानने वाला ईसाई कहलाता है बस विचारिये कि उपरोक्त लक्षण किस पर घटित होते हैं और

राजा और प्रजा का संबंध पिता पुत्र का सा है इसीलिये राजा अपनी प्रजा को पुत्रवत् पाले और सदैव उस के सब दुःख द्वन्द्व मिटाता रहै यही उस का परम धर्म है जहां राजा और समाज दोनों होंय उस नगर को मानों दोनों नेत्र हैं न होंय वह अंधा एक होय वह काणा है प्रियबान्धव जो समाजों की रीति प्रति नगर होने की यहां जताई गई है उस को कोई नई न जाने यह अपने सनातन वैदिक धर्मवालों की प्रणाली सदा से ही चली आई है सत्य धर्म के छुटने से आज नई सी दीख पड़ती है हमारे पूर्व कालिक राजाओं का मत जुदा न था वे लोग इन समाजों की व्यवस्था ठीक २ रखते थे जो समाजीय नियमों के विपरीत पांव धरता था तुरंत यथोचित राजदंड पाता था राजा प्रजा की धर्मैक्यता न होने से किसी प्रकार हानि होगी आशा है कि चतुर समाज उस को न होने देंगे परंतु होना समाजों का सब ठौर अत्यावश्यक है अन्यथा देश की बड़ी हानि हो रहेगी क्योंकि ऐक्यता जो देशोन्नति की जड़ है वह बिना समाज किसी प्रकार नहीं ठहर सकती प्रत्यक्ष देखलो कि बिना एका हम कौड़ी के तीन २ हैं धन्य परमेश्वर जिसने इस भारी आपत्ति काल में हमारी सुधली अर्थात् श्रीमान् स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी महाराज से महात्मा को वेदों के उद्धारार्थ निर्माण किया हम इनको जितना धन्यवाद दें वह थोड़ा है आगे इन के जीवन चरित्रादिक का विस्तार लिखा है उसको अवलोकन कर कौन ऐसा पाषाण हृदय होगा जिस को इन के अपूर्व परिश्रमों को देख करुणा न उपजेगी वा उस का इन पर विश्वास न होगा ॥

इति श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य्य स्वामी दयानंद सरस्वती दिग्विजयार्कीय प्रथमांके परमेश्वर प्रार्थनोक्ति विवर्णनं नाम प्रथमो मयूखः १

श्रीस्वामीजीमहाराज
का
जीवन चरित

विदित हो कि श्री स्वामीजी महाराज औदीच्य नामी गुजराती ब्राह्मण के श्रेष्ठ कुलमें विक्रमी संवत् १८८१ में पैदा हुए मुल्क काठियावाड़ में राजा मोरवी के राज्य में इन की जन्म भूमि विख्यात है ५ वें वर्ष इन का विद्याभ्यास और आठवें वर्ष उपनयन (जनेऊ) हुआ उस समय तक ये बहुत कुछ पढ़ चुके थे जनेऊ हुए पीछे वेदारंभ किया पिता इन के शैव थे उन्होंने उसी धर्म पर बहुत दिन तक इनको चलाया और भी विशेष चलाना चाहते थे परन्तु जब ये कुछ समझ में आये तो इन को मूर्ति पूजन में शंका होने लगी कि पाषाणादिक मूर्तियां जब कि अपने को चोर चूहा कुत्ता बिल्ली आदि की उपाधि से नहीं बचा सकतीं तो क्यों कर सेवकों का भला कर सकती हैं ऐसे बुद्धिहीन काम में अपना अमोल्य समय खोना वृथा है ऐसा समझ उस से बच अपना चित्त सार्वकाल पढ़ने ही में लगाया और दिनों दिन विद्या वृद्धि करते गये ॥ जिस समय इन की अवस्था १६ वर्ष की थी इन से छोटी बहिन और उस से छोटे दो इन के भाई थे एक दिन अकस्मात् उक्त बहिन और थोड़े दिन पीछे इन के चचा जो कि इन से अत्यन्त ही प्रीति रखते थे कालवश हुये उसी दम उनके वियोग और दुःख से इन के हृदय पर एक साथ ऐसा सत्य वैराग्य छाया कि जिस से सांसारिक समस्त विषयों से इन का चित्त बिलकुल हट गया अहर्निश उसी चिंता में डूबे रहते थे कि किस

रीति से बार बार के जन्म मरणादिक क्लेशों से बचूं इसी हेतु आठों याम विद्वान् और महात्माओं के समागम में रहने लगे बहुत कुछ चाहते रहे कि मा बाप से आज्ञा ले काशी चले जावें और अपना अभीष्ट सिद्ध करें परन्तु उनके दृढ़ बंधन से छुटकारा न हुआ, उनको भी इनका हृद्गत हाल इधर उधर से मालूम हुआ और वे इनके पावों में बेड़ी डालने अर्थात् विवाह कर देने को उद्यत हुए अवस्था भी इन की २२ वर्ष की हो चुकी थी देखा कि अब बिवाह से बचना कठिन है दोनों घर बड़ी धूम धाम से विवाह की तैय्यारियां हो रही हैं, झट चौकन्ने हो संबत् १९०३ में एक दिन सायंकाल को चुप चाप घर से लंबे हुये रात्रिभर में टेढ़ी बेंढी राह पकड़ पकड़ा कर ३० मील की दूरी पर पहुंच गये और उसी प्रकार दिन रात चाल बढ़ाते ही चले गये ॥ जहां जिस के मुख किसी बड़े विद्वान् और सत्पुरुष को सुनते वहीं पहुंचते और ठहरते थे, मार्ग में भिखारी ब्राह्मण व साधुमंडली ने इन का धन और अलंकारादिक सद्गति होने का लोभ दे ठग लिया जो कुछ कपड़ा व बर्तन बच रहा वह स्याही गांव के ब्रह्मचारी ने इन को अपना चेला बना कर ले लिया और इन को एक गेरुआ कुर्त्ता और हाथ में तूबा दे छोड़ दिया वहां से जब कि ये सिद्धपुर को "जहां कतकी का मेला जुड़ रहा था" चले रास्ते में एक इन का पहिचानता बैरागी उधर से आता मिला वह इन का यह रूप देख पहले तो एक दम से विस्मित हुआ फिर इन की कार रवाई को भला बुरा कह कर चला गया ॥ जिस दिन ये घर से निकले थोड़े ही देर बाद बहुत से सवार पियादे चारों तरफ़ ढूंढते ढांढ़ते रहे उस वक़्त किसी को कुछ पता न लगा परन्तु थोड़े दिन बाद

कुल हाल उक्त बैरागी ने इन के पिता जी से जा कहा उसी वक़्त वे बहुत से सिपाही व सवार संग ले मेले में पहुंचे और दिन रात ढूंढते ढांढते एक दिन प्रातःकाल अचानक शिवालय पर जहां और भी बहुत से ब्रह्मचारी और सन्यासी ठहरे थे इन को जा पकड़ा और देखते ही लाल ताते हो जो जी में आया वह इन से कहा और इन का गेरुआ कुर्त्ता फाड़ तूंबा फेंक इन को अपने सिपाहियों की सख़्त हवालात में कर दिया और कह दिया कि इस मातृघाती से एक मिनट को भी ग़ाफ़िल न रहना ॥ हरचंद इनने पिता जी को बहुत कुछ शान्त कर करा कर विश्वास दिखाया पर उन की नज़र बिलकुल नहीं बदली और वहीं रात्रि होगई, जिस वक़्त इनने पहरे वाले को गाफ़िल देखा उसी वक़्त परमेश्वर को याद कर फिर तूंबा ले चल दिये बहुत दूर पहुंच एक बड़ी घनी बरी देख उस के लता पत्रों में दम साध छुप रहे इधर थोड़े ही देर बाद सवार सिपाहियों ने भी पीछा किया और सर्वत्र ढूंढ़ते ढूंढते हैरान परेशान इस बरी के भी नीचे आये और वहां के बाग़ जंगल मकान मंदिर आदि को भी बख़ूबी ढूंढा पर इन को न देख पाया वैसे ही दूसरी तरफ़ चले गये ॥ वह दिन है और आज का निश्चय है कि उन बेचारे वृद्ध माता पिता को इन का ठीक २ पता अभी तक नहीं लगा होगा सायंकाल को जे उस बरी से उतर वैसे ही भूखे प्यासे गिरते पड़ते अप्रसिद्ध मार्ग पकड़ बहुत दूर दराज़ निकल गये, कई वर्षों तक प्रथम दक्षिण और गुजराती देशों में फिर पश्चिम उत्तर और मध्य आदि देशों में घूमते घामते रहे अर्थात् भरत खंड के चारों दिशाओं में जहां जिस मेला सभा नगर तीर्थक्षेत्र विकट जंगल पहाड़ों और नर्वदा आदि नदियों के किनारे किसी

भारी विद्वान्, ब्रह्मचारी, सन्यासी, योगी, वा तपस्वी को ये सुनते थे उसी दम वहां पहुंच कर उस से मिलते थे॥ जिसको आप अपने से बढ़कर जिस विद्या और गुण में देखते थे वही गुण उस से बखूबी दिल लगा कर अर्थात् उसके हृदय में पैठ बखूबी सीख पढ़ लेते थे॥ जब कि इनने ब्रह्मचर्य आश्रम में देखा कि पाक क्रियादिक कामों में बहुत समय खराब जाता है तब इच्छा हुई कि सन्यास लेवें जिस से संपूर्ण काल विद्याभ्यास ही को मिले, दूसरा हेतु यह भी था कि सन्यासी होने पर मा बाप के भी काम के न रहेंगे नाम भी बदल जावेगा, परन्तु गुरू भी अब वैसे ही मिलें जैसे कि ज्ञानवान् को चाहिये ऐसी मार्ग प्रतीक्षा में थे इतने में सुना कि चांडूला कल्याणी के पास किसी जंगल में कोई बड़े भारी विद्वान् पूर्णानंद सरस्वती नाम के महाराष्ट्र सन्यासी कई एक अच्छे २ ब्रह्मचारी साथ ले आ उतरे हैं वे शंकराचार्य के शृंगीमठ से आये हैं और द्वारका को जाते हैं आप भी अपने परम मित्र एक विद्वान् महाराष्ट्र ब्रह्मचारी को साथ ले वहां पहुंचे, देखा कि स्वामीजी महाराज ब्रह्म विद्या में बहुत ही निपुण हैं तब उनसे इनने वह समस्त विद्या उन के साथ रह कर पढ़ी और सन्यास भी लिया परन्तु बड़ी सिफ़ारश और मिन्नत व ख़ुशामद से यह सन्यास हाथ चढ़ा क्योंकि इन की अवस्था चढ़ती हुई थी किसी प्रकार-काल चतुर्थाश्रम का न था इस लिये स्वामी पूर्णानंद सरस्वती जी महाराज इन को चतुर्थाश्रम देने में बहुत दिन तक विचारवान् रहे गुरूजी महाराज द्वारका की ओर पधारे पीछे ये फिर उक्त रीति से जहांतहां विचरते रहे इस यात्रा में बहुत अच्छे २ महात्मा लोग इनको मिले उनमें से व्याकरण में चीतोड़ के कृष्णशास्त्री और वेदान्तशास्त्र में

चेतन्नमठ के सन्यासी ब्रह्मानंदजी और बड़ुतसी पदार्थ विद्याओं में पा रंगत परमहंस परमानंद व सच्चिदानंदजी और योग विद्या में स्वामी योगानंदजी और योगाभ्यास में शिवानंद गिरि व ज्वालानंद पुरी और आबू पहाड़ की भवानी गिरिनामक चोटी पर के योगि राजों और हिमालय में केदार घाट के पहाड़ी परके गंगा गिरिनाम साधू की स्वामीजी महाराजने अत्यन्त ही प्रशंसा की है और इन को बड़ु विध धन्यवाद भी दिया है और लिखा है कि मैं इन सत्पुरुषों के सहयोग से अतीव कृत कृत्य ड़ुआ हूं समस्त शास्त्र और योग साधन की सब बारीकियां मैंने इन्हीं लोगों से पाई,

संवत् १९११ में पहले ही पहल हरिद्वार के कुंभ के मेले की धूमधाम सुन वहां पड़ुंचे वहां भी बड़े २ योगीश्वरों से मिलाप और वार्तालाप ड़ुआ फिर बड़ुत काल तक चंडी और हृषीकेश आदि हिमालय के स्थानों में योगाभ्यास और तपस्या करते रहे और अगस्ति मुनि की समाधि शिवपुरी पहाड़ गुप्तकाशी गोरीकुंड भीमगुफ़ा बद्रीनारायण त्रिगियन्नारायण ओखीमठ जोशीमठ रुद्रप्रयाग व देवप्रयाग आदि बड़ुत से रम्य और सुहावने स्थानों में महात्मालोगों को ढूंढते रहे कहीं २ तो ऐसे २ विकट स्थानों में उन को सुन पड़ुंचे कि जहां किसी प्रकार किसी मनुष्य का काम साहस और सामर्थ्य जाने का नथा उस यात्रा में इनका सारा शरीर छिन्न भिन्न होगया टेहरी श्रीनगर आदि स्थलों में बड़ुत से राज पंडितों को भी देखा उनको उनकी मंत्र तंत्र विद्या में खूब ही लज्जित किया कहीं २ बड़ुत से पाखंडी संत महंत भी मिले उन का भी चरित्र खूब अच्छे प्रकार देखा कोई २ लोग इन को अपना शिष्य बनाकर अपनी हज़ारों रुपयों की जमाजथा व·

जायदाद आदि का मालिक करना चाहते रहे इनने सब को तुच्छ कर उन को साफ़ टकासा जवाब दिया ॥ सत्य है जो अपने घरकी उससे कई गुनी बढ़ कर प्रतिष्ठा व हकूमत और सुख सौभाग्य को तृणवत् समझ लात मार चलदे वह फिर क्यों कर ऐसी जगह उलझे इन को तो विद्या और मोक्ष रत्न से काम था उसी के लिये सर्वत्र हैरान व परेशान फिर कर इनने उस को भारी परिश्रम से करतल किया और अब अपने देश निवासियों के हितार्थ अपना शेष जन्म बिताना उत्तम समझ रहे हैं यही इन का संकल्प और परम उद्देश्य है कि जिस प्रकार हो हमारे देश निवासी फिर कर अपने पूर्व रूप को प्राप्त होवें ॥

आर्य्यगण श्रीयुत का यह जीवन चरित्र बहुत सूक्ष्मता से वर्णन हुआ है यदि किसी को विस्तार देखना होय तो वह भद्र चित भारत सुदशा प्रवर्तक के अंक ६ व ७ व ८ को देखे अत: पर श्रीजी महाराज कुछ काल हिमालय तटी में ही तपस्या करते रहे ॥

सं० १६ के लगभग मथुरा में आये वहां जगप्रसिद्ध परमहंस परिव्राजकाचार्य्य श्री स्वामी विरजानन्दजी महाराज को वेद वेदाङ्ग पारंगत देख उनके समीप बहु काल ठहर अपनी पूर्व पठित विद्या उन से फिर कर विचारते रहे कुछ और भी पढ़ी फिर जयपुर आदि नगरों में घूमते घामते आगरे में आए वहां कुछ संबत् ठहर कर अपना योगाभ्यास बढ़ाते रहे उही दिनों से वहां के निवासी पं० सुन्दरलाल प्रधानाध्यक्ष डाक खानह जात आदि सत्पुरुष इनके जानकार और परिचारक हैं आपलोग श्रीयुत को इन दिनों समस्त सनातन विद्याओं में जैसा अद्वितीय देखते हो वैसाही इन को

योगीश्वरभीजानो - बहुत से अर्गलपुर निवासी जानते हैं कि श्री-जीमहाराज प्रतिदिन १८ घंटा तक की समाधि लगाने लग गएथे और ऐसी २ उन की विचित्र योग क्रिया होती थीं कि जिन को देखलोग बिस्मित हो होजाते थे,

यों अभ्यास बल से जब साधनदशा से सिद्ध दशा पर आए तभी हरिद्वार जाकर वहां जो कुछ वस्त्र पात्र और पोथी पत्रा पास था वह सब लुटा दिया और कोपीना वशिष्ट हो काशी हरिद्वार के बीच गंगातीर कई वर्ष तक पर्य्यटन करते रहे जोकि गुण (२) गीता में परमहंसों के कहे हैं उन सबोंसे अलंकृत श्रीमान् संस्कृत भाषा वलम्बी हो सब को बराबर सत्योपदेश करतेथे इन की इच्छा थीकि पंडितों के द्वारा देश भर में सत्य धर्म की प्रवृत्ति और मिथ्या धर्म्म की निवृत्ति-शीघ्र करदेवें इसी लिये ठौर २ शास्त्रार्थ में सन्मुख हुए लोगोंको परास्त भीकिया परन्तु इन पण्डितों का तो यह हाल कि ,,काज़ीजी बदलायल माकूल बहुतेरा हराते रहे लेकिन् हमने हारन मानीपर न मानी,, जब इन कीयह विचित्र लीला देखी कि ये लोग अनेक प्रकार की चाला कियांकरते और झूठी ख़बरें भी खूब उड़ाते हैं तब श्रीजी महाराजने दूसरा यत्न यह निकाला कि धनिकों के द्वारा प्रसिद्ध नगरों में पाठशाला स्थापित की जावें तदनुसार ४ शाला फ़र्रुख़ाबाद मिरज़ापुर कासगंज और छलेश्वर में स्थापित भी करदीं उन में कहीं

(२) निर्ममः निरहंकारः निर्द्वन्द्वः निस्पृहः बीतराग भय क्रोध• विमत्सरः शांतः दांतः तुल्य निंदास्तुतिः समदृग् समलोष्टाश्म कांचनः आत्मसंतुष्टः आदि आदि

३०) कहीं ३०) रुपये मासिक के पढ़ाने वाले पंडित नियुक्त किये गए और विद्यार्थियों को भी धनिक लोगों से अच्छे प्रकार अन्न वस्त्र औ र पात्रादिक सर्व व्यय और पढ़ने पढ़ाने की पुस्तकें दिलाईं — हेतु आपका यह था कि सद्ग्रंथों को पढ़ बहुत से विद्यार्थी ऐसे विद्वान् हो वें कि जो वेदों का अर्थ अच्छे प्रकार खुद आपही लगाने लग जावें और औरों को भी बतावें वैं सुनावें और उनकी सहायता से सद्ग्रंथों की पठन पाठन प्रणाली समस्त भरतखंड में सुगमता से प्रचरित हो जाय और कपोल कल्पित आधुनिक सब ग्रंथों का प्रचार बन्द हो कर देशभर में फैला हुआ महांधकार मिटे और मनुष्य मात्र को धर्म्म, अर्थ, काम, मोक्ष तक के लाभ सुलभ हो जावें एतदर्थ श्रीमान् ने पाठशालाओं के बहु समीचीन नियम भी बांधे और स्वयं आपभी अ पनी प्रतिवार की आवृत्ती में प्रति पाठशालीय नगर में मास दो मास ठ हर २ कर उपस्थित दोषों की निवृत्ती भी करते रहे परन्तु पढ़ाने पढ़ ने वाले तो वही पोप अर्थात् निंद्य पंडित और उन की सन्तान कहो कैसे आशा फलित होती,

अन्त को हठ कर तीसरी युक्ति यह निकालनी पड़ी कि कुछ ग्रंथ रच कर फैलाए जावें और सर्वत्र चल फिर कर प्रत्येक नगर में कुछ ठह र विज्ञापन द्वारा एकत्र हुए मनुष्यों को सदुपदेश सुनाया जावे जिस से सबको अपने देश दुर्दशा के सब कारण स्पष्ट विदित होजावें और उन को देशोन्नति की कर्त्तव्यता सूझे और सर्वत्र आर्य्य समाज भी स्थापित होजांय — परमात्मा की कृपा से यह आशा पूरी हुई अर्थो त् सम्वत् १९३२ से लेकर अब तक बंबई कलकत्ता पश्चिमोत्तर दे श अवध पंजाब राजपूताना प्रांतों के बहुत से प्रसिद्ध नगरों में

आर्य्य समाज होगये जिन की कर्त्तव्यता के समाचार अब कहीं छुपे नहीं हैं हां कुछ उन के नियमादिकों का विस्तार प्रकाशित होना अवश्य है वह आगे द्वितीय खण्ड में किया जावेगा॥प्रिय मित्रगण श्री जी महाराज केवल पाषाणादि मूर्त्ति पूजा वा पुराणों ही का खण्डन वेदों के द्वारा करते होंय ऐसा नहीं किन्तु जितने जैनी कुरानी और किरानी आदि मत इन दिनों प्रचरित हैं उन सब का खंडन कर रहे हैं और उन्हीं के ग्रंथों से उन की असत्यता उन्हीं के सन्मुख बराबर प्रकाशित कर देते हैं – इन के स्थापित किये समाज और व्याख्यानों में किसी के आने जाने की रोक टोक भी नहीं है सब के सन्मुख पक्षपात छोड़ सिंहनाद से सर्वत्र खंडन मंडनादि होता है जब अगाड़ी यह ग्रन्थ देखोगे और कुछ सोचोगे तो अवश्य जान जाओगे कि निस्सन्देह परमात्मा की हम भारत खण्ड निवासी मनुष्यों पर बड़ी भारी कृपा है जिस से उसने हमारे देश में एक ऐसे महात्मा को निर्माण किया कि जिन की विद्या और बुद्धि के आगे सब की बुद्धि मलिन पड़ गई॥आर्य्य वृन्द हज़ारों वर्ष के पीछे परमेश्वर ने इन के द्वारा डूबे हुए वैदिक मत को फिर कर प्रदीप्त किया यद्यपि बीच में ऐसे श्रीमान् शंकराचार्य्य भी हुए परन्तु उन का प्रताप भूगोल भर पर प्रकाशित नहीं हुआ और न जब जैनियों के सिवाय ऐसे कोई कट्टर विरोधी इस मत के थे अब तो एशिया यूरोप आफ्रिका आमेरिका भर के लोग इस मत की निन्दा करने लग गए थे अपना ईसाई मत इस देश में प्रचरित किया चाहते थे श्रीमान् ने यहां बैठे उन सब को परास्त किया अब कुछ और ही हवा है नेक चेतो आंख खोल कर देखो कानों की डाट काढ़ सुनो श्रीमान् जगद्गुरू स्वामीजी महाराज के जन्म से आर्य्यावर्त्त का वह

दिन सन्मुख है कि घर २ ढोलक बजे और गीत बधाई गाए जावें ॥

इति श्रीमद्दिग्विजयार्कीय प्रथमांके जीवन चरितन्नाम द्वितीयो मयूखः २ ॥

अथ पौराणमत खण्डनम्

शास्त्रार्थ हुगली

जोसम्बत् १९२९ में स्वामीदयानन्द सरस्वती और पंडित ताराचरण के बीचहुआथा

पंडित ताराचरण ग्राम भाटपाड़ा के निवासी हैं जो कि हुगली के पार हैं परन्तु आजकल श्रीयुत काशिराज महाराज के निकट रहते हैं। उन दिनों में पंडितजी अपने ग्राम में गयेथे और वहां से कलकत्ते जाकर राजा ज्योतीन्द्र मोहन ठाकुर के मकान में ठहरे थे इन दिनों स्वामीजी भी कलकत्ते में थे पंडित ताराचरण ने राजा ज्योतीन्द्र मोहन ठाकुर और राजा शौरीन्द्र मोहन ठाकुर के पास तीन बार जा २ के प्रतिज्ञा की थी कि हम आज स्वामीजी से अवश्य शास्त्रार्थ करेंगे ऐसे ही आज २ करके टालते रहे शास्त्रार्थ करने को आये एक दिनभी नहीं इससे वहांके सब बुद्धिमान् लोगों ने इन को झूंठा जान लिया जब स्वामीजी कलकत्ते से हुगली आकर बाबू वृन्दावनचंद्र मंडल के बाग़ में ठहरे तो एक दिन वहां के रईसों ने एक सभा की और उस में स्वामीजी से व्याख्यान दिलवाया बहुत से लोग व्याख्यान सुनने के लिये आये स्वामीजी कह ही रहेथे कि इतने में पं॰ ताराचरण भी वहां आपहुंचे उन से बाबू वृन्दावन चन्द्र आदि ने कहा कि आपभी सभा में आइये और जोइच्छा हो सो कहिये पं॰जी सभा में तो न आये परन्तु उसस्थान के ऊपर जाकर दूरसे गर्जनेलगे उस समय उनके सभा में नआने से औरऊपर ही ऊपर गर्जने से सब लोगों पर विदित होगया कि बस पंडित जी देखने और कहने ही मात्र को हैं जानते कुछ भी नहीं क्योंकिजो कुछ जानते होते तो सभा में आते हुए क्यों डरते फिर जब रात के नव बजगये तब

सभा बिसर्जन कीगई दूसरे दिन बाबू वृन्दावनचन्द्रमंडलजीने स्वामीजीसे कहा- कि कल पं०ताराचरणभी आयेथे स्वा०जीने कहा कि फिर सभामें क्योंनहीं आये बाबूजीने कहा कि वे तो बड़ा अभिमान करतेहैं स्वामीजीनेकहा कि अभिमानकरना पंडितोंका काम नहीं है मूर्खों काहै जो पंडित होता है वह कभी अपने मुखसे अपनी प्रशंसा नहीं करता जो पंडितजी अभिमान के समुद्र में ही डूबे जाते हैं तो उनको एक वार मेरे पास लेआइये डूबने से बचजावें तो अच्छा है तब बाबू वृन्दावनचंद्र आदिने पं०जीसे कहा कि आप बाग़ में स्वामीजी के पास चलिये और जैसे आप की इच्छा हो शास्त्रार्थ कीजिये आप कुछ चिन्ता न करें स्वामीजी किसी से वैर भाव नहीं रखते इसबात को सुनकर पं०जीने कहा कि अच्छा हम चलेंगे - मंगलवारको संध्या समय में शास्त्रार्थ के सुनने को बहुत से लोग इकट्ठे हुए और पं०ताराचरण भी अपने ग्रामके लोगों को लेकर कि जो उन्हीं के पक्ष के थे वहां पहुंचे तब पं०जी और स्वा०जीके बीच इस प्रकार से वार्ता होने लगी पं०जी हम प्रतिमा पूजन स्थापन करने का पक्ष लेते हैं स्वा०जी आपकी जो इच्छा हो सो लीजिये परन्तु मैं तो इस का वेद विरुद्ध होने से सर्वदा खंडन ही करूंगा पं०जी इस शास्त्रार्थ में बाद होना ठीक है अथवा जल्प और वितंडा स्वा० वाद ही होना ठीक है क्योंकि जल्प और वितंडा पंडितों को कदाचित् करना उचित नहीं और वाद भी वही जो गौतम ऋषि ने लिखा है पं०जी अच्छा वाद ही होगा उस समय यह भी प्रतिज्ञा की गई कि इस शास्त्रार्थ में चार वेद छः अंग और छः शास्त्र का ही प्रमाण स्वीकार किया जावेगा अन्य का नहीं इस नियम को दोनों ने स्वीकार किया पं० पातंजलिसूत्रम् चित्तस्यआलम्बने स्थूल आभोगो वितर्क इति व्यास वचनम् । **भाषार्थ** ।

पतंजलि का सूत्र है कि चित्त बिना स्थूल पदार्थ के स्थिर नहीं होता इस

लिये उपासना में स्थूल पदार्थ प्रतिमा का ग्रहण किया जाता है यह व्या सजी का वचन है स्वा० पतंजलि के शास्त्र में ऐसा सूत्र कहीं नहीं है हां इस प्रकार का तो है विषयवती वा प्रवृत्तिरुत्पन्ना मनसः स्थिति निबन्धनी इति अर्थात् मन की स्थिति का कोई विषय होता है सो इस सूत्र के व्याख्यान में व्यासजी ने (नासिकाग्रे धारयत इत्यादि) अर्थात् नासिका के आगे के भाग में मन को स्थिर करना लिखा है आप के भ्रष्ट पढ़ने से जाना जाता है कि आप ने योग शास्त्र नहीं देखा और आपने पहले तो कहा कि यह पतंजलि का सूत्र है और पश्चात् जो इति व्यासवचनम् कहा सो तो व्यासजी ने योग शास्त्र के व्याख्यान में कहीं नहीं लिखा है जो यह पतंजलि का सूत्र होता तो व्यासजी का वचन नहीं हो सकता और जो व्यासजी का वचन मानों तो पतंजलि का सूत्र नहीं इस से आप का कहना परस्पर बिरुद्ध हुआ और यह वचन तो दोनों में से एक का भी नहीं है । पं० स्वरूपसाक्षात्कृती प्रज्ञा आभोगः सचस्थूलविषयत्वात्स्थूल इत्यादि एक पदार्थ आंखों से देखने से बुद्धि में साक्षात् होता है और जो कि आंखों से स्थूल पदार्थ ही देखा जा सक्ता है इस लिये उपासना का स्थूल विषय होने से प्रतिमा आती है, स्वा० आप प्रथम ही प्रतिज्ञा कर चुके हैं कि इस शास्त्रार्थ में केवल वेदादि सत्य शास्त्रों का प्रमाण दिया जावेगा फिर आपने जो यह वाचस्पति का वचन कहा सो क्यों कहा। देखो जबतक जाग्रत अवस्था रहती है तब तक दृष्टि में सब पदार्थ स्थूल रहते हैं स्वप्नावस्था में कोई पदार्थ स्थूल नहीं रहता फिर स्वप्न में आप के कथनानुसार किसी पदार्थ का ज्ञान नहीं होना चाहिये सो तो बात नहीं है और आप यह भी प्रतिज्ञा कर चुके हैं कि हम जल्प और वितंडा न करेंगे तो फिर आप का जाति साधन से प्रतिमा का

स्थापन करना कैसा क्योंकि देखो आप के यह कहने से कि स्थूल पदार्थ में ही मन स्थिर होता है यह दोष आता है कि स्थूल पदार्थों में सब संसार आता है क्या गधे घोड़े क्या वृक्ष वनस्पति क्या ईंट पत्थर इत्यादि अब बतलाइये कि आप किस का ध्यान करेंगे कुछ प्रतिमा ही तो केवल स्थूल पदार्थ नहीं है कि जो आप इसी का ग्रहण करते हैं। पं० यदुक्तं भवता तेनैव प्रतिमापूजनमेव सिध्यत्येतस्याः स्थूलत्वात्। अर्थात् आपके कहने से ही प्रतिमा पूजन सिद्ध होता है क्योंकि प्रतिमा स्थूल है, स्वा० आपने जो यहां एव शब्द तीन बार कहा सो इस से जाना गया कि आपको संस्कृत का यथावत् बोध नहीं है और आपको पांडित्य का अभिमान होने का भी यही कारण है और लोकान्तरस्थ-अर्थात् दूसरे लोक में रहने वाले से जो आप चतुर्भुज विष्णु को लेते हैं सो वे तो वैकुण्ठ में सुने जाते हैं फिर उन की उपासना अर्थात् समीप स्थिति इस मनुष्य लोक में आप लोग कैसे कर सकते हैं कदाचित् नहीं। और जो पाषाणादि की मूर्ति शिल्पि की रची हुई है सो विष्णु कैसे हो सकती है बड़े आश्चर्य्य की बात है पं० अथ स यदा पितृनावाहयति तेन पितृलोकेन संपन्नो महीयते इस वचन से लोकान्तरस्थ अर्थात् दूसरे लोक में रहने वाले की भी उपासना आती है। स्वा० यह वचन इस प्रकरण से कुछ संबन्ध नहीं रखता क्योंकि इससे उपासना नहीं आती। इसका अभिप्राय यह है कि जिस योगी को अणिमादिक सिद्धि हो गई हैं वह सिद्ध जिस २ लोक में जाने की इच्छा करता है उस २ लोक में उसी समय प्राप्त होता है सो जब पितृलोक में जाने की इच्छा करता है तब वहां जाके आनन्द करता है आप जो यह कहते हैं कि मर कर उस लोक में जाता है वा पितरों की उपासना इस

लोक में करता है सो ये दोनों बातें इस वचन से सिद्ध नहीं होतीं। पं० तन्मध्ये प्रतिमाऽपि वर्तते इत्येवेत्यादि। उपासना का जो स्थूल विषय कहा था उस में प्रतिमा भी आगई। आप देख लीजिये कि हम वाद ही करेंगे जल्प और वितंडा कभी नहीं। स्वा० आप जो बार २ स्थूलत्व साधर्म्य से ही प्रतिमा पूजन का स्थापन किया चाहते हैं सो अपनी इस प्रतिज्ञा को कि हम वाद ही करेंगे आप ही नाश करते हैं पं० प्रथमतः अस्माभिः यत्। स्वा० आप का यह संस्कृत भ्रष्ट और असंबद्ध है क्योंकि इस प्रकार होना चाहिये था कि प्रथमतोऽस्माभिर्यत् पं० जिस बात का दृष्टान्त दियाजावे उस में सब बातों का मिलना अवश्य नहीं है स्वा० मैंने कब ऐसा कहा है कि सब प्रकार दृष्टान्त मिलना ही चाहिये आपने जो वचन कहा था उसका तो एक अंश भी आप के पक्ष में नहीं मिलता था इस लिये उसका कहना और उस के साथ ही आपका पक्ष भी सब व्यर्थ हो गये पं० उपासना मात्र मेव भ्रम मूलम् अर्थात् उपासना सब मिथ्या ही है स्वा० देखिये आपका प्रतिमा पूजन स्थापन करने का जो पक्ष था सो जब सिद्ध न हो सका तो आप ही उसका खण्डन करने लगे कि भ्रम मूलं अर्थात् प्रतिमा पूजन मिथ्या ही है। जब पं० जीने अपने मुख से यह निकाला कि (उपासनामात्रमेवभ्रममूलम्) तब श्री बाबू भूदेव मुकर्जी, श्री पं० हरिहर तर्कसिद्धान्त, श्री बाबू वृन्दावनचन्द्र इत्यादि सब लोग यह कह कर खड़े होगये कि पं० जी आये थे तो इस घमंड से प्रतिज्ञा करके कि हम प्रतिमा पूजन स्थापन करेंगे और यहां लगे उलटा उसीका खंडन करने इस से पं० जीका यही आशय सूचित होता है कि। घटं भित्वा पटं छित्वा कृत्वा रासभरोहणम्। येन केन प्रकारेण प्रसिद्धः पुरुषो भवेत्। इसके पश्चात्

स्वामीजीने पंडितजी से कहा कि मैं तो खंडन करताही हूं परन्तु यहां तो आप के कहने सेही प्रतिमाका खंडन होगया । इस पर पं०जी कुछ न बोले चुपचाप ऊपर के मकान में चलने लगे । तब स्वामीजीभी उधरही को चले और सीढ़ियों पर पहुंच कर पं०जीका हाथ अपने हाथ में लिया और ऊपर चले आये ऊपर पहुंच कर बाबू वृन्दावनचन्द्र आदि लोगों के सन्मुख स्वामीजी ने पं०जी से कहा कि आप ऐसा बखेड़ा क्यों करते फिरते हैं, पंडितजी बोले कि मैं तो काक भाषा का खंडन करता हूं और सत्य शास्त्र पढ़ने पढ़ाने का उपदेश भी करता हूं और पाषाणादि मूर्ति पूजन भी मिथ्या ही जानता हूं परन्तु क्या करूं मैं जो सत्य २ कहूं तो मेरी जीविका चली जाय अर्थात् काशीराज महाराज जो सुने तो मुझको तुरंत निकाल बाहर करदें । इस से मैं सत्य २ नहीं कह सक्ता हूं जैसा कि आप कहते हैं । इति ।

आर्यगण पं० ताराचरणजी जो अपने असत्य भाषण का कारण अपना पेट दिखाते हैं सो बहुत ही ठीक है यही हाल देशभर के पंडित और पुजारी बैरागियों का जानों कि बिचारे पेट के मारे चारनाचार असत्य को सत्य ठहरा रहे हैं परन्तु नहीं मालूम कि इनको छोड़ बाकी रहे लोग कि मर्थ अन्धे बहरे बनरहे हैं ये वही राज पं० हैं जो प्रथम काशी के शास्त्रार्थ में अगुआ बन बोलेथे ॥

॥ काशी के शास्त्रार्थ की व्यवस्था ॥

सम्बत् १९२६ मिती कार्तिक सुदी १२ मंगल वार् को काशी में दुर्गा कुंड के पास आनन्द् बाग़ में महा राज काशीनरेश बहुत से पंडितों को साथ ले कर स्वामीजी से शास्त्रार्थ करने को पहुंचे उन से स्वामीजी ने पूछा कि आप वेदों की पुस्तक ले आए हैं वा नहीं महाराज ने कहा कि वेद पंडितों के कंठस्थ हैं पुस्तकों का क्या काम, स्वामीजी ने कहा कि यह ठीक परन्तु बिना पुस्तक पूर्वापर प्रकरण का बिचार ठीक ठीक नहीं हो सकता।

अस्तु कहिये कि किस विषय पर विचार होगा, पंडितोंने कहा मूर्ति पूजा मंडन में, स्वामीजी ने कहा बहुत अच्छी बात है जो पंडित आपलोगों में मुख्य हो वही एक मुझ से बाद करे तब रघुनाथ प्रसाद कोतवाल ने यह निश्चय ठहराया कि पंडित चाहे जो कोई आप से वाद करे परंतु उसके बोलने के समय दूसरा पंडित न बोले। इस के अनुसार राज पंडित ताराचरणजी सन्मुख हुए, उन से स्वामीजीने कहा कि पाषाणादि मूर्ति पूजने में जो कोई वैदिक प्रमाण हो वह कहिये, पंडितजीने कहा वैदिक प्रमाण हो वा नहो परन्तु जो केवल एक वेदों ही को प्रमाण मानता है अन्य ग्रन्थों को नहीं, उस से क्या कहना चाहिये, स्वामीजीने कहा प्रथम वेदों ही का बिचार मुख्य है क्योंकि सब को वेदोक्त ही धर्म मान्य है और मनुस्मृति आदि वेद मूलक ग्रन्थ भी प्रमाण योग्य हैं परन्तु वेद विरुद्ध और वेदों में अप्रसिद्ध किसी ग्रन्थ का प्रमाण नहीं हो सकता, पंडितजी बोले कि मनुस्मृति का वेदों में कहां मूल है, तब स्वामीजीने उनके मतानुसार सामवेद के ब्राह्म-

में बताया, तिसपर उन पंडितजी को हटाकर स्वामी विशुद्धानन्दजी बोले कि रचना की अनुपपत्ति होने से अनुमान प्रतिपाद्य प्रधान, जगत् का कारण नहीं, व्यासजी के इस सूत्र का वेदों में क्या मूल है, इस पर स्वामी जी ने कहा कि यह प्रकरण से भिन्न बात है इस पर विचार करना न चाहिये, तब बिशुद्धानंदजी ने कहा कि यदि तुम जानते हो तो अवश्य कहो, इस पर स्वामीजी ने यह समझ कर कि प्रकरणान्तर में वार्ता जा रहेगी इस से वह न कह कर यह कहा कि जिस्को कदाचित् कोई बात कंठ न हो क्या वह पुस्तक देख कर नहीं कही जासक्ती, तब विशुद्धानन्दजी ने कहा यदि कंठस्थ नहीं तो क्यों काशी में शास्त्रार्थ करने को आये, इस पर स्वामीजी ने कहा कि क्या आपको सब कंठस्थ है, विशुद्धानन्दजी ने कहा, हां है, स्वामीजी ने कहा अच्छा कहो धर्म का क्या स्वरूप है, विशुद्धानन्दजी ने कहा कि जो वेदप्रतिपाद्य फलसहित अर्थ है वही धर्म कहलाता है, स्वामीजी ने कहा यह आपका संस्कृत है यह प्रमाण नहीं हो सकता, कोई श्रुति वा स्मृति कहिये, विशुद्धानन्दजी ने कहा (चोदनालक्षणार्थो धर्मः) यह जैमिनि का सूत्र है, स्वामीजी ने कहा मैं आपसे श्रुति स्मृति का प्रमाण चाहता हूं उनमें से एक को भी न कह कर सूत्र क्यों कहते हो क्या इसी को कंठस्थ विद्या कहना चाहिये, यह सुन विशुद्धानंदजी जब चुप हुए,, तब स्वामीजी ने कहा अच्छा आपने धर्म का स्वरूप तो न कहा, अब धर्म के कितने लक्षण हैं यही कहिये, विशुद्धानंदजी ने कहा कि धर्म का एक ही लक्षण है, स्वामीजी ने कहा सो कौन सा, उसको भी विशुद्धानन्दजी न कह सके, तब स्वामीजी ने मनुस्मृति के अनुसार उनको धर्म के १० लक्षण सुना कर कहा कि कहो आप एक ही -

लक्षण का धर्म कैसे कहते थे, इस पर बाल शास्त्रीजीने कहा कि हमको सब धर्म शास्त्र कंठ है, उन से स्वामीजी ने अधर्मके लक्षण पूछे सो वे न कह सके तब बहुत से पंडितों ने एकसाथ हल्लाकरके स्वामीजी से पूछा कि वेद में कहीं प्रतिमा शब्द है वा नहीं, स्वामीजीने कहा कि आपके मतानुसार सामवेदीय ब्राह्मण में "प्रतिमा हसन्ती" त्यादि वचनों, में प्रतिमाशब्द आया है उस पर उन लोगोंने कहा कि जब प्रतिमा शब्द वेदों में है फिर आप कैसे खंडन करते हैं, स्वामीजीने कहा कि प्रतिमाशब्द से पाषाणादि मूर्ति पूजन का प्रमाण नहीं हो सक्ता, प्रतिमा शब्द का अर्थ करना चाहिये, और फिर वह सब अद्भुत शान्ति प्रकरण उन लोगों को स्वामीजीने कह सुनाया और समझाया भी, तब वे सब के सब चुप हुए और उनके बदले कुछ बाल शास्त्रीजी बोले उन से स्वामीजी ने कहा बताओ कि इस प्रकरण में विघ्न दिखाने वाले कौन हैं उन ने कहा इन्द्रियां स्वामीजीने कहा वे तो देखने वाली हैं दिखाने वाली नहीं अस्तु अब कहिये स प्राचीं दिशमन्वावर्ततेथ यहां स शब्द का वाच्यार्थ क्या है बाल शास्त्रीजीने तो कुछ न कहा परन्तु पं० शिवसहायजी कुछ असंगत सा बोले उनको स्वामीजीने उत्तर दिया कि अच्छा जो आपने वह प्रकरण देखा है तो आपही आगे आकर किसी मंत्र का अर्थ कहिये बस वे भी अवाच्य हुए, और फिर विशुद्धानन्दजी बोले कि वेद किस से उत्पन्न हुए हैं स्वामीजीने कहा ईश्वर से उनने कहा कि स ईश्वर से तब स्वामीजीने कहा कि क्या ईश्वर बहुत से हैं विशुद्धानन्दजी ने कहा कि है तो एक ही परन्तु किस प्रकार के लक्षण वाले ईश्वर से वेद प्रकाशित भये स्वामीजी ने कहा सच्चिदानन्द लक्षण वाले से तब विशुद्धानंदजी बोले अच्छा ईश्वर

और वेदों में क्या संबंध है स्वामीजी ने कहा कि कार्य कारणभाव संबंध है विशुद्धानंदजी ने कहा कि जैसे मन और सूर्य में ब्रह्म बुद्धि कर के प्रत्येक उपासना कही है वैसे ही शालिग्रामादि का भी पूजन करना चाहिये स्वामीजी ने कहा उस का तो प्रमाण सत्य ग्रंथों में है यदि इस का भी होवे तो कहीं दिखलाइये तब विशुद्धानन्दजी मूक हुए और माधवाचार्य बोले कि (उद्बुध्यस्वाग्नेति) इस वेद मंत्र में पूर्ति शब्द है इस से पाषाणादि मूर्ति पूजन लेना चाहिये स्वामीजी बोले कि वापी कूप तड़ाग और आराम का ग्रहण तो पूर्ति शब्द से हो सकता है मूर्ति पूजन का नहीं यदि शंका होय तो अपने मंत्र का निरुक्त और ब्राह्मण देखिये तब माधवाचार्य ने उस को छोड़ कर पुराण शब्द पर शास्त्रार्थ उठाया (३) उस को स्वामीजी ने सर्वत्र विशेषण सिद्ध कर दिखाया यद्यपि माधवाचार्य के पक्ष को स्वामी विशुद्धानन्द जी व बालशास्त्रीजी आदि बहुत से पंडितों ने अनेक प्रमाणों से -

(३) वेदों में पुराणों का नाम है यह बात सिद्ध करने के लिये नीचे लिखे हुए प्रमाण दिखलाये गये थे इन में से कोई एक भी विशेष्य न ठहरा

(१) एतस्य महतो भूतस्य निःश्वसितमेतदृग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वाङ्गिरस इतिहासः पुराणं श्लोका व्याख्या नान्यनुव्याख्यानानीति ॥

(२) ब्राह्मणानीतिहासान् पुराणानीति

(३) इतिहासपुराणः पंचमो वेदानां वेद इत्यादि

(४) दशमे दिवसे यज्ञान्ते पुराणविद्या वेदः। इत्यस्य श्रवणं यजमानः कुर्यादिति ॥

पुराण शब्द को विशेष्य सिद्ध करना चाहा परन्तु न कर सके अंत को ऐन संध्या समय पर जब कि उस स्थान पर अच्छे प्रकार अक्षर नहीं सूझते थे माधवाचार्य ने दो पत्रा निकाल कर सब पंडितों के बीच में रक्खे और कहा देखो यहां यज्ञ के समाप्ति पर यजमान १० दसवें दिन पुराणों का पाठ सुने ऐसा लिखा है बताओ यहां पुराण शब्द-किसका विशेषण है उसपर स्वामीजी ने कहा कि पढ़ कर पाठ सुनाओ तो कुछ कहा जावे सो पाठ किसी ने नहीं सुनाया और विशुद्धानन्दजी ने वे दोनों पत्रा स्वामीजी के हाथ में देकर कहा कि आपही खुद पढ़लीजिये स्वामीजी को वे पत्रा हाथ में लिये अनुमान पांच पलभी नहोने पाये थे ज्यों ही उन के उत्तर देने का समय देखा स्वामी विशुद्धानन्दजी हम को देर होती है ऐसा कह कर खडे होगये साथ ही उन के और भी सब लोग ताली बजा कर चल दिये॥ अब बुद्धिवान्-लोग विचार करें कि ठीक हार किस की हुई निर्बुद्धि और पक्षपाती और मिथ्या आडंबरियों के सिवाय कौन ऐसा होगा जो कि स्वामीजी का पराजय हुआ कहेगा॥ उन्हीं दिनों की बात है हम को माह आगहन में मुकाम जौन्हरी परगना एतमादपुर ज़िला आगरा में दो अच्छे विद्वान् सन्यासी एक कुए पर बैठे मिले वे काशी से आये थे मथुरा को जाते थे उन के मुख से प्रथम इस शास्त्रार्थ का समाचार वहां मिला था उन ने स्पष्ट काशी वालों की हार बताई और उनकी विद्या तथा बुद्धि और चाल चलन पर उन लोगों ने अत्यन्त ही शोक किया॥ पीछे से मुक़ाम फरक्काबाद में एक महाराष्ट्र परमहंस आत्मानन्दजी मिले वे तो खुद इस शास्त्रार्थ के समय ऐन स्वामीजी के निकट बैठे थे उन ने ठीक वैसा ही सब हाल कहा जैसा कि पुस्तक-

शास्त्रार्थ में लिखा है और स्वामीजी की जीत बताई और बहुत कुछ काशीवालों के कर्मों पर बारम्बार धिक्कारते थे तत्पश्चात् प्रसिद्ध साहूकार लाला पन्नीलाल जी मिले उनने भी सब हाल ऐसा ही कहा वे खुद खास इसी बात की तहकीक़ातको फ़रुक्काबाद से काशीगयेथे अनन्तर जब हम को काशीजाने का प्रसंग हुआ तो वहां भी हमारे बहुत से मिलापी और रिश्तेदारों ने स्वामीजी की अति प्रशंसाके साथजीत और काशीवालों की हार बताई और इस शास्त्रार्थ का पुस्तक" जो ≡)॥ ढाई आना में जहां तहां आर्यसमाजों और वैदिक यंत्रालय प्रयाग में मिलता है,, अच्छे प्रकार सब हाल स्पष्ट करता है – देखो इतने नामी विद्वान् इस शास्त्रार्थ में मौजूद थे किसी एकने भी कोई एक भी मंत्र चारों वेदों की संहिता में से निकाल कर ऐसा न दिखाया कि जिस से मूर्ति पूजा सिद्ध होती ॥ प्रतिमा और पुराण शब्दों से कि जो ब्राह्मण ग्रन्थों से चुन कर लाये थे जो मनोरथ सिद्ध किया चाहते थे सोभी हाथ न आया मुख्य अपना पक्ष छोड़ कर और प्रकरण विरुद्ध बातें छेड़ कर जीत चाही वह भी न पाई बीच शास्त्रार्थ में चिड़ २ कर असभ्य वाक्य भी कहे कि जिस से स्वामीजी बिगड़ें और गड़बड़ करदें यह भी न हुआ अर्थात् जब कोई युक्ति काम न आई तब धूरी संध्या दो पत्रा स्वामीजी के हाथ दे ताली और कोलाहल शब्द से अपनी जीत जताय ज्यों त्यों प्रतिष्ठा ले घर आये ॥ इतने पर भी संतोष किया होय सोभी नहीं एक पुस्तक दयानंदपराभूति नाम की संस्कृत में दूसरी दुर्जनमत मर्दन नाम की भाषामें बनाकर महाराज काशी नरेश के यंत्रालय में छपवाई जिन में निरी मिथ्या बातें और स्वामीजी को ठौर २ असंख्य दुर्वचन लिखे हैं, कहो इसीको सभ्यता और विद्वत्ता

कहते हैं धन्य है फिर भी स्वामीजी महाराज को कि इतना सब सहन करके फिर भी उनका कल्याण चाहते हैं जब से अब तक छः वार और काशी में गये और प्रति वार सब काशी में विज्ञापन लगाये कि जो अ-बभी कोई वैदिक प्रमाण ढूंढ पाया होय तो सन्मुख आओ और पंडिताई दिखाओ नहीं तो सदैव के लिये दुराग्रह छोड़ो और सत्य मार्ग पकड़ कर अनुपम सुख लहो ॥ परन्तु मतिमंद कब सुनते हैं सत्य कहा है कि "विनाशकाले विपरीतबुद्धिः ॥

सुहृद्गण आगे एक विज्ञापन की नक़ल लिखी है वास्तव्य में वह संस्कृत में दिये हुए विज्ञापन का भाषानुवाद है निश्चय है कि उस को देख आप लोग विशेष आनन्दित होंगे ॥

विज्ञापनकीनकल

सम्बत् १९३६ मिती कार्तिक सुदी १४ गुरुवार के दिन श्रीयुत स्वामीजी महाराज ७ वीं वार काशी नगर में पधारे उस समय उन के विद्यार्थी पंडित भीमसेन शर्माने यह विज्ञापन दिया ॥

सब सज्जन लोगों को विदित किया जाता है कि इस समय पंडित स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी महाराज काशी में आ कर जो श्रीयुत महाराजे विजयनगर के अधिपति का आनन्दबाग महमूद गंज के समीप है उस में निवास करते हैं। वे वेद मत का ग्रहण करके उस से विरुद्ध कुछ भी नहीं मानते। किन्तु जो २ ईश्वर के गुण कर्म स्वभाव और वेदोक्त सृष्टिक्रम प्रत्यक्षादि प्रमाण आप्तों का आचार और सिद्धान्त तथा अपने आत्मा की पवित्रता और उत्तम विज्ञान से विरुद्ध होने के कारण पाषाणादि मूर्ति पूजा, जल और स्थल विशेष में पाप निवारण करने की शक्ति व्यास मुनि-आदि के नाम पर छल से प्रसिद्ध किये नवीन व्यर्थ पुराण नामक आदि ब्रह्मवैवर्त्तादि ग्रन्थ परमेश्वर के अवतार ईश्वर का पुत्र हो के अपने विश्वासियों के पास क्षमा करके मुक्ति देने हारे का मानना उपदेश के लिये अपने मित्र पैगम्बर को पृथिवी पर भेजना पर्वतों का उठाना, मुरदों का जिलाना, चन्द्रमा का खंडन करना कारण के बिना कार्य्य की उत्पत्ति मानना, ईश्वर को नहीं मानना, स्वयम् ब्रह्म बनना अर्थात् ब्रह्म से व्यतिरिक्त वस्तु कुछ भी न मानना, जीव ब्रह्म को एक ही समझना, कंठी तिलक और रुद्राक्षादि धारण करना और शैव शाक्त वैष्णव गाणपत्यादि संप्रदाय आदि

हैं इन सबका खंडन करते हैं। इससे इस विषय में जिस किसी वेदादि शास्त्रों के अर्थ जानने में कुशल, सभ्य, शिष्ट, आप्त विद्वान् को विरुद्ध जान पड़े। अपने मत का स्थापन और दूसरे के मत का खंडन करने में सामर्थ्य हो। वह स्वामीजी के साथ शास्त्रार्थ करके पूर्वोक्त व्यवहारों का स्थापन करे। इससे विरुद्ध मनुष्य कभी नहीं कर सकता इस शास्त्रार्थ में वेद मध्यस्थ रहेंगे। वेदार्थ निश्चय के लिये जो ब्रह्मा से ले के जैमिनि मुनिपर्य्यन्त के बनाये ऐतरेय ब्राह्मण से ले के पूर्व्व मीमांसा पर्य्यंत वेदानुकूल आर्ष ग्रन्थ हैं वे वादी और प्रतिवादी उभय पक्ष वालों को माननीय होने के कारण माने जावेंगे। और जो उस सभा में सभासद हों वे भी पक्षपात रहित, धर्म अर्थ काम और मोक्ष के स्वरूप तथा साधनों को ठीक २ जानने सत्य के साथ प्रीति और असत्य के साथ द्वेष रखने वाले हों इन से विपरीत नहीं दोनों पक्ष वाले जो कुछ कहें उसको शीघ्र लिखने वाले तीन लेखक लिखते जावें। वादी और प्रतिवादी अपने २ लेख के अंत में अपने २ लेख पर स्वहस्ताक्षर से अपना २ नाम लिखें। तथा जो मुख्य सभासद हों वे भी दोनों के लेख पर हस्ताक्षर करें। उन तीन पुस्तकों में से एक वादी दूसरा प्रतिवादी को दे दिया जाय और तीसरा सब सभा की सम्मति से किसी प्रतिष्ठित राज पुरुष की सभा में रक्खा जावे कि जिससे कोई अन्यथा न कर सके। जो इस प्रकार होने पर भी काशी के विद्वान् लोग सत्य और असत्य का निर्णय कर के औरों को न करावेंगे तो उन के लिये अत्यन्त लज्जा की बात है क्योंकि विद्वानों का यही स्वभाव होता है कि सत्य और असत्य

को ठीक २ जान के सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग कर दूसरों को कराके आप आनन्द में रहना, और औरों को भी रखना। इति॥

कहिये इस विज्ञापन में कैसा स्पष्ट लिख दिया है कि यदि अब भी काशी के विद्वान् लोग मेरे सन्मुख हो स्वधर्म्म प्रतिपादन अर्थात् सत्य और असत्य का निर्णय न करेंगे तो उनके लिये अत्यन्त लज्जा की बात होगी ऐसा लेख देख सुन कर भी जो ये लोग उद्यत न हुए तो क्या समझा गया वा समझना चाहिये इस विज्ञापन के दिये पीछे काशी भर में भूचाल अर्थात् हाहाकार तो पड़ गया परन्तु किसी को कुछ कर्त्तव्य न सूझा तब श्रीजी महाराज ने कुछ दिन मार्ग प्रतीक्षा करके दूसरा विज्ञापन इस आशय का दिया कि प्रथम विज्ञापन काशी के पंडित मात्र पर था इस कारण यदि बड़े पंडितों ने उस पर ध्यान देना उचित न जाना हो क्योंकि शिष्टाति शिष्ट ऐसे समेट के निमंत्रण में जाने को अपनी कुछ अप्रतिष्ठा समझते हैं एतदर्थ काशी के सब पंडितों में शिरोमणि श्रीस्वामी विशुद्धानन्दजी व पंडित बालशास्त्रीजी अब अपना पृथक् निमंत्रण इस द्वितीय विज्ञापन द्वारा समझ कर मेरे प्रथम विज्ञापन में लिखे नियमानुसार मुझ से शास्त्रार्थ करने को अवश्य और अति शीघ्र सन्नद्ध होजावें शोक कि इस तीक्ष्ण लेख को भी किसी ने कान पर न रक्खा स्वामीजी महाराज ने यह भी बात किसी के कहने व लिखने को नहीं छोड़ी कि काशी के विद्वान् शास्त्रार्थ के लिये आने ही को थे इतने में स्वामीजी भाग गये क्योंकि इनकी स्थिति उनकी मार्ग प्रतीक्षा में कुछ कम छः मास बराबर वहीं रही

हां जब श्रीमान् वहां से देशाटन को चले आए तब काशी वालोंका कलंक धोनेके लिये कुशाग्र बुद्धि राजा शिव प्रसाद साहबने अवश्य कुछ उद्योग किया (४) अर्थात् एक प्रथम निवेदन नाम की किताब छपवाकर बहुधा सर्वत्र आर्यसमाजों में भेजी उस के उत्तर में श्रीस्वामीजी महाराज ने एक भ्रमोच्छेदन नाम की पुस्तक मुद्रित करा के उन के पास भेज दी वह भी देखने योग्य है इस लिये उस के अन्तिम चार पृष्ठों की नक़ल सब के अवलोकनार्थ यहां आगे लिखी जाती है उस को भी सब सज्जन लोग विचार पूर्वक अवलोकन करें

नक़ल पृष्ठ १९ से लेकर २२ तक पुस्तक भ्रमोच्छेदन की

श्री स्वामीजी का अन्तिम लेख

जैसे राजा जी संस्कृत विद्या के वेदादि ग्रन्थों को न पढ़कर उन्हीं में प्रश्नोत्तर किया चाहते और जैसी स्वामी विशुद्धानन्दजीने बिना सोचे समझे राजा साहब के लेख पर सम्मति करदी है वैसा साहस कभी किसी को न करना चाहिये किन्तु उस २ विद्या में योग्य होके किसी से विचारार्थ प्रवृत्त होना उचित है

प्रश्नोत्तरदशकम्

(१ प्रश्न) आपने अपने दूसरे पत्र में राजाजी को लिखकर प्रश्न करने और उत्तर समझने में अयोग्य जानकर लिख के उत्तर देना चाहा नथा फिर अब क्यों लिख कर उत्तर देते हो ॥

---

(४) इनके इस उद्योग से कलंक छुटा तो नहीं पर वज्र लेप अवश्य होगया और ये भी उस में सन गए कहिये कैसा शोक

(उत्तर) जो राजाजी विशुद्धानन्द की सम्मति न लिखाते तो मैं इस पत्र के उत्तर में एक अक्षर भी न लिखता क्योंकि उन को तो जैसा आप ने पत्र में लिख चुका हूं वैसा ही निश्चित जानता हूं ॥

(२प्रश्न) इस सम्बाद में आप प्रतिपक्षी राजाजी को समझते हो वा स्वामी विशुद्धानन्दजी को ॥

(उत्तर) स्वामी विशुद्धानन्दजी को क्योंकि राजाजी तो बिचारे संस्कृत विद्या पढ़े ही नहीं उन के सामने मेरा लेख ऐसा होवे कि जैसे बधिर के सामने अत्यन्त निपुण गाने वाले का वीणा आदि बजाना और षड्जादि स्वरें का यथा योग्य आलाप करना होता है ॥

(३प्रश्न) जो तुम पक्षी राजाजी को छोड़ कर स्वामी विशुद्धानन्दजी को आगे धरते हो सो यह न्याय की बात नहीं है ॥

उत्तर) यह मुझ वा किसी को योग्यता नहीं है कि संस्कृत में कुछ योग्य विद्वान् को छोड़ कर अयोग्य के साथ सम्बाद चलावे न राजाजी को योग्य है कि अपने साक्षी को छोड़ें और न स्वामी विशुद्धानन्दजी को यह योग्य है कि अपने शरणागत आये राजाजी की रक्षा से विमुख हो बैठें क्योंकि धार्मिक विद्वानों का काम नहीं है कि जिसको शरणागत लेवें उसे छोड़ कर विश्वास घात कर बैठें ॥

(४ प्रश्न) स्वामी विशुद्धानन्दजी वा बालशास्त्रीजी आदि काशी के सब विद्वान् और बुद्धिमान् मिलकर राजाजी का पक्ष ले आप से शास्त्रार्थ वा लेख करेंगे तो आप को बड़ा कठिन पड़ेगा ॥

(उत्तर) मैं परमेश्वर की साक्षी से सत्य कहता हूं कि जो ऐसा वे करें तो मैं अत्यन्त प्रसन्नता के साथ सब को विदित करता हूं कि यह बात कल होनी हो तो आजही होवे जो ऐसी इच्छा मेरी नहोती तो मैं

काशी में विज्ञापन पत्र क्यों लगवाता और स्वामी विशुद्धानन्दजी तथा बालशास्त्रीजी को प्रतिपक्षी स्वीकार क्यों करता ॥
(५ प्रश्न) वे हैं बहुत और आप अकेले हो कैसे सम्वाद कर सकोगे
(उत्तर) इस के होने में कुछ असंभव नहीं क्योंकि जब सब काशी और अन्यत्र के विद्वान् और बुद्धिमान् लोग अपना अभिप्राय पत्रस्थ कर वा सन्मुख जा के स्वामी विशुद्धानन्दजी वा बालशास्त्रीजी को विदित कराते जायंगे और वे उन लेख वा वचनों को देख सुन उन में से इष्ट को ले मुझ से सन्मुख वा पत्र द्वारा इन दो बातों में से जिस में उन की प्रसन्नता हो एक को ग्रहण करके शास्त्रार्थ करें उसी बात में मैं भी उन से शास्त्रार्थ करने में उद्यत हूं परन्तु जैसे मैं इस पुस्तक पर अपना हस्ताक्षर प्रसिद्ध करता हूं वैसे वे भी करें तो ठीक अन्यथा नहीं ॥
(६ प्रश्न) सन्मुख होकर शास्त्रार्थ करने में अच्छा होगा वा पत्र द्वारा
(उत्तर) सर्वोत्तम तो यह है जो मैं और वे सन्मुख होकर शास्त्रार्थ करें तो शीघ्र सत्य वा झूठ का सिद्धान्त हो सकता है अर्थात् १ महीने से लेके छः महीने तक सब बातों का निर्णय हो सकता है और दूर २ रह कर पत्र द्वारा शास्त्रार्थ करने में ३६ वर्षों में भी पूरा होना कठिन है परन्तु जिस पक्ष में वे प्रसन्न हों उसी में मैं भी प्रसन्न हूं ॥
(७ प्रश्न) इस शास्त्रार्थ के होने और न होने का क्या फल होगा ॥
(उत्तर) जो अविरोध होने से एक मत होकर धर्म्म अर्थ काम और मोक्ष से सब को परमानन्द होना और न होने पर जो परस्पर विरुद्ध मिथ्या मत में वर्तमान मनुष्यों के अधर्म्म अनर्थ कुकाम और बन्धन के न छूटने से उन के दुःखों का न छुटना फल है ॥

(८ प्रश्न) यदि शास्त्रार्थ हुए परभी हठ से आप वा वे विरुद्ध मत न छोड़ें तो छुड़ाने का क्या उपाय है ।

(उत्तर) शास्त्रार्थ के पूर्व मैं और वे जिस का पक्ष झूठा हो उस के छोड़ने और जिस का सत्य हो उस के स्वीकार करने के लिये प्रतिज्ञाव पक्के काग़ज़ पर लेख हो कर रजष्टरी कराकर एक दूसरे को आपने २ पत्र को देने से सम्भव है कि आप अपना २ हठ छोड़ देवें क्यों कि जो न छोड़ेगा तो राजा अपनी व्यवस्था से हठ को छुड़ा सकता है

(९ प्रश्न) जब आप काशी में सब दिन निवास नहीं करते और स्वामी विशुद्धानन्दजी तथा बालशास्त्री जी वहीं बसते हैं तो सन्मुख में शास्त्रार्थ कैसे हो सकता है ॥

(उत्तर) मैं यह प्रतिज्ञा करता हूं कि जब वे सन्मुख हो कर शास्त्रार्थ करना स्वीकार करेंगे और इस को सत्य समझ लूंगा तब जहं हूंगा वहां से चल के काशी में उचित समय पर पहुंचूंगा कि जिस में उन को परदेश यात्रा का क्लेश और धनव्यय भी न करना पड़ेगा पुन वहां यथावत् शास्त्रार्थ हो कर सत्यासत्य के निर्णय के पश्चात् सब का उपकार भी सिद्ध होगा क्या यह छोटा लाभ है ॥

(१० प्रश्न) जब आप उन से शास्त्रार्थ कर अपना मत सिद्ध किय चाहते हैं और वे नहीं इस का क्या कारण है ॥

(उत्तर) विदित होता है कि वे अपने मन में जानते हैं कि शास्त्रा करने से हम अपने मत को सिद्ध न कर सकेंगे वा सम्बत् १९२६ के शास्त्रार्थ को देख घबराहट होगी कि दूर ही दूर से ढोल बजान अच्छा है जो उन को यह निश्चय होता कि हमारा वेदानुसार और स्वामीजी का मत वेद विरुद्ध है तो शास्त्रार्थ किये बिना कभी नहीं

रहते अथवा जो और कुछ कारण होतो शास्त्रार्थ करने में क्यों वि
लम्ब करते हैं आज से पीछे जो कोई पुराण वा तंत्र आदि मतवाले
मुझ से विरुद्ध पक्ष को लेकर शास्त्रार्थ किया चाहें वा लिख के प्र·
श्नोत्तर की इच्छा करें वे स्वामी विशुद्धानन्दजी और बाल शास्त्रीजी
के द्वारा ही करें इससे अन्यथा जो करेंगे तो मैं उन का मान्य कभी
न करूंगा, हां सन्मुख आके तो वे स्वयं भी पूछ सकते हैं इससे
स्वामी विशुद्धानन्दजी और बालशास्त्रीजी ऐसा न समझें कि हम
वेदों में विद्वान् वा सर्वोत्तम पंडित हैं और कोई अन्य मनुष्य भी
ऐसा निश्चय न करलेवें कि इन से अधिक पंडित आर्य्यावर्त में दूस·
रा कोई भी नहीं है हां ऐसा निश्चय करना ठीक है कि काशी में इस स
मय आधुनिक ग्रन्थाभ्यास कर्त्ता संन्यासियों में स्वामी विशुद्धानन्दजी
और गृहस्थों में बालशास्त्रीजी कुछ विशिष्ट विद्वान् हैं मैंने तो संवाद
में केवल अनवस्था दोष परिहारार्थ इन दोनों को सन्मुख आर्य्यावर्ती
य पंडितों में माना है अनुमान है कि उन को अन्यभी मनुष्य ऐसा मान
ते होंगे इस से अन्य प्रयोजन कुछ भी नहीं सर्व शक्तिमान् सर्वान्तर्य्या
मी परमेश्वर कृपा करके स्वामी विशुद्धानन्दजी और बाल शास्त्रीजी
को निर्भय निःशंक करे कि जिससे वे मुझ से सन्मुख वा पत्र द्वारा पाषा·
णादि मूर्ति पूजादि मंडन विषयों में शास्त्रार्थ करने में दृढ़ोत्साहित
हों जैसे कि मैं उन के खंडन में दृढ़ोत्साहित हूं ॥

मुनि रामांक चन्द्रेऽब्दे शुक्रे मासे ऽसिते दले ॥
द्वितीयायां गुरौ वारे भ्रमोच्छेदो ह्यलंकृतः ॥

इस किताब को देख फिर राजा साहब ने दूसरा निवेदन (५) नाम
की किताब रच कर सर्वत्र आर्य्य समाजियों के पास भेजी उसके देखने

(५) इस दूसरे निवेदन का उत्तर अनुभ्रमोच्छेदन नाम पुस्तक से दियागया है॥

से बड़ी हंसी आती है कहां स्वामीजी का वह प्रबल लेख कहां इनकी ये सफाई की बातें इस बार राजा साहब ने अपनी पूर्व किताब के सम्मतिकार श्री स्वामी विशुद्धानन्दजी का तो नाम ही नहीं लिया पंडित बालशास्त्रीजी के पास जाना इस रीति से लिखा है कि निदान मैं ने जब स्वामीजी महाराज की अवल इच्छा यही देखी कि एक वार पंडित वर बालशास्त्री जी से शास्त्रार्थ होवे सज्जनों का धर्म ही है कि पराई आशा पूर्ति करने में जहां तक बने यत्न करें (६) मैं शास्त्रीजी महाराज के चरणों में पहुंचा और भ्रमोच्छेदन दिखलाया आज्ञा की कि भला आप के एक सहज से प्रश्न का तो उत्तर श्री स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी से कुछ बना ही नहीं उत्तर के बदले दुर्वचनों (७) की वृष्टि की यदि काशी के पंडित

(६) इस लेख से राजा साहब खुद सज्जन बनकर पंडित बालशास्त्रीजी को असज्जन ठहराते हैं क्यों कि उनने इन की आशा पूरी नहीं की

(७) आर्य्यगण यदि जगत् पूज्य श्री स्वामीजी महाराज के यथार्थ लेख को राजासाहब वा उनके तरफ़दार अथवा क्षुद्र सम्पादक लोग दुर्वचन वा दुर्वचन पुष्पांजलि समझें और बतावें तो कुछ दोष नहीं परन्तु पंडित वालशास्त्री जी ऐसे विद्वान् यदि वे साही कहें तो अतीव विस्मय और शोक का विषय होगा देखो कितना भारी यह दोष है कि जो अब किसी प्रकार निवृत्त नहीं हो सकता गमार तक जान्ते हैं कि सच्ची अवश्य ही कड़वी होती है शास्त्र में भी ऐसा ही कहा है कि "प्रियवक्ता भवति धूर्तजनः" अर्थात् मीठा बोलने वाला धूर्त ही होता है न कोई सत्पुरुष - और भी सुनो,, सुलभाः पुरुषा राजन् सततं प्रियवादिनः॥ अप्रियस्य च पथ्यस्य वक्ता श्रोता ति दुर्लभः॥१॥ इस महाभारत के वचन का यह अर्थ है कि सदैव प्रिय बोलने वाले खुशामदी लोगों का लाभ सहल है परन्तु कडुआ और हितकारी बचनों का कहने वाला सं

उनसे शास्त्रार्थ करनेको उद्यतभी हों उत्तर के स्थान में उन्हें वैसीही दुर्वचन पुष्पाञ्जलि का लाभ होगा (५) इससे अतिरिक्त और कुछ भी सार उसमें से नहीं निकलेगा सिवाय इसके सम्बत् १९२६ में जो कुछ शास्त्रार्थ हुआथा उसीको उक्त स्वामीजी नहीं मानते तो अब आगे उन से क्या आशा है ॥ निदान स्वामीजी महाराज से तो अब काशी के पंडित लोग फिर शास्त्रार्थ करते नहीं दिखलाई देते किन्तु स्वामीजी महाराज यदि अपने किसी गुरु को आगे खड़ा करके शास्त्रार्थ करना चाहें तो क्या आश्चर्य है कि फिर भी यहां के पंडित लोग बद्धपरिकर होजावें ॥

बलिहारी है पंडित बालशास्त्रीजी महाराज के चतुराई के भरेहुए इस उत्तरकी वाह खूब ही निश्चिन्त हुए जन्म भर को यदि स्वामीजी के गुरु विद्यमान होते तो निस्सन्देह शास्त्रीजी महाराज को स्वामीजी महाराज के दादा गुरू का नाम लेना पड़ता — कहिये आर्यगण उपरोक्त लेखों को अवलोकन किये पीछे कौन

सार में नहीं वह भी होय तो उसकी वैसी बातों का सुनने वाला कहां यह प्रत्यक्ष दृष्टान्त यहां फबता है परन मालूम कि ऐसे बचनों को इस प्रसङ्ग पर शास्त्रीजी क्यों भूलगये ॥

(५) जब कि सम्बत् १९२६ का शास्त्रार्थ साक्षी (गवाह) है तो कभी यह दूषण स्वामीजी पर नहीं आसक्ता और वास्तव्य में दुर्बचनों का ही डर शास्त्रीजी को था तो पक्के काग़ज़ पर इस की शर्त (प्रतिज्ञा) लिखा लेने से दूर हो सक्ताथा सत्य तो यही है कि महाराजजी में साहस और सामर्थ्य स्वामीजी के सन्मुख बैठ शास्त्रार्थ करने का नहीं और लाभ इस शास्त्रार्थ से वे होते जो स्वामीजी ने ऊपर सातवें प्रश्नोत्तर में लिखे हैं ॥

ऐसा न्यायाधीश होगा जो श्रीमान्स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी महाराज को दिग्विजयी ऊए नहीं कहेगा क्योंकि भूगोल भर में विद्या का घर आर्य्यावर्त और आर्यावर्त में काशी और काशी भर के पंडितों में स्वामी विशुद्धानन्दजी और श्रीयुत बालशास्त्रीजी समझेजाते हैं तो बस सिद्ध ऊआ कि इनको परास्त करने वाला अवश्य दिग्विजयी कहावेगा सुहृद्गण हार दो प्रकार की होती है प्रथम यह कि लड़कर परास्त होजाय दूसरी यह कि डरकर सन्मुख न आवे सो दोनों प्रकार की हार श्रीमान् स्वामीजी महाराज इनको दे चुके प्रथम हार संवत् १९२६ के शास्त्रार्थ से और दूसरी बारं बार के विज्ञापन और भ्रमोच्छेदनके १० प्रश्नोत्तर और पण्डित बालशास्त्रीजी महाराज के दिये उत्तर द्वारा अच्छे प्रकार प्रसिद्ध है प्यारे भारतवासियो वेदों में लिखा है कि "सत्यमेव जयति नानृतम्" अर्थ कि सदैव सत्य ही का जय होता है कभी असत्य का नहीं सो सब चमत्कार आप लोग यहां अपने नेत्रों से देख चुके कि श्रीजी महाराज का मत सत्य है इसी लिये उन का विजय और मिथ्या मतवालों का पराजय सर्वत्र सार्वकाल ऊआ और होता ही रहेगा एतदर्थ सब लोगों से वारंवार यही प्रार्थना कीजाती है कि जिसप्रकार हो सब लोग सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग करने में पुरुषार्थ करें जिससे दोनों लोक बनें ॥

इति श्रीमद्दिग्विजयार्कीय प्रथमांके पौराणमतखंडनम् नाम तृतीयो मयूखः ३

जैनमत मिथ्यात्वप्रदर्शनम्

४ मयूख

जैनमत मिथ्यात्व प्रदर्शनम्

विदित हो कि श्रीयुत दिग्विजयी महाराज सर्वत्र अपने व्याख्यानोंमें जैनियों के मत का भी खण्डन बराबर करते हैं परन्तु अब तक कोई ऐसा प्रसंग नहीं आया कि उन लोगों ने कहीं सन्मुख बैठ शास्त्रार्थ किया हो इस सम्बत् सर में जैनियों के पुजारी लाला ठाकुरदास नगर गुजरान वाला मुल्क पंजाबवाले ने कुछ छेड़ छाड़ की थी उस का कुछ वृत्तान्त अनुष्टुप् प्रकार से सब को विदित होनेके लिये यहां लिखा गया है और दो आर्य समाचारपत्र मेरठ का सार है॥

अर्सा एक साल से हमारे एक जैनी भाई लाला ठाकुरदास जी आपेसे बाहर होगये हैं अपना समय निरा बे मतलब तू तू मैं मैं में खोते हैं और दूसरों का भी उस के देखने सुन्ने से ख़राब कर रहे हैं कभी तो सत्यार्थ प्रकाश के १२ वे समुल्लास के लेख का सबूत तलब करते कभी नालिश तौहीन मज़हबी की धमकी देते कभी अख़बारों के द्वारा यह प्रकाशित करते हैं कि स्वामी दयानन्दजी रूपोश हो गए हम उन पर इस हफ़्ते में अवश्य नालिश करेंगे - पहिले तो हम लोग ख़ामोश रहे जब उनके अत्याचार से चुप बैठना और ही कुछ भाषित होने लगा तब नाचार उत्तर देने ही पड़ा वहां क्या था वे यह समझते थे कि हमारी मत सम्बन्धी किताबें जब हमीं को ब मुश्किल मिलती हैं तो स्वामी जी क्यों कर पावेंगे आख़िर कार मजबूर हो कर अपना लिखा-

खुद काटेंगे ॥ दूसरे यह भी जानते होंगे कि इस नाहक़ की तूतू मैं मैं से मेरा नाम भी मत हितैषियों में गिना जावेगा ॥ इनका पहिला मनोरथ तो सिद्ध न हुआ रहा दूसरा वह अच्छा न सही तो खैर बुरे ही नाम से प्रसिद्ध हो गया जब पहिले पत्र का उत्तर इन्को मिला तो इधर से मुंह मोड़ दूसरा ही जोड़ तोड़ लड़ाया अर्थात् अख़बारों पर दांत निकाले और उसी के साथ आनन्दलाल मंत्री आर्य समाज मेरठ पर भी क्रोधित हुए और इश्तिहार इस मज़मून का दिया कि स्वामीजी तो हमारी तौहीन मज़्हबी के कारण बमूजिब दफ़े २९५ ताज़ीरात हिन्द अपराधी ठहर चुके, जो तुम और दूसरे समाजी लोग भी इस तहरीर में शरीक हो और इसको सच मानते हो तो तुम लोग भी उस अपराध में शामिल किये जाओगे. पहिले तो हमने इसपर भी चुप होना उचित जाना परन्तु फिर चन्द बातों से अनुचित जान उनके प्रश्नों के उत्तर नीचे लिखे अनुसार दिये (प्रश्न) सत्यार्थ प्रकाश में जो श्लोक लिखे हैं जैनियों के किस शास्त्र अथवा ग्रन्थ के हैं, (उत्तर) यह सब श्लोक आप लोगों के बृहस्पती के मान्ने वाले चार्वाक मत के शास्त्र और ग्रन्थों के हैं इसी प्रकार जो जो सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है जानलो कि वह सब ठीक २ है ॥

पहिली पत्री के उत्तर में ठाकुरदास आदि को लिख दिया गया था कि यदि आप जैन मत के सब शास्त्रों का ब्यौरा जानते होते तो सत्यार्थ प्रकाश पर सन्देह न करते और आप लोगों के उत्तर में देर इस कारण हुई कि अगर कोई सत्पुरुषों की भांति लिखता तो उत्तर तुरन्त दिया जाता ॥ लुधियाना के सरावगियों ने मुनासिब तौर

पर लिखा तो उत्तर भी तुरन्त दियागया बरन यह भी लिखदिया कि सब प्रश्न एकहीबेर लिखो तो सब उत्तर एकसाथ देदिये जावें और स्वामीजीने यह भी लिखा कि अगर चिट्ठीकी जगह आमनेसामने बातें होजावें तो बहुत ही उत्तम है लेकिन उन लोगोंने भी इसके उत्तर में वही ठाकुरदास के प्रश्न लिखभेजे और आत्माराम जीने समागम से इन्कार करदिया॥ ठाकुरदासजीका यह हाल है कि उनके प्रथम ही पत्र में संस्कृत और भाषामें अनेक दोष थे॥ और प्रति पत्र में ऐसी बातें लिखते हैं कि जो सत्पुरुषोंके योग्य नहीं। उनके यहां एक आत्मारामजी योग्य हैं वे खुद लिखापढ़ी आदिकामोंसे बचकर न मालूम क्यों ठाकुरदासजीसे हीस्वामीजीका सामना कराते हैं यह बात सत्पुरुषोंको कर्तव्य नहीं अबभी समझें और अपने मतके किसी योग्य पंडितको इसमें शामिल करें जिससे सत्यासत्य विचार होजावे॥ इस प्रकार ठाकुरदासजीको लिखे पीछे आत्मारामजी सेभी जो लिखापढ़ी हुई उसमें से हम एक पत्र का ठीक आशय आगे लिखते हैं॥

पत्र श्रीस्वामीजीका बनाम आत्मारामजी

पंडित आत्मारामजी नमस्ते॥ पत्र आपका ता० ४ नवम्बरकालिखा हुआ १० नवम्बर सन् १८८२ को संध्यासमय मेरे पास पहुंचा देखकर आनन्द हुआ अब आप के प्रश्नों का उत्तर लिखता हूं॥

(प्रश्न नं०१) सत्यार्थप्रकाश समुल्लास १२ पृष्ठ ३९६ पंक्ति १६ में लिखा है कि जब प्रलय होता है तो पुंगल जुदे २ होजाते हैं॥ ऐसा नहीं (जवाब) मैंने ठाकुरदासजीके जवाब में एक पत्र आर्य समाज गुजरानवाला की मार्फ़त भेजा था जो आपके पासभी पहुंचा

होगा उसमें यह जतलाया गया है कि जैन और बौद्ध दोनों एकही हैं बाज़ जगह महावीर तीर्थंगरों को बुध और बौद्ध आदि शब्दों से पुकारते हैं और कई जगह जन, जैन, जनवर, जैनेन्द्र आदि नाम से भी बोलते हैं और जिन को चारवाक बौद्ध की शाखें में कहते हैं उन्हीं को लोग बुध, स्वंगबुद्ध, और चार बुध, वगैरः कहते हैं आप अपने ग्रंथों में देख लीजिये (ग्रंथ हूकसार पृष्ट ६५ पं. १२) बुध, बौद्ध यह एक सिद्ध अनेक सिद्ध भगवान् हैं (पृ. ११३ पं. ७ पुस्तक मज़कूर) चार बुध की कथा (पृ. १२७ पं. ८) हर एक बुध की कथा (पृ० १३८ पं०) स्वंग बुध की कथा (पृ. १५२ प. १४) चार बुध समकाल मोक्ष को गये इसी तरह आपके ग्रन्थों में कथा साफ़ २ मौजूद है जिस को कोई स्रावक वरिखिलाफ़ न कह सकेंगे और ठाकुरदास की पहिली चिट्ठी में आप लोग कई श्लोक मंज़ूर भी कर चुके हैं उस चिट्ठी की नक़ल मेरठ में है आपके पास भी होगी (कल्पभाष्य भूमिका) जिसमें राजा शिवप्रसादजी ने अपने जैन मत स्थित पिता आदि पुरखाओं की परम्परा का हाल लिखा है उनकी भी गवाही देख लीजिये॥ इतिहासतिमिरनाशक खंड ३ पृ० ८ पं. २१ से पृ. ९ की पंक्ति ३२ तक साफ़ लिखा है कि जैन और बौद्ध एक ही के नाम हैं — अब रहे बौद्ध की शाखाओं के भेद सो चारवाक आभावक आदि हैं — जैसे आपके यहां श्वेताम्बर आदि भेद हैं और जैसे पुराण मत में रामानुजी आदि वैष्णवी शाखा और पाशुपति आदि शैवों में और वाममार्गी आदि दस महाविद्या की शाखें और ईसाईयों में रोमन कैथलिक आदि और मुसलमानों में शीया और सुन्नी आदि शाखें के चन्द दर चन्द भेद हैं परन्तु

वेद बाइबिल और कुरान के फ़िरक़ों में वह एक ही समझे जाते हैं इसी तरह बौद्ध और जैन की शाखें जुदी २ हैं मगर जैन या बौद्ध मत एक ही हैं अगर आप सब सिद्धान्त से जानकार होते और ग्रन्थ देखे होते तो सत्यार्थ प्रकाश में जो लेख उत्पत्ति और प्रलय के बाब में है उस पर शंका कभी न करते-(सत्यार्थ प्रकाश ष्ट॰ ३६७ पं॰ २४) आदमी आदि को ज्ञान है ज्ञान से वह गुनाह करते हैं इस लिये उनको दुःख देने में दोष नहीं ॥ यह बात जैन मत में नहीं (उत्तर) ग्रन्थ हुकसार में ष्ट॰ २२८ पं॰ १५ से लेके पं॰ १९ तक देख लीजिये क्या लिखा है यानी सोजन आदि समुदाय की आज्ञा जैसे दशान्व कुमार ने बछके क्रम से बौद्ध रूप रचना करके पम॰ रवी नाम पुरोहित को कि वह जिन का बैरी था लात से मार के सातवें नर्क में भेजा ॥ ऐसे ही और और बातें (प्रश्न ३) सत्यार्थप्रकाश ष्ट॰ ३९९ पं॰ ३ उस का पद्मशिला पर बैठ कर चराचर को देखना॰ (उत्तर) पुस्तक रत्नसार भाग ष्ट॰ २३ पं॰ १२ से ले के ष्ट॰ २४ पं॰ २४ तक देख लीजिये कि महाबीर और गौतम की चर्चा में क्या लिखा है (प्रश्न ४) सत्यार्थ प्रकाश ष्ट॰ ४०१ पं॰ २३ उन के मत में न हो वह अगर सत्पुरुष भी होय तो भी सेवा नहीं करते अर्थात् जल तक न॰ हीं देते (उत्तर ४) पुस्तक हुकसार ष्ट॰ २२१ पं॰ ३ से लेकर पं॰ ८ तक लिखा है देख लीजिये (प्रश्न ५) सत्यार्थ प्रकाश ष्ट॰ ४०१ पं॰ २७ उनका साधू जब आता है तो जैन लोग उस की डाढ़ी मूछ और सिर के बाल सब नोच लेते हैं (उत्तर ५) ग्रन्थ कल्पभाष्य॰ ष्ट॰ १०८ पं॰ ४ से ले के ९ तक देख लीजिये और प्रत्येक ग्रन्थ में दी॰ क्षा के समय अर्थात् चेला बनाने के समय पांच मुट्ठी बाल नोचना

लिखा है वह काम अपने हाथ अथवा चेला या गुरु के हाथ से होता है और विशेष कर ढोढियों में है (प्रश्न ६) सत्यार्थप्रकाश पृ० ४०२ पं० २० से ले के जो श्लोक जैनियों के बनाये लिखे हैं वह जैन मत के नहीं हैं (उत्तर ६) में इस का उत्तर इससे पहिले पत्र में लिख चुका हूं आप के पास पहुंचा होगा देखली जिये ॥

(प्र० ७) सत्य० पृ० ४०३ पं० ११ अर्थ काम दोनों पदार्थ मानते हैं (उ० ७) यह मत जैन सम्बन्धी संप्रदाय चारवाक का है जिसमें ऐसे २ श्लोक कि जब तक जिये सुख जिये मौत पोशीदा नहीं,, खाक शुदा जिस्म में फिर आना नहीं आदि -अपने मत के माने हैं इसी तरह और काम शास्त्र के अनुसार अर्थ और दो हे बनाए और माने गये हैं यह संक्षेप से उत्तर हुए क्योंकि पत्र द्वारा ब्योरा नहीं खुल सक्ता। जब कभी मैं और आप मिलेंगे तो दलीलों से ठीक २ निश्चय करा सक्ता हूं और जो कुछ संदेह सत्या० के १२ वें समु० में होवें मेरठ के आर्य्य समाज की मार्फ़त लिखकर भेज दीजिये सब का ठीक २ उत्तर दिया जावेगा अब मैं यहां थोडे दिन रहूंगा अगर आप अम्बाला तक आसकें तो ता० १७ नवम्बर सन् १८८० तक सुबह के आठ बजे से पहले देरादून और उसके बाद आगरे में मुझ को तार में खबर देनी चाहिये कि मैं शास्त्रार्थ के वास्ते आसकूं दाना को इतना ही बहुत है सं० १९३७ मिती कार्तिक शुदी १२ इतवार॥

॥ द० दयादन्द सरस्वतीजी देरादून से ॥

अख़बार आफ़ताब १२ फ़र्वरी सं० १८८१ ई० में जो आख़िरी नोटिस गुजरानवाला की क़ौम जैनी की तरफ़ से छपा है उस से प्रकट हुआ कि वह पुराना झगड़ा जो उन्होंने स्वामी दयानन्द सरस्वतीजीके

उस लेख पर जिस्में कि उन्हों ने जैनियों के पुस्तक और उनके सि-
द्धान्त पर नुक्ता चीनी की अर्थात् दोष लगाये। एक छोटी बात का
बड़ा भारी तूमार बांध के कोर्ट में फ़ैसला उचित समझा है। देखि-
ये इन्हों ने नोटिस का उत्तर जो ६ दिसम्बर को इसी अख़बार में
छपा था कुछ लिहाज़ न किया और शर (झगड़ा) बढ़ाने पर मुस्तैद
रहे मुकाम इनसाफ़ है कि जब दयानन्द सरस्वतीजी ने इस क़ौम
के सवालों का जवाब बतफ़सील सुफ़ाबसतर लिखा फिर कौनसी
बात बाक़ी रह गई यह मुक़द्दमा इस वजह का है कि स्वामी दयान
न्दजी ने जो हमारे मज़हब की नुक्ता चीनी की है वह गोया हमारी
तौहीन मज़हबी है मगर हम कहते हैं कि जिस मज़हब व मिल्ल
त पर ख़ूब पक्की बहिस की जावे वह एक तरह की पक्की नुक्ताचीनी
है न तौहीन मज़हबी हां जो बनावटी दलील केवल कपोल कल्पि
त हो तो ज़रूर हो सक्ता है अथवा यह कि जो किसी ख़ास मज़हब
पर बहस करे वह तौहीन मज़हबी के इल्ज़ाम का मुलज़िम दो
षी ठहर सक्ता है ॥ नहीं तो हरगिज़ नहीं,, बाज़ पाठक जन और
दूसरे लोग जैनियों के विज्ञापनों से यह समझते हैं कि स्वामीजी उ
न से फ़ैसला क्यों नहीं करते यह ख़्याल केवल उनको असली बात
से न जान्ने के कारण है क्योंकि स्वामीजी ने सब पर जैनीमत की स
त्यता और असत्यता प्रगट करदी ॥ बाज़ लोग कहते हैं कि जैनी
क़ौम ऐसी वैसी नहीं जो ज़रासी बात पर मुक़द्दमा करे पस इसकी
कुछ और वजह होगी ॥ यक़ीनन् ख़ास सबब यह है कि एक ही
आदमी अपना नाम करने को यह जाल करता है और अप
ने तमाम मतवालों को इस में शामिल करता है गोकि बाक़ी-

तमाम मतवाले इसे बुरा ख़्याल करते हैं - अब हम सब से कहते हैं कि बार बार नालिश की धमकी न दें बरन जो कहते हैं सो कर दिखावें और उस का नतीजा पावें ॥

स्वामी जी के द्वितीय पत्र का संक्षेप

आनन्द विजय आत्माराम जी नमस्ते । आप के पत्र लिखित सब समाचार विदित हुए जो आपने लिखा कि बौद्ध और जैन के एक मानने से हमारी हतक इज़्ज़त नहीं इससे आनन्द हुआ मगर यह जो आपने लिखा कि योगाचार आदि चार मत जिस बौद्ध के हैं वह जैनमत के एक अलग शास्त्र का है इसका जवाब मैं भेज चुका और आपके इस क़ौल से कि इसमें क्या अजब है कि महाबीर तीर्थंकर के समय में चारवाक मज़हब था उन से पीछे नहीं हुआ ॥ मुझ को निहायत हैरानी हुई क्या जो महाबीर तीर्थंकर के पहिले २३ तीर्थंकर हुए उन सब के पहिले चारवाक मज़हब को आप साबित नहीं कर सक्ते अगर कुछ शक होय तो लीजिये कि ऋषभदेव भी चारवाक मज़हब से चले हैं फिर इस का उत्तर क्योंकर दोगे दूसरे प्रश्न के बाब में जो आप ने लिखा - क्या यह तहरीर सत्य के उत्तर में नहीं समझी बड़े अफ़सोस की बात है कि आप सीधी बात को उल्टा समझे, तीसरे प्रश्न के उत्तर में जो प्राकृत का श्लोक लिखकर उस का समझना मेरे ऊपर छोड़ा इस से प्रकट है कि आप यह जानते होंगे कि मैं उसके मानी तक न पहुंचूंगा हां मैं सब मुल्कों की बोली नहीं जानता सिर्फ़ चंद देशों की बोली और संस्कृत जानता हूं परन्तु मत सम्बन्धी सिद्धान्तों को विद्वानों के सत् संग से अच्छे प्रकार जानता हूं आप लोगों ने अपनी भाषा ऐसी बिगाड़ी है और ऐसे अप्रसिद्ध

शब्द बनाये हैं ताकि दूसरा उसे न समझे जैसे किसी २ने शराब का नाम (तीर्थ) और मांस का नाम पुष्प आदि बना लिये हैं देखि· ये आप ऐसे विद्वान होकर मूर्ख को मूरष लिखते हैं कैसा दुख· का विषय है कि आपलोग संस्कृत का क्या ज़िकर भाषा भी नहीं जा नते चौथे सवाल का उत्तर बड़ा हैरान करने वाला है – अधिक तब सीखा जाता है जब सीखने वाले से सिखाने वाला विशेष जानता हो आपभी शायद इसे मानते होंगे – यह बात विद्वानों की नहीं कि अपने ही मत के विद्वानों को माननीय ठहराना और दूसरे मतके वि द्वानों को इससे बिरुद्ध ग़रज़ इन छः निषेधों का कलंक आपकोऐसा लिपटगया कि जब ईश्वर ही चाहे तब छूटे अबजो आपके ग्रंथों में हमारी तोहीन मज़हबी साफ़ २ लिखी है उस का उत्तर व वापसीडां क व हवाला सफ़ा और सतर दीजिये ॥

ढूंढकसार पर प्रश्न

(१) ढूंढक॰ पृ॰ १० पं॰ १ में लिखा है कि श्रीकृष्ण नर्क को गया ॥

(२) ढूंढक॰ पृष्ठ ४० पं॰ ८ से १० तक कि हरीहर ब्रह्मा सद्देव राम कृष्ण आदि कामी क्रोधी अज्ञानी स्त्रियों के दोषी पाषाण कीनौका आप डूबें औरों को डुबावें ॥

(३) ढूंढक॰ पृ॰ २२४ पं॰ ९ से पृ॰ २२५ पं॰ १५ तक में लिखाहैकि ब्रह्मा विष्णु महादेव आदि सब अदेवता और अपूज्य हैं ॥

(४) ढूंढक॰ पृ॰ ५५ पं॰ १२ में लिखा है कि गंगा आदि तीर्थ औ र काशी आदि क्षेत्रों से कुछ भी परमार्थ सिद्ध नहीं होना ॥

(५) ढूं॰ पृ॰ १३८ पं॰ ३० से लिखा है कि जैनी साधू भ्रष्ट भी होय तो गैर के साधुओं से उत्तम है ॥ (६) ढूं॰पृ॰ पं॰ १ से ले कर

लिखा है कि जैनियों में बौद्ध आदि शाखें हैं ॥

अख़बार लाहौर १९ मार्च सन् १८८१ ई०

जब स्वामीजीने सब प्रश्नों के उत्तर जो आत्मारामने ठाकुरदास के द्वारा प्रगट किये लिख दिये और साफ़ लिख दिया कि और पूछना होय तो सामने हो कर पूंछ लें जब कि वे न सामने आते और न प्रश्नों के उत्तर मानते तो मालूम होता है कि अब कायल होगये या आयन्दा होजाने का खौफ़ करते हैं अगर ऐसा न होता तो स्वामी जी की रूपोशी आदि के झूठे नोटिस न छपवाते इससे तो एक प्रकार की उन लोगों की बदनामी और हंसी होतीहै जबस्वामीजीने लिखदिया कि १७ नवम्बर स०१८८० तक देरादून और बादउसके आगरा और आगरे में स्पीच देना प्रगट । तो कैसे रूपोशीका गुमान हो सक्ता है ॥ और मेरठसे भी पता साफ़ २ लिखदिया लेकिन ठाकुरदास ने नोटिस न देरादून भेजा न आगरा बरन गुजरानवाला में भेजा इससे ज़रा शर्माना चाहिये था नकि औरभी धूलउड़ाना पूज्य साहिब जो सामने होकरवार्ता नहीं कर सक्के तो उनके पण्डित हरजगह मौजूद हैं उनके द्वारा फ़ैसला क्यों नकरलिया अख़बार आम और मित्रबिलास में झूठीऔरनिरी असत्यबातें उनकी तरफ़ से बहुत कुछ छपती हैं बहउनकी क़ौम को बदनाम करती हैं क्योंकि जो एक भी सारे क़ौम में बुरी बात करे तो सारी क़ौम बदनाम होजाती है आशा है कि इस पर ख़ुद ध्यान धरेंगे ॥

लो और सुनो

लाला ठाकुरदासने एक इश्तहार के द्वारा अपना मन्शा नालिश

तो हीन मज़हबी का ज़ाहिर किया और पूछा कि सब आर्य समाज सत्या० के लेख को सत्य मानते हैं या नहीं अगर मानते हों तो वह भी इस इलज़ाम में शरीक हैं — इस से ऐसा मालूम होता है कि यह सब आर्य समाजों में भेजा गया इसलिये सब की इत्तला के वास्ते यह छापा जाता है प्रगट हो कि जब स्वामीजी यहीं थे तभी ठाकुरदास ने यह पूछा था कि सत्या० में जो जैनी मत की बातें लिखी हैं वह किस पुस्तक से ले कर लिखी हैं और जैनी व बौद्धों का एक होना कहां से साबित — इस के उत्तर भेजे गये और लिखा कि कोई वक़्त नियत करके वार्ता कर लो उस का आख़री जवाब यह दिया कि हम नालिश करेंगे ख़ैर यह उन की मर्ज़ी हमारे समाज से यह जवाब मिला कि हम लोग सब स्वामीजी के हर तरह से साथी हैं और उन के कहे की पुष्टि भी अपनी शक्ति के अनुसार करेंगे सत्या० के पृ० ३९६ से पृ० ४०७ तक जो देखेगा साफ़ लाला साहिब की भूल जान लेगा इस से प्रगट है कि उन्होंने उस्को बुद्धिमानी के सूर्य के सामने तो नहीं परन्तु मत पक्ष के अंधेरे में पड़ कर देखा कुसूर माफ़, लाला साहब सत्या० के समझने के अलावा क़ानून भी ख़ूब समझ सक्ते हैं देखिये जिस्में बहुत सज़ा इस बारे में लिखी है उसी को ढूंढ लिया नहीं मालूम कि लाला साहिब ने हम लोगों को दोषी ठैराने से अपना क्या मनोरथ सिद्ध समझा वे क्या यह नहीं जानते कि अगर कोई किसी को सच्चा समझे और इस से उस की झूंठी तहरीर पर (कि जिस से किसी को ख़िलाफ़ क़ानून कुछ रंज पहुंचा हो) सच्चा ख़्याल करे तो वह दोषी नहीं हो सक्ता हांशायद इंग्लिश ला अर्थात् सर्कारी क़ानून का कोई पुराना मसला हो

जिस से हम पर भी क़ानून का असर पहुंचे या कोई जैन मत कीरा जनीति ॥

आश्चर्य की बात कि नालिश किया चाहते हैं तिस पर भी स्वामी जी की तोहीन करते हां शायद वह अपने को क़ानूनी असर से बाहर समझते हों ख़ैर वह जानें और उन का काम जानें हम अपनी सभा के नियमानुसार चिताते हैं ॥

देखिये हम को दोषी ठहराने में किस की ख़ता है अगर स्वामीजी की तहरीर ग़लत समझते होते तो क्या उस पर ऊलजलूल लिखना भले आदमियों का काम था, ख़ैर जो जैन मत बौद्ध की शाखा केवल ठाकुर दास के कहने से नहीं तो न सही हमने तो राजा शिवप्रसाद साहब सी. ऐस. आई की इतिहासतिमिरनाशक तृतीय खण्ड पृ० ८ के लेख को जो ख़ुद जैन मत के हैं और २ चंद दलीलों से मान लिया है जो झूठ होय तो कोई खंडन लिखे अगर ठीक होगा तो कोई न कह सकेगा अगर कोई डरा कर झूठ बुलवाना चाहे तो यह जीते जी होना नहीं क्योंकि सच बोलना हमारा प्रथम धर्म है और यों तो हम ख़ुद अपनी खाकसारी का इक़रार इस शेर के मुवाफ़िक करते हैं ॥

ज़बां खोलेंगे क्या हम पर मुद्दई बद शआरी से ॥
कि हमने ख़ाक भर दी उनके मुंह में ख़ाकसारी से ॥

सारांश - बेमतलब शेख़ी लाला साहिब की तरह मारना हम से नहीं हो सक्ता जिसको जो अच्छा लगे करे हम तो अपने देशवालों को झूठों के झूठे दोष से जानकार करते हैं अगर अब भी न मानेंगे तो पछतावेंगे ॥ द० आनन्दलाल मंत्री आर्य समाज मेरठ

राजधानी मरूदा ज़िला अजमेर

मैं एक पाखंडी ढोंढिये नाम की ज़ाति जो मुख पर कपड़ा डाले रहती है बड़ुत बसती है उन लोगों ने अपने दो पुजारी श्री स्वामीजी से शास्त्रार्थ करने को बुलाये वे सात दिन तक टाल वटाल करते रहे राम बाग़ की तरफ़ का मार्ग छोड़ दिया आठवें दिन स्वामीजी ने दूसरे मार्ग पर जा घेरा उतने में कई सवारों समेत महाराजे बहादुरसिंह भी आगये और कहा कि आज जैन मत पर निर्णय करलो पीछे से बड़ुत बका करते हो उसी दम स्वामीजी खंडन करने लगे तबतो बड़ुत घबड़ाये और कहा कि हम ऐसे नहीं बोलते तुम भी मुखपर कपड़ा बांधलो तब शास्त्रार्थ करेंगे स्वामीजी ने कहा कि उसके लाभ सिद्ध करो तो बांधलेंगे निदान कुछ न कहकर प्राणलेभागे पीछे से स्वामीजी ने बड़ुत से खण्डन लिख भेजे उन्हों ने बत्तीस ग्रन्थों का नाम लिखकर लिखा कि इनमें हमारे मतका विवर्णन लिखा है देखलीजिये उन्हों ने जाना न स्वामीजी को यह ग्रंथ मिलेंगे न अगाड़ी बात चलेगी स्वामीजी ने उसी दम कई पुस्तक राजा साहब के पास भेजकर कहला भेजा कि आप उनको सामने बुलवाकर उन से लाभ देखिये तब से उनके छक्के छूटगये घर से बाहर नहीं निकलते उसका असर और उस मत का मिथ्यात्व उस मतवालों परऐसाप्रकाशित ड़ुआ कि जबसे बड़ुत लोग स्वामीजी के व्याख्यानों में आने लगे और आते ही जाते हैं ईश्वर सदैव सत्य धर्म की जय करे॥

इति श्री मद्दिग्विजयार्कीय प्रथमांके जैन मत मिथ्यात्व विवर्णनन्नाम चतुर्थो मयूखः ॥ ४॥

श्री मद्दिग्विजयार्क

यावनी मत खण्डनम्

नगर जालंधर के मुसल्मानों के साथ

श्री स्वामीजी महाराज का शास्त्रार्थ

फ़क़ीर मुहम्मद मीर ज़ामू जालंधरी सभ्यगणों को इस रिसाले के तैयार होने के कारणों से आगाह करता है कि तारीख़ १३ सितम्बर सन् १८७७ ई॰ को स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी साहब जालंधर में भी बतौर दौरे के तशरीफ़ लाये और जनाब फ़ैज़ माब सरदार बावकार विक्रमसिंह साहब आहलूवालिया की कोठी में फ़रोकश होकर वेद के मुताबिक़ जिसको वह कलाम इलाही तसव्वुर करते हैं कथा सुनाने लगे फ़क़ीर ने सरदार साहब मम्दूह की ख़िदमत आलिया में दरख़्वास्त की कि स्वामी साहब और मोलबी अहमद हुसेन साहब की गुफ़्तगू भी किसी माक़ूली मसले में सुननी चाहिये जनाब मम्दूह ने पसन्द किया और स्वामीजी ने भी क़ुबूल करके २४ सितम्बर के ७ बजे सुबह का वक़्त क़रार दिया मोलवी साहब वक़्त मुअय्यनह पर ख़ास व आम हिन्दू व मुसल्मान शहर के आ गये मुबाहसा अर्थात् शास्त्रार्थ हस्ब ख़्वाहिश मोलबी साहब मसले तनासुख़ और स्वामीजी की मर्ज़ी के मुताबिक़ मसले करामात मुक़र्रर हुआ यानी स्वामीजी तनासुख़ (पुनर्जन्म) को साबित करें और मोलबी साहब उसकी तरदीद (खण्डन) करें-और मोलबी साहब अहलअल्लाह की करामत साबित करें और स्वामी साहब उसकी तरदीद (खण्डन) करें गुफ़्तगू शुरू होने से पहले यह बात

भी करार पाई कि तुर्फैन (दोनोंतर्फ़) से कोई शख़्स ख़िलाफ़ त-हज़ीब (सभ्यता) गुफ़्तगू न करेगा और स्वामीजी की तरफ़ से यह भी प्रकाशित हुआ कि कोई साहब इस गुफ़्तगू ख़तम होने पर हारजीत तसव्वुर न करें अगर करेगा तो मुतअस्सिब (पक्षपाती) और जाहिल समझाजायगा क्योंकि यह मसाइल ऐसे नहीं हैं कि दो तीन की गुफ़्तगू में तसफ़िया होजाय या हारजीत मुतसव्वुर हो मगर हां जब रिसाला गुफ़्तगू बाहमी तबे होगा (छपेगा) तो ख़ुद हाथ कंकन को आरसी का मसला होगा और आक़िलां ख़ुद मेदानन्द का ज़हूर जो सवाल जवाब होंगे वह बाद दस्तख़तला लाअमीरचंद्र साहब और मुन्शी मुहम्मद हुसेन साहब मतबूद तबा होंगे (छपेंगे) बाद ख़तम होने गुफ़्तगू के मौलवी साहब की तरफ़ से ख़िलाफ़ अम्ल आलमाना सरज़द हुआ बनज़र इन्सा-फ़ उसको भी ज़ाहिर करदेना मुनासिब है और वह यह है कि बाद तमाम होने गुफ़्तगू के मोलवी साहब इमामनासिरुद्दीन के दर वाज़े पर गये और कुछ फ़खरिया वाज़ सुना कर मुसल्मान हाज़-रीन से अपने नमूद बेवजूद की शुहरत के तलबगार हुए अर्थात् मुसल्मानों से कहा कि आप लोग अभी कोई ऐसी तजवीज़ करें कि जिस में मैं जीता नहीं तो भी मेरी हीजीत प्रसिद्ध होजाय अगर्चि अहिल इल्म और वज़ादार मुसलमान इस शुहरत (मिथ्याप्रसिद्धी) की ख़्वाहिश को जाहलों का खेल समझ कर किनाराकश होगये म गर जुलाहे आदि वे लोग जो मुर्ग़ लाल और बटेर और अगन वग़ै र: की लड़ाई को आदी और हारजीत की शुहरत के शायक़ हैं उ-न्होंने मोलवी साहब को बाज़ी याफ़ता क़रार दिया और घोड़े पर

चढा कर शहर के गली कूचों में खूब फिराया और जीत हार का गुल मचाया मगर खास वज़ादार और मुअज़्ज़िज़ आदमियों ने इसे बहुत ना पसन्द किया ॥

इस मुबाहिसे की सवाल जवाब नाम की एक किताब है उसकी दीबाचा अर्थात् भूमिका की यह नकल है जो ऊपर लिखी है चूंकि इसके देखने ही से असल हाल खुल जाता है इस लिये अगाड़ी के सवाल जवाब नहीं लिखे गये उक्त किताब के अंत में बड़े दो प्रतिष्ठित रईसों ने यह इबारत लिख दस्तखत किये हैं कि हमारे रोबरू जो मरातिब गुफ़्तगू मुअय्यन हुए थे वह वाक़ई यही थे जो इस दीबाचा में दर्ज हैं ॥

द॰ लाला अमीरचंद साहब द॰ मुहम्मद हुसेन महमूद

आर्य गण देखिये मौलवी साहब कैसे एक निराले ढंग से बिजयी प्रसिद्ध हुए पर यह नहीं जानते थे कि सरदार बिक्रमासिंह इस मुबाहिसे की किताब छपवा कर सब ठौर भेजेंगे उसके साथ कभी मौलवी साहब का घोड़ा और ताशों की आवाज़ नहीं पहुंचेगी ॥

श्री मद्दिग्विजय

मेरठ नगर के मुसल्मानों की धूम धाम

सन् ७८ ई० में स्वामीजी महाराज ने मुकाम मेरठ में मुसल्मानी मत पर बहुत सी बातें अपने व्याख्यानों में सुनाईं उस पर एक रोज़ मौलवी महम्मद अबदुल्ला साहब साकिन मेरठ मुहल्ले शामी पाड़ा ने स्वामीजी को यह लिख भेजा कि आप मुसल्मानी मत पर बहुत कुछ एतराज़ करते हैं और यह भी कहते हैं कि जिसका दिल चाहे हम से बहिस करे हम उसका तुरंत जवाब देवेंगे सो इस मुबाहिसे में बहुत सी शर्तें हैं उन में से पांच मुख्य - अव्वल यह है कि कोई सालिस अर्थात् मध्यस्थ ज़रूर हो, दोयम यह कि जब तक मुबाहिसा पूरा होवे आप कहीं चले न जावें, सेवम् यह कि हमारे तुम्हारे बीच और कोई न बोले, चहारम यह कि खुदा को हाज़िर नाज़िर समझ पक्षपात छोड़ बातचीत होवे हारे सो अपनी हार क़बूल करलेवे, पंजुम यह कि कोई रईस बंदोवस्त करने वाला रहे ॥ ६ बजे से ४ बजे तक मुबाहिसा होगा बाद हमारे रोज़े का वक़्त आजावेगा परन्तु बात चीत ज़बानी हो लिखी न जावें जो यह सब बातें आपको मंज़ूर होवें तो जवाब इसका इसी ख़त की पीठ पर लिखये तो मुबाहिसा रहेगा फ़क़त — इस खत का जवाब स्वामीजी की तरफ़ से बनाम मौलवी साहब — यह गया कि आप अपनी मर्ज़ी मुवाफ़िक़ वज़रिये मुअज़्ज़िज़ रईसान शहर व सद्र सिलसिला जुम्वानी कीजिये मुझको कुछ उज़र नहीं लेकिन जुम्ला मामलात तहरीरी होंन तक़रीरी ७ सितम्बर सन् ७८ ई०॥ इस पर मौलवी साहब ने लिखा कि मुबाहिसा तक़रीरी होवे न तहरीरी

तिसपर स्वामीजीने सभामें जवाब दिया कि और सब बातें मौलवी साहबकी मंजूर हैं मगर मुबाहिसा तहरीरी ही होना चाहिये तक़रीरी नहीं यह सुन मौलवी साहब ठंढे हो बैठे और उनके तरफ़दार मुसल्मान अखबार नवीस मन माना झूंठ लिख मुंह उजाला करते रहे ॥

रुड़की नगर के मुसल्मानों की बहिस की धूमधाम

इस मुकाम पर जब स्वामीजी मौजूद थे वहां मौलवी क़ासिम साहब (जो तीन हज़ार आदमियों के बीच चांदापुर में भारी हार खाचुके थे (८*) और २ भी कई मुकामों में धूमधाम मचाते रहे और बड़े २ हिन्दू मुसल्मान ईसाई आदि सर्कारी मुअज़्ज़िज़ उहदेदारों के बीच त पाई हुई बातों पर झट सी पलट भी जाते थे मगर शेखियां बगारे बिन नहीं रहते थे तशरीफ़लाये - कप्तान स्टुवार्ट साहबके रूबरू स्वामीजीके साथ मुबाहिसा करनेकी तारीख और शर्तें मुक़र्रर हुईं प्रथम यह कि जिस कोठी पर स्वामीजी ठहरे हैं वहीं मुबाहिसा होवे दोयम यह कि दोनों तरफ़ के मिलकर चार सौ से ज़ियादा मुबाहिसे में आदमी जमा न हों तीसरे यह कि मुबाहिसे में आने वाले आमियों को टिकट दियाजावे जिससे मुबाहिसे

---

*(८) इस का विस्तार आगे ईसाई मत खण्डन मयूख के मेलाचांदापुर प्रकरण में लिखा है ॥

के अहाते के भीतर तादाद से ज़ियादा आदमी न बढ़जावें चौथे यह कि मुबाहिसा तहरीरी होगा पांचवें यह कि ६ बजे शाम से ९ बजे रात तक मुबाहिसा रहेगा इस प्रकार पांच शर्तें और तारीख पक्की ठहरजाने के बाद मौलवी साहब हस्बआदत बदलगये और कहने लगे कि एक तो जलसे में आनेवाले आदमियों की तादाद मुक़र्रर न की जावे दोयम यह कि मुबाहिसा तहरीरी न होवे फिर दो तीन दिन बाद साहब मजिस्ट्रेट के यहां अर्ज़ी दी कि छावनी या सदर में वास्ते मुबाहिसे के सरकार से कोई जगह बताई जावे हुक्म मिला क़बरस्तान में जाकर मुबाहिसा करो यह सुन इधर मौलवी साहब दिली मुराद को पहुंचे उधर पक्ष-पाती मुसल्मान अख़बारनवीसों ने दूसरा ही मज़मून बना कर उड़ाया कि स्वामीजी मुबाहिसे से मुंह मोड़ गए कहते हैं कि हम अरबी-फ़ारसी नहीं जानते मुन्शी इन्द्रमणि को वास्ते मदद के बुलाया था वे ब वजह बीमारी नहीं आये आर्यगण दरोग़ को फ़रोग़ कहां असली हाल मौलवी साहब के क़ाबली का लोगों पर खुल ही गया — आफ़रीं है इस ज़ात को कि होवे कुछ भी नहीं पर शेख़ी ज़रूर ही बघारे अफ़सोस साहब मजिस्ट्रेट का हुक्म मौलवी साहब को ऐसा ख़ुदाई फ़र्मान हो लगा कि उन को थोड़े ही दिन बाद हमेशा के लिये क़बरस्तान ही में जा बैठना पड़ा इसी प्रकार और भी कितनी ही जगह मौलवी लोगों ने स्वामीजी के जाने पर धूम धाम दिखलायी लेकिन साम्हने आकर कभी कोई नहीं बैठा न किसी ने अपने मज़हब (मत) को सच्चा कर दिखाया लन्तड़ानियां और शेख़ी मारना मुसल्मानों की ज़ाति का एक सुभाव है वही सब जगह देखा गया इसलिये निमूने के तौर पर तीन नज़ीरें ॥

(उदाहरण) इस मयूख में लिख दिखाई उन को देख श्रीमान् स्वामीजी महाराज का प्रताप सब सज्जनों को भली भांति मालूम होजावेगा ॥

आर्यगण आदमी हिन्दू हो वा आर्य, मुसल्मान हो वा ईसाई जिसने ठीक २ इनसाफ़ अर्थात् न्याय को अच्छी तरह पहिचाना उस की ज़ात ही जुदी है यह दिखलाने के लिये एक मुसल्मीन साहब का दिया हुआ लेक्चर अर्थात् व्याख्यान आगे लिखा जाता है वह दो बातों को स्पष्ट कर दिखावेगा प्रथम इस बात को कि सनातन आर्य धर्म बिगड़ जाने के कारण अकसर लोग उस को छोड मुसल्मान या ईसाई हो जाते हैं दोयम यह कि अब उस क़िस्म के आदमी स्वामीजी के व्याख्यान सुन २ कर अपने प्राचीन मत की महिमा जान अत्यंत शोक करते हैं उनमें से जिन में कुछ शक्ति और न्याय होता है वे अपने पहिले भाइयों को चिताने और होशियार करने को सन्नद्ध (तय्यार) हो जाते हैं

नाज़रीन पुरतमकीन व सामईन आदलीन की राय बैज़ाज़ियाय पर मुबर्रहन व मुबय्यन (प्रकाशित) हो कि साबिक़ में बंदह को भी मज़हब हिनूद से तअल्लुक़ था गो अब एक अर्सा दराज़ गुज़रा कि मैं ने व ज़ात ख़ास ख़ुद उस को क़िता कर दिया (छोड़ दिया) फिल हाज़ा ब मिसदाक़ कुल्लशय्यन अर्ज़े बैं असलहीबराय (वास्ते) ज़ियाफ़त तबअ बिरादगन साबक़ह नवतरदीद अक़ायद लाहिक़ह हाशा व कुल्ली कुछ गुज़ारिश किया चाहता हूं कि फ़िलवाक़े (वास्तव में) और फ़िल हक़ीक़त अगर तअस्सुब (पक्षपात) को किसि

मर्ज़ में हमारे बिरादरान् अक्सर मुबतिला (फसे) हैं बालायता
क़ धरके और इन्साफ़ को कि जो कुल जौहरों में आला जौहर है पे
श नज़र करके गौर किया जाय और येतसाफ़ (अन्याय) को साफ़
छोड़ दिया जाय तो खुल्लखुल्ला सूरज की तरह रोशन हो जाय कि दय
नंद सरस्वती जी मज़हब हिन्दू में ऐसे आदमी हैं कि जिनकी निस्बत
बावजूदे कि हम उनके मज़हब से कुछ लगाव नहीं रखते और इ खु
तिलाफ़ अक़ायद ज़ाहिर तो भी हम कह सक्ते हैं कि वे बज़ात खास
हिन्दुओं में अव्वल दर्जे के मौहद् (ज्ञानी) हैं और परमेश्वर को
जिसको हम ख़ुदा कहते हैं,, बेशक एक जानने वाले और उस को ह
लूल माद्दूस से मुक़द्दस और मुबर्रह अर्थात् जैसा कि चाहिये
वैसा निर्विकार मानने वाले हैं यह बात कि वे क्यों कर इस दर्जे
को पहुंचे फ़िलवाक़े ऐसी है कि जिसने हम को तअज्जुब के समुद्र मे
डाल दिया - यक़ीन कुल्ली दिलाती है कि उनने अपने दिल से तालीम
पाई है वे ख़ुदा को वहिदहू लाशरीक़ (अनुपम और अद्वितीय) जा
ने हैं वे उसकी वहिदानियत पर बहमे वजूह साबित और रासरु
ल एतक़ाद अर्थात् पक्का निश्चय रखते हैं - उनने इस बात को अच
तरह जांच लिया है कि इस जहान का पैदा करने वाला वह है जो वह
म गुमान से बाहर है उस की ज़ात पाक में चूं व चरा को दखल बि
कुल्ल नहीं वे अपनी औक़ात अज़ीज़ को और नीज़ उम्र गिरांबह
(अमौल्यसमय) को इसी काम में सर्फ़ करते हैं कि ख़ुदा की वहद
नियत् (अद्वैतता) का बीज बहुत से परमेश्वर हैं ऐसा मानने वा
लों के हृदय में जमावें और अपनी राय के फूलों की जो रिवज़ां म
शरक से मसऊन हैं हार सब के गले में पहनावें वे अपने तबेदां

को खसूसन और अहल आलम को उमूमन खास इसी बात की तरफ़ तवज्जुह दिलाते हैं कि खुदा एक है वे पत्थरों से सिर टकराने को हर्गिज़ पसंद नहीं करते हैं वे मूरत के पूजने वालों पर बुतपरस्ती का इलज़ाम धरते हैं वे उन किताबों को जो खास किसी एक फ़िर्के नादान बकार खुद होशियार ने अपनी ग़रज़ नफ़सानी ((स्वार्थतत्परता) और इलहाम् लायानी (निर्मूलता) से तसनीफ़ करके शाए और रायज अर्थात् प्रचरितकी हैं तक़बीमकुहनः और अवलह फ़रेबी का ढकोसलह समझते हैं वे हरचहारवेद को जिन को खास कर उन्ने और आम तमाम उक़लाय हिन्द ने किताब रब्बानी और कलाम आसमानी तसलीम किया है हक़ और निजात का वसीला और मुक्ति का हीला ठहराते हैं वे उन मज़खरफ़ातों (कपोलकल्पितों) को जो वेद से खिलाफ़ हैं दर्याबुर्द और गाव खुर्द समझते हैं वे इस बात को कि सिर्फ़ गंगा के स्नान से गुनहगार आदमी मुक्ति यानी निजात हासिल करता है नक़शबरआब और प्यासे के हक़ में गोया सुराब (मृगतृष्णा) जानते हैं वे ब्राह्मणों की परस्तिश को खुदावंद वहदहू लाशरीक़ की इबादत नहीं गिनते वे झूठी बातों से बिलकुल मुतनफ़्फ़िर (घिनकर्ते) हैं उनके दिल में हवा व हवस दुनियवी व किसी तरह के लालच ने हर्गिज़ २ जगह नहीं पाई वे बेशक इल्म दीनी में दर्या हैं यह क्यों कर हो सक्ता है कि ऐसे शख्स सलीमु ~~उल~~तबअ और मुतवस्सित उल मिज़ाज़ (शांतिस्वभाव) फ़रेबी हों हर्गिज़ नहीं अगर वे अपने दावे में झूठे होते तो यह क्यों कर यक़ीन किया जाय कि वे एक अर्से दराज़ से कि जिस को बहुत ज़माना गुज़रने के क़रीब है अपने

इस दावे पर कि ख़ुदा एक है क़ायम रह सके और वे लोग जो इल्म व अक़्ल से बहिरा रखते हैं क्योंकर इक बारगी उनकी बात को मानलेते और ऐसे वक़्त में कि अविद्या यानी जहालत ने मुल्क हिन्द में अच्छी तरह अपना तसल्लुत (दख़ल) करलिया क्योंकर वे अपनी कोशिशों को पूरा कर सके क्या बालू की दीवार एक पानी से ज़ियादा क़ायम रह सक्ती है बहुत मुश्किल है और क्या उस मकान में कि जिस की नीव पानी पर है लाखों आदमी गुज़र करसके हैं हर्गिज़ नहीं बल्कि वह मकान कभी का मिस्मार हो औंधे मुंह गिर चुका होता और रहने वाले उस मकान के कभी के नष्ट हो चुके होते लेकिन मेरी दानिस्त में इस मकान के बानी यानी दयानंद सरस्वती जी ऐसे होशियार मेमार हैं कि उनने बहुत गहरी उस मकान की बुनियाद क़ाइम की है वह बर्साती नालों के चढ़ाव से हर्गिज़ नहीं गिर सक्ता अगर वे इस बात पर कि दुनिया का मालिक एक है भरोसा पूरा २ न रखते होते तो कभी के उनके पांव उखड़ गये होते दर हालते कि वे पक्के दाना हैं वे, नादानों की गीदड़ भभकियों से कब बन्द हो सके हैं एक ज़माना उनकी दानाई पर आंखों से स्वाद करता है क्या यह बात कि वे हिन्दुओं के धर्म का नाश करते हैं या अपने मतलब यानी फ़ाइदे के लिये जैसी कि पंडित लोगों ने कोशिशें की हैं दम भरते हैं क़ाबिल एतबार है हर्गिज़ हर्गिज़ नहीं बलकि वे भूले हुओं को राह बतलाते हैं और अंधों को कुए में गिरने से बचाते हैं वे बेद के अहकाम के पक्के आमिल हैं उने इस बात की बिलकुल तमन्ना (इच्छा) नहीं है कि मुझे

कोई कुछ दे और न उन की यह ग़रज़ है कि जब हिन्दुओं में कोई काम हो तो अव्वल मेरी फ़ीस निकाल दें वे हरचीज़ पर पंडितों की तरह टेकस लगाना हर्गिज़ नहीं मांगते वे इन्हीं हर्कतों पर ब्राह्मणों से नाराज़ हैं मज़ा यह कि वे ख़ुद ब्राह्मण हैं लेकिन् ऐसे नहीं जैसे कि उन के हम असर हैं हमको तअज्जुब है उन लोगों की समझ पर जो ऐसे श़ख्स मुहज़्ज़िब (सभ्य) ख़ुदा परस्त को गुनह इलज़ामन् बल्कि महज़ इत्तहामन् मिथ्यावादी का ख़िताब देवें और ऐसे धर्मात्मा पुनीत मनुष्य को चर्क दुर्बचनों से मुलव्विस करें या यह कहें कि वे बातिन में ईसाई हैं इस्तग़फ़रुल्लाह (ईश्वर सुबुद्धि दे) या यह कि वे सर्कार से हिन्दुओं के बहकाने की कुछ तनख़ाह पाते हैं लाहौल विला कुव्वत या यह कि वे अंगरेज़ों के साथ खाना खाते हैं मआज़ अल्लाह अय बाज़िन बिल्लाह छोटा मुंह बड़ी बात है यह गुफ़्र महज़ वाहियात है हमको इस मुक़ाम पर सादी की कहावत बहुत मौज़ूं मालूम होती है कि चु हुज्जत नुमानद जफ़ा जो यरा, ब पर ख़ाश दर्हम कशद रूयरा अर्थात् जब हठ धर्मी दलील में हारता है तो लड़ाई पर मुस्तैद होता है और यह बात तो ख़ुद ज़ाहिर है कि हिन्दुस्तान में कोई श़ख्स अज़ क़िस्म पंडितान् ऐसा नज़र नहीं आता है जो उन के रोबरू अपनी ज़बान को हरकत में लासके हां वह श़ख्स जो दो हिस्सा पढ़कर इल्मियत में पास कर चुका हो शायद् उनकी तालीमात का मतलब समझ सके फिर मुक़ाबिला कैसा जिसने वेद व्यास को न देखा हो वह इनको

यानी दयानंद सरस्वतीजी को देखले - क़िसै नज़र दीगर उलूम व फ़नून के इल्म ज़बान और तर्ज़ बयान - इस दानाय अदीम उलमिसाल का ऐसा है. सुभान अल्लाह. वलहम्दलिल्लाह २ मुख़ालिफ़ यह लब व लहिजा किसके घर से लाएंगे. जो उसके मुक़ाबिल आयेंगे. सब ग़लत है. क्योंकि. ईंसआदत बज़ोर बाज़ूनेस्त। ता न बख़्शद ख़ुदाय बख़्शंदह ॥ हमबावर करते हैं कि उनके शागिर्दों में बाज़ बाज़ ऐसे हैं कि काशी का कोई अव्वल दर्जे का पण्डित न होगा इनकी मिसाल ऐसी है जैसे कि आफ़ताब, जहां वह रोशन हुआ और चिमगादरों की बीनाई काफ़ूर हुई कोई उन के मुक़ाबिल क्योंकर हो सूरज के सामने चिराग़ की क्या वक़त है. चांद ख़ाक डालने से कब छिप सक्ता है. इसी तरह जो आदमी कि ख़ुद ग़र्ज़ी और ख़ुद मतलबी और ख़ुद पसंदी और ख़ुद सिताई में सरतापा (सिर से पैर तक) ग़र्क़ है वह कब उनके रोबरू फ़रोग़ पा सक्ता है भला यह कोई अक़ल की बात है कि गंगा का स्नान या गाय का पूजन या नाम के ब्राह्मण का दान किसी मज़हब का उसूल हो, उसूल वह है कि हर क़ाइल का मक़बूल व हर मुनिकिर मरदूद है ॥

हम देखते हैं कि बहुत से मुसल्मान गंगा में स्नान करते हैं तो क्या वह हिन्दू होगये या अकसर मुसल्मान ब्राह्मणों को कुछ देते हैं तो क्या वे इसलाम से ख़ारिज होकर दायरह हिनूद में आगये कोई नहीं कोई नहीं अगर कोई ब्राह्मण परस्त यह जवाब दे कि एतक़ाद शर्त है तो हम कहसक्ते हैं कि फिर

किसी खास शैल्ह की शर्त कब रही बक़ौल शख़्से कि " मनचं गा तो कठौती में गंगा,, जब एतक़ाद ही पर है तो एक नाले से मुक्ति हासिल होसक्ती है हम इस बहस को ज़्यादा तूल नहीं दे सक्ते क्योंकि हमारा मतलब खफ़ी होजायगा देखो ब्राह्मणों ने ख़ुद को किस क़दर बुज़ुर्ग बनारक्खा है क्या ख़ुदा भी किसी क़ौम का जानिबदार है नहीं फिर जिस क़दर काम फ़ख़्र (अतिश्ठ) के हैं वह सब उस क़ौल के मुताबिक कि दस्त ख़ुद व दहान ख़ुद, अपने ही नाम दाग़ करके इल्म कि जो खास ख़ुदा शनासी का अव्वल रुकन है सिवाय अपने हर क़ौम पर हराम करदिया हत्ते कि सिवाय ज़बान ब्राह्मण और किसी ज़बान में यह तासीर ही नहीं रक्खी, कि सुनने वाला सवाब हासिल करसके, मगर वह कि जो ब्राह्मण के हाथ पर दो पय से रखदे बहर कुसे बाशद किसी पर बंद नहीं, फिर देखिये कि तीर्थ किस क़दर मुकर्रर करलिये हैं और हर तीर्थ में ब्राह्मणों का ही इंतिज़ाम यह बात वह बात टका धर मेरे हाथ आफ़रीं सद आफ़रीं दयानंद सरस्वतीजी महाराज को कि जिनने इस क़ौम की अय्यारी (मक्कारी) बेजा अपने हिन्दुओं पर ज़ाहिर करदी और कान खोलकर कहदिया कि होशयार होजाओ और ख्वाब खर्गोश से बेदार - वरनह तुम्हारा माये (पूंजी) धर्म यह क़िता उलतरीक़ एज़द परस्ती ॥

दिन दहाड़े मथुरा इंद्राबन के जंगलों और अयोध्या नीमषार के मैदानों में लूटलेंगे फिर अबभी बाज़ आओ और इनके पंजे से तादर (पक्षी) ईमान को बचाओ इस परभी बाज़ २ अशख़ास बिरहमनान अबलह फ़रेब की ताज़ीम से हाथ नहीं

उठाते और इनहादी बरहक़ की राह पर नहीं आते वह पछतावें गे पस ऐसे शख़्स को यानी दयानन्द सरस्वतीजी को हमारे और तमाम हमारे हम ख़यालात की तरफ़ से हज़ार शाबाश और लाख बार शाबाश ज़हे (धन्य) क़िस्मत उन हिंदुओं की जो ऐसे शख़्स की सई के मशकूर हैं और ख़हे तक़दीर उन भरत खंड बासियों की जो इन की तालीम पर बदिलोजान अमल करते हैं आयन्दह वह जाने और उन का काम बाक़ी आयन्दह ज़ियादह व उलसलाम ॥

(बन्दह इन्साफ़पसंद सद्दीक़ हुसेन)

देखिये आर्यगण मुसल्मान लोग भी श्रीयुत का कितना सनमान और प्रशंसा करते हैं परन्तु शोक कि हमारे देश निवासी नेक लज्जित नहीं होते चारों तरफ़ से इन पर बौछ पड़ रही है सब इन्हीं के हितार्थ इतना परिश्रम उठा रहे हैं परन्तु इन को बिलकुल सत्यासत्य नहीं सूझाई देता जैसा कि यह ऊपर लेख है इससे अधिक चमत्कारी व्याख्यान आप लोग आगे ईसाई मत खंडन नामक मयूख में पावें गे सारांश यह है कि समस्त भूमंडल में वैदिक मत की स्तुति और उस पर न चलने वालों की निन्दा श्रीमान् के प्रताप से इन दिनों हो रही है ॥

इति श्री मद्दिग्विजयार्कीय प्रथमां के यावनी मत खण्डनम् नाम पंचमो मयूखः ॥ ५ ॥

किरानीमतखण्डनम्

शास्त्रार्थ

श्रीस्वामीजी महाराज का अजमेर के पादरी साहब के साथ

बिदित हो कि स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी कातिक सुदी १३ के दिन अजमेर में पहुंचे थे थोड़े दिनों के पीछे वेदादि सत्य शास्त्रोक्त धर्म विषय में व्याख्यान देने लगे ईश्वर विषय के पीछे दूसरा वेद विषय का व्याख्यान था उस दिन अजमेर के बड़े पादरी ग्रेसाहब और डाक्टर हसबेंड भी आये थे उस में स्वामीजी ने शास्त्र और युक्ति से यह सिद्ध किया कि ईश्वर कृत पुस्तक केवल चार वेद ही हैं अन्य कोई नहीं इसके पीछे एक बड़ा सूची पत्र तौरेत इंजील और कुरान की अशुद्धता का पढ़ कर सुनाया और कहा कि मैं ने यह सूची पत्र किसी को चिड़ाने के लिये नहीं सुनाया है किन्तु इस लिये कि सब लोग पक्षपात रहित हो कर बिचारें कि जिन पुस्तकों में ऐसी २ बातें लिखी हों वे ईश्वर कृत हो सकते हैं वा नहीं इस बात पर पादरी ग्रेसाहब ने कहा कि आपने जो तौरेत और इन्जील की बातें सुनाई इन में प्रश्न लिखकर आप मेरे पास भेजें मैं इन का उत्तर दूंगा स्वामीजी ने कहा कि मैं तो यही चाहता हूं और सदैव मेरी यही इच्छा रहा करती है कि आप जैसे बुद्धिवान पुरुष मिल के सत्यासत्य का निर्णय करें पादरी साहब ने कहा कि सत्य का निर्णय जब होगा कि आप मेरे पास प्रश्न भेजेंगे और मैं उत्तर दूंगा फिर स्वामीजी ने कहा कि लिख कर दोनों ओर से प्रश्नोत्तर भेजने में काल

बडुत लगता है और मनुष्यों को भी इस से लाभ नहीं पहुंचता इस लिये यही बात अच्छी है कि आप यहां ही आवें और मैं प्रश्न करूं और आप उत्तर दें तब पादरी साहब ने कहा कि आप प्रश्न मेरे पास भेज देवें जब मैं दो चार दिन में उन को बिचार लूंगा तब पीछे आप को उत्तर यहां आकर दूंगा स्वामीजीने कहा कि प्रश्न तो मैं नहीं भेजूंगा परन्तु मुझ को जहां २ इन्जील और तोरेत में शंका है उन में से थोडे से वाक्य लिख कर भेज दूंगा उन को जब आप बिचार लेंगे तो उन्हीं में मैं प्रश्न करूंगा आप उत्तर देना फिर इतनी बात होने के पीछे पादरी साहब चले गए उस के दूसरे दिन स्वामीजीने तोरेत और इंजील के साठे ६० वाक्य लिख कर पंडित - भागराम साहब एक्स्ट्रा असिस्टेन्ट कमिश्नर के द्वारा पादरी साहब के पास भेज दिये फिर नो दस दिन पीछे जब पादरी साहबने उन को बिचार लिया और व्याख्यान हो चुके तब एक दिन प्रश्नोत्तर के लिये नियत हुआ उस दिन नोटिस दे दिया था इस कारण से बडुत लोग आये थे सरदार बहादुर मुंशी अमीनचन्द साहब जज पं॰ भागराम साहब एक्स्ट्रा असिस्टेन्ट कमिश्नर सरदार भगत सिंह साहब एन्जीनियर इत्यादि प्रतिष्ठित पुरुष आये थे जब समय हुआ तब स्वामीजी चारों वेदों के पुस्तक साथ लेकर आये और पादरी साहब भी बडुत सी पुस्तकें लेकर आये पादरी साहब के साथ डाक्टर हसवेंड साहब भी आये प्रथम स्वामीजीने कहा कि मैंने कितनी ही जगह पादरी लोगों से बात चीत की है कभी किसी प्रकार का गड़ बड़ नहीं हुआ आज भी मैं जानता हूं कि पादरी साहब से वार्तालाप निर्विघ्नता से पूरा होगा फिर पादरी-

साहब ने भी निर्विघ्नता से बातचीत होने की आशा प्रगट की और कहा कि स्वामीजी ने जो वाक्य लिखकर हमारे पास भेजे हैं वे बड़े हैं और समय केवल दो वा अढ़ाई घंटे का है इसलिये प्रत्येक वाक्य पर दो बार ही प्रश्नोत्तर होना ठीक है इस के पश्चात् प्रश्नोत्तर होने लगे और तीन लेखक भी बिठलालिये इन तीनों को स्वामी जी और पादरी साहब बोलते समय अक्षर २ लिखवाते जाते थे-

स्वा० तौरेत उत्पत्ति की पुस्तक पर्व १ आयत २ में लिखा है कि पृथ्वी बे डौल थी अब देखना चाहिये परमेश्वर सर्वज्ञ है सब विद्या उस में पूरी हैं उसकी विद्या के काम में बेडौलता कभी नहीं हो सकती क्योंकि उस के सब काम बे भूल हैं बे डौलता मनुष्यों के काम में हो सकती है क्योंकि उनको पूरी विद्या और सर्वज्ञता नहीं है इस से जीव के काम में बेडौलता रह सकती है ईश्वर के काम में नहीं -

पा० — यहां अभिप्राय बेडौल से नहीं है किन्तु उजाड़ से है आयूब की किताब बाब २ आयत २४ में है कि बिना मार्ग जंगल में उन्हें भ्रमना है यहां जिस शब्द का अर्थ जंगल है उसी का अर्थ वहां बेडौल है स्वा० इस से पहली आयत में यह बात आती है कि आरम्भ में ईश्वर ने आकाश और पृथ्वी को सृजा और पृथ्वी बेडौल सूनी थी गहराव पर अंधियारा था इस से स्पष्ट ज्ञात होता है कि उजाड़ का अर्थ यहां नहीं ले सकते क्योंकि लिखा है कि सूनी थी बेडौल के अर्थ उजाड़ के होते तो सूनी थी इस शब्द की कुछ आवश्यकता नहीं थी और जब कि ईश्वर ने ही पृथ्वी को रचा है सो प्रथम ही अपने ज्ञान से डौलवाली क्या नहीं रच सकता था पा० — दो शब्द एक ही अर्थ के सब भाषाओं में एक दूसरे के पीछे बहुधा आते हैं

जैसे ड्डबरानी में तोहू बोहू फ़ारसी में बूदोबाश ये सब एक अर्थ के वाची हैं इसी प्रकार उर्दू में यह अर्थ ठीक है कि ज़मीन वेरान और सुन सान थी स्वामीजी इस बात पर और प्रश्न करना चाहते थे इतने में पादरी साहब ने कहा कि एक २ वाक्य पर दो २ प्रश्न और दो २ उत्तर होना चाहिये क्योंकि वाक्य बहुत हैं नहीं तो सब प्रश्न आज न हो सकेंगे स्वामीजी ने कहा कि यह अवश्य नहीं है कि आज ही सब वाक्यों पर प्रश्नोत्तर होजांय कुछ आज होंगे फिर इसी प्रकार दो चार दिन अथवा जब तक ये वाक्य पूरे न हों तब तक प्रश्नोत्तर होते रहेंगे जब पादरी साहब ने इस बात को स्वीकार न किया तब स्वामीजी ने कहा कि यदि अधिक न हो तो एक वाक्य पर दस बार प्रश्न होने चाहियें पादरी साहब ने यह भी स्वीकार न किया स्वामीजी ने फिर कहा कि प्रत्येक वाक्य पर कम से कम तीन वार प्रश्नोत्तर तो होने ही चाहियें इस पर भी पादरी साहब ने कहा कि हम को दो बार से अधिक प्रश्नोत्तर करना कदाचित् स्वीकार नहीं है तब स्वामीजी ने कहा हमको इस में कुछ हट नहीं है सभा की जैसी सम्मति हो वैसा कियाजाय स्वामीजी की इस बात पर कोई कुछ न बोला परन्तु डाक्टर हसबेंड साहब ने कहा कि यदि सभा से प्रत्येक विषय में पूछेंगे तो चारसौ मनुष्य हैं उन में से किस २ से पूछाजायगा स्वामीजी ने कहा कि यदि पादरी साहब को तीन प्रश्न करना स्वीकार नहीं है तो जाने दो हम दो ही करेंगे क्योंकि इतने मनुष्य विज्ञापन देखकर इकट्ठे हुए हैं जो यहां कुछ बात चीत न हुई तो अच्छा नहीं फिर स्वामीजी ने दूसरे वाक्य पर प्रश्न किया स्वा० वही पर्व्व और वही आयत और ईश्वर का आत्मा जल के ऊपर डोलता था ॥

पहिली आयत से विदित होता है कि ईश्वरने आकाश और पृथ्वी को रचा यहां जल की उत्पत्ति नहीं कही तोजल कहां से होगया ईश्वर आत्म स्वरूप है वा जैसे कि हम स्वरूप वाले हैं वैसा औरजो वह शरीर वाला है तो उस का सामर्थ्य आकाश और पृथ्वी बनाने का नहीं हो सकता क्योंकि शरीर वाले के शरीर के अवयवों से परमाणु आदि को ग्रहण करके रचना में लाना असम्भव है और वह व्यापक भी नहीं हो सकता जब उस का आत्मा जल पर डोलता था तब उस का शरीर कहां था पा०जब पृथ्वी को सृजा तो पृथ्वी में जल भी आगया और दूसरी बात का उत्तर यह है कि परमेश्वर आत्मरूप है तौरेत के आरंभ से इन्जील के अंत तक परमेश्वर आत्म स्वरूप कहलाया स्वा० ईश्वर का वर्णन तौरेत से लेकर इंजील पर्यंत में बहुत ठिकानों में ऐसा है कि वह किसी प्रकार का शरीर भी रखता है क्योंकि आदम की बाडी को बनाना वहां आना फिर ऊपर चढ़ जाना सनाई पर्वत पर जाना मूसा इबराहीम और उन की स्त्री सरी से बात चीत करना डेरे में जाना याकूब से मल्ल युद्ध करना इत्यादि बातों से पाया जाता है कि अवश्य किसी प्रकार का शरीर वह रखता है वा उसी दम अपना शरीर बना लेता है पा० ये सब बातें इस आयत से कुछ संबन्ध नहीं रखती हैं केवल अंजानपने से कही जाती हैं इस का यही उत्तर है कि यहूदी ईसाई और मुसल्मान जो तौरेत को मानते हैं इस पर एक सम्मत हैं कि ख़ुदा रूह है स्वा० पर्व्व वही आयत २६ तब ईश्वर ने कहा कि हम आदम को अपने स्वरूप में अपने समान बनावें इस से स्पष्ट पाया जाता है कि ईश्वर भी आदम के स्वरूप जैसा था जैसा कि आदम आत्मा

ओर शरीर युक्त था ईश्वर को भी इस आयत से वैसा ही समझना-चाहिये जब वह शरीर जैसा स्वरूप नहीं रखता तो अपने स्वरूप में आदम को कैसे बना सका पा० इस आयत में शरीर का कुछ कथन नहीं परमेश्वर ने आदम को पवित्र ज्ञान वान् और आनन्दित रचा वह सच्चिदानन्द ईश्वर है और आदम को अपने स्वरूप में बनाया जब आदम ने पाप किया तो परमेश्वर के स्वरूप से पतित हो गया जैसे पहले प्रश्नोत्तर के २४ और ३० प्रश्न से विदित होता है कोलोसियों की पत्री तीसरा पर्व्व ९ और १० आयत एक दूसरे से झूंठ मत बोलो क्यों कि तुमने पुराने मनुष्यता को उस के कार्य्यों समेत उतार फेंका है और नये मनुष्यता को जो ज्ञान में अपने सृजन हारे के स्वरूप के समान नये बन रहे हैं पहना है इस से विदित होता है कि ज्ञान और पवित्रता में परमेश्वर के समान बनाया गया और नये सिरे से हम लोगों को बनाया कोरंटियों का तीसरा पर्व्व १७ आयत १९ और प्रभु ही आत्मा है और जहां कहीं प्रभु का आत्मा है वहीं निर्विघ्नता है और हम सब बिना परदा प्रभु के तेज को दर्पण में देख २ प्रभु के आत्मा के द्वारा तेज से तेज लों उस के स्वरूप में बदलते जाते हैं इस से ज्ञात होता है कि विश्वासी लोग बदल के फिर परमेश्वर के स्वरूप में बन जाते हैं अर्थात् ज्ञान पवित्रता और आनन्द में क्योंकि धर्मी होने से मनुष्य के शरीर का रूप नहीं बदलता है स्वा० परमात्मा के सदृश आदम के बनने से सिद्ध होता है कि ईश्वर भी शरीर वाला होना चाहिये जो परमेश्वर ने आदम को पवित्र और आनन्दित रचा था तो उसने ईश्वर की आज्ञा क्यों तोड़ी और जो आज्ञा तोड़ी तो विदित होता है कि वह ज्ञान वान नहीं था और जब उसने ज्ञान

के पेड़ का फल खाया तब उस की आंख खुल गई इस से जानाजाता है वह ज्ञानवान् पीछे से हुआ जो पहिले से ही ज्ञान वान् था तो फल के खाने के पीछे ज्ञान हुआ यह बात नहीं बन सकती और प्रथम परमेश्वर ने उस को आशीर्वाद दिया था कि तुम फलो फूलो आनन्दित रहो और फिर जब उसने ईश्वर की आज्ञा के बिना उस पेड़ का फल खाया तब उस की आंखें खुलने से उस को ज्ञान हुआ कि हम नंगे हैं गूलर के पत्ते अपने शरीर पर पहने अब देखना चाहिये जो वह ईश्वर के समान ज्ञान में और पवित्रता में होता तो उस को नंगा और ढका रहना क्यों नहीं जान पड़ता क्या उस्को इतनी भी सुध नहीं थी जब परमेश्वर के समान वह ज्ञानी पवित्र और आनन्दित था तो उस को सर्वज्ञ और नित्य शुद्ध और आनन्दित रहना चाहिये और उस के पास दुःख कुछ भी कभी न आना चाहिये क्यों कि वह परमेश्वर के समान इन ऊपर लिखी तीनों बातों में है तो वह पतित किसी प्रकार से नहीं हो सकता और जो पतित हुआ तो परमेश्वर के समान नहीं हुआ क्यों कि परमेश्वर ज्ञानादि गुणों से पतित कभी नहीं होता फिर बतलाइये कि जैसे आदम प्रथम ज्ञान आदि तीनों गुणों में परमेश्वर के समान होके फिर उन से पतित हो गया वैसे ही विश्वासी लोग ज्ञानी पवित्र और आनन्दित होंगे वा अधिक कम जो वैसे ही होंगे तो फिर जैसे आदम पतित हो गया वैसे ही विश्वासी भी हो जावेंगे क्योंकि वह तीनों बातों में परमात्मा के समान हो कर पतित हो गया पा० बहुधा बातों में पहिला उत्तर बहुत है अब रहा यह कि यदि आदम पवित्र था तो आज्ञा क्यों तोड़ी उत्तर यह है कि वह पहिले पवित्र था आज्ञा तोड़ के पापी हुआ फिर यह कहा कि ज्ञान वान् पीछे से

ऊआ यह बात नहीं है जब भले बुरे के ज्ञान के पेड़ का फल खाया तब बुराई जान पड़ी पहिले न जानता था आंखें खुल गईं और उसको जान पड़ा कि मैं नंगा हूं इसका उत्तर यह है कि पापी होके उसको लज्जा आने लगी फिर यह कि यदि परमात्मा के समान होता तो पतित न होता इसका उत्तर यह है कि वह परमात्मा के समान बनाया गया न उसके तुल्य यदि परमात्मा के तुल्य होता तो पाप में न गिरता अन्त में जो पूंछा कि विश्वासी लोग आदम से अधिक पवित्र हो जायगे इसका उत्तर यह है कि अधिक और कम पवित्र होने में प्रश्न नहीं है किन्तु स्वरूप के विषय में है कि परमेश्वर का रूप शारीरक था वा नहीं यदि वह स्वरूप जिसका कथन होता है शारीरक होता तो धर्मी लोग जब परमेश्वर के स्वरूप में नये सिरसे बन जाते हैं अपने शरीर को वदल डालते स्वा० तौरेत का पर्व्व २ आयत ३ उसने सातवें दिन को आशीर्वाद दिया और उसे पवित्र ठहराया ईश्वर को सर्व शक्तिमान् सर्व व्यापक सच्चिदानन्द स्वरूप होने से परिश्रम जगत् के रचने में कुछ भी नहीं हो सकता फिर सातवें दिन विश्राम करने की क्या आवश्यकता थी और विश्राम किया तो छः दिन तक बड़ा परिश्रम करना पड़ा होगा और सातवें दिन को आशीर्वाद दिया तो छः दिनों को क्या दिया हम नहीं कह सकते कि परमेश्वर को एक क्षण भी जगत् के रचने में लगे वा कुछ भी परिश्रम हो जब स्वामीजी ने यह प्रश्न किया तब पादरीसाहब ने कहा अब समय हो चुका इससे अधिक हम नहीं ठहर सकते और बोलते समय लिखाना पड़ता है इस से देर बहुत लगती है इसलिये हम कभी नहीं करना चाहते जो बोलते समय लिखा न जाय तो

हम करसके हैं यदि स्वामीजी को लिख कर प्रश्नोत्तर करना है तो हमारे पास प्रश्न लिख कर भेज दें हम लिख कर उत्तर देंगे इस पर डाक्टर हसबेंड साहब के कहने से सरदार बहादुर अमीचंद साहब ने कहा कि मेरी भी यही सम्मति है कि प्रश्नोत्तर लिख कर पत्र द्वारा किया करें आज की नाईं किये जायंगे तो छः महीने तक भी पूरे न होंगे स्वामीजी ने कहा कि प्रश्नोत्तर के लिखे बिना बहुत हानि है जैसे अभी थोड़ी देर के पश्चात् अपने में से कोई अपनी कही हुई बात के लिये कह सकता है कि मैंने यह बात नहीं कही दूसरे बात चीत हुए पीछे और लोगों के हितार्थ छपाकर भी प्रकट नहीं करसकते जो यदि कोई छपावे भी तो उस के जी में जो आवे सो छपवा सकता है और जो मकान पर प्रश्नोत्तर लिख २ कर किया करें तो इस में काल बहुत लगेगा और जो कहा गया कि इस प्रकार छः मास में पूरा न होगा सो मैं कहता हूं कि इस में छः मास का कुछ काम नहीं है हां जो मकान पर पत्र द्वारा करेंगे तो तीन वर्ष में भी पूरा न होगा और मनुष्य अभी सामने सुन रहे हैं ये नहीं सुन सकेंगे इस लिये यही अच्छा है कि सब के सामने प्रश्नोत्तर किये जांय और लिखाया भी जाय पादरी साहब ने कहा कि यहां प्रश्नोत्तर करने में लोगों के सुनने का लाभ बतलाया परन्तु मैं जानता हूं कि आज की बातों में यहां इतने लोग बैठे हैं इन में से थोड़े ही समझे होंगे पादरी साहब की यह बात को सुन कर एक साहब मुसल्मान कि जो प्रश्नोत्तर लिखने को बैठे थे और २ मुसल्मान लोग कहने लगे कि हम कुछ भी नहीं समझे इस बात पर साहब ने कहा कि देखिये लिखने वाला ही नहीं समझा

तो और कौन समझ सकता था फिर स्वामीजीने जो दो दूसरे लिख ने वाले थे उन से पूछा कि तुम समझे व नहीं उन्हों ने कहा कि हां हम बराबर समझे हमने जो कुछ लिखा है उस को अच्छे प्रकार कह सकते हैं तब स्वामीजीने कहा कि दो लिखने वाले तो समझे और एक नहीं समझा अन्त में पादरी साहब ने दूसरे दिन प्रश्नोत्तर का लिखाजाना स्वीकार नहीं किया स्वामीजीने पादरी साहब से कहा कि आज के प्रश्नोत्तर की तीन प्रति लिखी गई हैं इनपर आप हस्ताक्षर कर दीजिये और मैं भी करे देता हूं और प्रधान सभासे भी करा कर एक प्रति आप के पास एक मेरे पास और एक प्रधान के पास रहेगी पादरी साहब ने कहा कि हम ऐसी बातों पर हस्ताक्षर करना नहीं चाहते इतनी वार्ता के पश्चात् सभा उठ खडी हुई और सब लोग अपने २ मकानों को चलेगये परन्तु स्वामीजी महाराज, सरदार बहादुर अमीनचन्द साहब, और पंडित भागराम साहब · सरदार भगतसिंहजी के मकान पर कि जो सभा के मकान के पास था ठहरे उस समय प्रश्नोत्तर की दो प्रतियों पर कि जो स्वामीजीके पास रही थीं उक्त दोनों साहबों के हस्ताक्षर भी करालिये और कुछ वार्तालाप करके सब साहब अपने २ मकान को पधारे दूसरे दिन पादरी साहब ने स्वामीजी के पास पत्र लिखकर भेजा कि आज आप प्रश्नोत्तर करेंगे व नहीं यदि करना हो तो किया जाय परन्तु लिखा न जाय और लिखना हो तो पत्र द्वारा किये जावें स्वामीजी ने उस के उत्तर में लिख भेजा कि प्रश्नोत्तर सब के सामने किये जावें और लिखे भी जावें इस प्रकार हम को स्वीकार है अन्यथा नहीं क्यों कि दूसरे प्रकार करने में बहुत हानि है जो कि हम पहले कह चुके

हैं अब यदि आप को लिखा कर प्रश्नोत्तर करने हों तो मुझ को लिखिये मैं जब तक आप कहैं यहां रहूं और प्रश्नोत्तर करूं और यदि आपको इस प्रकार न करना हो तो सरदार भगतसिंहजी को लिख भेजो कि अब प्रश्नोत्तर न होंगे क्योंकि सभा के लिये जो उन्हों ने प्रबंध कर रक्खा है उठवा दें पादरी साहब ने सरदार भगतसिंहजी को इसी प्रकार कहला भेजा तब उन्हों ने सब प्रबन्ध उठवादिया इस के पश्चात् स्वामीजी तीन चार दिन अजमेर में और रहे फिर मसूदा और नसीराबाद थोड़े दिन रहकर जयपुर पधारे जब स्वामीजी अजमेर से चले गये उस के दूसरे दिन पादरी साहब ने मिशन स्कूल में कितने शहर के लोगों और मिशन स्कूल के विद्यार्थियों को इकट्ठा करके स्वामीजी ने जो वाक्य तौरेत और इन्जील के भेजे थे उन के उत्तर सुनाये कि जिस से ईसाई मत का कच्चापन किसी पर न प्रगट हो इस के पीछे पादरी साहब को बाज़ार में बाज़ करते समय कितने आदमियों ने कहा कि साहब आप यहां हम मूर्ख लोगों के साथ प्रति दिन घंटों तक सिर दुखाया करते हैं परन्तु जब आप स्वामी दयानंद सरस्वतीजी से प्रश्नोत्तर करते थे तब तो आप ने यह कहा था कि हम को इतना समय नहीं कि प्रश्नोत्तर करते समय लिखाते जांय यदि आप स्वामीजी को अपने मत की कोई बात भी स्वीकार करा देते तो उनके पीछे हज़ारों आपकी बात को स्वीकार करते अब आप के व्यर्थ कहने से क्या होता है ॥ इति ॥

खुलासा हाल

मेला चांदापुर ज़िला शाहजहांपुर

यह मेला कबीर पंथी मुन्शी प्यारेलाल साहब रईस क़ौम कायस्थ ने अपना हज़ारहा रुपया लगा कर सत्य धर्म के निर्णयार्थ अपने ग्राम चांदापुर में लगाया था इस की मंज़ूरी जनाब मिस्टर एवर्ट साहब हाकिम ज़िला से लेकर इश्तिहार बहुत दिन पहले से सर्वत्र भेजा गया था कि जो साहब इस मेले में आयेंगे उन का बहुत अच्छे प्रकार आतिथ्य होगा तदनुसार चारों तर्फ़ से हज़ारों आलिम व फ़ाज़िल आर्य व मुसल्मान व ईसाई आदि लोग एकत्र हुए थे उन में से विशेष प्रसिद्धों का नाम अंत में लिखा है ॥ मिती चैत्र सुदी चौथ व पंचमी सम्वत् १९३४ विक्रमी मुताबिक़ तारीख़ १९ व २० मार्च सन् १८७७ ई० को यह अपूर्व मेला बड़ी धूम धाम और आनन्द के साथ हुआ था प्रथम दिवस मेला के प्रबंध और नियम इस प्रकार बांधे गए कि ईसाई व मुसल्मानों में से पांच २ और आर्यों में से केवल दो मनुष्य अर्थात् श्रीयुत स्वामीजी व मुन्शी इन्द्रमणिजी शास्त्रार्थ करने को प्रधान सभासद रहें और ये लोग मुन्शी प्यारेलालजी के अधोलिखित पांचों प्रश्नों का उत्तर इस प्रकार अपने २ मतानुसार प्रीतिपूर्वक देवें कि जिस से हाज़िरीन जलसा तृप्त होवें और इन तीनों में से किस का मत (मज़हब) सत्य है यह अच्छे प्रकार सब को प्रतीति हो जावे प्रत्येक प्रश्न का उत्तर प्रथम पादरी नोबिल वा स्काट साहब आदि बाद मोलवी क़ासिम साहब आदि पश्चात् स्वामीजी महाराज देवें जो कोई किसी पर प्रश्न करे वह १० मिनट में करे और

हर एक का उत्तर आधे घंटे में पूरा हो जाया करे ॥ दूसरे दिन बाग़ में दिन के साढे सात बजे से ११ बजे तक और १ बजे से ४ बजे तक शास्त्रार्थ होकर मेला समाप्त हुआ स्वामीजी चाहते थे कि और भी कुछ दिन इस की यथेच्छ चर्चा रहे परन्तु पादरी व मौलवी लोग न जमे तथापि उतने ही अवसर में सब को निश्चित होगया कि सच्चा धर्म वैदिक ही है ॥ सब लोग स्वामीजी के गुणों की तारीफ़ करते व उन को अंतःकरण से अपर्मित धन्यबाद देते हुए निज २ स्थानों को गए ॥ समाप्ति के समय मौलवी लोगों ने बड़ा गड़बड़ डाल दिया था इस लिये कि गमारों को अपनी जीत प्रकाशित होवे परन्तु तारीफ़ है पादरी लोगों की कि जिनने सिर तक ऊपर नहीं किया बल्कि शास्त्रार्थ के समय मौलवी लोगों से स्पष्ट कहा कि भाई मौलवी लोगो स्वामीजी ऐसी बातों का उत्तर हज़ार प्रकार से दे सकते हैं हम तुम हज़ारों मिल कर भी इन से बातें करें तो भी इन के बराबर नहीं हो सकते इस लिये इस विषय में अब अधिक खींचा तानी करना सभ्य धर्म नहीं ॥ इस के बाद पादरी लोग रात्रि को स्वामीजी के डेरे पर गए वहां अपनी तर्फ़ से पुनर्जन्म पर ४ घंटा वार्ता करके निःसंदेह होकर चले गये ॥

तारीख़ २१ व २२ को २ ख़त बनाम मुन्शी इन्द्रमणिजी मोती मियां साहब रईस शाहजहांपुर ने इस मज़मून के भेजे कि आप स्वामीजी को साथ ले इसी जगह तशरीफ़ लावें तो आप से मौलवी अहमद अली साहब पुनर्जन्म के बारे में बहिस करेंगे उस के अनुसार ये दोनों साहब ता० २२ के दो पहर को शाहजहांपुर पहुंच कर डिपटी साहब के मकान पर ता० २३ के दो पहर -

तक ठहरे और इन्तज़ार किया परन्तु कोई भी सामने नहीं आया क्या आते वह तो केवल मुसल्मानों की गीदड़ भभकी थी इति

प्रश्न पंचक

(१) सृष्टि को परमेश्वर ने किस चीज़ से किस समय और किस लिये बनाया ॥

(२) ईश्वर सब में व्यापक है या नहीं ॥

(३) ईश्वर न्याय कारी और दयालु किस प्रकार है ॥

(४) वेद बाइबिल और कुरान के ईश्वरोक्त होने में क्या प्रमाण है ॥

(५) मुक्ति क्या है और किस प्रकार मिल सकती है ॥

॥ नाम शख्स मोतबिरान हाज़िरीन मेला चांदापुर ॥

शाहजहांपुर के बाबू हरगोविंद साहब हेड किलर्क कलक्टरी मोलवी मोती मियां सा० व लाला रामप्रसाद सा० आनरेरी मजिस्ट्रेट। लाला बनवारीलाल. बाबू बिहारीलाल. मुन्शी सोहनलाल-महम्मद हैदर अली मुख्त्यार. हाफिज उल्ला खां महम्मद अली सा० व सखावत हुसेन सा० वकील आदि बहुत से-

लखनऊ के राजा राम खज़ानची आदि बहुत से रईस

मुरादाबाद के मुन्शी जगन्नाथ प्रसाद सा० रईस आदि

अमरोहा के पंडित बद्रीदास सा० आदि रईस

अलीगढ़ के कुंवर मुकुंदसिंह आदि रईस

बरेली के पंडित मथुरा प्रसाद आदि रईस

बनारस के मुन्शी दयाशंकर सा० डिपटी आदि

देहली के मोलवी अबदुल मनसूर आदि

इसी प्रकार और भी कानपुर व फ़र्रुखाबाद आदि नगरों के बहुत से सभ्य लोग मौजूद थे जिस को इस मेले की कैफ़ियत बिस्तार पूर्वक देखनी होवे वह =) भेज कर इस की जुदी बनी हुई किताब वैदिक यंत्रालय इलाहाबाद से मंगवा लेवें है भी देखने के लायक़ और नागरी लिपि की भी मिलेगी ॥

इसी प्रकार सन् १८७९ ई० में तीसरा तहरीरी शास्त्रार्थ मुक़ाम बांस बरेली में ३ रोज़ अर्थात् ता० २५ व २६ व २७ अगस्त को स्वामीजी और पादरी टीजी स्काट साहब से हज़ारों आदमियों के बीच कुतुबख़ाने बरेली में बैठ कर हुआ था इस सभा के सभापति लाला लक्ष्मीनारायण साहब खज़ानची व रईस आज़म बरेली थे पहिले दिन शास्त्रार्थ आवा गमन अर्थात् पुनर्जन्म पर और दूसरे दिन इस बात पर कि परमेश्वर कभी देह धारण करता है वा नहीं और तीसरे दिन इस पर कि परमेश्वर मनुष्यों के किये अपराध क्षमा करता है वा नहीं, हुआ था,

इस शास्त्रार्थ में तीन लेखक इस लिये बिठाले गये थे कि एक स्वामीजी के पास दूसरा पादरी साहब के पास तीसरा सभापति के पास बैठ कर जो कुछ वादी और प्रतिवादी के मुंह से निकले तुरंत हरफ़ ब हरफ़ लिखते जावें और उठते समय प्रति दिन तीनों परतों पर वादी प्रतिवादी और सभापति के हस्ताक्षर हो जाया करें जब तीनों दिनों का शास्त्रार्थ हो चुके तब शास्त्रार्थ की १ प्रति वादी को दूसरी प्रतिवादी को मिले और तीसरी सभापति के पास सदैव के लिये अच्छे प्रकार बनी रहे कि जब कभी उन दोनों में से कोई पुरुष शास्त्रार्थ की बात में कुछ घट बढ़ करे तो सत्यता के अर्थ

उस का लेख इस से मिलाया जावे इस शास्त्रार्थ में पादरी साह-
ब का पक्ष था कि मनुष्य का फिर जन्म नहीं होता और ईश्वर अव
तार लेता और मनुष्य कृत अपराधों को भी विना दंड दिये क्षमा-
भी करदेता है परंतु स्वामीजी महाराज इन तीनों बातों को मिथ्या
कहते थे और इसी प्रकार उनने सिद्ध कर दिखाया इस शास्त्रार्थ
की भी किताब उर्दू में सत्यासत्य विवेक नाम से आर्य दर्पण यंत्राल
य शाहजहांपुर में तैय्यार है जिस को अपेक्षित होय ।)॥ साढे
चार आना भेज कर मंगवालेवे, इति

इसी प्रकार और भी बहुत ठौर पादरी और ईसाई लोगों से वहि
स हुई सर्वत्र स्वामीजी महाराज ने उन का खंडन करके मूक ही
कर दिया है यह बात आर्यावर्त के उन नगरों के सब छोटे बडों को
भली भांति मालूम है जहां कि इस का प्रसंग हुआ है —सत्य है
वैदिक धर्म ऐसा ही है ॥

पत्री
आमेरिका वालों की

बनाम श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज ॥

स्वामीजी महाराज चंद लोग आमेरिका व और २ देश निवासी
तालिब इल्म जो कि इल्म परमेश्वर व आत्म ज्ञान होने का अ-
त्यन्त शौक़ रखते हैं वे अपने आप को आप के चरणों में डाल
कर यह प्रार्थना करते हैं कि आप उन का उद्धार करें ॥ यदिच वे
अन्य २ देश निवासी और पृथक २ पेशा व नौकरी करने वाले हैं
लेकिन सब के सब एक ही मनोरथ सिद्ध करने और उत्तमोत्तम
होजाने के लिये दृढ चित्त हो संमिलित व सुसम्मत हैं इसी-

कारण तीन बरस पेश्तर से उन्होंने अपनी एक सभा स्थापित की है और उस का नाम परब्रह्म परिज्ञान समाज रक्खा है ॥ जो कि उन्होनें अपने ईसाई मत में ऐसी कोई बात न देखी कि जिस से स्वार्थ व परमार्थ ज्ञान प्राप्त करके अपना चित्त संतुष्ट करते बल्कि हर चहार तरफ़ से खराब करने वाले उस के निश्च यों के अति बुरे फल देखे और ऐसे बड़े २ पादरी आदि पाये कि ज़ाहर परस्त और घाऊ घप्प और बुद्धि नाशक हैं उन पर विश्वा स लाने वाले लोग भी बहुत बुरी रीति व अपवित्रता से कालक्षेप करते हैं और यह भी देखा गया कि पादरी लोग भलाई व दाना ई को ताक़ में रख कर दोषों को छुपाने और अयबों को मुआफ़ कर देते हैं जो कि उनकी ये सब हालतें इन मुलकों के मनुष्य मात्रों को ख़राब ख़िस्ता करने वाली हैं नाचार हम उनके मत से जुदे होकर रोशनी पाने के लिये हिन्दुस्तानाभिमुख होते हैं हमने अपने तईं खुले मैदान पुकार कर ईसाई मत का दुश्मन प्रसिद्ध करदिया है हमारे इस चलन व साहस को देख सब की नज़र हमारी तरफ़ से फिर गई अर्थात् बड़े २ वे अधिकारी व अख़बार नवीस (कि जिनकी भ्रष्ट बुद्धि और विषयासक्त प्रकृति है और ईसाई भिन्न मत वालों से द्वेष रखते हैं) हमको धिक्कार देते और भ्रष्ट व काफ़िर व गमार कहते हैं हमने १८ महीना पेश्तर के मरे हुए आदमी की लाश को क़बर से निकाल कर पुराने पुरखों यानी आर्य्यों की रीति से जलाया हम केवल तरुण आदमियों की ही सहायता नहीं चाहते बल्कि उन की चाहते हैं कि जो बड़े दाना और ब्रह्मनिष्ठ हैं ॥ इस लिये

हम आप के चरणों में इस तरह सिर नवाते हैं जैसे कि बच्चे मा बाप के पैरों पर गिरते हैं और कहते हैं कि अय हमारे गुरू हमारी ओर देखिये और बतलाइये कि हम क्या करें और हम को अपनी शिक्षा व सहायता पात्र बनाइये ॥ यहां लाखों आदमी ज्ञान रहित विषयासक्त झूठे मत रूप अंधकार में पड़े हुए हैं और इतने परभी उन गुमराहों को संतोष होय सो नहीं अपनी चुस्त अक़ली व अति निंदक उमग से अपना धन ख़र्च कर जाहिल आदिमियों को अपना अशुद्ध मत क़बूल कराने में तत्पर हैं ॥ हमारी रसाई अख़बारों तक बख़ूबी है उसके द्वारा हम वैदिक मत के सही २ ख़्यालात तमाम ईसाई मुल्कों में फैला देना चाहते हैं और जिन लोगों को जे ईसाई महा मूर्ख बतला कर अपने मत में लाना चाहते हैं उन को चिताना व उन पर ईसाई मत की भ्रष्टता व मिथ्यात्व प्रकाशित कर देना हमारा ऐन मनोरथ है ॥ इसी तरह आर्य्यावर्त के प्राचीन ग्रंथ वेद शास्त्रों का जो इन दुष्टों ने बिपरीत अर्थ प्रकाशित किया वह अब हम सत्य २ छपवा कर इन की चालाकी और दुष्टता स्पष्ट करना चाहते हैं ॥ अगर आप हमारी सभा की मेम्बरी की सनद स्वीकार करलेवें तो हम को बड़ी प्रतिष्ठा और इज़्ज़त मिलेगी और आप की कृपा व मिहरबानी और सहायता से हमको बड़ा ही ज़ोर बंधेगा ॥ हम अपने तईं आपके शिष्य गणों में स्थापित करते हैं ॥ जिस पाक काम में आप संसक्त हैं शायद आप कोभी हम से कुछ सहायता उस में पहुंचे क्योंकि हमारा मैदान जंग कन्याकुमारी से हिमालय तक फैला

हुआ है अर्थात् सारे हिंद में जो हम चाहेंगे वह कर सक्ते हैं॥ स्वामीजी महाराज आप अपने सहशील व्यसनियों के स्वभाव को खूब पहिचानते हैं इस लिये निश्चय है कि हमारे दिल का भी हाल आप पर छुपा न रहा होगा हम बारंबार प्रार्थना करते हैं कि आप हमारी तरफ परम कृपा व दयादृष्टि से निहारिये॥ हम सच कहते हैं कि हम आप के शरणागत आप की चरण रज बनकर होते हैं न किसी अहंकार व कपट से हमारी यह दीनता है। निश्चय जानिये कि हम आप की शिक्षा लेने और उस कर्तव्य के करने को मुस्तैद व उपस्थित हैं जिस की कि आप हम को आज्ञा करें॥ जो आप हम को एक पत्र लिखेंगे तो जान लेवेंगे कि हम लोग ठीक २ क्या जिज्ञासा रखते हैं॥ निश्चय है कि जो हम चाहते हैं वह आप हम को ज़रूर अर्पण करेंगे॥ १८ मई सन् १८७८ ई० अय परम प्रतिष्ठित साहब मैं हेनरी एस अलकाट ईश्वर परिज्ञान समाज का सभापति यह पत्र सभा की तरफ़ से आप को बड़ी नम्रता पूर्वक लिखता हूं इति॥ इसी प्रकार के औरसात पत्र इन लोगों के हैं वे सब पाखण्ड तिमिर नाशक पत्र चन्द्रिका में मुद्रित हैं जिन को अपेक्षित हो ≡) आना भेज कर मंगवा लेवें क्योंकि वे सब के सब पत्र योग्य पुरुषों के अवलोकन करने के योग्य हैं (९) एक में इन का लेख है कि स्वामीजी महाराज आ... पत्र पाकर हम को ऐसी ख़ुशी हुई जैसी कि जंगल में

(९) इस पुस्तक की प्रशंसा में प्रायः सब हिन्दी समाचार पत्र वालों ने अपने पत्र के एक दो पृष्ट भर के इस देश निवासियों पर शोक प्रक

जंगली पशुओं से घिरे हुए मनुष्य को किसी बचाने वाले मनुष्य का शब्द सुन कर होती है और एक में लिखा है कि हमारा उतना ही काल सफल होता है जितने में हम भरत खंड को पत्र लिखते हैं वा वहां के आए हुए पत्र को पढ़ते हैं (१०) और फिर लिखा कि हम भरतखंड को आते हैं तदनुसार यहां आए और मई सन् ७९ ई० में प्रथम मेरठ में और द्वितीय वार उसी सन् के दिसंबर मास में काशी में श्रीमान् से मिले थे और १५ तारीख को काशी में पहुंचे थे और वहां के विद्वज्जनों की सभा में कई व्याख्यान देकर इनने प्रकाशित किया था कि वेद ऐसा प्राचीन और ज्ञान पूर्ण कोई ग्रन्थ दूसरा नहीं है इसी वेद से सब जगह ज्ञान फैला है यहां के दर्शन शास्त्र सब के शास्त्रों से श्रेष्ठ हैं इन्हीं वेद शास्त्रों के सीखने के लिये हम अपना घर द्वार और बाल बच्चे तथैव समस्त सुखों और लाभों को त्याग कर यहां आए हैं परन्तु परम शोक हमको यहां के देश वासियों पर है कि जिनने आलसी हो अपनी सब प्राचीन विद्या त्याग दी हैं (११) हमने आर्यावर्त को अपना देश समझ यहीं मरना ठाना है इसलिये कि आर्यों को नींद से जगावें (१२) और उन्हें उन के प्राचीन महत्व और ऋषि गणों के

(१०) ऐसी ही प्रशंसा भरे पत्र लंदन और जर्मन आदि देशों के परम प्रतापी महाराज के नाम बराबर आते हैं सारांश यह कि इन के सुयश से समस्त भूमण्डल प्रकाशित हो रहा है यह सिद्ध है ॥

(११) देखिये दूसरे निवासी हमारे भाइयों पर शोक करें परन्तु ये किंचिदपि लज्जित नहीं ॥ देश

लोग जगें तब जब इन का कुछ बनन हार हो कहावत है कि सोते जागे सो पावे

कामों की याद दिलावें कि जिससे प्रत्येक पुरुष विद्वान् हो समस्त मनुष्यों को अपना भाई समझ उन का हित कारक होवे और कहा कि हमारी सभा में सब धर्म वाले शामिल हो सक्ते हैं परन्तु वे नहीं जो ईश्वर और पुनर्जन्म को नहीं मानते इस पर काशी के विद्वानों ने उन को बहु विध धन्य बाद देकर कहा कि हम लोगों के प्राचीन बेदादिक ग्रन्थों पर इन दूर देशस्थ और भिन्न धर्म वालों की इस प्रकार निष्ठा होने के मूल कारण विद्वन् मण्डली भूषण भारत रत्न स्वामी दयानंद सरस्वती जी महाराज को समझना चाहिये यद्यपि कई विषयों में हम लोगों की राय उन से नहीं मिलती तथापि हम लोग उन को असंख्य धन्य बाद देते हैं आर्यगण जिस प्रकार काशी के विद्वानों ने मात्सर्य भाव छोड़ इस सभा में श्रीमान् उग्र प्रतापी स्वामी जी महाराज के गुणों को मान उन को असंख्य धन्यवाद दिया उस से कुछ अधिक धन्यवाद उन काशीवालों को यह ग्रन्थकार देता है क्योंकि उन की इस गुणज्ञता से यह ग्रन्थ जो दिग्विजय नाम से होना चाहिये था वह दिग्विजयार्क नाम पाकर प्रचरित हुआ (१३) सर्वान्तर्यामी श्री जगदीश्वर इसी प्रकार की सद्बुद्धि उन को सदैव के लिये देवे जिस से वे लोग दुराग्रह छोड़ सनातन मार्ग स्वीकार करें और औरों को भी करावें

(१३) जिस का प्रताप भरत खंड मात्र में फैले वह दिग्विजयी और जिस का भूगोल भर में विस्तृत हो वह दिग्विजयार्की कहाता है और अर्क नाम सूर्य का है वह मिला दिग्विजय शब्द से तब दिग्विजयार्क नाम सिद्ध हुआ ॥

रही बात पेट की सो निश्चय जाने कि जिसने दांत दिये हैं वह अन्न भी देगा लिखा भी है कि ,, शेषवृत्ति विधानार्थं सवासु प्रोथवामृत सब विद्वानों को ऐसे वाक्यों पर सार्व काल पूर्ण विश्वास रख पुरुषार्थ के साथ सद्धर्मारूढ होना चाहिये क्योंकि उसका नाम विश्वम्भर बहुत ही सत्य है विज्ञेषु किमधिकमित्यलम्

इति श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य्य दयानन्द सरस्वती दिग्विजयार्कीय प्रथमांके षष्ठो मयूखः॥ समाप्तोयम् प्रथमाङ्कः मङ्गलानि भवन्तु सन् १८८१

वसुरामांक चन्द्रेब्दे शुक्रे मासे सितेदले
नवम्यां चन्द्रवारे च ग्रन्थोयं पूर्णतां गतः १

विज्ञापन

बिदित हो कि श्रीमद्दिग्विजयार्कीय प्रथमांक तो समाप्त हुआ परन्तु आगे इस के द्वितीयांक मुद्रित हो रहा है उस में भी ६ छः मयूख हैं उन के देखने से सब को श्रीमान् स्वामीजी महाराज की विशेष कर्तव्यता अर्थात् समाजों की स्थिति व कृति और ग्रन्थ रचना तथा आर्यावर्त के देशान्तरों में भ्रमण करके बडे २ प्रतिष्ठित पुरुषों और राजा महराजाओं आदि से मिलना उन को सदुपदेश करना और वर्णाश्रम धर्म की मुख्यता और जन्मजन्मांतर होने के कारण और मोक्ष मार्गादि का वृत्तान्त प्रकाशित होगा जिन पुरुषों को अपेक्षित हो वे आर्य समाज वा मुझ को मुक़ाम-फ़र्रुखाबाद के पते से पत्र भेजें इति

{हस्ताक्षर पण्डित गोपाल राव हरि सभासद्
मिमांसक सभा आर्य समाज नगर फ़र्रुख़ाबाद्

विज्ञापन

इस के छापने का किसी अन्य पुरुष को अधिकार नहीं जो कोई किताब मेरे हस्ताक्षरों से रहित देखी जावे वह चोरी की समझ जो कोई मेरे पास पकड़ भेजेगा उस को ५) रु० इनाम दियाजावेगा और जो कोई इस की वा नीचे लिखी हुई किताबों की इकट्ठी बीस से अधिक जिल्दें ख़रीदेगा उस को चालीस जिल्दों तक साढे बारह रु० सैकड़ा कमीशन दियाजावेगा और विशेष के ख़रीदार को फ़ी बीस जिल्द ढाई रुपये कमीशन विशेष मिलताजावेगा हद्द कमीशन बीस रुपये सैकड़ा होगी परन्तु ऊपर लिखे अनुसार कमीशन नक़द के ख़रीदार को मिलेगा न किसी एक दिन के भी उधार वाले को और जो नमूना चाहेंगे ।॥) ॥ आना के टिकट भेजें और इस विषय के पत्र पेड होवें फ़क़त ॥ नवेरज्ञ पाखंड तिमिर नाशक पत्र चंद्रिका क़ीमत फ़ी जिल्द ~)॥ महसूल ~)॥
श्रीयुत दयानन्द दिग्विजय द्वितीयखंड क़ीमत ॥) महसूल ~)॥
तिमिरनाशक तृतीय खंड सार क़ीमत =) महसूल डांक ~)॥
श्री [illegible] की तस्वीर फ़ोटोग्राफ़ की खिची हुई मो [illegible]

दरख़ास्त इन किताबों की मुक़ाम फ़र्रुख़ाबाद में नाम ग्रंथकार अथवा समाज के नाम आना चाहिये ॥

विनायक मुकुन्दाख्यो लक्ष्मीयो यस्य द्वौ सुतौ
हस्ताक्षरं स कुरुते जानकीहरिजः कविः ॥१॥

ॐ

नमः सर्वात्मने श्रीजगदीश्वराय

श्रीमत्

दयानन्ददिग्विजयार्क

द्वितीयखण्ड

यह सद्ग्रन्थ ज़िला फ़र्रुखाबादके पूर्वपाठशालाधीश और

आर्य्यसमाज मीमांसक सभाके संस्थापक व सभासद पंडित

गोपालशास्त्रीशर्म्मा

ने

सकलार्य्यावर्तनिवासियों के प्रमोद और संशंकितों

के

भ्रमनिवारणार्थ

बनाया

कम्प फ़तेगढ़

कन्हैयालाल यन्त्रालय में मुन्शी बिशुन स्वरूप के प्रबन्ध

से मुद्रित कराया

संवत १९४४ विक्र०

द्वितीयबार | सन १८८७ ईस्वी | मोल्य प्रति
२०० जिल्द | द० ५ | पुस्तक ।।।)
लिखनं तुलसीराम कापीनवीस | महसूल ≈)

सूचना

विदित हो कि इस दिग्विजयार्कीय द्वितीयांक में भी छः ही मयूख (अध्याय) नीचे लिखे नामानुसार यथा नामनस्तथागुण हैं और प्रत्येक मयूख में दो २ तीन ३ प्रकरण हैं ॥

१	वेदोत्पत्ति वर्णनम्	४	श्रीमद्भाष्य प्रदर्शनम्
२	वेदानां नित्यत्व वर्णनम्	५	सामाजिक चरित्र वर्णनम्
३	वेद संज्ञा विचार वर्णनम्	६	सामाजिक प्रबंन्ध विवर्णनम्

विज्ञापन

समस्त आर्य समाज और यावत सत्पुरुषों की सेवा में प्रार्थना है कि इस ग्रन्थ के तीनों खंडों के प्रचार करने में हो सके तहां तक पुरुषार्थ करें जिससे मनुष्यों का अनुराग श्रीमान् स्वामीजी महाराज के चरणों में बढ़े सिवाय इसके जिनके पास यह ग्रन्थ पहुंचे वे तुरन्त कृपा करके एक कार्ड के द्वारा पुस्तक प्राप्ति की सूचना ग्रन्थ कार को कर देवें और जिनके यहां जो कुछ ग्रन्थ कार का हिसाब अब तक का हो वह डाक व्यय सहित जोड़ कर प्राप्ति पत्र में लिख दिया करें पश्चात् जिनके यहां हिसाब रुपये से कम का हो वे)॥ का टिकट और विशेष हो तो मनी आर्डर द्वारा वा जिस प्रकार हो सके शीघ्र भेजें जिससे इतर उपकारक कामों की सिद्धि हो, द्वितीय बात यह है कि यदि कोई धन रहित धर्मात्मा वा उत्साही विद्वान् इस ग्रन्थ के किसी खंड के देखने दिखाने की अपने शुद्धान्तःकरण से लालसा रखता हो तो वह अपना प्रार्थना पत्र व अपेक्षित पुस्तक का डांक महसूल किसी आर्य समाज के मंत्री की सम्मति से मेरे पास भिजवावे जिस्से कि बिना मौल्य वह खंड उसके समीप भेजने में आवे इति ॥

ॐ

तत्सत्यम्

वसुरामाङ्कभूवर्षे श्रावणस्यासितेदले ।।
नवम्यांगुरुवारेच ग्रन्थारम्भः कृतोमया ।

अथ

श्रीमद्दयानन्द दिग्विजयार्कद्वितीय

खण्डारम्भः

मंत्र

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः ।।१।।

शंनो वातः पवतां शंनस्तपतु सूर्यः ।। शंनः कनिक्रदद्देवः पर्जन्योऽअभि वर्षतु ।।२।।

इन्द्रो विश्वस्य राजति ।। शंनो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ।।३।।
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

प्रार्थना

सर्वात्मा सच्चिदानन्दो विश्वाद्यो विश्वकृद्विभुः॥
भूयात्तमां सहायो नः सर्वशोन्यायकृच्छुचिः १॥

श्रियं बिभ्रद्वर्णैः सुपद लतवृत्तैर्विरचयन्
धराध्वान्तध्वंसानबुधविधुबोधं विधुरयन्
समुद्यन् गोपालाद्रनुग पद्गवाङ्कुरिजित
स्सरद्ग्रामोदेदिग विजयकलितार्को विजयताम्

प्रियभ्रातृगण

श्रीजगदीश्वर की स्तुति प्रार्थना के पश्चात् विदित होकि प्रथमाङ्क द्वारा पूर्ण प्रतापी श्रीमान् स्वामीजी महाराजकी दिनचर्य्या और सर्वत्र पुराणी जैनी कुरानी किरानी आदि मत वादियों पर विजयी होना आदि बहुतसा वृत्तान्त संक्षेप रीति से वर्णन हो चुका है अब इस द्वितीयाङ्क द्वारा ग्रन्थ रचना आदि उनके बहुत से अद्भुत चरित वर्णन किये जाते हैं निश्चय है कि इस ग्रन्थ को देख सत्पुरुषों को बड़ा ही हर्ष और लाभ होगा जिनका पूर्वार्जित अच्छा होगा उन को बहुत कुछ कर्तव्य भी सूझेगा॥

आर्यगण

अब हम उन सद्ग्रंथों का नाम संक्षेप व्याख्या सहित लिख सूचित करते हैं जिनको श्रीमान् दिग्विजयी ने सनातन रीत्यानुसार महत्परिश्रम और व्यय से सर्वोपकारार्थ रचकर मुद्रित कराया वा कर रहे हैं ये सब ग्रन्थ वैदिक यंत्रालय प्रयाग और सब आर्य समाजों में मिलेंगे ॥

अथ ग्रन्थसूचना

१ समस्त वेद भाष्य भूमिका ५)

श्रीयुत स्वामीजी महाराज ने वेद भाष्य के आरम्भ से पूर्व यह ग्रन्थ चारो वेदों की १६ जिल्दों में रचा है मौल्य प्रति जिल्द ।=) आना इस में ऋग् यजु साम अथर्व इन चारो वेदों का नित्यत्व और उनकी उत्पत्ति और उनमें से सब शास्त्रों का प्रादुर्भाव और बहुत से बिषयों का आशय बड़े प्रबल प्रमाणों सहित यथावत् सूचित किया है सिवाय इसके सृष्टिक्रम की व्यवस्था आदि भी लिखी है इस का कुछ निमूना आगाड़ी देख मिलेगा — मलिनान्तःकरण वालों के व्यतिरिक्त कौन ऐसा होगा जो उसको देख सुन श्री से० मान् के अपूर्व परिश्रम की सराहना न करेगा या उसको वेदों पर श्रद्धा न उपजेगी ॥

२ ऋग् वेद भाष्य चार वर्ष का २४ जिल्दों में २४)

इस वेद की संहिता के आठ अष्टक और प्रत्येक अष्टक में आठ २ अध्याय हैं उन सब के मंत्रों का अर्थ प्रथम पांच प्रकार से स्फुरके संस्कृत में फिर दो प्रकार भाषा में बालबोध लिखा है

३ यजुर्वेद भाष्य चार वर्ष का २९ जिल्दों में ८)

इस वेद की संहिता में ४० अध्याय हैं उनके मंत्रों का अर्थ ऊपर लिखे अनुसार संस्कृत और भाषा में लिखा है यह दोनों ग्रन्थ मा-ह वार थोड़ा२ करके तैयार होकर ग्राहकों के पास पहुंचते हैं और प्रत्येक वेद भाष्य का वार्षिक मोल्य ४) रु० है

---

४ संध्योपासन संस्कृत और भाषा ।)

इस पुस्तक में ब्राह्मण आदि को जो नित्य कर्म अर्थात् दोनों का-ल संध्योपासन और होम हवन तथैव भोजन काल में बलिवैश्व देव करना अवश्य कहा है उसका विधान और उनमें के गायत्री आदि मंत्रों का अर्थ लिखा है॥

---

५ संध्योपासन संस्कृत ≡)

इसमें ऊपर लिखे सब काम केवल संस्कृत भाषा में लिखे हैं॥

---

६ सत्यार्थ प्रकाश २॥)

इस ग्रन्थ में कुल बारह समुल्लास (अध्याय) हैं उनके द्वारा परमेश्व-र के गुण, जगत् की उत्पत्ति, प्रलय और जो मनुष्यों को कर्तव्यस-त्या सत्य विचार कहा है वह और मिथ्या मतों का खण्डन आदि ब-हुत से विषय सविस्तर वर्णन किये हैं

---

७ आर्योद्देश्य रत्न माला ー)॥

यह एक छोटी सी पुस्तक है इसमें आर्यों के लिये बहुत से मु-ख्य २ कामों का विचार करना लिखा है

८ आर्य्याभिविनय ॥)

इसमें दो वेदों के बहुत से ऐसे मंत्र लिखे हैं जिन के द्वारा परमेश्वर की स्तुति प्रार्थना अर्थ समझ कर करने से मनुष्यों का परम कल्याण होता है

९ संस्कार विधिः १॥=)

जोकि ब्राह्मण आदि मुख्य वर्णों को गर्भाधान से लेकर मरण पर्यंत वेदों में लिखे १६ संस्कारों का अपने २ समय पर अवश्य मेव करना कहा है इस लिये उन सबों का विधान प्रत्येक वेद और उस्के सूत्र के अनुसार इस पुस्तक में सबके उपकारार्थ लिखा है

१० भ्रांति निवारण ।)

पंडित महेशचंद्र न्याय रत्ननाम के एक प्रसिद्ध विद्वान् कलकत्ते के संस्कृत कालिज में बड़े अध्यक्ष हैं उनको श्रीयुत की बनाई हुई वेदों की भूमिका और भाष्य पर आधुनिक विद्या के अनुसार भ्रम उत्पन्न हुआ था उसका निवारण इस पुस्तक द्वारा श्रीजी महाराज ने किया है

११ सत्यासत्य विवेक उर्दू =)

इसमें मेला चांदापुर ज़िला शाहजहांपूर की व्यवस्था (जिसका कुछ आशय प्रथमांक के छठे मयूख में हम प्रकाशित कर चुके हैं) विस्तार पूर्वक लिखी है

१२ सत्यधर्मविचार हिन्दी ≡)

ऊपर लिखे अनुसार इस को भी जानो

१३ गौतम अहिल्या की सत्य कथा —)

इसमें ठीक २ वृत्तान्त गौतम अहिल्या और इन्द्र वृत्रासुर का लिखा है जिन की मिथ्या कथा पुराणों में ऐसी लिखी हैं कि जिससे आर्यों को लज्जित होना पड़ता है

१४ शास्त्रार्थ काशी संस्कृत व भाषा ≡)

यह वह पुस्तक है जिसका कुछ विस्तार प्रथमांक के तीसरे ३ मयूख में लिख चुके हैं

१५ शास्त्रार्थ काशी भाषा व उर्दू ≡)

इसको ऊपर लिखे अनुसार जानो अंतर यह है कि इसमें संस्कृत को छोड़ उर्दू लिखी है

१६ भ्रमोच्छेदन —)

राजा शिवप्रसाद । ३ । सितारे हिन्द ने भ्रम जाल में पड़कर काशी के विद्वानों की कुछ कुमक से जब प्रथम निवेदन नाम की पुस्तक बना कर छपवाई और उसमें बहुत कुछ प्रलाप विप्रलाप लिख श्री स्वामी विशुद्धानन्दजी के हस्ताक्षर कराय समस्त वेद भाष्य के ग्राहकों के पास भेज श्रीयुत से उत्तर चाहा तब श्री जी महाराज ने उसका इस पुस्तक के द्वारा यथावत् उत्तर लि·

खा और उनके लिये जैसा कि उचित था वैसा बहु कृपा पूर्वक उपदेश भी किया है। परन्तु शोक कि विषया सक्त राजा साहबको न उत्तर सूझा न शांति हुई हालां कि उनने इस पुस्तक को२२ बार पढ़ा तथापि स्मृति विभ्रम ही रहा सो यह बुद्धि नाशका औ र यह सर्व नाशका परम हेतु है अत एव घर २ फिरना पड़ा, व्यथा धनव्यय और अपकीर्ति भी हुई, रात्रि को अच्छे प्रकार नींद भी नहीं आती होगी॰ न वह सुन्दर कंपिनी बाग की बहार बहार दिखाती होगी जो सदैव उनके सन्मुख खड़ी रहती है ॥ सत्य तो यह है कि "किं करोमि क्वगच्छामि" इस अष्टाक्षरी मन्त्र का अहर्निशि जाप जनाब करते होंगे आर्यगण तभी तो कहा है "अविवेकः परमा पदां पदम्"

१७ वर्णोच्चारण शिक्षा =)

संस्कृत पढ़ने की आधुनिक प्रणाली श्रीयुत ने बहुत खराब देख कर उसकी सुधार के अर्थ यह प्रथम सुगम पुस्तक रची है

(२) १८ संस्कृत वाक्य प्रबोधः ।=)

वैसी ही यह दूसरी पुस्तक है भाषा पढ़े लोग भी इसके द्वारा शीघ्र संस्कृत में अभ्यास कर लेने सकते है

नोट (२) इस पुस्तक पर राजा साहब के सहचर बाबूराम कृष्णजी ने कुछ सशंकित हो लेख किया है - उसकी प्रति छपवा कर बहुत से सम्पाद कों के पास भेज कृतकृत्य भी हुए हैं कई सम्पादकों ने उनको पुस्तक प्राप्ति

१९ व्यवहार भानुः ।)

इसी प्रकार की यह तीसरी पुस्तक परम उपयोगी है

२० गोकरुणा निधिः ─)॥

इन दिनों इस देश में गाय बैल आदि पशु और बहुत से पक्षियों की हिंसा होने से भारत खंड वासियों की परम हानि देख करुणा सागर ने यह करुणा निधि रची है इसको सब राजे महाराजे और हमारी गवर्नमेन्ट अवश्य दर्पण बनावे जिस से राजा और प्रजा दोनों कल्याण पावें

लिख संतुष्ट कर दिया है उनमें से एक लेख की नक़ल आगे लिखते हैं

नक़ल

हमारे पास अबोधनिवारण नामक एक छोटी सी पुस्तक बनारस से आई है इसमें दयानन्द के खण्डन का पुराना राग रसण बहुत कुछ गाया है पर वही निरी पंडिताई के ढंग पर दयानन्द के आशय पर कुछ भी दृष्टि नहीं है इनदिनों के शुष्क वैया करणियों की लड़ाई के ढंग पर उनके लेख में अशुद्धियां निकाल २ कर लिख दी गई हैं यद्यपि हम दयानन्द के किसी तरह पक्षपाती नहीं हैं─पर निरे संस्कृतज्ञ पंडितों की भी सराहना नहीं कर सकते दयानन्द चाहो बहुत बुरे ही हों पर देश के फ़ायदे और शोधन की ओर तो बहुत प्रवणचित्त हैं पंडितों की मोटी तोंद किसक की सिवाय आंखों में धूर झोंक प्रजा को लूटने के, और फिर इस पुस्तक के अग्रसर तो चतुर्भुज हैं जिनके अगुआ भये भिखारी तिनकी वाट गुसैयां मारी॥

प्रयागस्थ सम्पादक हिन्दीप्रदीप॥

२१ अनुभ्रमोच्छेदन ~)

यह पुस्तक श्री स्वामीजी महाराज के एक विज्ञ विद्यार्थीने राजा साहबके द्वितीय निवेदन नाम की पुस्तक के उत्तर में उनके संतोषार्थ लिखी है बहुत ही अच्छी है

नीचे लिखी ११ पुस्तकें अष्टाध्यायी के एक २ विषय पर भाषा में व्यवस्था सहित श्रीयुत ने लिखी हैं जिनके साथ मोल्य लिखा है वे छप चुकीं र-हीं वे भी शीघ्र छपेंगी इनके पढ़ने से विद्यार्थी लोग ऐसे अच्छे वैय्या करणी तैयार हो जावेंगे कि जिनको देख पोप लोग दुम दबावेंगे ॥

१ संधिविषयः ।॥) २ नामिकः ॥) ३ तद्धितः ४ सामासिकः ॥)
५ अव्ययार्थः ६ आख्यातिकः ७ कारकीयः ।=) ८ सौवरः
९ पारिभाषिकः १० उणादिगणः ११ गणपाठः यहांतक कुल २२ हुई

२२

(अष्टाध्यायी) यह पुस्तक अलग भी संस्कृत वृत्ति सहित छपेगी- जब विद्यार्थी लोग ऊपर लिखी पुस्तकों को पढ़ लेवेंगे तब उनको- इस उपकारी पुस्तक की बहुत आवश्यकता होगी

२३

(निघंटु) अर्थात् यास्क मुनि कृत वैदिक कोशः ॥ ऊपर लिखी हुई सब पुस्तकों के पढ़े हुए विद्यार्थियों को यह पुस्तक हाथ आते ही वेद मंत्रों का अर्थ करना अति सुगम हो जायगा परन्तु उक्त पदाभिलाषी को इतर शास्त्र दर्शी अवश्य होना होगा ॥

निश्चय है कि इन शास्त्रों को भी ऐसी ही सुगम पुस्तकें श्रीयुत शीघ्र बनावेंगे

प्रियसुहृद्गण

ये ऊपर लिखे सब ग्रंथ अति सरल और सुगम होकर भी बड़े अद्भुत और विचित्र हैं विशेष कर वेद भाष्य भूमिका में तो व जिन्स वे गुण जानो जो कभी महाराज युधिष्ठिर की मय रचित सभाके सुने हों अर्थात् उसको देख सुन श्री जी महाराज के अनुरागी जन तो निःशंक हो अनुपम सुख लहते हैं परन्तु विरोधियों की यह कैफ़ियत होजाती है कि वे उसको देखते ही निश्चय होने के पलटे अधिक भ्रमजाल और महा विकट विसमयावर्त में पड़कर बेडब पुकार करते हैं अर्थात् कहते हैं कि भाई भाष्य भूमिका के देखने वालो ख़बरदार हूजियो हम उस्को हाथ में थामते हीअथाह नरक कुंड में गिरे तुम तो भी अपनी बुद्धि को काम में लाना अथवा उन पंडितों की सम्मति लेना जिनको हम अपनी तिमिर नाशक तृतीय खण्ड आदि कई पुस्तकों के द्वारा अब तक बहुत कुछ भूल बता चुके हैं-(२) सारांश यह कि भूमिका बड़ी ही चमत्कारी वस्तु है इस लिये अब हम उसका कुछ आशय आगे प्रकाशित करते हैं। विशेष कर उतना प्रकाशित होगा जितना कि वेदों के विषय में आर्यों को अच्छी तरह जान लेना चाहिये क्योंकि बहुत से विरोधी लोग उन विषयों पर शंका कर बैठते हैं

(२) यहां तक जो मज़मून ऊपर से आया है वह राजा साहब की मथमनिवेदन नामी किताब को पढ़कर समझ लेना चाहिये नहीं तो जैसा कि चाहिये समझ में नहीं आवेगा

विदित होकि श्रीमान् स्वामीजी महाराज ने प्रत्येक विषय प्रथम संस्कृत में फिर उसी को भाषा में लिखा है परंतु हम केवल भाषार्थ यहां लिखते हैं अंत में संस्कृत सहित भी कुछ लिखवि· खावेंगे ॥

इतिग्रन्थसूचना

अथ वेदोत्पत्तिविषयः

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे । छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥१॥ यजुः० अ० ३१ मं० ७।

यस्मादृचो अपातक्षन् यजुर्यस्मादपाकषन् । सामानि यस्य लोमान्यथर्वाङ्गिरसो मुखम् । स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः ॥२॥ अथर्व० कां० १० प्रपा० २३ अनु० ४ मं० २०

एवं वा अरेऽस्य महतो भूतस्य निःश्वसितमेतद्यदृग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वाङ्गिरस इत्यादि। श० कं० १४ अ० ५॥ अस्यायमभिप्रायः।

भाषार्थ

प्रथम ईश्वर को नमस्कार और प्रार्थना करके पश्चात् वेदों की उत्पत्ति का विषय लिखा जाता है कि वेद किसने उत्पन्न किये हैं (तस्माद्यज्ञात्स०) सत् जिसका कभी नाश नहीं होता चित् जो सदा ज्ञान स्वरूप है जिसको अज्ञान का लेश भी कभी नहीं होता आनंद जो सदा सुखस्वरूप और सबको सुख देने वाला है इत्यादि लक्षणोंसे युक्त पुरुष जो सब जगह में परिपूर्ण हो रहा है जो सब मनुष्यों को उपासना के योग्य इष्टदेव और सब सामर्थ्य से युक्त है उसी पर ब्रह्म से (ऋचः) ऋग्वेद (यजुः) यजुर्वेद (सामानि) सामवेद और (छन्दांसि) इस शब्द से अथर्व भी ये चारों वेद उत्पन्न हुए हैं इस लिये सब मनुष्यों को उचित है कि वेदों को ग्रहण करें और वेदोक्त रीति से ही

चलैं (यत्रिरे) और (अजायत) इन दोनों क्रियाओं के अधिक होने से वेद अनेक विद्याओं से युक्त हैं ऐसा जाना जाता है वैसेही (तस्मात्) इन दोनों पदों के अधिक होने से यह निश्चय जानना चाहिये कि ईश्वर सेही वेद उत्पन्न हुए हैं किसी मनुष्य से नहीं वेदों में सब मंत्र गायत्र्यादि छन्दों से युक्त हीहैं फिर (छन्दांसि) इस पदके कहने से चौथा जो अथर्व वेद है उसकी उत्पत्ति का प्रकाश होता है शतपथ आदि ब्राह्मण और वेद मंत्रों के प्रमाणों से यह सिद्ध होता है कि यज्ञ शब्द से विष्णु का और विष्णुशब्द से सर्व व्यापक जो परमेश्वर है उसी का ग्रहण होता है क्योंकि सब जगत् की उत्पत्ति करनी परमेश्वर में ही घटती है अन्यत्र नहीं ॥१॥ (यस्मादृचो अपा०) जो सर्वशक्तिमान् परमेश्वर है उसी से (ऋचः) ऋग्वेद (यजुः) यजुर्वेद (सामानि) सामवेद (आंगिरसः) अथर्ववेद ये चारों उत्पन्न हुए हैं इसी प्रकार रूपकालंकार से वेदों की उत्पत्ति का प्रकाश ईश्वर कर्त्ता है कि अथर्ववेद मेरे मुख के समतुल्य सामवेद लोमों के समान यजुर्वेद हृदय के समान और ऋग्वेद प्राण की नाईं है (ब्रूहिकतमः स्विदेवसः) अर्थ चारोवेद जिस्से उत्पन्न हुए हैं सो कौनसा देव है उसको तुम मुझ से कहो इस प्रश्न का यह उत्तर है कि (स्कंभंतं०) जो सब जगत् का धारण करता परमेश्वर है उसका नाम स्कंभ है उसी को तुम वेदों का कर्त्ता जानो और यह भी जानो कि उसको छोड़ के मनुष्यों को उपासना करने के योग्य दूसरा कोई इष्ट देव नहीं है क्योंकि ऐसा अभागी कौन मनुष्य है जो वेदों के कर्त्ता सर्वशक्तिमान् परमेश्वर को छोड़ के दूसरे को परमेश्वर मान के उपासना

कारे ॥२॥ (एवं वा अरेस्य०) याज्ञवल्क्य महा विद्वान् जो महर्षि हुए हैं वह अपनी पंडिता मैत्रेयी स्त्री को उपदेश करते हैं कि हे मैत्रेयि जो आकाशादि से भी बड़ा सर्व व्यापक परमेश्वर है उस सेही ऋक् यजुः साम और अथर्व ये चारो वेद उत्पन्न हुए हैं जैसे मनुष्य के शरीर से श्वासा बाहर को आके फिर भीतर को जाती है इसी प्रकार सृष्टि के आदि में ईश्वर वेदों को उत्पन्न करके संसार में प्रकाश करता है और प्रलय में संसार में वेद नहीं रहते परंतु उसके ज्ञान के भीतर वे सदा बने रहते हैं बीजांकुर वत् जैसे बीज में अंकुर प्रथमही रहता है वही वृक्ष रूप होके फिर भी बीजके भीतर रहता है इसी प्रकार से वेद भी ईश्वर के ज्ञान में सब दिन बने रहते हैं उनका नाश कधी नहीं होता क्योंकि वह ईश्वरकी विद्या है इस्से इनको नित्य ही जानना ॥

इस विषय में कितने ही पुरुष ऐसा प्रश्न करते हैं कि ईश्वर निराकार है उस्से शब्द रूप वेद कैसे उत्पन्न हो सके हैं इसका यह उत्तर है कि परमेश्वर सर्व शक्तिमान् है उसमें ऐसी शंका करनी सर्वथा व्यर्थ है क्योंकि मुख और प्राणादि साधनों के बिना भी परमेश्वर में मुख और प्राणादि के काम करने का अनंत सामर्थ्य है कि मुखके बिना मुख का काम और प्राण के बिना प्राणादि का काम वह अपने सामर्थ्य से यथावत् कर सक्ता है यह दोष तो हम जीव लोगों में आ सक्ता है कि मुखादि के बिना मुखादि का कार्य नहीं कर सक्ते हैं क्योंकि हम लोग अल्प सामर्थ्य वाले हैं और इसमें यह दृष्टान्त भी है कि मन में मुखादि अवयव नहीं हैं तथापि जैसे उसके भीतर प्रश्नोत्तर आदि शब्दों का उच्चारण मानस व्यापार में होता है वैसेही परमेश्वर में भी

जानना चाहिये और जो संपूर्ण सामर्थ्य वाला है सो किसी कार्य के करने में किसी का सहाय ग्रहण नहीं करता क्यों कि वह अपने सामर्थ्य से ही सब कार्यों को कर सक्ता है जैसे हम लोग बिना सहाय के कोई काम नहीं कर सक्के वैसा ईश्वर नहीं है जैसे देखो कि जब जगत् उत्पन्न नहीं हुआ था उस समय निराकार ईश्वर ने संपूर्ण जगत् को बनाया तब वेदों के रचने में क्या शंका रही जैसे वेदों में अत्यंत सूक्ष्म विद्या का रचन ईश्वर ने किया है वैसेही जगत् में भी नेत्र आदि पदार्थों का अत्यंत आश्चर्य रूप रचन किया है तो क्या वेदों की रचना निराकार ईश्वर नहीं कर सक्ता॥

प्रश्न जगत् के रचने में तो ईश्वर के बिना किसी जीव का सामर्थ्य नहीं है परंतु जैसे व्याकरणादि शास्त्र रचने में मनुष्यों का सामर्थ्य होता है वैसे वेदों के रचने में भी जीव का सामर्थ्य हो सक्ता है उत्तर नहीं किन्तु जब ईश्वर ने प्रथम वेद रचे हैं उनको पढ़ने के पश्चात् ग्रन्थ रचने का सामर्थ्य किसी मनुष्य को हो सक्ता है उसके पढ़ने और ज्ञान से बिना कोई भी मनुष्य विद्वान् नहीं हो सक्ता जैसे इस समय में किसी शास्त्र को पढ़ के किसी का उपदेश सुनके और मनुष्यों के परस्पर व्यवहारों को देखके ही मनुष्यों को ज्ञान होता है अन्यथा कधी नहीं होता जैसे किसी मनुष्य के बालक को जन्म से एकांत में रखके उसको अन्न और जल युक्ति से देवै उसके साथ भाषणादि व्यवहार लेश मात्र भी कोई मनुष्य न करे – जब तक उसका मरण न होय तब तक उसको इसी प्रकार से रक्खै तो मनुष्यपने का भी ज्ञान नहीं हो सक्ता तथा जैसे बड़े बन में मनुष्य को बिना उपदेश के यथार्थ ज्ञान नहीं होता किन्तु पशुओं की नाईं उनकी

प्रवृत्ति देखने में आती है वैसेही वेदों के उपदेश के बिना भी सब मनुष्यों की प्रवृत्ति हो जाती फिर ग्रन्थ रचने के सामर्थ्य की तो कथा क्या ही कहनी है इससे वेदों को ईश्वर के रचित मान ने से ही कल्याण है अन्यथा नहीं ॥

प्र० ईश्वर ने मनुष्यों को स्वाभाविक ज्ञान दिया है सो सब ग्रन्थों से उत्तम है क्योंकि उसके बिना वेदों के शब्द अर्थ और संबन्ध का ज्ञान कभी नहीं हो सक्ता और जब उस ज्ञान की क्रम से वृद्धि होगी तब मनुष्य लोग विद्या पुस्तकों को भी रच लेवेंगे पुनः वेदों की उत्पत्ति ईश्वर से क्यों मानना उ० जो प्रथम दृष्टांत बालक का एकांत में रखने का और दूसरा बन वासियों का भी कहा था क्या उनको स्वाभाविक ज्ञान ईश्वर ने नहीं दिया है वे स्वाभाविक ज्ञान से विद्वान् क्यों नहीं होते इससे यह बात निश्चित है कि ईश्वर का किया उपदेश जो वेद है उसके बिना किसी मनुष्य को यथार्थ ज्ञान नहीं हो सक्ता जैसे हम लोग वेदों के पढ़ने विद्वानों की शिक्षा और उनके किये ग्रन्थों को पढ़े बिना पंडित नहीं होते वैसेही सृष्टि की आदि में भी परमात्मा जो वेदों का उपदेश नहीं कर्त्ता तो आज पर्यंत किसी मनुष्य को धर्मादि पदार्थों की यथार्थ विद्या नहीं होती इससे क्या जाना जाता है कि विद्वानों की शिक्षा और वेद पढ़ने के बिना केवल स्वाभाविक ज्ञान से किसी मनुष्य का निर्वाह नहीं हो सक्ता जैसे हम लोग अन्य विद्वानों से वेदादि शास्त्रों का अनेक प्रकार के विज्ञान को ग्रहण करके ही पीछे ग्रन्थों को भी रच सक्ते हैं वैसेही ईश्वर के ज्ञान की भी अपेक्षा सब मनुष्यों को अवश्य है क्योंकि सृष्टि के प्रारंभ में पढ़ने पढ़ाने की कुछ भी व्यवस्था नहीं थी तथा विद्या का कोई ग्र-

न्थ भी नहीं था उस समय ईश्वर के किये वेदोपदेश के बिना विद्या के नहीं होने से कोई मनुष्य ग्रंथ की रचना कैसे कर सक्ता क्योंकि सब मनुष्यों को सहाय कारी ज्ञान में स्वतंत्रता नहीं है और स्वाभाविक ज्ञान मात्र से विद्या की प्राप्ति किसी को नहीं हो सक्ती इसी लिये ईश्वर ने सब मनुष्यों के हित के लिये वेदों की उत्पत्ति की है और जो यह कहा था कि अपना ज्ञान सब वेदादि ग्रंथों से श्रेष्ठ है सो भी अन्यथा है क्योंकि वह स्वाभाविक जो ज्ञान है सो साधनकोटि में है जैसे मन के संयोग के बिना आंख से कुछ भी नहीं देख पड़ता त-था आत्मा के संयोग के बिना मन से भी कुछ नहीं होता वैसे ही जो स्वाभाविक ज्ञान है सो वेद और विद्वानों की शिक्षा के ग्रहण करने में साधन मात्र ही है तथा पशुओं के समान व्यवहार का भी साधन है परंतु वह स्वाभाविक ज्ञान धर्म अर्थ काम और मोक्ष विद्या का साधन स्वतंत्रता से कभी नहीं हो सक्ता॥

प्र० वेदों के उत्पन्न करने में ईश्वर का क्या प्रयोजन था॥

उ० मैं तुम से पूछता हूं कि वेदों के उत्पन्न नहीं करने में उसका क्या प्रयोजन था जो तुम यह कहो कि इसका उत्तर हम नहीं जान स-के तो ठीक है क्योंकि वेद तो ईश्वर की नित्य विद्या है उसकी उत्पत्ति वा अनुत्पत्ति हो ही नहीं सक्ती परंतु हम जीव लोगों के लिये ईश्वर ने जो वेदों का प्रकाश किया है सो उसकी हम पर परम कृपा है जो वे-दोत्पत्ति का प्रयोजन है सो आप लोग सुनें प्र० ईश्वर में अनंत विद्या हैं वा नहीं उ० हैं

प्र० सो उसकी विद्या किस प्रयोजन के लिये हैं उ० अपने ही लिये जिस से सब पदार्थों की रचना और जानना होता है॥

प्र० अच्छा तो मैं आपसे पूछता हूं कि ईश्वर परोपकार को करता है वा नहीं उ० ईश्वर परोपकारी है पर इस्से क्या आया प्र० इस्से यह बात आती है कि विद्या जो है सो स्वार्थ और परार्थ के लिये होती है क्योंकि विद्या का यही गुण है कि स्वार्थ और परार्थ इन दोनों को सिद्ध करना जो परमेश्वर अपनी विद्या को हम लोगों के लिये उपदेश न करै तो विद्या से जो परोपकार करना गुण है सो उसका नहीं रहै इस्से परमेश्वर ने अपनी वेद विद्या की हम लोगों के लिये उपदेश करके सफलता सिद्ध करी है क्योंकि परमेश्वर हम लोगों का माता पिता के समान है हम सब लोग जो उसकी प्रजा हैं उन पर नित्य कृपा दृष्टि रखता है जैसे अपने सन्तानों के ऊपर पिता और माता सदैव करुणा को धारण करते हैं कि सब प्रकार से हमारे पुत्र सुख पावें वैसेही ईश्वर भी सब मनुष्यादि सृष्टि पर कृपा दृष्टि सदैव रखता है इस्सेही वेदों का उपदेश हम लोगों के लिये किया है। जो परमेश्वर अपनी वेद विद्या का उपदेश मनुष्यों के लिये न करता तो धर्म अर्थ काम और मोक्ष की सिद्धि किसी को यथावत् प्राप्त न होती उसके बिना परम आनन्द भी किसी को नहीं होता जैसे परम कृपालु ईश्वर ने प्रजा के सुख के लिये कंदमूल फल और घास आदि छोटे भी पदार्थ रचे हैं सोही ईश्वर सब सुखों के प्रकाश करने वाली सब सत्य विद्याओं से युक्त वेद विद्या का उपदेश भी प्रजा के सुख के लिये क्यों न करता क्योंकि जितने ब्रह्मांड में उत्तम पदार्थ हैं उनकी प्राप्ति से जितना सुख होता है सो सुख विद्या प्राप्ति होने के सुख के हजार वें अंश के भी समतुल्य नहीं हो सक्ता ऐसा सर्वोत्तम विद्या पदार्थ जो वेद है उसका उपदेश परमेश्वर क्यों

न करता इससे निश्चय करके यह जानना कि वेद ईश्वर के ही बनाये हैं ॥

प्र० वेदों के रचने और वेद पुस्तक लिखने के लिये ईश्वर ने लेख-नी स्याही और दवात आदि साधन कहां से लिये थे ? क्योंकि उस सम-य में कागज़ आदि पदार्थ तो बने ही न थे ॥

उ० वाह वाह वाह आपने बड़ी शंका करी आपकी बुद्धि की क्या स्तुति करैं अच्छा आपसे मैं पूछता हूं कि हाथ पग आदि अंगों के बि-ना तथा काष्ठ लोह आदि सामग्री साधनों बिना ईश्वर ने जगत् को क्यों कर रचा है जैसे हाथ आदि अवयवों के बिना उसने सब जगत् को रचा है वैसे ही वेदों को भी सब साधनों के बिना रचा है क्योंकि ईश्वर सर्व शक्तिमान् है इससे ऐसी शंका उस में आपको करना यो-ग्य नहीं परंतु इसके उत्तर में इस बात को जानो कि वेदों को पु-स्तकों में लिखके सृष्टि की आदि में ईश्वर ने प्रकाशित नहीं किये थे प्र० तो किस प्रकार से किये थे उ० ज्ञान के बीच में प्र० किन-के ज्ञान में उ० अग्नि वायु आदित्य और अंगिरा के प्र० वे तो जड़ पदार्थ हैं उ० ऐसा मत कहो वे सृष्टि की आदि में मनुष्य देह धारी हुए थे क्योंकि जड़ में ज्ञान के कार्य का असंभव है और ज-हां २ असंभव होता है वहां २ लक्षणा होती है जैसे किसी सत्य वादी विद्वान् पुरुष ने किसी से कहा कि खेतों में मंचान पुकार-ते हैं इस वाक्य में लक्षणा से यह अर्थ होता है कि मंचान के ऊ-पर मनुष्य पुकार रहे हैं इसी प्रकार से यहां भी जानना कि विद्या के प्रकाश होने का संभव मनुष्यों में ही हो सक्ता है अन्यत्र नहीं इसमें (तेभ्यस्तप्तेभ्यस्त्रयो वेदा अजायंताग्नेर्ऋग्वेदो वायोर्य-

जुर्वेदः सूर्यात्सामवेदः (श०क०११अ०५) इत्यादि शतपथब्रा- ह्मण का प्रमाण लिखा है उन चार मनुष्यों के (ज्ञान के) बी- च में वेदों का प्रकाश करके उनसे ब्रह्मादि के बीच में वेदों का प्रका- श कराया था प्र० सत्य बात है कि ईश्वर ने उनको ज्ञान दिया होगा और उनने अपने ज्ञान से वेदों का रचन किया होगा उ० ऐसा तुमको कहना उचित नहीं क्योंकि तुम भी जानते हो कि ईश्वर ने उनको ज्ञान किस प्रकार का दिया था उ० उनको वेद रूप ज्ञान दिया था प्र० अच्छा तो मैं आपसे पूछता हूं कि वह ज्ञान ईश्वर का है वा उनका उ० वह ज्ञान ईश्वर का ही है प्र० फिर आप से मैं पूछता हूं कि वेद ईश्वर के बनाये हैं वा उनके उ० जिसका ज्ञान है उसी ने वेदों को बनाया प्र० फिर उन्हीं ने वेद रचे हैं यह शंका आपने क्यों की थी उ० निश्चय करने और कराने के लि- ये ॥

प्र० ईश्वर न्यायकारी है वा पक्षपाती उ० न्यायकारी

प्र० जब परमेश्वर न्यायकारी है तो सब के हृदयों में वेदों का प्रका- श क्यों नहीं किया क्योंकि चारों के हृदयों में प्रकाश करने से ई- श्वर में पक्षपात आता है उ० इससे ईश्वर में पक्षपात का लेश कदापि नहीं आता किन्तु उस न्यायकारी परमात्मा का साक्षात् न्याय ही प्रकाशित होता है क्योंकि न्याय उसको कहते हैं कि जो जैसा कर्म करे उसको वैसा ही फल दिया जाय अब जानना चाहि- ये कि उन्हीं चार पुरुषों का ऐसा पूर्व पुण्य था कि उनके हृदय में वेदों का प्रकाश किया गया प्र० वे चार पुरुष तो सृष्टि की आदि में उत्पन्न हुए थे उनका पूर्व पुण्य कहां से आया उ० जीव, जी-

वों के कर्म, और स्थूल कार्य्य जगत्, ये तीनों अनादि हैं जीव, और कारण जगत्, स्वरूप से अनादि हैं कर्म और स्थूल कार्यजगत् प्रवाह से अनादि हैं ॥

प्र॰ क्या गायत्र्यादि छन्दों का भी रचन ईश्वर ने ही किया है उ॰ यह शंका आप को कहां से हुई प्र॰ मैं तुमसे पूछता हूं क्या गायत्र्यादि छन्दों के रचने का ज्ञान ईश्वर को नहीं है

उ॰ ईश्वर को सब ज्ञान है अच्छा तो ईश्वर के समस्त विद्यायुक्त होने से आपकी यह शंका भी निर्मूल है प्र॰ चार मुख के ब्रह्माजी ने वेदों को रचा ऐसे इतिहास को हम लोग सुनते हैं उ॰ ऐसा मत कहो क्योंकि इतिहास को शब्द प्रमाण के भीतर गिना है (आप्तोपदेशः शब्दः) न्याय शास्त्रे अ॰ १ सू॰ ७ इति गोतमाचार्येणोक्तत्वात्) अर्थात् सत्य वादी विद्वानों का जो उपदेश है उसको शब्द प्रमाण में गिनते हैं ऐसा न्याय दर्शन में गोतमाचार्य ने लिखा है तथा शब्द प्रमाण से जो युक्त है वही इतिहास मानने के योग्य है अन्य नहीं इस सूत्र के भाष्य में वात्स्यायन मुनि ने आप्त का लक्षण कहा है जो कि साक्षात सब पदार्थ विद्याओं का जानने वाला कपट आदि दोषों से रहित धर्मात्मा है जो कि सदा सत्य वादी सत्य मानी और सत्य कारी है जिस को पूर्ण विद्या से आत्मा में जिस प्रकार का ज्ञान है उसके कहने की इच्छा की प्रेरणा से सब मनुष्यों पर कृपा दृष्टि से सब सुख होने के लिये सत्य उपदेश का करने वाला है और जो पृथ्वी से लेके परमेश्वर पर्यंत सब पदार्थों को यथावत् साक्षात् करना और उसी के अनुसार वर्त्तना इसी का नाम

आप्ति है इस आप्ति से जो युक्त होय उसको आप्त कहते हैं उसी के उपदेश का प्रमाण होता है इससे विपरीत मनुष्य का नहीं क्योंकि सत्य वृत्तांत का ही नाम इतिहास है अनृत का नहीं सत्य प्रमाण युक्त जो इतिहास है वही सब मनुष्यों को ग्रहण करने के योग्य है इससे विपरीत इतिहास का ग्रहण करना किसी को योग्य नहीं क्योंकि प्रमादी पुरुष के मिथ्या कहने का इतिहास में ग्रहण ही नहीं होता इसी प्रकार व्यासजी ने चारों वेदों की संहिताओं का संग्रह किया है इत्यादि इतिहासों को भी मिथ्या ही जानना चाहिये जो आज काल के बने ब्रह्म वैवर्तादि पुराण और ब्रह्मयामल आदि तंत्र ग्रंथ हैं इनमें कहे इतिहासों का प्रमाण करना किसी मनुष्य को योग्य नहीं क्योंकि इनमे असंभव और अप्रमाण कपोल कल्पित मिथ्य इतिहास बहुत लिख रक्खे हैं और जो सत्य ग्रंथ शत पथ ब्राह्मणादि हैं उनके इतिहासों का कभी त्याग नहीं करना चाहिये ॥

प्र० जो सूक्त और मंत्रों के ऋषि लिखे जाते हैं उन्हों ने ही वेद रचे होंय ऐसा क्यों नहीं माना जाय उ० ऐसा मत कहो क्योंकि ब्रह्मादि ने भी वेदों को पढ़ा है सो श्वेताश्वतर आदि उपनिषदों में यह बचन है (यो वै ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै०) कि जिसने ब्रह्मा को उत्पन्न किया और ब्रह्मादि को सृष्टि की आदि में अग्नि आदि के द्वारा वेदों का भी उपदेश किया है उसी परमेश्वर के शरण को हम लोग प्राप्त होते हैं इसी प्रकार ऋषियों ने भी वेदों को पढ़ा है क्योंकि जब मरीच्यादि ऋषि और व्यासादि मुनियों का जन्म भी नहीं हुआ था उस समय में भी—

ब्रह्मादि के समीप वेदों का वर्तमान था इसमें मनुके श्लोकों की भी साक्षी है कि पूर्वोक्त अग्नि वायु रवि और अंगिरा से ब्रह्मा जी ने वेदों को पढ़ा था जब ब्रह्माजी ने वेदों को पढ़ा था तो व्यासादि और हम लोगों की तो कथा क्या ही कहनी है॥

प्र० वेद और श्रुति ये दो नाम ऋग्वेदादि संहिताओं के क्यों हुए हैं उ० अर्थ भेद से क्योंकि एक (विद) धातु ज्ञानार्थ है दूसरा (विद) सत्तार्थ है तीसरे (विद्लृ) का लाभ अर्थ है चौथे (विद) का अर्थ विचार है इन चार धातुओं से करण और अधिकरण कारक में घञ् प्रत्यय करने से वेद शब्द सिद्ध होता है तथा (श्रु) धातु श्रवण अर्थ में है इससे करण कारक में क्तिन् प्रत्यय के होने से श्रुति शब्द सिद्ध होता है। जिनके पढ़ने से यथार्थ विद्या का विज्ञान होता है जिनको पढ़ कर विद्वान् होते हैं जिनसे सब सुखों का लाभ होता है और जिनसे ठीक २ सत्य सत्य का विचार मनुष्यों को होता है इससे ऋक् संहितादि का वेद नाम है वैसेही सृष्टि के आरंभ से आज पर्यंत और ब्रह्मादि से ले के हम लोग पर्यंत जिससे सब सत्य विद्याओं को सुनते आते हैं इससे वेदों का श्रुति नाम पड़ा है क्योंकि किसी देहधारी ने वेदों के बनाने वाले को साक्षात् कभी नहीं देखा इस कारण से जाना गया है कि वेद निराकार ईश्वर सेही उत्पन्न हुए हैं और उनको सुनते सुनतेही आज पर्यंत सब लोग चले आते हैं तथा अग्नि वायु आदित्य और अंगिरा इन चारों मनुष्यों को जैसे वादित्र को कोई बजावै वा काठ की पुतली को चेष्टा करावे इसी प्रकार ईश्वर ने उन को निमित्त मात्र किया था क्योंकि उनके ज्ञान से वेदों की

उत्पत्ति नहीं हुई किंतु इस्से यह जान्ना कि वेदों में जितने शब्द अर्थ और संबंध हैं वे सब ईश्वर ने अपने ही ज्ञान से उनके द्वारा प्रकट किये हैं ॥

प्र० वेदों की उत्पत्ति में कितने वर्ष होगये हैं उ० एक वृन्द छानवे करोड़ आठ लाख बावन हज़ार नव सौ छहत्तर अर्थात् (१९६०८५२९७६) वर्ष वेदों की और जगत् की उत्पत्ति में हो गये हैं और यह संवत् (१९३३) ७७ सतहत्तरवां वर्ष वर्त रहा है प्र० यह कैसे निश्चय होय कि इतनेही वर्ष वेद और जगत् की उत्पत्ति में बीत गये हैं उ० यह जो वर्त्तमान सृष्टि है इस्में सातवें (७) वैवस्वत मनु का वर्त्तमान है इस्से पूर्व छः मन्वन्तर हो चुके हैं स्वायंभुव १ स्वारोचिष २ औत्तमि ३ तामस ४ रैवत ५ चाक्षुष ६ ये छः तो बीत गये हैं और ७ सातवां वैवस्वत वर्त रहा है और सावर्णि आदि ७ सात मन्वंतर आगे आवेंगे ये सब मिलके १४ मन्वन्तर होते हैं और एकहत्तर चतुर्युगियों का नाम मन्वन्तर धराया है ॥ और ४३२०००० वर्षों की एक चतुर्युगी होती है इस संख्या को प्रथम ७१ से फिर ६ से गुणाकरने से जो होय उसमें २७ चौकड़ी और १ सत्ययुग १ त्रेता १ द्वापर और चलते हुए कलियुग की गई वर्षों को जोड़ देने से वेद और सृष्टि की उत्पत्ति का ठीक काल निकल आवेगा और ४३२००० वर्ष का कलि इस से दूना द्वापर तिगुना त्रेता चौगुना सत्युग होता है और विक्रमी सम्बत १९३७ के समाप्ति पर ४९८२ वर्ष हाल के अर्थात् २८ वें कलि की भुगत चुकी क्योंकि यह दिग्विजय संवत् ३८ में बना है इस्से जो अध्यापक विलसन साहब

अध्यापक मोक्षमूलर साहेब आदि यूरोपखण्ड वासी विद्वानों ने बात कही है कि वेद मनुष्य के रचे हैं किंतु श्रुति नहीं हैं उनकी यह बात ठीक नहीं है और दूसरी यह की कोई कहता है (२४००) चौबीस सौ वर्ष वेदों की उत्पत्ति को हुए कोई (२९००) उनतीस सौ वर्ष कोई (३०००) तीन हज़ार वर्ष और कोई कहता है (३१००) इकतीस सौ वर्ष वेदों को उत्पन्न हुए बीते हैं उनकी यह भी बात झूठी है क्योंकि उन लोगों ने हम आर्य्य लोगों की नित्य प्रति की दिन चर्या का लेख और संकल्प पठन विद्या को भी यथावत् न सुना और न बिचारा है नहीं तो इतने ही बिचार से यह भ्रम उनको नहीं होता इस्से यह जानना अवश्य चाहिये कि वेदों की उत्पत्ति परमेश्वर से ही हुई है और जितने वर्ष अभी ऊपर गिन आये हैं उतने ही वर्ष वेदों और जगत् की उत्पत्ति में भी हो चुके हैं इस्से क्या सिद्ध हुआ कि जिन २ ने अपनी २ देश भाषाओं में अन्यथा व्याख्यान वेदों के विषय में किया है उन २ का भी व्याख्यान मिथ्या है क्योंकि जैसा प्रथम लिख आये हैं जब पर्यंत उतना काल व्यतीत न हो चुकेगा तब पर्य्यंत ईश्वरोक्त वेद का पुस्तक यह जगत् और हम सब मनुष्य लोग भी ईश्वर के अनुग्रह से सदा वर्त्तमान रहेंगे ॥

इति वेदोत्पत्ति विचारः ॥

इति श्री मत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्री स्वामीदयानन्द सरस्वती दिग्विजयार्कीय द्वितीयांके वेदोत्पत्ति नाम प्रथमो मयूखः ॥१॥

अथ वेदानां नित्यत्व विचारः॥

भाषार्थ

अब वेदों के नित्यत्व का विचार किया जाता है सो वेद ईश्वर से उत्पन्न हुए हैं इस्से वे स्वतः नित्य स्वरूप ही हैं क्योंकि ईश्वर का सब सामर्थ्य नित्य ही है॥

प्र० इस विषय में कितने ही पुरुष ऐसी शंका करते हैं कि वेदों में शब्द छन्द पद और वाक्यों के योग होने से नित्य(१) नहीं हो सके जैसे बिना बनाने से घड़ा नहीं बनता इसी प्रकार से वेदों को भी किसी ने बनाया होगा क्योंकि बनाने के पहिले नहीं थे और प्रलय के अंत में भी न रहेंगे इस्से वेदों को नित्य मानना ठीक नहीं है उ० ऐसा आपको कहना उचित नहीं क्योंकि शब्द दो प्रकार का होता है एक नित्य और दूसरा कार्य्य इनमें से जो शब्द अर्थ और संबंध परमेश्वर के ज्ञान में हैं वे सब नित्य ही होते हैं और जो हम लोगों की कल्पना से उत्पन्न होते हैं वे सब कार्य्य होते हैं क्योंकि जिस का ज्ञान और क्रिया स्वभाव से सिद्ध और अनादि हैं उसका सब सामर्थ्य भी नित्यही होता है इस्से वेद भी उसकी विद्या स्वरूप होने से नित्यही हैं क्योंकि ईश्वर की विद्या अनित्य कभी नहीं हो सक्ती॥

(१) नित्य उसको कहते हैं जिस की कभी उत्पत्ति और नाश न हो और नित्यपन का नाम नित्यत्व है

प्र० जब सब जगत के परमाणु अलग २ होके कारण रूप हो जाते हैं तब जो कार्य रूप सब स्थूल जगत् है उसका अभाव हो जाता है उस समय वेदों के पुस्तकों का भी अभाव हो जाता है फिर वेदों को नित्य क्यों मानते हो उ० यह बात पुस्तक, पत्र, मसी और अक्षरों की बनावट आदि पक्ष में घटती है तथा हम लोगों के क्रिया पक्ष में भी बन सक्ती है वेद पक्ष में नहीं बनती क्योंकि वेद तो शब्द अर्थ और संबन्ध स्वरूप ही हैं मसी कागज पत्र पुस्तक और अक्षरों की बनावट रूप नहीं है यह जो मसीलेखनादि क्रिया है सो मनुष्यों की बनाई है इस्से यह अनित्य है और ईश्वर के ज्ञान में सदा बने रहने से वेदों को हम लोग नित्य मानते हैं इस्से क्या सिद्ध हुआ कि पढ़ना पढ़ाना और पुस्तक के अनित्य होने से वेद अनित्य नहीं हो सक्ते क्योंकि वे बीजांकुर न्याय से ईश्वर के ज्ञान में नित्य वर्त्तमान रहते हैं सृष्टि की आदि में ईश्वर से वेदों की प्रसिद्धि होती है और प्रलय में जगत् के नहीं रहने से उनकी अप्रसिद्धि होती है इस कारण से वेद नित्य स्वरूप ही बने रहते हैं जैसे इस कल्प की सृष्टि में शब्द अक्षर अर्थ और संबंध वेदों में हैं इसी प्रकार से पूर्व कल्प में थे और आगे भी होंगे क्योंकि जो ईश्वर की विद्या है सो नित्य एकही रस बनी रहती है उनके एक अक्षर का भी विपरीत भाव कभी नहीं होता सो ऋग्वेद से लेके चारों वेदों की संहिता अब जिस प्रकार की हैं कि इनमें शब्द अर्थ संबंध पद और अक्षरों का जिस क्रम से वर्त्तमान है इसी प्रकार का क्रम सब दिन बना रहता है क्योंकि ईश्वर का ज्ञान नित्य है उसकी वृद्धि क्षय और विपरीतता कभी नहीं होती इस कारण से वेदों को

नित्य स्वरूप ही मानना चाहिये ॥
यह जो वेदों के नित्य होने का विषय है इस में व्याकरणादि शास्त्रों का प्रमाण साक्षी के लिये लिखते हैं इनमें से जो व्याकरण शास्त्र है सो संस्कृत और भाषाओं के सब शब्द विद्या का मुख्य मूल प्रमाण है उसके बनाने वाले महा मुनि पाणिनि और पतंजलि हैं उनका ऐसा मत है कि सब शब्द नित्य हैं क्योंकि इन शब्दों में जितने अक्षरादि अवयव हैं वे सब कूटस्थ अर्थात् बिनाश रहित हैं और वे पूर्वा पर विचलते भी नहीं उनका अभाव वा आगम कभी नहीं होता तथा कान से सुनके जिनका ग्रहण होता है बुद्धि से जो जाने जाते हैं जो वाक् इंद्रिय से उच्चारण करने से प्रकाशित होते हैं और जिनका निवास का स्थान आकाश है उनको शब्द कहते हैं इससे वैदिक अर्थात् जो वेद के शब्द और वेदों से जो शब्द लोक में आये हैं वे लौकिक कहाते हैं वे भी सब नित्य ही होते हैं क्योंकि उन शब्दों के मध्य में सब वर्ण अविनाशी और अचल हैं तथा इनमें लोप आगम और बिकार नहीं बन सके इस कारण से पूर्वोक्त शब्द नित्य हैं ॥
प्र० गणपाठ अष्टाध्यायी और महा भाष्य में अक्षरों के लोप आगम और विकार आदि कहे हैं फिर शब्दों का नित्यत्व कैसे हो सक्ता है इस प्रश्न का उत्तर महा भाष्यकार पतंजलि मुनि देते हैं कि शब्दों के समुदायों के स्थानों में अन्य शब्दों के समुदायों का प्रयोग मात्र होता है जैसे वेद पारगम् ड, सुं, भू, शप, तिप, इस पद समुदाय वाक्य के स्थान में वेदपारगोऽभवत् इस समुदायांतर का प्रयोग किया जाता है इसमें किसी पुरुष की ऐसी बुद्धि

होती है कि अम् इ, उँ, आप् इप् इनकी निवृत्ति हो जाती है सो उसकी बुद्धि में भ्रम मात्र है क्योंकि शब्दों के समुदायके स्थानों में दूसरे शब्दों के समुदायों के प्रयोग किये जाते हैं सो यह मत दासी के पुत्र पाणिनि मुनिजी का है जितने अष्टाध्यायी आदि व्याकरण के ग्रन्थ किये हैं सो मत इस प्रकार से है कि शब्द नित्य ही होते हैं क्योंकि जो उच्चारण और श्रवणादि हम लोगों की क्रिया है उसके क्षण भंग होने से अनित्य गिनी जाती है इस्से शब्द अनित्य नहीं होते क्योंकि यह जो हम लोगों की वाणी है वही वर्ण२ की अर्थात् अन्य२ होती जाती है परंतु शब्द तो सदा अखंड एक रसही बने रहते हैं॥

प्र० शब्द भी उच्चारण किये के पश्चात् नष्ट हो जाता है और उच्चारण के पूर्व सुना नहीं जाता है जैसे उच्चारण क्रिया अनित्य है वैसे ही शब्द भी अनित्य हो सक्ता है फिर शब्दों को नित्य क्यों मानते हो।

उ० शब्द तो आकाश की नाईं सर्वत्र एक रस भर रहे हैं परंतु जब उच्चारण क्रिया नहीं होती तब प्रसिद्ध सुनने में नहीं आते जब प्राण और वाणी की क्रिया से उच्चारण किये जाते हैं तब शब्द प्रसिद्ध होते हैं जैसे गौः इसके उच्चारण में जब पर्यंत उच्चारण क्रिया गकार में रहती है तब पर्य्यंत औकार में नहीं जब औकार में है तब गकार और विसर्जनीय में नहीं रहती इसी प्रकार वाणी की क्रिया की उत्पत्ति और नाश होता है शब्दों का नहीं किंतु आकाश में शब्द की प्राप्ति होने से शब्द तो अखंड एक रस सर्वत्र भर रहे हैं परन्तु जब पर्यंत वायु और वाक् इंद्रिय की क्रिया नहीं होती तब पर्यंत शब्दों का उच्चारण और श्रवण भी नहीं होता इस्से यह

सिद्ध हुआ कि शब्द आकाश की नाईं नित्यही हैं जब व्याकरण शा-स्त्र के मत से सब शब्द नित्य होते हैं तो वेदों के शब्दों की कथा तो क्या ही कहनी है क्योंकि वेदों के शब्दों के शब्द तो सब प्रकार से नि-त्य ही बने रहते हैं ॥

इसी प्रकार जैमिनि मुनि ने भी शब्द को नित्य माना है (नित्यस्तु स्याद्द-र्शनस्य परार्थत्वात्। पूर्व मीमांसा। अ०१ पा०१ सू०१८) शब्द में जो अनित्य होने की शंका आती है उसका (तु) शब्द से निवारण किया है शब्द नित्य ही है अर्थात् नाश रहित हैं क्योंकि उच्चारण कि-या से जो शब्द का श्रवण होता है सो अर्थ के जनाने ही के लिये है इससे शब्द अनित्य नहीं हो सक्ता जो शब्द का उच्चारण किया जा-ता है उसकी ही प्रत्यभिज्ञा होती है कि श्रोत्र द्वारा ज्ञान के बीच में वही शब्द स्थिर रहता है फिर उसी शब्द से अर्थ की प्रतीति होती है जो शब्द अनित्य होता तो अर्थ का ज्ञान कौन कराता क्योंकि वह शब्द ही नहीं रहा फिर अर्थ को कौन जनावेगा और जैसे अनेक दे-शों में अनेक पुरुष एक काल में ही एक ही शब्द का उच्चारण करते हैं इसी प्रकार उसी शब्द का उच्चारण बारंबार भी होता है इस का-रण से भी शब्द नित्य हैं जो शब्द अनित्य होता तो यह व्यवस्था क-भी नहीं बन सक्ती सो जैमिनि मुनि ने इस प्रकार के अनेक हेतुओं से पूर्व मीमांसा शास्त्र में शब्द को नित्य सिद्ध किया है ॥

इसी प्रकार वैशेषिक शास्त्र में कणादि मुनि ने भी कहा है (तद्व-चनादाम्नायस्य प्रामाण्यम्। वैशेषिके। अ०१ सू०३ अस्यायमर्थः) वेद ईश्वरोक्त हैं इन में सत्यविद्या और पक्षपात रहित धर्म का ही प्रतिपाद-न है इससे चारों वेद नित्य हैं ऐसा ही सब मनुष्यों को मानना उचि-

त है क्योंकि ईश्वर नित्य है इससे उसकी विद्या भी नित्य है ॥

वैसे ही न्यायशास्त्र में गोतम मुनि भी शब्द को नित्य कहते हैं (मंत्रायुर्वेद प्रामाण्य वच्च तत्प्रामाण्य माप्त प्रामाण्यात् । अ॰ २ पादे १ सू॰ ६७ अस्यायमर्थः) वेदों को नित्य ही मानना चाहिये क्योंकि सृष्टि के आरंभ से लेके आज पर्य्यंत ब्रह्मादि जितने आप्त होते आये हैं वे सब वेदों को नित्य ही मानते आये हैं उन आप्तों का अवश्य ही प्रमाण करना चाहिये क्योंकि आप्त लोग वे होते हैं जो धर्मात्मा कपट छलादि दोषो से रहित सब विद्याओं से युक्त महायोगी और सब मनुष्यों के सुख होने के लिये सत्य का उपदेश करने वाले हैं जिनमें लेशमात्र भी पक्षपात वा मिथ्याचार नहीं होता उन्होंने वेदों का यथावत् नित्य गुणों से प्रमाण किया है जिन्होंने आयुर्वेद को बनाया है जैसे आयुर्वेद (वैद्यक शास्त्र) के एक देश में कहे औषध और पथ्य के सेवन करने से रोग की निवृत्ति और सुख प्राप्त होता है जैसे उसके एक देश के कहे के सत्य होने से उसके दूसरे भाग का भी प्रमाण होता है इसी प्रकार वेदों का भी प्रमाण करना सब मनुष्यों को उचित है क्योंकि वेद के एक देश में कहे अर्थ का सत्यपन विदित होने से उससे भिन्न जो वेदों के भाग हैं कि जिनका अर्थ प्रत्यक्ष न हुआ हो उनका भी नित्य प्रमाण अवश्य करना चाहिये क्योंकि आप्त पुरुष का उपदेश मिथ्या नहीं हो सक्ता (मंत्रायु॰) इस ऊपर लिखे सूत्र के भाष्य में वात्स्यायन मुनि ने वेदों का नित्य होना स्पष्ट प्रतिपादन किया है कि जो आप्त लोग हैं वे वेदों के अर्थ को देखने दिखाने और जनाने वाले हैं जो २ उस २ मंत्र के अर्थ के द्रष्टा वक्ता होते हैं

वेही आयुर्वेद आदि के बनाने वाले हैं जैसे उनका कथन आयुर्वेद में सत्य है वैसेही वेदों के नित्य मानने का उनका जो व्यवहार है सोभी सत्य ही है ऐसा मानना चाहिये क्योंकि जैसे आप्तों के उपदेश का प्रमाण अवशय होता है वैसेही सब आप्तों काभी जो परम आप्त सबका गुरु परमेश्वर है उसकेकिये वेदों काभी नित्य होने का प्रमाण अवश्य ही करना चाहिये॥

इस विषय में योग शास्त्र के कर्त्ता पतंजलि मुनि भी वेदों को नित्य मानते हैं (स एष पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्॥ पातंजलि योग शास्त्रे। अ॰१ पा॰१ सू॰२६) जोकि प्राचीन अग्नि वायु आदित्य अंगिरा और ब्रह्मादि पुरुष सृष्टि की आदि में उत्पन्न हुए थे उन से लेके हम लोग पर्यंत और हमसे आगे जो होने वाले हैं इन सब का गुरु परमेश्वर ही है क्योंकि वेद द्वारा सत्य अर्थों का उपदेश करने से परमेश्वर का नाम गुरु है सोईश्वर नित्यही है क्योंकि ईश्वर में क्षणादि काल की गति का प्रचारही नहीं है और वह अविद्या आदि क्लेशों से और पाप कर्म तथा उनकी वासनाओं के भोगों से अलग है जिस में अनंत विज्ञान सर्वदा एकरस बना रहता है उसी के रचे वेदों काभी सत्यार्थ पन और पन भी निश्चित है ऐसा ही सब मनुष्यों को जानना चाहिये॥

इसी प्रकार से सांख्य शास्त्र में कपिलाचार्य्य भी कहते हैं (निजशक्त्यभिव्यक्तेः स्वतः प्रामाण्यम्॥ सू॰५१ अस्यायमर्थः) परमेश्वर की (निज) अर्थात् स्वाभाविक जो विद्या शक्ति है उससे प्रकट होने से वेदों का नित्यत्व और स्वतःप्रमाण सब मनुष्यों को स्वीकार करना चाहिये॥

इसी प्रकार से वेदांत शास्त्र में वेदों के नित्य होने के विषय में व्यासजीने भी लिखा है (शास्त्रयोनित्वात्। अ०१ पा०१ सू०३। अस्यायमर्थः) इस सूत्र के अर्थ में शंकराचार्य्य नेभी वेदों की नित्य मान के व्याख्यान किया है ऋग्वेदादि जो चारों वेद हैं वे अनेक विद्याओं से युक्त हैं सूर्य्य के समान सब सत्य अर्थों के प्रकाश करने वाले हैं उनका बनाने वाला सर्वज्ञादि गुणों से युक्त परब्रह्म है क्योंकि सर्वज्ञ ब्रह्म से भिन्न कोई जीव सर्वज्ञगुणयुक्त इन वेदों को बना सके ऐसा संभव कभी नहीं हो सक्ता किन्तु वेदार्थ विस्तार के लिये किसी जीव विशेष पुरुष से अन्य शास्त्र बनाने का संभव होता है जैसे पाणिनि आदि मुनियों ने व्याकरणादि शास्त्रों को बनाया है उनमें विद्या के एक २ देश का प्रकाश किया है सो भी वेदों के आश्रय से बना सके हैं और जो सब विद्याओं से युक्त वेद हैं उनको सिवाय परमेश्वर के दूसरा कोई भी नहीं बना सक्ता क्योंकि परमेश्वर से भिन्न सब विद्याओं में पूर्ण कोई भी नहीं है किंच परमेश्वर के बनाये वेदों के पढ़ने विचारने और उसी के अनुग्रह से मनुष्यों को यथा शक्ति विद्या का बोध होता है अन्यथा नहीं ऐसा शंकराचार्य्य ने भी कहा है इस्से क्या आया कि वेदों के नित्य होने में सब आर्य्य लोगों की साक्षी है और यह भी कारण है कि जो ईश्वर नित्य और सर्वज्ञ है उसके किये वेद भी नित्य और सर्वज्ञ होने के योग्य हैं अन्य का बनाया ऐसा ग्रंथ कभी नहीं हो सक्ता (अत एव च नित्यत्वम्। पा०३ सू०२९) इस सूत्र से भी यही आता है कि वेद नित्य हैं और सब सज्जन लोगों को भी ऐसा ही मानना उचित है तथा वेदों के प्रमाण और नित्य होने में अन्य शास्त्रों के

प्रमाणों को साक्षी के समान जानना चाहिये क्योंकि वे अपनेही प्रकाश से नित्य सिद्ध हैं जैसे सूर्य के प्रकाश में सूर्यकाही प्रमाण है अन्य का नहीं जैसे सूर्य्य प्रकाश स्वरूप है पर्वत से लेके त्रसरेणु पर्य्यंत पदार्थों का प्रकाश करता है वैसे वेद भी स्वयं प्रकाश हैं और सब सत्य विद्याओं का भी प्रकाश कर रहे हैं॥

ऐसेही परमेश्वर ने अपने और अपने किये वेदों के नित्य और स्वतःप्रमाण होने का उपदेश किया है सो आगे लिखते हैं (सपर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरꣳ शुद्धमपापविद्धम्॥ कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः॥१॥ य० अ० ४० मं० ८॥ अस्याभिप्रायः) यह मंत्र ईश्वर और उसके किये वेदों का प्रकाश करता है कि जो ईश्वर सर्वव्यापक आदि विशेषण युक्त है सो सब जगत् में परिपूर्ण हो रहा है उसकी व्याप्ति से एक परमाणु भी रहित नहीं है सो ब्रह्म (शुक्र) सब जगत् का करने वाला और अनंत विद्यादि बल से युक्त है (अकायं) जो स्थूल सूक्ष्म और कारण इन तीनों शरीरों के संयोग से रहित है अर्थात् वह कभी जन्म नहीं लेता (अव्रणं) जिसमें एक परमाणु भी छिद्र नहीं कर सक्ता इसी से वह सर्वथा छेद रहित है (अस्नाविरं) वह नाड़ियों के बंधन से अलग है जैसा वायु और रुधिर नाड़ियों बंधा रहता है ऐसा बंधन परमेश्वर में नहीं होता (शुद्ध) जो अविद्या अज्ञानादि क्लेश और सब दोषों से पृथक् है (अपापविद्धम्) सो ईश्वर पाप युक्त वा पाप करने वाला कभी नहीं होता क्योंकि वह स्वभाव सेही धर्मात्मा है (कविः) जो सब का जानने वाला है (मनीषी) जो सब का

अंतर्यामी है और भूत भविष्यत् तथा वर्तमान इन तीनों कालों के व्यवहारों को यथावत् जानता है (परिभूः) जो सब के ऊपर विराजमान हो रहा है (स्वयंभूः) जो कभी उत्पन्न नहीं होता और उसका कारण भी कोई नहीं किंतु वही सबका कारण अनादि और अनंत है इससे वही सबका माता पिता है और अपनेही सत्यसामर्थ्य से सदा वर्तमान रहता है इत्यादि लक्षणों से युक्त जो सच्चिदानंद स्वरूप परमेश्वर है (शाश्वतीभ्यः०) उसने सृष्टि की आदि में अपनी प्रजा को जोकि उसके सामर्थ्य में सदा से वर्तमान है उसके सब सुखों के लिये (अर्थात्व्यदधात्) सत्य अर्थों का उपदेश किया है इसी प्रकार जब२ परमेश्वर सृष्टि को रचता है तब२ प्रजा के हित के लिये सृष्टि की आदि में सब विद्याओं से युक्त वेदों का भी उपदेश करता है और जब२ सृष्टि का प्रलय होता है तब२ वेद उसके ज्ञान में सदा बने रहते हैं इससे उनको सदैव नित्य मानना चाहिये ॥

जैसे शास्त्रों के प्रमाणों से वेद नित्य हैं वैसेही युक्ति सेभी उनका नित्यपन सिद्ध होता है क्योंकि असत् से सत् का होना अर्थात् अभाव से भाव का होना कभी नहीं हो सक्ता तथा सत् का अभाव भी नहीं हो सक्ता जो सत्य है उसी से आगे प्रवृति भी हो सक्ती है और जो वस्तु ही नहीं है उस्से दूसरी वस्तु किसी प्रकार से नहीं हो सक्ती इस न्याय से वेदों को नित्यही मानना ठीक है क्योंकि जिसका मूल नहीं होता है उसकी डाली पत्र पुष्प और फल आदि भी कभी नहीं हो सक्ते जैसे कोई कहे कि वंध्या के पुत्र का विवाह मैंने देखा यह उसकी बात असंभव है क्योंकि जो उसके पुत्र होता तो वह वंध्या

ही क्यों होती और जब पुत्र ही नहीं है तो उसका विवाह और दर्शन कैसे हो सक्ते हैं वैसेही जब ईश्वर में अनंत विद्या है तभी मनुष्यों को विद्या का उपदेश भी कियाहै और जो ईश्वर में अनंत विद्या न होती तो वह उपदेश कैसे कर सक्ता और वह जगत् को भी कैसे रच सक्ता जो मनुष्योंको ईश्वर अपनी विद्या का उपदेश न करता तोकिसी मनुष्य कोविद्या जो यथार्थ ज्ञान है सोकभी नहीं होता क्योंकि इस जगत् में निर्मूल का होना व बढ़ना सर्वथा असंभव है इस्से यह जानना चाहिये कि परमेश्वर से वेद विद्या मूल को प्राप्त होके मनुष्यों में विद्या रूप वृक्ष विस्तृत हुआ है इसमें और भी युक्ति है कि जिसका सब मनुष्यों को अनुभव और प्रत्यक्ष ज्ञानहोताहै उसीका दृष्टान्त देते हैं देखो कि जिसका साक्षात् अनुभव होता है उसी का ज्ञान में संस्कार होता है संस्कार से स्मरण स्मरण से इष्ट में प्रवृत्ति और अनिष्ट से निवृत्ति होतीहै अन्यथा नहींजो संस्कृत भाषाकोपढ़ताहै उसके मन में उसी का संस्कार होता है अन्य भाषा का नहीं और जोकिसी देश भाषा को पढ़ता है उसको देश भाषा का संस्कार होता है अन्य का नहीं इसी प्रकार जो वेदों का उपदेश ईश्वर न करता तो किसी मनुष्य को विद्या का संस्कार नहीं होता जबविद्या का संस्कार न होता तोउसका स्मरण भी नहीं होता स्मरणके विना किसी मनुष्य कोविद्या कालेशभी न हो सक्ता इस युक्ति सेक्या जाना जाता है कि ईश्वर के उपदेश से वेदोंको सुनकर पढ़कर और विचार करके ही मनुष्योंकोविद्या का संस्कार आज पर्यंत होता चला आया है अन्यथा कभी नहीं होसक्ता॥

प्र० मनुष्यों की स्वभाव सेजोचेष्टा है उसमें सुख और दुःख का

अनुभव भी होता है उससे उत्तर २ काल में क्रमानुसार से विद्या की वृद्धि भी अवश्य होता तब वेदों को भी मनुष्य लोग रच लेंगे फिर ईश्वर ने वेद रचे ऐसा क्यों मानना उ० इसका समाधान वेदोत्पत्ति के प्रकरण में कर दिया है वहां यही निर्णय किया है कि जैसे इस समय में अन्य विद्वानों से पढ़े बिना कोई भी विद्यावान नहीं होता और इसी के बिना किसी पुरुष में ज्ञान की वृद्धि भी देखने में नहीं आती, वैसेही सृष्टि के आरंभ में ईश्वरोपदेश की प्राप्ति के बिना किसी मनुष्य की विद्या और ज्ञान की बढ़ती कभी नहीं हो सकती इस में अशिक्षित बालक और बनवासियों का दृष्टान्त दिया था कि जैसे उस बालक और बन में रहने वाले मनुष्य को यथावत् विद्या का ज्ञान नहीं होता तथा अच्छे प्रकार उपदेश के बिना उनको लोक व्यवहार का भी ज्ञान नहीं होता फिर विद्या की प्राप्ति तो अत्यंत कठिन है इससे जानना चाहिये कि परमेश्वर के उपदेश रूपी वेद विद्या आने के पश्चात् ही मनुष्यों को विद्या और ज्ञान की उन्नति करनी भी सहज हुई क्योंकि उसके सभी गुण सत्य हैं इससे उसकी विद्या जो वेद है वह भी नित्यही है जो नित्य वस्तु है उसके नाम गुण और कर्म भी नित्य ही होते हैं क्योंकि उनका आधार नित्य है और बिना आधार से नाम गुण और कर्मादि स्थिर नहीं हो सकते क्योंकि वे द्रव्यों के आश्रय सदा रहते हैं जो अनित्य वस्तु है उसके नाम गुण और कर्म भी अनित्य होते हैं सो नित्य किसको कहना जो उत्पत्ति और विनाश से पृथक् है तथा उत्पत्ति क्या कहती है कि जो अनेक द्रव्यों के संयोग विशेष से स्थूल पदार्थ का उत्पन्न होना और जब वे पृथक् २ होके उन द्रव्यों के वियोगसे

जो कारण में उनकी परमाणु रूप अवस्था होती है उसको बिना श कहते हैं और जो द्रव्य संयोग से स्थूल होते हैं वे चक्षु आदि इन्द्रियों से देखने में आते हैं फिर उन स्थूल द्रव्यों के परमाणुओं का जब वियोग हो जाता है तब सूक्ष्म के होने से वे द्रव्य देख नहीं पड़ते इसका नाम नाश है क्योंकि अदर्शन कोही नाश कहते हैं जो द्रव्य संयोग और वियोग से उत्पन्न और नष्ट होता है उसी को कार्य्य और अनित्य कहते हैं और जो संयोग और वियोग से अलग है उसकी न कभी उत्पत्ति और न कभी नाश होता है इस प्रकार का पदार्थ एक परमेश्वर और दूसरा जगत् का कारण है क्योंकि वह सदा अखंड एक रसही बना रहता है इसीसे उसको नित्य कहते हैं इस में कणादि मुनि के सूत्र का भी प्रमाण है (सदकारणवान्नित्यम्) वै० अ०४ सू०१ इसका अर्थ यह है कि जो किसी का कार्य्य है कि कारण से उत्पन्न होके विद्यमान होता है उसको अनित्य कहते हैं जैसे मिट्टी से घड़ा होके वह नष्ट भी हो जाता है इसी प्रकार परमेश्वर के सामर्थ्य कारण से सब जगत् उत्पन्न होके विद्यमान होता है फिर प्रलय में स्थूलाकार नहीं रहता किंतु वह कारण रूप तो सदा ही बना रहता है इस्से क्या आया कि जो विद्यमान हो और जिसका कारण कोई भी न हो अर्थात् स्वयंकारण रूपही हो उसको नित्य कहते हैं क्योंकि जो २ संयोग से उत्पन्न होता है सो २ बनाने वाले की अपेक्षा अवश्य रखता है जैसे कर्म नियम और कार्य्य ये सब कर्त्ता नियन्ता और कारण को ही सदा जनाते हैं और जो कोई ऐसा कहै कि कर्त्ता को भी किसी ने बनाया होगा तो उस्से पूछना चाहिये कि उस कर्त्ताके कर्त्ता को किसने बनाया इ

सी प्रकार यह अनवस्था प्रसंग अर्थात् मर्यादा रहित होता है जिस की मर्यादा नहीं है वह व्यवस्था के योग्य नहीं ठहर सक्ता और जो संयोग से उत्पन्न होता है वह प्रकृति और परमाणु आदि के संयोग करने में समर्थ ही नहीं हो सक्ता इस्से क्या आया कि जो जिस्से सूक्ष्म होता है वही उसका आत्मा होता है अर्थात् स्थूल में सूक्ष्म व्यापक होता है जैसे लोहे में अग्नि प्रविष्ट होके उसके सब अवयवों में व्याप्त होता है और जैसे जल पृथ्वी में प्रविष्ट होके उसके कणों के संयोग से पिंडा करने में हेतु होता है तथा उसका छेदन भी करता है वैसे ही परमेश्वर सब संयोग और वियोग से पृथक् सब में व्यापक प्रकृति और परमाणु आदि से भी अत्यंत सूक्ष्म और चेतन है इसी कारण से प्रकृति और परमाणु आदि द्रव्यों के संयोग करके जगत् को रच सक्ता है जो ईश्वर उससे स्थूल होता तो उनको ग्रहण और रचन कभी नहीं कर सक्ता क्योंकि जो स्थूल पदार्थ होते हैं वे सूक्ष्म पदार्थों के नियम करने में समर्थ नहीं होते जैसे हम लोग प्रकृति और परमाणु आदि के संयोग और वियोग करने में समर्थ नहीं है क्योंकि जो संयोग वियोग के भीतर है वह उसके संयोग वियोग करने में समर्थ नहीं हो सक्ता तथा जिस वस्तु से संयोग वियोग का आरंभ होता है वह वस्तु संयोग और वियोग से अलग ही होता है क्योंकि वह संयोग और वियोग के आरंभ के नियमों का करता और आदि कारण होता है तथा आदि कारण के अभाव से संयोग और वियोग का होना ही असंभव है इस्से क्या जानना चाहिये कि जो सदा निर्विकार स्वरूप अज अनादि नित्य सत्य सामर्थ्य से युक्त और अनंत विद्यावाला ईश्वर है उसकी विद्या से वेदों के

प्रगट होने और उसके ज्ञान में वेदों के सदैव वर्तमान रहने से वेदों को सत्यार्थ युक्त और नित्य सब मनुष्यों को मानना योग्य है यह संक्षेप से वेदों के नित्य होने का विचार किया॥

इति वेद नित्यत्व विचारः

अब वेदों के नित्यत्व विचार के उपरान्त वेदों में कौन २ विषय किस २ प्रकार के हैं इसका विचार किया जाता है वेदों में अवयव रूप विषय तो अनेक हैं परन्तु उनमें चार मुख्य हैं (१) एक विज्ञान अर्थात सब पदार्थों को यथार्थ जानना (२) दूसरा कर्म (३) तीसरा उपासना और (४) चौथा ज्ञान है विज्ञान उसको कहते हैं कि जो कर्म उपासना और ज्ञान इन तीनों से यथावत उपयोग लेना और परमेश्वर से लेके तृणपर्य्यंत पदार्थों का साक्षाद्बोध का होना उनसे यथावत् उपयोग का करना इस्से यह विषय इन चारों में भी प्रधान है क्योंकि इसी में वेदों का मुख्य तात्पर्य्य है सोभी दो प्रकार का है एक तो परमेश्वर का यथावत् ज्ञान और उसकी आज्ञा का बराबर पालन करना और दूसरा यह है कि उसके रचे हुए सब पदार्थों के गुणों को यथावत् विचार के उन से कार्य्य सिद्ध करना अर्थात् ईश्वर ने कौन २ पदार्थ किस २ प्रयोजन के लिये रचे हैं और इन दोनों में से भी ईश्वर का जो प्रतिपादन है सोही प्रधान है इस्से आगे कठवल्ली आदि के प्रमाण लिखते हैं (सर्वे वेदायत्पदमामनन्ति तपांसि सर्वाणि च यद्वदन्ति। यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्य्यं चरन्ति तत्ते पदं संग्रहेण ब्रवीम्योमित्येतत्॥ कठोपनि॰ वल्ली २ मं॰ १५॥) परम पद अर्थात उसका नाम मोक्ष है

जिस में पर ब्रह्म को प्राप्त होके सदा सुख में ही रहना जो सब आनन्दों से युक्त सब दुःखों से रहित और सर्व शक्तिमान् पर ब्रह्म है जिस के नाम (ओं) आदि हैं उसी में सब वेदों का मुख्य तात्पर्य्य है इसमें योग सूत्र का भी प्रमाण है (तस्य वाचकः प्रणवः योग शास्त्रे। अ० १ पा० १ सू० २७) परमेश्वर ही का ओंकार नाम है (ओं खं ब्रह्म यजुः० अ० ४०) तथा (ओमिति ब्रह्म तैतिरीयारण्यके। प्र० ७ अनु० ८॥) ओं और खं ये दोनों ब्रह्म के नाम हैं और उसी की प्राप्ति कराने में सब वेद प्रवृत्त हो रहे हैं जिसकी प्राप्ति के आगे किसी पदार्थ की प्राप्ति उत्तम नहीं है क्योंकि जगत् का वर्णन दृष्टांत और उपयोगादि का करना ये सब पर ब्रह्म॥ को ही प्रकाशित करते हैं तथा सत्य धर्म के अनुष्ठान जिनको तप कहते हैं वेभी परमेश्वर को ही प्राप्ति के लिये हैं तथा ब्रह्म चर्य्य गृहस्थ वान प्रस्थ और सन्यास आश्रम के सत्याचरण रूप जो कर्म हैं वे भी परमेश्वर की ही प्राप्ति कराने के लिये हैं जिस ब्रह्म की प्राप्ति की इच्छा करके विद्वान् लोग प्रयत्न और उसी का उपदेश भी करते हैं॥ नचिकेता और यम इन दोनों का परस्पर यह संवाद है कि हे नचिकेतः जो अवश्य प्राप्ति करने के योग्य पर ब्रह्म है उसी का मैं तेरे लिये संक्षेप से उपदेश करता हूं और यहां यह भी जानना उचित है कि अलंकार रूप कथा से नचिकेता नाम से जीव और यम से अन्तर्यामी परमात्मा को समझना चाहिये (तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्ववेदः शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दो ज्योतिषमिति। अथ परा यया तदक्षरमधिगम्यते॥१॥ यत्तदद्रेश्यमग्राह्यमगोत्र

म वर्णाम चक्षुः श्रोत्रं तदपाणि पादं नित्यं विभुं सर्व गतं सुसूक्ष्मं तद व्ययं यद्भूतयोनिं परि पश्यन्ति धीराः ॥२॥ मुराड के १ खं- डे १ म०५। ६।) वेदों में दो विद्या हैं एक अपरा दूसरी परा इन- में से अपरा यह है कि जिस्से पृथवी और तृण से लेके प्रकृति पर्य्यंत पदार्थों के गुणों के ज्ञान से ठीक २ कार्य्य सिद्ध करना होता है और दूसरी परा कि जिस्से सर्व शक्तिमान् ब्रह्म की यथा- वत् प्राप्ति होती है यह परा विद्या अपरा विद्या से अत्यंत उत्तम है क्योंकि अपरा काही उत्तम फल परा विद्या है॥

और भी इस विषय में ऋग्वेद का प्रमाण है कि (तद्विष्णोः पर मं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः॥ दिवीव चक्षुरा ततम्॥१॥ ऋग्वेदे। अष्टके १ अध्याये २ वर्गे ७ मंत्रः ५॥ अस्यायमर्थः) (विष्णु) अर्थात् व्यापक जो परमेश्वर है उसका (परमं) अत्यन्त उत्तम आनन्द स्वरूप (पदं) जो प्राप्ति होने के योग्य अर्थात् जिस का नाम मोक्ष है उसको (सूरयः) विद्वान् लोग (सदा पश्यन्ति) सब काल में देखते हैं वह कैसा है कि सब में व्याप्त हो रहा है और उसमें देश काल और वस्तु का भेद नहीं है अर्थात् उस दे- श में है और इस देश में नहीं तथा उस काल में था और इस काल में नहीं उस वस्तु में है और इस वस्तु में नहीं इसी कारण से वह पद सब जगह में सब को प्राप्त होता है क्योंकि वह ब्रह्म सब ठिकाने परि पूर्ण है इसमें यह दृष्टान्त है कि (दिवीव चक्षु- रा ततम्) जैसे सूर्य का प्रकाश आवर्ण रहित आकाश में व्याप्त होता है और जैसे उस प्रकाशक में नेत्र की दृष्टि व्याप्त होती है इसी प्रकार पर ब्रह्म पद भी स्वयं प्रकाश सर्वत्र व्याप्त वान् है।

रहा है उस पद की प्राप्ति से कोई भी प्राप्ति उत्तम नहीं है इसलिये चारों वेद उसी की प्राप्ति कराने के लिये विशेष करके प्रति पादन कर रहे हैं इस विषय में वेदांत शास्त्र में व्यास मुनि के सूत्र का भी प्रमाण है (तत्तु समन्वयात्) सब वेद वाक्यों में ब्रह्म का ही विशेष करके प्रति पादन है कहीं २ साक्षात् रूप और कहीं २ परंपरा से इसी कारण से वह पर ब्रह्म वेदों का परम अर्थ है तथा इस विषय में यजुर्वेद का भी प्रमाण है कि (यस्मान्नजा०) जिस पर ब्रह्म से (अन्यः) दूसरा कोई भी (परः) उत्तम पदार्थ (जातः) प्रगट (नास्ति) अर्थात् नहीं है (यआविवेशभु०) जो सब विश्व अर्थात् सब जगह में व्याप्त हो रहा है (प्रजापतिःप्र०) वही सब जगत का पालन कर्त्ता और अध्यक्ष है जिसने (त्रीणिज्योती९षि) अग्नि सूर्य और बिजुली इन तीन ज्योतियों को प्रजा के प्रकाश होने के लिये (सचते) रच के संयुक्त किया है और जिसका नाम (षोडशी) है अर्थात् (१) ईक्षण जो यथार्थ विचार (२) प्राण जो कि सब विश्व का धारण करने वाला (३) श्रद्धा सत्य में विश्वास (४) आकाश (५) वायु (६) अग्नि (७) जल (८) पृथिवी (९) इंद्रिय (१०) मन अर्थात् ज्ञान (११) अन्न (१२) वीर्य्य अर्थात् बल और पराक्रम (१३) तप अर्थात् धर्मानुष्ठान सत्याचार (१४) मंत्र अर्थात् वेद विद्या (१५) कर्म अर्थात् सब चेष्टा (१६) नाम अर्थात् दृश्य और अदृश्य पदार्थों की संज्ञा येही सोलह कला कहाती हैं ये सब ईश्वर ही के बीच में हैं इससे उसको षोड्शी कहते हैं इन षोडश कलाओं का प्रति पादन प्रश्नोपनिषद के ६ छठे प्रश्न में लिखा है इससे परमेश्वर ही वेदों का मुख्य अर्थ है और उस से

अर्थात् जो यह जगत् है सो वेदों का गौण अर्थ है और इन दोनों में से प्रधान का ही ग्रहण होता है इससे क्या आया कि वेदों का मुख्य तात्पर्य परमेश्वर ही के प्राप्ति कराने और प्रतिपादन करने में है उस परमेश्वर के उपदेश रूप वेदों से कर्म उपासना और ज्ञान तीनों काण्डों का इसलोक और परलोक के व्यवहारों के फलों की सिद्धि और यथावत् उपकार करने के लिये सब मनुष्य इन चार विषयों के अनुष्ठानों में पुरुषार्थ करें यही मनुष्य देह धारण करने के फल हैं॥

अगाड़ी इसके श्री स्वामीजी महाराज ने वेदों का दूसरा विषय कर्मकाण्ड (जो अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेध तक सकाम व निष्काम दो प्रकार का होता है) वेदादिक अनेक प्रमाणों से सिद्ध करके भूमिका के पृष्ठ ४६ से लेकर ७१ तक वर्णन किया है निवेदन कार ने उसपर कुछ तर्क वितर्क नहीं किया इसलिये हमने उसकी नकल नहीं की परन्तु वह पर मोप कारी होने के कारण सब मनुष्यों के देखने व समझने और अवश्य करने के योग्य है॥

इस कर्मकाण्ड में जहां तहां अग्न्यादि कई देवताओं का ग्रहण किया है उनमें कोई जड़ कोई चेतन्य हैं वे सब व्यवहारिक देव वा देवता कहाते हैं उनका ठीक २ वैसाही व्यवहारिक १० प्रकार का अर्थ किसी में एक किसी में दो वा अधिक व्याकरणरीत्यादिव धातु से सिद्ध होता है जैसा कि गुण जिस्में है॥ इस लिये इनका देवतात्व सबको वैसाही समझना उचित है जैसा कि जिस से व्यवहार का काम निकलता है अर्थात् इन में से कोई उपासना के योग्य नहीं है सब लोगों को उपास्य और परम पूज्य केवल वही परब्रह्म परमेश्वर है जिसने इन सब देवतादिक पदार्थों को निर्माण व

प्रकाशित किया है और उसी में दिवधातु के ठीक २ दसो अर्थ कि जिनमें से पांच जो केवल व्यवहारिक अर्थ बोधक हैं व्यापकता के कारण और शेष पांच जोकि परमार्थ बोधक हैं वे द्योलकता के कारण संघटित होते हैं ॥

ऐसा वेदों का सिद्धान्त स्पष्ट विद्यमान होते जिनको अल्प बुद्धिता के कारण विदित नहीं हुआ उन्हों ने वेदों के विषय में जो जी में आया सो लिख दिया है उनके संदेह निवृत्त्यर्थ महाराज जी ने पृष्ठ ७२ से ८० तक बहुत से वेदादिक प्रमाण लिख कर उनका अर्थ संस्कृत और भाषा में विस्तार पूर्वक प्रकाशित किया है उसका सारांश नीचे लिखकर पीछे वेद संज्ञा विचार ज्यों का त्यों नक़ल होगा ॥

कितने ही आर्य और अंगरेज़ कहते हैं कि वेदों में पृथिव्यादिक भूत पूजा लिखी है आर्य लोगों ने बहु दिन उनको पूजते २ पीछे से परमेश्वर को जाना यह उनका कहना (इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो दिव्यः स सुपर्णो गरुत्मान् ॥ एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः) इत्यादिक अनेक वेद मन्त्रों का अर्थ देख मिथ्या सिद्ध होता है और साबित होता है कि आर्य लोग सृष्टि के आरम्भ से इन्द्र सूर्य वरुण अग्नि कुवेर ईश आदि नामों से उसी एक परमेश्वर को पूजते आए हैं ॥

डाक्टर मोक्ष मूलर साहब ने अपने संस्कृत साहित्य नामक ग्रंथ में लिखा है कि आर्य लोगों को बहुत काल पीछे ईश्वर का ज्ञान हुआ और वेदों के प्राचीन होने में एक भी प्रमाण नहीं मिलता परंतु उनके नवीन होने में अनेक प्रमाण पाये जाते हैं उनमें से एक

हिरण्यगर्भ शब्द का प्रमाण दिया है और कहा कि छन्दो भाग से मंत्र भाग दो सौ वर्ष पीछे बना है और दूसरी यह बात कही है कि वेदों में दो भाग हैं एक छन्द और दूसरा मंत्र उनमें से छन्दो भाग ऐसा है जो सामान्य अर्थ के साथ संबंध रखता है और दूसरे की प्रेरणा से प्रकाशित हुआ मालूम पड़ता है कि जिसकी उत्पत्ति बनाने वाले की प्रेरणा से नहीं हो सक्ती और उसमें कथन इस प्रकार का है जैसे अज्ञानी के मुख से अकस्मात् बचन निकला हो उसकी उत्पत्ति में (३१००) इकत्तीस सौ बर्ष व्यतीत हुए हैं और मंत्र भाग की उत्पत्ति में (२९००) उनतीस सौ बर्ष हुए हैं उसमें (अग्निः पूर्वेभि:०) इस मंत्र का भी प्रमाण दिया है सो उनका यह कहना ठीक नहीं हो सक्ता क्योंकि उन्हों ने (हिरण्यगर्भ:०) और (अग्निःपूर्वेभि:०) इन दोनों मंत्रों का अर्थ यथावत् नहीं जाना है तथा मालूम होता है कि उनको हिरण्यगर्भ शब्द नवीन जान पड़ा होगा इस विचार से कि हिरण्य नाम है सोने का वह सृष्टि से बहुत पीछे उत्पन्न हुआ है अर्थात् मनुष्यों की उन्नति राजा और प्रजा के प्रबंध होने के उपरान्त पृथिवी में से निकाला गया है सो यह बात भी उनकी ठीक नहीं हो सक्ती क्योंकि इस शब्द का अर्थ यह है कि ज्योति कहते हैं विज्ञान को सो जिस गर्भ अर्थात् स्वरूप में है ज्योति अमृत अर्थात् मोक्ष है सामर्थ्य में जिसके और ज्योति जो प्रकाश स्वरूप सूर्य्यादि लोक जिस के गर्भ में हैं तथा ज्योति जो जीवात्मा जिसके गर्भ अर्थात् सामर्थ्य में तथा ज्योति यशः सत्कीर्ति जो धन्यवाद जिसके स्वरूप में है इसी प्रकार ज्योति इन्द्र अर्थात् सूर्य्य वायु और अग्नि ये सब जिस के

सामर्थ्य में हैं ऐसा जो एक परमेश्वर है उसीको हिरण्यगर्भ कहते हैं इस हिरण्यगर्भ शब्द के प्रयोग से वेदों का उत्तम पन और सनातन पन तो यथावत् सिद्ध होता है परन्तु इस से उनका नवीन पन सिद्ध कभी नहीं हो सक्ता इस्से डाक्टर मोक्ष मूलर साहेब का कहना जो वेदों के नवीन होने के विषय में है सो सत्य नहीं है और जो उन्हों ने (अग्निः पूर्वेभिः०) इसका प्रमाण वेदों के नवीन होने में दिया है सोभी अन्यथा है क्योंकि इस मंत्र में वेदों के करता त्रिकालदर्शी ईश्वर ने भूत भविष्यत् वर्त्तमान तीनों कालों के व्यवहारों को यथावत् जानके कहा है कि वेदों को पढ़ के जो विद्वान् हो चुके हैं वा जो पढ़ते हैं वे प्राचीन और नवीन ऋषि लोग मेरी स्तुति करें तथा ऋषि नाम मंत्र प्राण और तर्क काभी है इन से ही मेरी स्तुति करनी योग्य है इसी अपेक्षा से ईश्वर ने इस मंत्र का प्रयोग किया है इस्से वेदों का सनातन पन और उत्तम पन तो सिद्ध होता है किंतु उन हेतुओं से वेदों का नवीन होना किसी प्रकार से सिद्ध नहीं हो सक्ता इसी हेतु से डाक्टर मोक्ष मूलर साहेब का कहना ठीक नहीं ॥

इस में विचारना चाहिये कि वेदों के अर्थको यथावत् बिना विचारे उनके अर्थ में किसी मनुष्य को हठ से साहस करना उचित नहीं क्योंकि जो वेद सब विद्याओं से युक्त हैं अर्थात् उनमें जितने मंत्र और पद हैं वे सब संपूर्ण सत्य विद्याओं के प्रकाश करने वाले हैं और ईश्वर ने वेदों का व्याख्यान भी वेदों से ही कर रक्खा है क्योंकि उनके शब्द धात्वर्थ के साथ योग रखते हैं इस में निरुक्त का भी प्रमाण है जैसा कि यास्क मुनिने कहा है (तत्प्रकृतीत०)

इत्यादि वेदों के व्याख्यान करने के विषय में ऐसा समझना कि जब तक सत्य प्रमाण सुन के वेदों के शब्दों का पूर्वापर प्रकरणों, व्याकरण आदि वेदांगों, शतपथ आदि पूर्वमीमांसा आदि शास्त्रों, और शाखांतरों का यथावत् बोध न हो और परमेश्वर का अनुग्रह उत्तम विद्वानों की शिक्षा उनके संग से पक्षपात छोड़ के आत्मा की शुद्धि न हो तथा महर्षि लोगों के किये व्याख्यानों को न देखे तब तक वेदों के अर्थ का यथावत् प्रकाश मनुष्यों के हृदय में नहीं होता। इसलिये सब आर्य्य विद्वानों का सिद्धांत है कि प्रत्यक्षादि प्रमाणों से युक्त जो तर्क है वही मनुष्यों के लिये ऋषि है इससे यह सिद्ध होता है कि जो सायनाचार्य्य और महीधरादि अल्पबुद्धि लोगों के झूठे व्याख्यानों को देखके आजकाल के आर्य्यावर्त्त और यूरुप देश के निवासी लोग जो वेदों के ऊपर अपनी २ देशभाषाओं में व्याख्यान करते हैं वे ठीक २ नहीं हैं और उन अनर्थ युक्त व्याख्यानों के मानने से मनुष्यों को अत्यन्त दुःख प्राप्त होता है, इससे बुद्धिमानों को उन व्याख्यानों का प्रमाण करना योग्य नहीं तर्क का नाम ऋषि होने से सब आर्य्य लोगों का सिद्धान्त है कि सब कालों में अग्नि जो परमेश्वर वही उपासना करने के योग्य है॥

इति श्री मत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्री स्वामी दयानंद सरस्वती दिग्विजयार्कीय द्वितीयांके वेदनित्यत्व विचारो नाम द्वितीयो मयूखः॥२॥

अथ वेद संज्ञा विचारः

अथ कोयं वेदो नाम मन्त्र भाग संहिते त्याह । किंच मन्त्र ब्राह्मणयोर्वेद नाम धेयमिति कात्यायनोक्ते ब्राह्मण भाग स्यापि वेद संज्ञा कुतो न स्वीक्रियत इति । मैवंवाच्यम् । न ब्राह्मणानां वेद संज्ञा भवितुमर्हति । कुतः । पुराणे तिहास संज्ञकत्वा द्वेद व्याख्यानाद्दृषिभिरुक्त त्वादनी श्वरोक्त त्वात्कात्यायन भिन्नै र्ऋषिभिर्वेद संज्ञाया मस्वी कृत त्वान्मनुष्य बुद्धि रचित त्वाच्चेति ॥

भाषार्थ

प्र० वेद किन का नाम है उ० मंत्र संहिताओं का प्र० जो कात्यायन ऋषिने कहा है कि मंत्र और ब्राह्मण ग्रंथों का नाम वेद है फिर ब्राह्मण भाग कोभी वेदों में ग्रहण आप लोग क्यों नहीं करते हैं उ० ब्राह्मण ग्रंथ वेद नहीं हो सक्ते क्योंकि उन्हींका नाम इतिहास, पुराण, कल्प, गाथा, और नाराशंसी भी है वे ईश्वरोक्त नहीं हैं किंतु महर्षि लोगों के किये वेदों के व्याख्यान हैं एक कात्यायन को छोड़ के किसी अन्य ऋषि ने उनके वेद होने में साक्षी नहीं दी है और वे देहधारी पुरुषों के बनाये हैं इन हेतुओं से ब्राह्मण ग्रंथों की वेद संज्ञा नहीं हो सक्ती और मंत्र संहिताओं का वेद नाम इस लिये है कि ईश्वर रचित और सब विद्याओं का मूल है ॥

भाष्यम्

यथा ब्राह्मण ग्रन्थेषु मनुष्याणां नाम लेख पूर्वका लौकिका इतिहासाः सन्ति नचैवं मन्त्र भागे । किंच भो । त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम् । यद्देवेषु त्र्यायुषं तन्नो अस्तु त्र्यायुषम् ॥१॥

यजु॰ अ॰ ३ मं॰ ६२। इत्यादीनि वचनान्यृषीणां नामाङ्कितानि यजुर्वेदादिष्वपि दृश्यन्ते। अनेनेतिहासादिविषये मन्त्रब्राह्मणयोस्तुल्यता दृश्यते पुनर्ब्राह्मणानामपि वेदसंज्ञा कुतो न मन्यते। मैवं भ्रमि। नैवात्र जमदग्निकश्यपौ देहधारिणौ मनुष्यस्य नाम्नी स्तः। अत्र प्रमाणम्। चक्षुर्वै जमदग्निर्ऋषिर्यदेनेन जगत्पश्यत्यथो मनुते तस्माच्चक्षुर्जमदग्निर्ऋषिः। श॰ कां॰ ८ अ॰ १। कश्यपो वै कूर्मः प्राणो वै कूर्मः श॰ कां॰ ७ अ॰ ५। अनेन प्राणस्य कूर्मः कश्यपश्च संज्ञास्ति। शरीरस्थनाभौ तस्य कर्मीकारणं वास्यते॥ अनेन मन्त्रेणेश्वर एव प्रार्थ्यते तद्यथा हे जगदीश्वर भवत्कृपया नोऽस्माकं जमदग्निसंज्ञकस्य चक्षुषः कश्यपाख्यस्य प्राणस्य च त्र्यायुषं त्रिगुणमर्थात् त्रीणि शतानि वर्षाणि यावत्तावदायुरस्तु। चक्षुरित्युपलक्षणमिन्द्रियाणां प्राणो मनआदीनां च (यद्देवेषु त्र्यायुषम्) अत्र प्रमाणम्। विद्वांसो हि देवाः। श॰ कं॰ ३ अ॰ ७। अनेन विदुषां देवसंज्ञास्ति। देवेषु विद्वत्सु यद्विद्याप्रभावयुक्तं त्रिगुणमायुर्भवति (तन्नोऽस्तु त्र्यायुषम्) तस्येन्द्रियाणां समनस्कानां नोऽस्माकं पूर्वोक्तं सुखयुक्तं त्रिगुणमायुरस्तु भवेत्। येन सुखयुक्ता वयं तावदायुर्भुञ्जीमहि। अनेनान्यदप्युपदिश्यते। ब्रह्मचर्यादिसुनियमैर्मनुष्यैरेतत्त्रिगुणमायुः कर्त्तुं शक्यमस्तीति गम्यते। अतोऽर्थाभिधायकैर्जमदग्न्यादिभिः शब्दैरर्थमात्रं वेदेषु प्रकाश्यते। अतो नात्र मन्त्रभागे हीतिहासलेशोऽप्यस्तीत्यवगन्तव्यम्। अतो यच्च सायणाचार्य्यादिभिर्वेदप्रकाशादिषु यत्र कुत्रेतिहासवर्णनं कृतं तद्भ्रममूलमस्तीति मन्तव्यम्।

भाषार्थः

प्र॰ जैसे ऐतरेय आदि ब्राह्मण ग्रंथों में याज्ञवल्क्य मैत्रेयी गार्गी और जनक आदि के इतिहास लिखे हैं वैसे ही (त्र्यायुषं जमदग्नेः) इत्यादि वेदों में भी पाये जाते हैं इस्से मंत्र और ब्राह्मण भाग ये दोनों बराबर होते हैं फिर ब्राह्मण ग्रंथों को वेदों में क्यों नहीं मानते हो उ॰ ऐसा भ्रम मतकरो क्योंकि जमदग्नि और कश्यप ये नाम देह धारी मनुष्यों के नहीं हैं इसका प्रमाण शत पथ ब्राह्मण में लिखा है कि चक्षु का नाम जमदग्नि और प्राण का नाम कश्यप है इस कारण से यहां प्राण से अंतः करण और आंख से सब इन्द्रियों का ग्रहण करना चाहिये अर्थात् जिन से जगत के सब जीव बाहर और भीतर देखते हैं (त्र्यायुषंज॰) सो इस मंत्र से ईश्वर की प्रार्थना करनी चाहिये कि हे जगदीश्वर आप के अनुग्रह से हमारे प्राण आदि अंतः करण और आंख आदि सब इन्द्रियों की (३००) तीन सौ वर्ष तक उमर बनी रहे (यद्देवेषु॰) सो जैसी विद्वानों के बीच में विद्यादि शुभगुण और आनंद युक्त उमर होती है (तन्नोऽस्तु॰) वैसी ही हम लोगों की भी हो तथा (त्र्यायुषंजमदग्नेः॰) इत्यादि उपदेश से यह भी जाना जाता है कि मनुष्य ब्रह्मचर्यादि उत्तम नियमों से त्रिगुण चतुर्गुण आयु कर सकता है अर्थात (४००) चार सौ वर्ष तक भी सुख पूर्वक जी सकता है इस्से यह सिद्ध हुआ कि वेदों में सत्य अर्थ के वाचक शब्दों से सत्य विद्याओं का प्रकाश किया है लौकिक इतिहासों का नहीं इस्से जो साय णाचार्यादि लोगों ने अपनी २ बनाई टीकाओं में वेदों में जहांत हां इतिहास वर्णन किये हैं वे सब मिथ्या हैं ॥

भाष्यम्

तथा ब्राह्मणग्रन्थानामेव पुराणेतिहासादिनामास्ति न ब्रह्मवैव-
र्त्तश्रीमद्भागवतादीनां चेति निश्चीयते । किंच भोः । ब्रह्मयज्ञ
विधाने यत्र क्वचिद् ब्राह्मणसूत्रग्रन्थेषु । यद् ब्राह्मणानीतिहासा
न्पुराणानि कल्पान् गाथा नाराशंसीरित्यादीनि वचनानि दृश्यन्ते
। एषां मूलमथर्ववेदेप्यस्ति । स बृहतीं दिशमनुव्यचलत् । तमि
तिहासश्च पुराणं च गाथाश्च नाराशंसीश्चानुव्यचलन् । इति
हासस्य च वै स पुराणस्य च गाथानां च नाराशंसीनां च प्रियं धा
म भवति य एवं वेद ॥१॥ अथर्व० कां० १५ । प्रपा० ३० । अनु०
१ । अतो ब्राह्मणग्रन्थेभ्यो भिन्ना भागवतादयो ग्रन्था इतिहासा
दिसंज्ञया कुतो न गृह्यन्ते । मैवं वाचि । एतैः प्रमाणैर्ब्राह्मण
ग्रन्थानामेव ग्रहणं जायते न श्रीमद्भागवतादीनामिति । कुतः ।
ब्राह्मणग्रन्थेष्वितिहासादीनामन्तर्भावात् । तत्र देवासुराः सं-
यत्ता आसन्नित्यादय इतिहासा ग्राह्याः । सदेव सोम्येदमग्र
आसीदेकमेवाद्वितीयम् । छान्दोग्योपनि० प्रपा० ६ । आत्मा वा
इदमेक एवाग्र आसीन्नान्यत् किंचन मिषत् । इत्यैतरेयारण्य
कोपनि० अ० १ खं० १ ॥ आपो ह वा इदमग्रे सलिलमेवास ।
श० कां० ११ अ० १ । इदं वा अग्रे नैव किंचिदासीत् । इत्यादीनि
जगतः पूर्वावस्थाकथनपूर्वकाणि वचनानि ब्राह्मणान्तर्ग
तान्येव पुराणानि ग्राह्याणि । कल्पा मन्त्रार्थसामर्थ्यप्रकाशकाः
। तद्यथा । इषे त्वोर्जे त्वेति वृष्ट्यै तदाह । यदाहेषे त्वेत्यूर्जे त्वेति
यो वृष्टादूर्ग्रसो जायते तस्मै तदाह सविता वै देवानां प्रसविता
सवितृप्रसूताः श० कां० १ अ० ७ । इत्यादयो ग्राह्याः । गाथा या-

ज्ञवल्क्य जनक संवादो यथा शत पथ ब्राह्मणे गार्गी मैत्रेया दीनां परस्परं प्रश्नोत्तर कथन युक्ताः सन्तीति। नाराशंस्यश्च। अत्राह यास्काचार्य्यः। नराशंसो यज्ञ इति कथक्यो नरा अ-स्मिन्नासीनाः शंसन्त्यग्निरिति शाकपूरणिर्नरैः प्रशस्यो भवति। नि० अ० ८ खं० ६॥ नराणां यत्र प्रशंसा नरैर्यत्र प्रशस्यते ता ब्राह्मणनिरुक्ताद्यन्तर्गताः कथा नाराशंस्यो ग्राह्या नातोऽन्या इति किंच तेषु तेषु वचनेष्वयीदमेव विज्ञायते यत् यस्माद् ब्राह्मणानीति संज्ञा पद्मिति हासादिस्तेषां संज्ञेति। तद्यथा। ब्राह्मणान्येवेतिहासान् जानीयात् पुराणानि कल्पान् गाथा ना-राशंसीश्चेति॥

भावार्थ

और इस हेतु से ब्राह्मण ग्रन्थों का ही इतिहासादि नाम जानना चा-हिये श्रीमद्भागवतादि का नहीं प्र० जहां २ ब्राह्मण और सूत्र ग्र-न्थों में (यद्ब्राह्मण०) इतिहास, पुराण, कल्प, गाथा, नाराशंसी, इत्यादि वचन देखने में आते हैं तथा अथर्व वेद में भी इतिहास, पुराणादि नामों का लेख है इस हेतु से ब्राह्मण ग्रन्थों से भिन्न ब्र-ह्मवैवर्त्त श्रीमद्भागवत महाभारतादि का ग्रहण इतिहासपुर-राणादि नामों से क्यों नहीं करते हो उ० इनके ग्रहण में कोई भी प्रमाण नहीं है क्योंकि उनमें मतों के परस्पर विरोध और लड़ा-ई आदि की असंभव मिथ्या कथा अपने २ मत के अनुसार लोगों ने लिख रक्खी हैं इसी से इतिहास और पुराणादि नामों में इनका ग्रहण करना किसी मनुष्य को उचित नहीं जो ब्राह्मणग्रन्थों में (देवासुराः संयत्ता आसन्) अर्थात् देव विद्वान् और असुर

मूर्ख ये दोनों युद्ध करने को तत्पर हुए थे इत्यादि कथाओं का नाम इतिहास है (सदेवसो०) अर्थात् जिसमें जगत् की उत्पत्ति आदि का वर्णन है उस ब्राह्मण भाग का नाम पुराण है (इष वोर्जेत्वेतिव त्स्ये०) जो वेद मंत्रों के अर्थ अर्थात् जिनमें द्रव्यों के सामर्थ्य का कथन किया है उसका नाम कल्प है इसी प्रकार जैसे शत पथ ब्राह्मण में याज्ञ-वल्क्य जनक गार्गी मैत्रेयी आदि की कथाओं का नाम गाथा है और जिनमें नर अर्थात् मनुष्य लोगों ने ईश्वर धर्म आदि पदार्थ विद्याओं और मनुष्यों की प्रशंसा की है उनको नाराशंसी कहते हैं (ब्राह्म-णानी तिहासान्०) इस बचन में ब्राह्मणानि संज्ञि और इतिहासा-दि संज्ञा है अर्थात् ब्राह्मण ग्रंथों का नाम इतिहास पुराण क-ल्प गाथा और नाराशंसी है सो ब्राह्मण और निरुक्तादि ग्रन्थों में जो २ जैसी २ कथा लिखी हैं उन्हीं का इतिहासादि से ग्रहण करना चाहिये अन्य का नहीं ॥

भाष्यम्

अन्यदप्यत्र प्रमाणमस्ति न्यायदर्शन भाष्ये। वाक्यविभागस्य चा-र्थ ग्रहणात् ।१। अ०२ आ०२ सू०६०। अस्योपरि वात्स्याय न भाष्यम्। प्रमाणं शब्दो यथा लोके विभागश्च ब्राह्मण वाक्यानां त्रिविधः अयमभिप्रायः। ब्राह्मणग्रंथ शब्दा लौकिका एव न वैदिका इति। तेषां त्रिविधो विभागो लक्ष्यते। सू० विध्यर्थ वादानु वादब-चन विनियोगात् ॥२॥ अ०२ आ०२ सू०६१॥ अस्योप० वा०भा० । त्रिधा खलु ब्राह्मण वाक्यानि विनि युक्तानि विधि वचनान्यर्थ वाद वचनान्यनु बचनानीति तत्र। सू० विधिर्विधायकः ॥३॥ अ० २ आ०२ सू०६२॥ अस्योप० वा० भा०। यद्वाक्यं विधायकम् चो-

दकं सविधिः। विधिस्तु नियोगोऽनुज्ञा वा यथाग्निहोत्रं जुहुय स्वर्ग काम इत्यादि। ब्राह्मण वाक्यानामितिशेषः। सू० स्तुतिर्निन्दा परकृतिः पुराकल्प इत्यर्थवादः॥ ४॥ अ०२ आ०१ सू० ६३। अस्योप० वा० भा० विधेः फलवाद लक्षणा या प्रशंसा सा स्तुतिः संप्रत्ययार्थं स्तूयमानं श्रद्दधीतेति प्रवर्त्तिका च फलश्रवणात्प्रवर्त्तते सर्वजिता वै देवाः सर्वमजयन्सर्वस्याप्त्यै सर्वस्य जित्यै सर्वस्यैतेनाप्नोति सर्वं जयतीत्येवमादि। अनिष्ट फलवादो निन्दा वर्जनार्थं निन्दितं न समाचरेदिति। स एष वा प्रथमो यज्ञो यज्ञानां यज्ज्योतिष्टोमो य एतेनानिष्ट्वाऽन्येन यजते गर्त्तपत्यमेव तज्जीर्य्यते वा इत्येवमादि। अन्यकर्तृकस्य व्याहतस्य विधेर्वादः परकृतिः। हुत्वा वपामेवाग्रेऽभिघारयन्ति। अथ पृषदाज्यं तदु ह चरकाध्वर्य्यवः पृषदाज्यमेवाग्रेऽभिघारयन्ति। अग्नेः प्राणाः पृषदाज्यं स्तोममित्येवमभिदधतीत्येवमादि। ऐतिह्य समाचरितो विधिः पुराकल्प इति। तस्माद्वा एतेन ब्राह्मणा हविः पवमानं सामस्तोममस्तौषन् योनेर्यज्ञं प्रतनवामह इत्येवमादि। कथं। परकृति पुराकल्पौ अर्थवादाविति। स्तुति निन्दावाक्येनाभिसंबंधाद्विध्याश्रयस्य कस्यचिदर्थस्य द्योतनादर्थवाद इति॥

भाषार्थ

ब्राह्मण ग्रन्थों की इतिहासादि संज्ञा होने में और भी प्रमाण है जैसे लोक में तीन प्रकार के बचन होते हैं वैसे ब्राह्मण ग्रंथों में भी हैं उन में से एक विधिवाक्य है (देवदत्तो ग्राममगच्छत् सुखार्थम्। सुख के लिये देवदत्त ग्राम को जाय इसी प्रकार ब्राह्मण ग्रन्थों में भी हैं (अग्निहोत्रं जुहुयात्स्वर्ग कामः) जिसको सुख

की इच्छा हो वह अग्निहोत्रादि यज्ञों को करे दूसरा अर्थ वाद है जो कि चार प्रकार का होता है एक स्तुति अर्थात् पदार्थों के गुणों का प्रकाश करना जिस्से मनुष्यों की श्रद्धा उत्तम काम करने और गुणों के ग्रहण में ही हो दूसरी निन्दा अर्थात् बुरे काम करने में दोषों का दिखलाना जिस्से उनको कोई न करे तीसरे (परकृतिः) जैसे इस चोर ने बुरा काम किया इस्से उसको दंड मिला और साहूकार ने अच्छा काम किया इस्से उसकी प्रतिष्ठा और उन्नति हुई चौथा (पुराकल्प) अर्थात् जो बात पहिले हो चुकी हो जैसे जनककी सभा में याज्ञवल्क्य गार्गी शाकल्य आदि ने इकट्ठे होके आपस में प्रश्नोत्तर रीति से संवाद किया था इत्यादि इतिहासों को पुराकल्प कहते हैं॥

भाष्यम्

सू० विधिविहितस्यानुवचनमनुवादः॥५॥ अ० २ आ० २ सू० ६४॥ अस्योप० वा० भा०। विध्यनुवचनं चानुवादो विहितानुवचनं च पूर्वः शब्दानुवादोऽपरोऽर्थानुवादः। सू० न चतुष्ट्वमैतिह्यार्थापत्ति संभवाभाव प्रामाण्यात्॥६॥ अ० २ आ० २ सू०॥१॥ अस्योप० वा० भा०। न चत्वार्य्येवं प्रमाणानि किं तर्हि। ऐतिह्यमर्थापत्तिः संभवोऽभाव इत्येतान्यपि प्रमाणानि। इति होचुरित्यनिर्दिष्टप्रवक्तृकं प्रवादपारंपर्य्यमैतिह्यम्। अनेनप्रमाणेना पीतिहासादि नामभिर्ब्राह्मणान्येव गृह्यन्ते नान्यदिति॥

भाषार्थ

इसका तीसरा भाग अनुवाद है अर्थात् जिसका पूर्व विधान करके उसी का स्मरण और कथन करना सो भी दो प्रकार का है एक शब्द

का और दूसरा अर्थ का जैसे वह विद्या को पढ़े यह शब्दानुवाद है विद्या पढ़ने से ही ज्ञान होता है इस को अर्थानुवाद कहते हैं जिसकी प्रतिज्ञा उसी में हेतु उदाहरण उपनय और निगमन को घटाना हो जैसे परमेश्वर नित्य है यह प्रतिज्ञा है विनाश रहित होने से यह हेतु है आकाश के समान है इसको उदाहरण कहते हैं जैसा आकाश नित्य है वैसा परमेश्वर भी है इसको उपनय कहते हैं और इन चारों का क्रम से उच्चारण कर के पक्ष में यथावत् योजना करने को निगमन कहते हैं जैसे परमेश्वर नित्य है विनाश रहित होने से आकाश के समान जैसा आकाश नित्य है वैसा परमेश्वर भी है इसे इसमें समझ लेना चाहिये कि जिस शब्द और अर्थ का दूसरी बार उच्चारण और विचार हो इस को अनुवाद कहते हैं सो ब्राह्मण पुस्तकों में यथावत् लिखा है इस हेतु से भी ब्राह्मण पुस्तकों का नाम इतिहास आदि जानना चाहिये क्योंकि इनमें इतिहास पुराण कल्प गाथा और नाराशंसी ये पांच प्रकार की कथा सब ठीक २ लिखी हैं और भागवतादि को इतिहासादि नहीं जानना चाहिये क्योंकि उनमें मिथ्या कथा बहुत सी लिखी हैं ॥

भाष्यम्

अन्यच्च। ब्राह्मणानि तु वेदव्याख्यानान्येव सन्ति नैव वेदाख्यानीति। कुतः। इषे त्वोर्जे त्वेति श॰ कां॰ १ अ॰ ७। इत्यादीनि मंत्रप्रतीकानि धृत्वा ब्राह्मणेषु वेदानां व्याख्यानकरणात् ॥

भाषार्थ

ब्राह्मण ग्रंथों को वेदों में गणना नहीं हो सक्ती क[illegible]

इस प्रकार से उनमें मन्त्रोंकी प्रतीकधर २ के वेदोंका व्याख्यान कि-या है और मंत्र भाग संहिताओं में ब्राह्मण ग्रंथों की एक भी प्रतीक कहीं नहीं देखने में आती इससे जो पूर्वोक्त मूल मंत्र अर्थात् चार संहिता हैं वेही वेद हैं ब्राह्मण ग्रंथ नहीं ॥

भाष्यम्

अन्यच्च महाभाष्येपि। केषां शब्दानाम् लौकिकानां वैदिकानांच। तत्र लौकिकास्तावत्। गौरश्वः पुरुषोहस्ती शकुनिर्मृगो ब्राह्मण इति। वैदिकाः खल्वपि। शन्नो देवी रभिष्टये। इषेत्वोर्जेत्वा। अग्निमीळे पुरोहितम्। अग्न आयाहि वीतयइति। यदिब्राह्मण ग्रंथा नामपि वेद संज्ञा भीष्टा भूत्तर्हि तेषा मप्युदाहरण मदात्। अत एव महाभाष्यकारेण मन्त्र भागस्यैव वेद संज्ञां मत्वा प्रथम मंत्र प्रतीकानि वैदिकेषु शब्देषूदा हृतानि। किंतुयानि गौरश्व इत्यादीनि लौकिकोदाहरणानि दत्तानि तानि ब्राह्मणादि ग्रंथे ष्वेव घटन्ते। कुतः। तेष्वीदृश शब्दानां व्यवहार दर्शनात्। द्वितीया ब्राह्मणे ॥ १॥ अ० २ पा० ३। चतुर्थ्यर्थे बहुलं छन्दसि। २। अ० २ पा० ३। पुराण प्रोक्तेषु ब्राह्मण कल्पेषु ॥ ३॥ अ० ४ पा० ३। इत्यष्टाध्याय्यां सूत्राणि। अत्रापि पाणिन्या चार्य्यैर्वेद ब्राह्मण योर्भेदे नैव प्रति पादितम्। तद्यथा पुराणैः। प्राचीनै र्ब्रह्मा द्यृषिभिः प्रोक्ता ब्राह्मण कल्प ग्रन्था वेद व्याख्यानाः सन्ति। अत एवै तेषां पुराणे तिहास संज्ञाकृतास्ति। यद्यत्र छन्दो ब्राह्मणयो र्वेद संज्ञा भीष्टा भवेत्तर्हि चतुर्थ्यर्थे बहुलं छन्दसी ति छन्दोग्रहणं व्यर्थं स्यात्। कुतः। द्वितीया ब्राह्मणेति ब्राह्मण सूत्रस्य प्रकृतत्वात्। अतो विज्ञायते न ब्राह्मण ग्रंथानां वेद संज्ञास्तीति। अतः किं सिद्धम्। ब्रह्मेति ब्राह्मणानां नामास्ति। अत्र

प्रमाणम् । ब्रह्म वै ब्राह्मणः क्षत्रं राजन्यः । श० कां० १३ अ० १। समानार्थौ वेतौ वृष शब्दो वृषल शब्दश्च ब्रह्मन् शब्दो ब्राह्मण शब्दश्च । इति व्याकरण महाभाष्ये । अ० ५ पा० १ आ० २। चतुर्वेद विद्भि ब्रह्मभिर्ब्राह्मणैर्महर्षिभिः प्रोक्तानियानि वेद व्याख्यानानि तानि ब्राह्मणानि । अन्यच्च । कात्यायनेना र्षि ब्राह्मणं वेदेन सहचारि तत्वात्सहचारोपाधिं मत्वा ब्राह्मणानां वेद संज्ञा संमतेति विज्ञायते । एवमपि न सम्यगस्ति । कुतः । एवं तेनानुक्तत्वादनोऽन्यैर्ऋषिभिर गृहीतत्वात् । अनेनापि न ब्राह्मणानां वेद संज्ञा भवितु मर्हतीति । इत्यादि बहुभिः प्रमाणै मंत्राणा मेव वेद संज्ञा न ब्राह्मण ग्रंथाना मिति सिद्धम्

भाषार्थ

ब्राह्मण ग्रंथोंकी वेद संज्ञा नहीं होने में व्याकरण महाभाष्यकाभी प्रमाण है जिसमें लोक और वेदों के भिन्न २ उदाहरण दिये हैं जैसे गौरश्वः० इत्यादि लोक के और शन्नो देवीरभिष्टय इत्यादि वेदों के हैं किन्तु वैदिक उदाहरणों में ब्राह्मणों का एक भी उदाहरण नहीं दिया और गौरश्वः इत्यादि जो लोक के उदाहरण दिये हैं ये सब ब्राह्मण पुस्तकों के हैं क्योंकि उनमें ऐसाही पाठ है इसी कारण से ब्राह्मण पुस्तकों की वेद संज्ञा नहीं हो सक्ती और कात्यायन ऋ० नाम से जो दोनों की वेद संज्ञा होने में वचन है सो सहचार उपाधि लक्षण से किया हो तोभी नहीं बन सक्ता क्योंकि जैसे किसी से कहा कि उस लकड़ी को भोजन कराहो और दूसरे ने इतनेही कहने से तुरंत जान लिया कि लकड़ी जड़ पदार्थ होने से भोजन नहीं कर सक्ती किंतु जिस मनुष्य के हाथ में लकड़ी है उसको भो

जन कराना चाहिये इस प्रकार से कहा हो तो भी मानने के योग्य नहीं हो सक्ता क्योंकि इससें अन्य ऋषियों की एक भी साक्षी नहीं है इस से यह सिद्ध हुआ कि ब्रह्मा नाम ब्राह्मण का है सो ब्रह्मादि जो वेदों के जानने वाले महर्षि लोगथे उन्हीं के बनाये हुए ऐतरेय शत पथ आदि वेदों के व्याख्यान हैं इसी कारण से उनके किये ग्रन्थों का नाम ब्राह्मण हुआ है इससे निश्चय हुआकि मंत्र भाग की ही वेद संज्ञा है ब्राह्मण ग्रंथों की नहीं ॥

भाष्यम्

किंच भोः। ब्राह्मण ग्रंथानामपि वेद वत्प्रामाण्यं कर्त्तव्य माहोस्वि न्नेति। अत्र ब्रूमः। नैतेषां वेद वत्प्रामाण्यं कर्त्तुं योग्य मस्ति। कुत ईश्वरोक्ता भावात्तदनुकूल तयैव प्रमाणार्ह त्वाच्चेति। परंतु सन्ति मानि परतः प्रमाण योग्या न्येवेति ॥

भाषार्थ

प्र० हम यह पूछते हैं कि ब्राह्मण ग्रन्थों का भी वेदों के समान प्रमाण करना उचित है वा नहीं उ० ब्राह्मण ग्रंथों का प्रमाण वेदों के तुल्य नहीं हो सकता क्योंकि वे ईश्वरोक्त नहीं है परंतु वेदोंके अनुकूल होने से प्रमाण के योग्य तो हैं ॥

इति वेद संज्ञा विचारः ॥

दयाया आनन्दो विलसति पुरो ब्रह्म विदितः सरस्वत्य स्याग्रे निवसति मुदा सत्य निलया। इयं ख्यातिर्य स्य प्रथित सुगुणा हीश प्रगुणा स्य ननाः यंग्रन्थो रचित इति बोद्धव्य मनघाः ॥१॥ यह श्लोक स्वयं स्वामी जी महाराज ने ग्रन्थ निर्माण बोधक बनाया है ॥

अबदेखिये

आर्यगण। भरतखंड सेलेकर यूरुप व आमेरिका तक इस ऋग्वेदादि भाष्य और भूमिका के लेने व देखने और सहायता करने वाले एक से एक विशेष गुणज्ञ गुणवान॰ विद्वान् बुद्धिमान् और धार्मिक राजे महाराजे और बड़े२ राज्याधिकारी आदि हजारों सत्पात्र और सत्पुरुष हैं उनमें से थोड़ों का नाम यहां नीचे इस लिये लिखा जाता है कि इस ग्रंथ के अवलोकन करने वालों को इन्हें देख ऐसों की बुद्धि में भ्रम डालने* वालों की योग्यता भली भांति प्रकाशित हो जावे॥

ग्राहकाभिधान सूचीपत्रम्

नंबर शुमार	नंबर मुहर्रिर भूमिका	नाम	पता
१	१	राजमान्य राजे श्रीगोपालरावहरीदेशमुख	जजदक्षिण नाशिकजिल्हा॰ बंबई हाता
२	४९	कृष्णरावविठ्ठलविंचूरकर	जज दक्षिण सितारा
३	४७२	महादेवगोविंद रानडे	जज पूना बम्बई हाता
४	२५	रामचन्द्र गोपालदेशमुख	जज गायकवाड़ गुजरात दक्षिण बड़ोदा
५	४०१	लालशंकरउमाशंकर	सबआर्डिनेट जजपंडरपुरगिरगांव बेकरोड बम्बई हाता
६	५०	माणलालमथुरादास	डिप्टीकलकर भड़ौंच गुजरात
७	१६०	रा॰रा॰भास्कर बालकृष्ण निमये	डिप्टी इन्स्पेक्टर नाशिक

* जैसे राजा शिवप्रसाद आदि

८	१५३	रा॰ रा॰ शिवराव बापूजी	हेड मास्टर अंगरेजी स्कूल नासि
		पाळये वि॰ ए॰	क
९	२२	बाबू हरिश्चंद्र चिन्ता	फोटोग्राफ़र बम्बई
		मणि	
१०	१८०	डाक्टर पांडुरंग गोपाल	गिरगांव बम्बई हाल
११	५४६	रावबहादुर विष्णु मोरे	नासिक
		श्वर भिडे	
१२	२५०	अण्णा साहब पटवर्धन	रईस आज़म पूना बंबई
१३	५५२	भाऊ साहब मेंडल्कर	रईस आज़म पूना बंबई
१४	१६०	रा॰ रा॰ श्रीधर वासुदेव	दीक्षित जागीरदार नासिक
		टकले	
१५	५१२	रिवरेंड पिटरसनाईफो	छंदवारा सी॰ पी॰
		र्स	
१६	१९	सरटी माधोराव	दीवान गुजरात गायकवाड़
१७	२९	दीवान मणिभाई जस	बड़ौदा
		भाई	काठियावाड़ कच्छ भुज बंबई
१८	५५०	मिस्टर रंगपा	
			मंगेश मांजेश्वर कारज़िम्मेदार
१९	९५	ठाकुर रंजीत सिंह	मंगलूर एस॰ सी॰ मदरास हाथ
			अचरोल वाले जागीरदार सवाई
२०	१२४	पंडित सालिगराम	जैपुर
२१	३	पंडित कालूराम	हेड पंडित कालेज अजमेर
			मेरों का रामगढ़ सराई जैपुर

२२	१३५	पंडित शिव नारायन	हेड पंडित म्योकालिज अजमेर
२३	१४३	राय गुरु प्रसाद	एकस्ट्रा असिस्टेंट ज़ि० चांदा र लाक़ा नागपुर
२४	७२	मुं० देवी प्रसाद बी० ए०	केयर आफ़ मु० डोरीलाल तहसीलदार नरसिंहपुर सी० पी०
२५	८५	ठाकुर गंगासिंह	हेडमास्टर ज़ि० स्कूल दमोह
२६	१४५	मु० जुगुल किशोर	मीर मुंशी कुल दफ़्तर रियासत भूपाल
२७	३६	महाराज हुल्कर	वाली रियासत इन्दौर
२८	५९	ग्रार रघुनाथ राव	कारोभारी दीवान महाराजा इंदौर
२९	१७६	पंडित ग्रमरनाथ	हेड मुतरज्जिम चीफ़कोर्ट लाहौर
३०	१९२	बाबू कृपाशंकर बी० ए०	डिप्टी इन्स्पेक्टर स्कूल लाहौर
३१	१९४	बाबू शशिभूषण कुमरजी एम० ए० बी० एल	प्रोफ़ेसर गवर्नमेंट कालेज लाहौर
३२	१९५	बाबू काली प्रसन्न राय एम० ए० बी० एल	प्लीडर चीफ़ कोर्ट पंजाब लाहौर
३३	१९६	बाबू ईशान चन्द्र घोस	असिस्टेंट एकाउन्टेंट जेनरल पंजाब लाहौर
३४	२०६	बाबू शिवदयाल	मुन्सिफ़ अलीपुर ज़ि० मुज़फ़्फ़रगढ़ पंजाब
३५	२०७	मियां हरी सिंह साहब बहादुर	एकस्ट्रा असिस्टेंट कमिश्नर गुरदासपुर पंजाब
३६	२०९	लाला करम चन्द्र	मुन्सिफ़ ज़िला होशियार पुर पंजाब
३७	४५५	राय राम सहाय	एकस्ट्रा असिस्टेंट कमिश्नर ज़िला फ़ीरोज़पुर पंजाब

३८	४५८	डाक्टर हरि प्रसाद	सिविल सर्जन माधोपुर
३९	२७५	लाला मूलराज एम·ए·	लाहौर
४०	४८०	कारस्टीफ़न साहब बहादुर	ड्यूटी प्रथेल असिस्टेंट लुधियाना
४१	४८८	लाला मुंशीलाल एम·ए·	हेड मास्टर गवर्नमेंट स्कूल होशियारपुर
४२	४९०	लाला मोहनलाल बी·ए·	गवर्नमेंट कालेज लाहौर पंजाब
४३	४९३	लाला श्रीराम एम· ए·	हेड मास्टर नार्मल स्कूल लाहौर
४४	८०	कन्हैयालाल अलखधारी	लुधियाना पंजाब
४५	२५२	लाला बालमुकुंद	एसिस्टेंट इनजिनियर सियालकोट
४६	१८७	डायरेक्टर	क्यूरेटर ग· सेन्ट्रल डिपो लाहौर
४७	५१७	लाला लब्धाराम	असिस्टेंट इंजिनियर ज़ि· गुजरानवाला वज़ीराबाद
४८	४३६	डाक्टर जस्वन्त राव	असिस्टेंट सरजन शफ़ाख़ाने मुल्तान
४९	५२७	लाला ईश्वरीदयाल	सिविल इनजिनियर लाहौर
५०	५६०	सागर मल	असिस्टेंट इनजिनियर मुल्तान
५१	७५५	राय राम सहाय साहब	एकस्ट्रा असिस्टेंट कमिश्नर फ़ीरोज़पुर
५२	५५०	सूबेदार मेजर शिव बख़्श दुबे	सरदार बहादुर ११ पलटन रावलपिंडी
५३	२६१	मेजर डबल्यू आर· एम· हाल राय डसा· बहादुर	डायरेक्टर सरिश्ते तालीम पंजाब
५४	८२	सर्दार अतर सिंह	एम· यू· एफ· चीफ़ आफ़ भदौड़ लुधियाना
५५	२१६	सर्दार जगत सिंह	मोनलिद महाराज जींद हाज़िर बाश मुल्क लेफ़्टिनेंट गवर्नर पंजाब

५६	२१९	राजा रघुवीर सिंह	जींद झाया अंबाला
५७	२१७	लाला देवी सिंह	मोतमिद महाराजा नाभा हाज़िर बाश मुहकमें लेफ्टिनेंट गवर्नर पंजाब
५८	२२१	दीवान रामजस	दीवान महाराजा कपूरथला पंजाब
५९	२५६	बाबू शारदाप्रसाद भट्टाचार्य्य	पबलिक वर्क डिपार्टमेंट लाहौर
६०	१३३	पंडित भागराम	एकस्ट्रा असिस्टेंट कमिश्नर अजमेर
६१	१८	मुन्शी इन्द्रमणि	नामी रईस मुरादाबाद
६२	८९	पंडित मोहन लाल	हेड मास्टर गवर्नमेंट स्कूल मेरठ
६३	११७	पंडित लक्ष्मी नरायण	मुनसिफ़ अलीगढ़
६४	३४	बाबू नवीन चंद्रराय	पेमास्टर ईस्टर्न रेलवे आगरा
६५	७१	पंडित सुंदर लाल	पोस्ट मास्टर जनरेल्स आफ़िस इलाहाबाद
६६	४५१	राय देवी प्रसाद	डिप्टी कलक्टर बंदोबस्त मुरादाबाद हाल ग़ाज़ीपुर
६७	७७	राजा जयकृष्णदास	डिप्टी मेजिस्ट्रेट बिजनौर
६८	५७६	डाक्टर हरि प्रसाद	सिविल सरजन जगाधरी
६९	५२७	राय बद्रीदास	सब कलेक्टर बिजनौर
७०	२४६	द्वारिका प्रसाद	सरिश्तेदार कलेक्टर आफ़िस मुज़फ़्फ़र नगर
७१	५१९	पंडित गोपालराव हरी रईस झांसी	वज़ीटर सरिश्ते तालीम ज़िला फ़र्रुख़ाबाद
७२	२४७	बाबू डाल चंद	हेड मास्टर ज़िला स्कूल मुज़फ़्फ़र नगर

७३	४२	पांडे वैरीमाधव शास्त्री	ग्राम नदरई ज़िला एटा
७४	५७२	बाबू राम नाथ	डिप्टी कमिश्नर आफ़िस प्रतापगढ़ अवध
७५	५४	मुंशी हनूमान प्रसाद	एजेन्ट राजे इन्द्र विक्रम शाह बहादुर रियासत खैरीगढ़ अवध
७६	२७४	बाबू बंशीलाल सिंह	वकील हाईकोर्ट खैरी अवध
७७	४५०	बाबू जगमोहन सिंह	इन्स्पेक्टर अवध रुहेलखंड रेलवे बनारस
७८	२२५	कृष्णलाल मिश्र	वकील हाईकोर्ट प्रतापगढ़ अवध
७९	७६	पंडित लक्ष्मीनारायण दुबे	मुलाज़िम महाराज बलरामपुर लखनऊ
८०	५०७	राम दयाल राय बहादुर	मुन्सिफ़ ताजपुर दरभंगा
८१	४९४	बाबू जयकृष्ण मुकरजी	इंजिनियर चीफ़ आफ़िस एन. बी. रेलवे दार्जिलिंग
८२	३२	बाबू केशव चंद्र सेन	अध्यक्ष ब्रह्म समाज कलकत्ता
८३	५७	बाबू द्विजेंद्रनाथ ठाकुर	आदि ब्रह्म समाज कलकत्ता
८४	६४	बाबू महेन्द्र सरकार	डाक्टर कलकत्ता
८५	५	जय प्रकाश	दीवान राजा डुमराव बंगाल हाथा
८६	४०२	प्रोफेसर मेक्समूलर	आक्सफोर्ड इंगलेंड
८७	४०३	प्रोफेसर मोनियर विलियमस	आक्सफोर्ड इंगलेंड

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य श्री स्वामीदयानन्द सरस्वती दिग्विजयार्कीय द्वितीयांके वेद सत्ता विचारो नाम तृतीयो मयूखः ॥३॥

अथ चतुर्थोध्याय प्रारम्भः

आर्यगण पिछले तीन अध्यायों के द्वारा आपको श्रीजी महाराज रचित वेद भाष्य भूमिका का नमूना दिखा चुका कहिये किस प्रकार प्रबल आप्त प्रमाणों से वेदों का माहात्म्य और उनका नित्यत्वादि प्रकाशित किया है धन्य है उनकी इस लोकोत्तर विद्या और परिश्रम को श्री जगदीश्वर उनको पूर्णायु करे जिससे सृष्टि सुधरे॥

अब आपको थोड़ा चमत्कार श्रीजी रचित भाष्यों का और दिखाता हूं यद्यपि यह आरम्भ मात्र ही यहां लिखा गया है तथापि बहुलाभ दायक होगा और इतने ही से समस्त ग्रन्थ की कैफ़ियत और दोनों वेदों का आशय और विस्तार इस ग्रन्थ के अवलोकन करने वालों पर भली भांति प्रकाशित हो जावेगा इतना ही नहीं किन्तु और भी बहुत सी ऐसी आवश्यक बातें विदित होंगी जितनी कि वैदिक मत वालों को जानना परमावश्यक हैं॥

अब देखना चाहिये कि जिस ग्रन्थ के एक मंत्र की व्याख्या पढ़ने से इतना लाभ है तो समस्त के देखने सुनने और पढ़ने से कितना लाभ न होगा॥

अथ ऋग्वेदभाष्यारम्भः

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव ।
यद्भद्रन्तन्न आसुव ॥ ऋ० ५।८२।५ ॥

विद्यानन्दं समवति चतुर्वेद समस्त्रावनाया संपूर्य्ये
शं निगम निलयं संप्रणाम्याथ कुर्वे । वेदन्यङ्के विधु
युत सरे मार्ग शुक्ले ६ भौमे ऋग्वेदस्याखिल गुण
गुणि ज्ञानदातुर्हि भाष्यम ॥ १ ॥

ऋग्वेदीयाध्यायवर्गसङ्ख्या

प्रथमाष्टके		द्वितीयाष्टके		तृतीयाष्टके		चतुर्थाष्टके		पंचमाष्टके		षष्ठाष्टके		सप्तमाष्टके		अष्टमाष्टके	
अध्याय	वर्ग	अध्याय	वर्ग	अध्याय	वर्ग	अध्याय	वर्ग	अध्याय	वर्ग	अध्याय	वर्ग	अध्याय	वर्ग	अध्याय	वर्ग
१	३७	१	२६	१	३४	१	३३	१	[illegible]	१	४०	१	४१	१	३०
२	३८	२	२७	२	३१	२	२८	२	३०	२	५०	२	३३	२	२४
३	३५	३	२६	३	३१	३	२९	३	३०	३	४९	३	२६	३	२८
४	२९	४	२९	४	२५	४	२६	४	३०	४	५४	४	२८	४	३१
५	३१	५	२९	५	२६	५	३०	५	२३	५	३८	५	३३	५	२७
६	३२	६	२२	६	३०	६	२५	६	२५	६	३८	६	२८	६	२९
७	३७	[illegible]	३५	७	२७	७	३५	७	३३	७	३९	७	३०	७	[illegible]
८	२६	८	२७	८	२६	८	३२	८	३६	८	३२	८	२९	८	४०
योग	२६५	योग	२२१	योग	२२५	योग	२५०	योग	२३८	योग	३३१	योग	२४८	योग	[illegible]

आगे मैं सब प्रकार से विद्या के आनन्द को देने वाले चारों वेदों
की भूमिका को समाप्त और जगदीश्वर को अच्छे प्रकार प्रणाम क-
र के सम्बत् १९३४ मार्गशुक्ल ६ भौमवार के दिन संपूर्ण ज्ञान के

देने वाले ऋग्वेद के भाष्य का आरम्भ करता हूं ॥२॥

(ऋग्भिः स्तुवन्ति) इस ऋग्वेद से सब पदार्थों की स्तुति होती है अर्थात् ईश्वर ने जिसमें सब पदार्थों के गुणों का प्रकाश किया है इस लिये विद्वान् लोगों को चाहिये कि ऋग्वेद को प्रथम पढ़ के उन मंत्रों से ईश्वर से लेके पृथ्वी पर्य्यन्त सब पदार्थों को यथावत् जान के संसार में उपकार के लिये प्रयत्न करें ॥

ऋग्वेद शब्द का अर्थ यह है कि जिस से सब पदार्थों के गुणों और स्वभावों का वर्णन किया जाय वह ऋक् और वेद अर्थात् जो यह सत्य ज्ञान का हेतु है इन दो शब्दों से ऋग्वेद शब्द बनता है (अग्निमीळे) यहां से लेकर (यथावः सुसहासति) इस अन्त के मंत्र पर्य्यन्त ऋग्वेद में आठ अष्टक और प्रत्येक अष्टक में आठ २ अध्याय हैं सब अध्याय मिलके चौसठ होते हैं ॥ प्रत्येक अध्याय के वर्गों की संख्या कोष्ठों में लिखे अनुसार जानो और आठों अष्टक के सब वर्ग मिलकर २०२४ दो हज़ार चौबीस होते हैं तथा इसमें दश मण्डल हैं उनके मंत्र आदि की संख्या का बिस्तार आगे लिखे कोष्ठ के अनुसार है ॥

प्रतिमण्डलान्तर्गतअनुवाकादिसंख्या

मण्डलसंख्या	अनुवाक संख्या	सूक्त संख्या	मंत्र संख्या
प्रथम	२४	१९१	१९७६
द्वितीय	४	४३	४२९
तृतीय	५	६२	६१७
चतुर्थ	५	५८	५८९
पंचम	६	८७	७२७
षष्ठ	६	७५	७६५
सप्तम	६	१०४	८४१
अष्टम	१०	१०३	१७२६
नवम	७	११४	११०८
दशम	१२	१९१	१७५४

इन दसों मण्डलों में ८५ पचासी अनुवाक और एक हज़ार अट्ठाईस सूक्त और दस हज़ार पांच सौ बत्तीस मंत्र हैं॥ सब सज्जनों को उचित है कि इस बात को ध्यान में धरलें जिससे किसी प्रकार का कभी गड़बड़ न हो॥

अथादिमस्य नवर्चस्य सूक्तस्य मधुच्छन्दा ऋषिः। अग्निर्देवता। गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः

तत्राद्य मन्त्रेऽग्निशब्देनेश्वरेणात्मभौतिकावर्थावुपदिश्येते

यहां प्रथम मंत्र में अग्नि शब्द करके ईश्वर ने अपना और भौतिक अर्थ का उपदेश किया है॥

अग्नि मीळे पुरोहितं यज्ञस्य देव मृत्विजं म्॥ होतारं रत्नधातमम्॥१॥ यह प्रथम मंत्र हुआ

अग्निं। ईळे पुरः ऽहितं। यज्ञस्य। देवं। ऋत्विजम्। होतारं। रत्नऽधातमम्॥१॥ ये प्रथम मंत्र के पद हुए

पदार्थः-(अग्निं) परमेश्वरं भौतिकं वा। इन्द्रं मित्रं वरुण मग्निमाहु रथो दिव्यः स सुपर्णो गरुत्मान्॥ एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः॥१॥ ऋ०१।१६४।४६ अनेनैकस्य सतः

परब्रह्मण इन्द्रादीनि बहुधा नामानि सन्तीति वेदितव्यम्॥

तदेवाग्नि स्तदादित्य स्तद्वायुस्तदु चन्द्रमाः॥

तदेव शुक्रं तद्ब्रह्म ता आपः स प्रजापतिः॥२॥ य०३२।१। यत्सच्चिदानन्दादि लक्षणं ब्रह्म तदेवाग्न्यादि नाम वाच्यमिति बोध्यम्॥ ब्रह्मह्यग्निः। श०१।४।२।११ आत्मा वा अग्निः श० १।२।३।२ अत्राग्निर्ब्रह्मात्मनोर्वाचकोस्ति।

अयं वा अग्निः प्रजाश्च प्रजापतिश्च॥ श०९।१।२।४२।

अत्र प्रजा शब्देन भौतिकः प्रजापति शब्देनेश्वर श्चाग्निर्ग्राह्यः।

अग्निर्वै देवानां व्रतपतिः। एतद्धि वै देवा व्रतं चरन्ति यत्सत्यम् । श०१।१।१।२५।

सत्याचार नियम पालनं व्रतं तत्पति रीश्वरः। त्रिभिः पवित्रै रपुपोद्ध्य९र्कं हृदा मतिं ज्योतिरनु प्रजानन्॥ वर्षिष्ठं रत्न मकृत स्वधाभिरादि द्यावा पृथिवी पर्य्यपश्यत्॥१॥ ऋ०३।२६।८॥

अत्राग्नि शब्दस्यनु वृत्तेः

प्रजानन्निति ज्ञानवत्वात् पर्य्यपश्यदितिसर्वज्ञत्वादीश्वरोग्राह्यः॥

यास्क मुनिरत्रो भयार्थ कारणा याग्नि शब्द पुरः सरमेतन्मंत्रमेवं व्या
चष्टे ॥ अग्निः कस्मादग्रणीर्भवत्यग्रं यज्ञेषु प्रणीयते ऽङ्गं नयति
सन्नममानोऽक्नोपनो भवतीति स्थौलाष्ठीविर्न क्नोपयति न स्नेहय
ति त्रिभ्य आख्यातेभ्यो जायत इति शाकपूणिरिता दक्ताद्दग्धा
द्वा नीतात्स खल्वेते रकारमादत्ते गकारमनक्तेर्वा दहतेर्वा नीः
परस्तस्यै वा भवतीति ॥ अग्निमीळेऽग्निं याचामी ळिरध्येष
णा कर्मा वा देवो दानाद्वा दीपनाद्वा द्योतनाद्वा द्युस्थानो भवती
ति वा यो देवः सा देवता । होतारं ह्वातारं जुहोतेर्होतेत्यौर्ण
वाभो रत्नधातमं रमणीयानां धनानां दातृतमम् ॥ निरु० ७
१४।१५। अग्रणीः सर्वोत्तमः सर्वेषु यज्ञेषु पूर्वमीश्वरस्यैव प्र
तिपादनात्तस्यात्र ग्रहणम् । दग्धादिति विशेषणाल्लौकिकस्यापि
च । प्रशासितारं सर्वेषामणीयांसमणोरपि । रुक्माभं स्वप्नधीग-
म्यं विद्यात्तं पुरुषं परम् ॥ २ ॥ एतमेके वदन्त्यग्निं मनुमन्ये प्र-
जापतिम् ॥ इन्द्रमेकेऽपरे प्राणमपरे ब्रह्म शाश्वतम् ॥ ३ ॥ मनु०
अ० १२। श्लो० १२२।१२३। अत्राप्यग्न्यादीनि परमेश्वरस्य
नामानि सन्तीति ॥ ईळे अग्निं विपश्चितं गिरा यज्ञस्य साधन
म् ॥ श्रुष्टीवानं धितावानम् ॥ ४ ॥ ऋ० ३।२७।२। विपश्चित
मीळे इति विशेषणादग्निशब्दे नात्रेश्वरो गृह्यते अनन्तवि-
द्यावत्त्वाच्चेतनस्वरूपत्वाच्च ।
अथ केवलं भौतिकार्थग्रहणाय प्रमाणानि । यदश्वं तं पुरस्ताद्-
दश्वपंस्तस्याभयेनाष्टे निवातेऽग्निरजायत तस्माद्यत्राग्निं म-
न्थिष्यन्त्स्यात्तदश्वमानेतवै ब्रूयात् । सपूर्वेणोपतिष्ठते वज्र
मेवैतदुच्छ्रयति तस्याभयेनाष्टे निवातेऽग्निर्जायते । श० २।१।४।१६।

वृषो अग्निः। अश्वो ह वा एष भूत्वा देवेभ्यो यज्ञं वहति। श० १।३।३।२९।३०। वृषवद्यानानां वोढृत्वाद् वृषोऽग्निः॥ तथाऽयमग्निराशुगमयितृत्वेनाश्वो भूत्वा कलायन्त्रैः प्रेरितः सन्देवेभ्यो विद्वद्भ्यः शिल्पविद्याविद्भ्यो मनुष्येभ्यो विमानादियानसाधनसंगतं यानं वहति प्रापयतीति। तूर्णिर्हव्यवाडिति। श० १।३।४।१२। अयमग्निर्हव्यानां यानानां प्रापकत्वेन शीघ्रं नयनकर्तृत्वाद्धव्यवाट् तूर्णिश्चेति। अग्निर्वै योनिर्यज्ञस्य। श० १।४।३।११। इत्याद्यनेकप्रमाणैरश्वनाम्ना भौतिकोऽग्निरत्र गृह्यते आशुगमनहेतुत्वादश्वोऽग्निर्विज्ञेयः। वृषो अग्निः समिध्यतेऽश्वो न देववाहनः॥ तं हविष्मन्त ईळते॥५॥ ऋ० ३।२७।१४। यदा शिल्पिभिरयमग्निर्यन्त्रकलाभिर्यानेषु प्रदीप्यते तदा देववाहनो देवान् यानस्थान् विदुषः शीघ्रं देशान्तरेऽश्व इव वृष इव च प्रापयति ते हविष्मन्तो मनुष्या वेगादिगुणवन्तमश्वमग्निमीळते कार्य्यार्थं मधीच्छन्तीति वेद्यम्॥ (ईळे) स्तुवे याचे अधीच्छामि प्रेरयामि वा। (पुरोहितं) पुरस्तात्सर्वं जगद्दधाति छेदनधारणाकर्षणादिगुणांश्चापितं॥ पुरोहितः पुर एनं दधति होत्राय वृतः कृपायमाणोऽन्वध्यायत्। निरु० २।१२। (यज्ञस्य) इज्यतेऽसौ यज्ञस्तस्य महिम्नः कर्मणो विदुषां सत्कारस्य संगतस्य सत्संगत्योत्पन्नस्य विद्यादिदानस्य शिल्पक्रियोत्पाद्यस्य वा। यज्ञः कस्मात्प्रख्यातं यजतिकर्मेति नैरुक्ता याच्ञो भवतीति वा यजुरुन्नो भवतीति वा बहुकृष्णाजिन इत्यौपमन्यवो यजूंष्येनं नयन्तीति वा निरु० ३।१९। (देवं) दातारं हर्षकरं विजेतारं द्योतकं वा। (ऋत्विजं) यऋतौ ऋतौ प्रत्युत्पत्तिकालं संसारं संगतं य-

जति करोति तथा च शिल्प साधनानि संगमयति सर्वेषु क्रतुषु यजनीयस्तं ऋत्विग्दधृग० अ०३।२।५९ अनेन कर्तरि निपातनम् तथा कृतो बहुलमिति कर्मणि वा। (होतारं) दातारं मादातारं वा (रत्न धातमम्) रमणीयानि पृथिव्यादीनि सुवर्णादीनि च रत्नानि दधाति धापयतीति रत्नधा अतिशयेन रत्ना धारति रत्न धात मस्तम्॥

अन्वयः

अहं यज्ञस्य पुरोहित मृत्विजं होतारं रत्न धातमं देव मग्निमीळे॥

यह प्रथम मंत्र का अन्वय हुआ

भावार्थः अत्र श्लेषा लंकारेणो भयार्थ ग्रहण मस्ती तिबोध्यम्। इतोऽग्रे यत्र यत्र मन्त्र भूमिका या मुपदिश्यत इति क्रियापदं प्रयुज्यतेऽस्य सर्वत्र कर्त्तेश्वर एव बोध्यः। कुतः। वेदानां तेनैवोक्तत्वात् पितृवत्कृपायमाणईश्वरः सर्व विद्या प्राप्तये सर्वजीव हितार्थं वेदोपदेशं चकार यथा पिताऽध्यापकोवा स्व पुत्रं शिष्यं च प्रतित्वमेवं वदेवं कुरु सत्यं वद पितर माचार्यं च सेव स्वानृतं माकुर्वित्युपदिशति तथैवात्र बोध्यम्। वेदश्च सर्व जीव कल्याणार्थं माविर्भूतः। स्व मर्थोऽ चोत्तम पुरुष प्रयोगः। वेदोपदेशस्य परोपकारार्थ त्वात्। अत्राग्नि शब्देन परमार्थ व्यवहार विद्या सिद्धये परमेश्वर भौतिको द्वावर्थौ गृह्यते पुरा आर्यैर्याऽश्व विद्या नाम्ना शीघ्र गमन हेतुः शिल्प विद्या संपादितेति श्रूयते साग्नि विद्यै वासीत्। परमेश्वरस्य स्वयं प्रकाशत्व सर्व प्रकाश कत्वा भ्या मनन्त ज्ञान वत्त्वात्। भौतिकस्य रूप दाह प्रकाश वेग छेदनादि गुणवत्वाच्छिल्प

विद्यायां मुख्य हेतुत्वाच्च प्रथमं ग्रहणं कृतमस्तीति वेदितव्यम्
॥१॥

पदार्थान्वय भाषा

(यज्ञस्य) हम लोग विद्वानों के सत्कार संगम महिमा और कर्म के (होतारं) देने तथा ग्रहण करने वाले (पुरोहितं) उत्पत्ति के समय से पहिले परमाणु आदि सृष्टि के धारण करने वाले और (ऋत्विजं) बारं बार उत्पत्ति के समय में स्थूल सृष्टि के रचने वाले तथा ऋतु ऋतु में उपासना करने योग्य (रत्नधातमम्) और निश्चय करके मनोहर पृथ्वी वा सुवर्ण आदि रत्नों के धारण करने वाले (देवं) देने तथा सब पदार्थों के प्रकाश करने वाले परमेश्वर की (ईळे) स्तुति करते हैं तथा उपकार के लिये (यज्ञस्य) हम लोग विद्यादि दान और शिल्प क्रियाओं से उत्पन्न करने योग्य पदार्थों के (होतारं) देने हारे तथा (पुरोहितं) उन पदार्थों के उत्पन्न करने के समय से पूर्व भी छेदन धारण और आकर्षण आदि गुणों के धारण करने वाले। (ऋत्विजं) शिल्प विद्यासाधनों के हेतु (रत्नधातमम्) अच्छे अच्छे सुवर्ण आदि रत्नों के धारण कराने तथा (देवं) युद्धादिकों में कला युक्त शास्त्रों से विजय कराने हारे भौतिक अग्नि की (ईळे) बार बार इच्छा करते हैं॥ यहां अग्नि शब्द के दो अर्थ करने में प्रमाण ये हैं कि (इन्द्रंमित्रं) इस ऋग्वेद के मंत्र से यह जाना जाता है कि एक सद्ब्रह्म के इन्द्र आदि अनेक नाम हैं तथा (तदेवाग्नि) इस यजुर्वेद के मंत्र से भी अग्नि आदि नामों करके सच्चिदानन्दादि लक्षण वाले ब्रह्म का जानना चाहिये (ब्रह्मह्य०) इत्यादि शतपथ ब्राह्मण के प्रमाणों से-

अग्नि शब्द ब्रह्म और आत्मा इन दो अर्थों का वाची है (अयंवा॰) इस प्रमाण में अग्नि शब्द से प्रजा शब्द करके भौतिक और प्रजा पति शब्द से ईश्वर का ग्रहण होता है (अग्ने॰) इस प्रमाण से सत्याचरण के नियमों का जो यथावत् पालन करना है सोही व्रत कहाता है और इस व्रत का पति परमेश्वर है (त्रिभिः पवित्रैः॰) इस ऋग्वेद के प्रमाण से ज्ञान वाले तथा सर्वज्ञ प्रकाश करने वाले विशेषण से अग्नि शब्द करके ईश्वर का ग्रहण होता है निरुक्तकार यास्क मुनिजी ने भी ईश्वर और भौतिक पक्षों को अग्नि शब्द की भिन्न भिन्न व्याख्या करके सिद्ध किया है सो संस्कृत में यथावत् देख लेना चाहिये परन्तु सुगमता के लिये कुछ संक्षेप से यहां भी कहते हैं यास्कमुनिजी ने स्थौलाष्ठीवि ऋषि के मत से अग्नि शब्द का अग्रणी सबसे उत्तम अर्थ किया है अर्थात् जिसका सब यज्ञों में पहिले प्रतिपादन होता है वह सब से उत्तम है इस कारण अग्नि शब्द से ईश्वर तथा दाह गुण वाला भौतिक अग्नि इन दोही अर्थों का ग्रहण होता है (प्रशासितारं॰) (एतमे॰) मनुजी के इन दो श्लोकों में भी परमेश्वर के अग्नि आदि नाम प्रसिद्ध हैं (ईळे॰) इस ऋग्वेद के प्रमाण से भी उस अनंत विद्या वाले और चेतन स्वरूप आदि गुणों से युक्त परमेश्वर का ग्रहण होता है अब भौतिक अर्थ के ग्रहण करने में प्रमाण दिखलाते हैं (यदश्व॰) इत्यादि शतपथ ब्राह्मण के प्रमाणों से अग्नि शब्द करके भौतिक अग्नि का ग्रहण होता है यह अग्नि बैल के समान सब देशदेशान्तरों में पहुंचाने वाला होने के कारण वृष और अश्व भी कहाता है क्योंकि वह कलाओं के द्वारा अश्व

अर्थात् शीघ्र चलाने वाला होकर शिल्पविद्या के जानने वाले विद्वान् लोगों के विमान आदि यानों को वेग से वाहनों के समान दूर दूर देशों में पहुंचाता है (तूर्णि:०) इस प्रमाण से भी भौतिक अग्नि का ग्रहण है क्योंकि वह उक्त शीघ्रता आदि हेतुओं से हव्यवाट् और तूर्णि भी कहाता है (अग्निर्वै यो०) इत्यादि और भी अनेक प्रमाणों से अश्व नाम करके भौतिक अग्नि का ग्रहण किया गया है (वृषो०) जबकि इस भौतिक अग्नि को शिल्पविद्या वाले विद्वान् लोग यंत्र कलाओं से सवारियों में प्रदीप्त करके युक्त करते हैं तब (देववाहनः) उन सवारियों में बैठे हुए विद्वान् लोगों को देशान्तर में बैलों वा घोड़ों के समान शीघ्र पहुंचाने वाला होता है, । हे मनुष्यो । तुम लोग (हविष्मंतं) वेगादि गुण वाले अश्वरूप अग्नि के गुणों को (ईडते) खोजो इस प्रमाण से भी भौतिक अग्नि का ग्रहण है ॥

भावार्थ भाषा — इस मंत्र में श्लेषालंकार से दो अर्थों का ग्रहण होता है ॥ पिता के समान कृपा करके परमेश्वर सब जीवों के हित और सब विद्याओं की प्राप्ति के लिये कल्प कल्प की आदि में वेद का उपदेश करता है जैसे पिता वा अध्यापक अपने शिष्य वा पुत्र को शिक्षा करता है कि तू ऐसा कर वा ऐसा वचन कह सत्य वचन बोल इत्यादि शिक्षा को सुनकर बालक वा शिष्य भी कहता है कि सत्य बोलूंगा पिता और आचार्य्य की सेवा करूंगा झूठ न कहूंगा इस प्रकार जैसे परस्पर शिक्षक लोग शिष्य वा लड़कों को उपदेश करते हैं वैसे ही (अग्निमीळे०) इत्यादि वेद मंत्रों में भी जानना चाहिये क्योंकि ईश्वर ने वेद सब

जीवों के उत्तम सुखके लिये प्रगट किया है इसी (अग्निमीळे०)
वेदके उपदेश का परोपकार फल होने से इस मंत्र में ईडे यह उत्तम
पुरुष का प्रयोगभी है (अग्निमीडे०) परमार्थ और व्यवहार वि
द्या की सिद्धि के लिये अग्नि शब्द करके परमेश्वर और भौतिक ये
दोनों अर्थ लिये जाते हैं जो पहिले समय में आर्य लोगों ने अश्व
विद्या के नाम से शीघ्र गमन का हेतु शिल्प विद्या उत्पन्न की
थी वह अग्नि विद्या ही की उन्नती थी आपही आप प्रकाशमान
सब का प्रकाश और अनंत ज्ञानवान् आदि हेतुओं से अग्नि शब्द
करके परमेश्वर तथा रूप दाह प्रकाश वेग छेदन आदि गुण
और शिल्प विद्या के मुख्य साधक आदि हेतुओं से प्रथम मंत्र
में भौतिक अर्थ का ग्रहण किया है ॥१॥
आर्य्यगण इसी प्रकार परम प्रबल प्रमाणों सहित (अग्निः पूर्वे)
इस दूसरे आदि मंत्रों का भाष्य [illegible] है ऐसा ही स्वरूप यजुर्वे
द भाष्य का भी जानो जितना [illegible] उसका निदर्शन अवश्य है
उतना आगे देख लीजिये ॥

इति ऋग्वेद भाष्य प्रदर्शनम्

अथ यजुर्वेदभाष्यारम्भः

योजीवेषु दधाति सर्व सुकृतं ज्ञानं गुणैरीश्वर स्तं नत्वा क्रियते परोपकृतये सद्यः सुबोधायच॥ ऋग्वेदस्य विधाय वै गुणगुणि ज्ञान प्रदानुवरं भाष्यं काम्यमशो क्रियामय यजुर्वेदस्य भाष्यं म-या॥१॥

चतुस्त्र्यङ्केन्द्वङ्केर्युतसहितेविक्रमसरे। शुभे पौषे मासे सितदल भविश्वोन्मित तिथौ॥ गुरोर्वारे प्रातः प्रतिपद मतिष्टं सुविदुषा। प्रमाणैर्निर्बद्धं शतपथ निरुक्तादिभिरपि॥२॥

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद्भद्रं तन्न आसुव॥१॥ य०३०।३।

भाषार्थ- अब यजुर्वेद के भाष्य का आरंभ किया जाता है जो निर्गुण गुण पुंज से देत सुकृत विज्ञान। प्रणत पाल जगदीश्वर हि करि प्रणाम तिहि ध्यान॥१॥ ज्ञानदायि ऋग्वेद का भाष्याभीष्ट विधाय। परउपकार विचारि करि शीघ्र सुबोध निधाय॥२॥ शत पथ ब्राह्मण आदि पुनि निघंटु निरुक्त निहारि। यजुर्वेद जो क्रियापर बनौं ताहि बिचारि॥३॥ एक सहस्र नवशत अधिक बिक्रम चौंतीस॥ पौष शुक्ल तेरस तिथी दिन अधीश वागीश॥४॥ विक्रम के संवत् १९३४ पौष सुदि १३ गुरवार के दिन यजुर्वेद के भाष्य बनाने का आरंभ किया जाता है॥ (विश्वानि०) इस मंत्र का अर्थ भूमिका में कर दिया है। ईश्वर ने ऋग्वेद में गुण और गुणी के विज्ञान के प्रकाश द्वारा सब पदार्थ प्रसिद्ध किये हैं उन मनुष्यों को पदार्थों से जिस २ प्रकार यथा योग्य उपकार लेने के

लिये क्रिया करनी चाहिये तथा उस क्रियाके जो जो अंग वा साध न हैं सो सो यजुर्वेद में प्रकाशित किये हैं क्योंकि जब तक क्रिया क रने का दृढ़ ज्ञान न हो तब तक उस ज्ञान से श्रेष्ठ सुख कभी नहीं हो सक्ता और विज्ञाने के ये हेतु हैं कि जो क्रिया प्रकाश अविद्या की नि· वृत्ति अधर्म में अप्रवृत्ति तथा धर्म और पुरुषार्थ का संयोग करना है। जो कर्मकांड है सो विज्ञान का निमित्त और जो विज्ञान कांड है से क्रिया से फल देने वाला होता है कोई जीव ऐसा नहीं है कि जो मन प्राण वायु इंद्रिय और शरीर के चलाये बिना एक क्षण भर भी रह सके क्योंकि जीव अल्पज्ञ एक देशवर्ती चेतन है इसलिये ईश्वर ने ऋग्वेद के मंत्रों से सब पदार्थों के गुण गुणी का ज्ञान और यजुर्वे द के मंत्रों से सब क्रिया करनी प्रसिद्ध की है क्योंकि (ऋच) और (यजुः) इन शब्दों का अर्थ भी यही है कि जिस से मनुष्य लोग ई श्वर से लेके पृथ्वी पर्य्यंत पदार्थों के ज्ञान से धार्मिक विद्वानों का संग सब शिल्पक्रिया सहित विद्याओं की सिद्धि श्रेष्ठ वि· द्या श्रेष्ठ गुण वा विद्या का दान यथा योग्य उक्त विद्या के व्यवहा र से सर्वोपकार के अनुकूल द्रव्यादि पदार्थों का खर्च करें इसलि ये इसका नाम यजुर्वेद है इसमें सब ४० अध्याय और सब अध्या यों के मिलकर १९७५ उन्नीससौ पचहत्तर मंत्र हैं बस यहां से आगे मंत्रों का भाष्य पूर्व प्रदर्शित रीति से चला है॥ इति यजुर्वेद भाष्य निदर्शनम्॥

आर्य्यगण इसी प्रकार के साम और अथर्व वेदों के भी भाष्य बनेंगे कदाचित् कहो कि इन सब वेदों के भाष्य प्रथम ही से बहुत से आचार्य बना गये हैं फिर इन नवीन भाष्य की क्या आवश्यकता

थी तो इस का उत्तर यह है कि निःसन्देह और अवश्य इन वेदों पर प्राचीन काल में ब्रह्मादिक ऋषि मुनियों ने जो व्याख्यान अर्थात् ऐतरेय शतपथ आदि नामों से ब्राह्मण ग्रन्थ बनाए हैं वे सब उत्तम और परतः प्रमाण करने के योग्य हैं परन्तु अब अर्थात् पुराण मत प्रवृत्त भये पीछे उवट रावण सायन महीधर आदि आचार्यों ने अपनी आधुनिक विद्या के अनुसार जो व्याख्यान अर्थात् वेद भाष्य रचे हैं वे अत्यन्त गर्हित और तुच्छ हैं क्योंकि उन्हों ने अपनी तुच्छ बुद्धि और निंदित मत के अनुसार उनका ऐसा घृणित अर्थ लिखा है कि जिससे संसार में अनर्थ फैल गया है इन्हीं को देख ऐसे ही अनर्थ कारक भाष्य यूरुप में प्रोफेसर विलसन और माक्समूलर आदि कई एक विद्वानों ने भी रचे हैं जिनकी प्रवृत्ति से सर्वत्र वेदों पर शंका होने लगी और बहुतेरे लोग वेदों को आधुनिक ग्रन्थ बताने लगे इस महान् अंधकार के मिटाने के लिये परम दयालु पूर्ण प्रतापी श्रीमान् स्वामीजी महाराज ने सनातन रीति के अनुसार यह परम श्लाघ्य वेद भाष्य रचा है जिसके अभ्यास और अवलोकन से वेदों का यथा पूर्व महत्व प्रकाशित होता है इस प्रशंसनीय भाष्य पर भी कितने ही आधुनिक विद्वान पूर्वा पर विचार किये बिना शंका कर बैठे उन सबको श्रीजी महाराज ने अच्छे प्रकार शान्त किया है जो समाधान भ्रान्ति निवारण भ्रमोच्छेदन आदि पुस्तकों के द्वारा प्रकाशित किये गये है वे सर्वत्र मिलते हैं इस लिये उनको छोड़ कर आगे हम उस एक समाधान को उदाहरणार्थ यहां और लिखते हैं जो अगस्त सन् १८७७ ई० में काशी और कलकत्ता कालिजों के संस्कृतज्ञ विद्वान् प्रिन्सीपल आदि की

शंकाओं पर अंग्रेज़ी में लिखा गया था॥

अथोदाहरणम्

सकल विद्वज्जन शिरोमणि श्रीमान् स्वामीजी महाराज कहते हैं कि मुझे वकीलहिन्द और यूनीवर्स्टी कालिज पंजाब के पत्रों से ज्ञात हुआ कि कई एक साहबों ने मद्रचित वेद भाष्य पर प्रतिकूल अनुमति दी है इसलिये मैं उन की शंकाओं का उत्तर क्रम से निवेदन करता हूं प्रथम उन शंकाओं का उत्तर है जो मिस्तर आर ग्रिफिथ ए० मे० प्रिन्सीपल बनारसकालेज ने की है। पांच हज़ार वर्ष के लगभग से वेद विद्या जाती रही महाभारत से पहले इस देश में सब विद्या ठीक२ प्रचारित थीं परन्तु पीछे से पढने पढ़ाने के ग्रन्थ और रीति बिलकुल बदल गई जब से अब तक वही अशुद्ध प्रणाली प्रचारित है यद्यपि कहीं२ के लोग वेदादिक सत्य ग्रन्थों को कंठ कर लेते हैं परन्तु उसके शब्दार्थ को कोई भी नहीं जानता न ऐसे कोई व्याकरणादिक ग्रन्थ अर्थ सहित पढ़ाये जाते हैं जिनसे वेदों का अर्थ हो सके आधुनिक जो महीधर आदि के बनाए हुए वेदभाष्य देखने में आते हैं वे महाभ्रष्ट और अंधकार के बढ़ाने वाले हैं उनके देखने वालों को मद्रचित भाष्य ठीक समझ में नहीं आता मेरा भाष्य शुद्ध वेदार्थ बोधक और प्राचीन भाष्यों के ठीक अनुकूल है वह तभी समझ में आवेगा जब लोग प्राचीन भाष्यादिक ग्रन्थों की सहायता स्वीकार करेंगे मैं ने प्रत्येक मंत्र का अर्थ सत्य प्रतीत होने के अर्थ बड़े प्राचीन आप्त व्याख्यान कारों का प्रमाण बहुत-

स्पष्ट पतेवार लिख दिया है यदि ग्रिफ़िथ साहब ने प्राचीन भाष्य वा मेरे लिखे प्रमाणों और उदाहरणों को पढ़ा होता तो कभी उनको ऐसी विरुद्ध संमति न होती जैसी कि उन ने हाल में दी है उवट सायन महीधर रावण आदि के रचे हुए भाष्य प्राचीन भाष्यों से समस्त स्थानों में विपरीत हैं केवल इन्हीं भाष्यों का उलथा अंग्रेज़ी में विलसन् और माक्समूलर आदि प्रोफ़ेसरों ने किया है इस लिये मैं इनके भाष्यों को भी शुद्ध और न्याय कारी नहीं कह सकता इन्हीं ग्रन्थों के कारण ग्रिफ़िथ साहब आदि लोग भी संदेह मार्ग में पड़े हैं और मुझ को यह कह कर दूषित करते हैं कि स्वामी जी ने अर्थ पलट कर अपने प्रयोजन के सिद्धार्थ दूसरे ही अर्थ नियत किये हैं परन्तु उनका यह तर्क सर्वथा निर्मूल है मैं ने सर्वत्र ऐतरेय और शतपथादि नामक ब्राह्मण ग्रन्थ और निरुक्त तथा पाणिनीय व्याकरणादिक सत्य ग्रन्थोंका प्रमाण देकर प्रत्येक मंत्र का सत्य २ अर्थ लिखा है यदि ग्रिफ़िथ साहिब उसको देखते तो कभी ऐसा न लिखते विचार करता हूं कि उनने मेरा भाष्य बिना ही देखे भाले अपनी मन मानी अनुमति प्रकाशित करदी है॥

मैं नहीं समझ सकता हूं कि क्यों ग्रिफ़िथ साहब मेरा वृथा श्रम समझते हैं जब कि मेरे भाष्यके लेने वाले हज़ार से अधिक बड़े २ सत् पुरुष हैं और प्रत्यह नवीन जनों के निवेदन पत्र मेरी पुस्तक लेने के विषय में बराबर चले आते हैं- मेरे ग्राहकों में से बहुत से अच्छे २ संस्कृतज्ञ और बहुतेरे अंगरेज़ी और संस्कृत में पूरे २ विद्वान हैं ग्रिफ़िथ साहब का यह अंतिम लेख कि वेदों की चर्चा

ओं से बहुत से देवताओं के नाम प्रकाशित होते हैं सो उनकी यह बात मुझको तब प्यारी लगे और विद्वानों के समीप प्रमाणिक ठहरे जब वे उस मतलब की कोई ऋचा मुझको लिख भेजें (अ) यद्यपि वेदों को शीघ्र दृष्टि से देखने से देवताओं के नाम उतने दीख पड़ते हैं जितने कि स्तुति करने वालों के हैं परन्तु पुराने व्याख्यात ग्रन्थों के अनुसार (कि जो ठीक आर्य धर्म के विषयक है) वे अनेक नाम देवता वा मनुष्यों और वस्तुओं के नहीं ठहर सकते अर्थात् वे सब तीन देवताओं ही के नाम से संबंध रखते हैं और फिर वे तीनों नामों की देवता भी प्रथक् २ नहीं हैं अर्थात् वे तीनों नाम एकही परमेश्वर के हैं निघंटु अर्थात् वेदों के शब्द कोश के अन्त में तीन नामावली देवताओं की हैं॥ उन में से पहिली में अग्नि के दूसरी में वायु के तीसरी में सूर्य्य के पर्याय वाची नाम हैं निरुक्त के अन्त भाग में जिसमें केवल देवतों का वृत्तान्त है यह दो बार कथन किया गया है कि देवता केवल तीन हैं (तिस्रएव देवता) इनसे अधिक तर अनुमान सिद्धान्त यह निकलता है कि केवल एकही देवता है यह बात वेद के अनेक वाक्यों से भी सिद्ध होती है और यही आशय निरुक्त और वेद के प्रमाण के अनुसार अति सुगम और संक्षेप रीति से ऋग्वेद के सूची पत्र में वर्णन किया है इससे यह निर्णय होता है कि आर्यों के पुराने धर्म मार्ग की पुस्तकें केवल एकही ब्रह्म को गाती हैं और सूत्रों से भी ऐसाही सिद्ध होता है॥

(ब) वेदों से ज्ञात होता है कि आर्य्य ऋषियों का धर्म मार्ग केवल एक बड़े ब्रह्म के पूजन और श्रद्धा व भक्ति में था जिसको वे

सर्व शक्तिमान् सर्वज्ञ और सर्व व्यापक जानते थे और जिसके संबंधी गुणों को वे अत्यन्त पूजनीय वाक्यों में प्रगट करते थे और वे संबंधित गुण उस की तीन प्रकार की शक्तियां हैं उनमें से प्रथम उत्पादक दूसरी पालक तीसरी संहारक नाम से वर्णन की जाती हैं ॥

(स) इन भांति सत्य ध्यानों से मुझे पूर्ण विश्वास होता है कि चारों वेद एक ही ब्रह्म को गाते हैं जो सर्वशक्तिमान् अनन्त चिरस्थाई स्वयंभू संसार का द्योतक और पालक है मैं इस के संग एक और ऋचा लिखता हूं जिस से एक ही ब्रह्म निश्चित होता है उस से आपकी शंका निवृत्ति होगी खूब जानिये कि आर्य्य लोग स्वाभाविक बुद्धि से सदैव अद्वैतसेवी अर्थात् केवल एक ईश्वर ही को मानते थे ॥

(द) उसी उक्त ऋचा का एक चरण यह है जिससे निस्संदेह केवल एक ही ब्रह्म का निरूपण होता है यद्यपि हम लोग उसको अनेक नाम से आवाहन करते हैं, ऋग्वेद की पहिली और १६४ और ४६ वीं ऋचा को देखो स्पष्ट लिखा है कि उसी एक परब्रह्म को ज्ञानवान् इन्द्र मित्र वरुण और अग्नि के नाम से पुकारते हैं कोई कहते हैं कि वह आकाश में सपक्ष गरुत्मान् है और कोई २ बुद्धिवान् उसी के अग्नि यम मातरिश्वा आदि अनेक नाम मानते हैं ॥

ऋग्वेद में जो प्रथम मंत्र है उसमें अग्नि शब्द आया है उसका उल्था सी ह्च टानी साहब ए० मे० प्रिन्सिपल प्रेसीडेन्सी कालिज कलकत्ता ने आग के अर्थ में अपने उस प्रथमोक्त ध्यान से किया है कि अग्नि भी एक पदार्थ प्रतिष्ठा का वेद में है परंतु अग्नि को तत्व मान कर किसी प्राचीन ऋषि मुनि ने पूजन व आवाहन नहीं किया और

अग्निशब्द का जो स्वाभाविक अर्थ आगका है वह केवल उनवाक्योंमें लिया जाता है जिनमें लौकिक संबंधी बातें हैं परन्तु ऐसे वाक्यों में जहां ईश्वर की स्तुति प्रार्थना निवेदन आदि का प्रसंग होता है वहां अग्नि शब्द का अर्थ परमेश्वर का घटित किया जाता है यह अर्थ कुछ मैंने मिथ्या कल्पित नहीं किया इस प्रकार के युक्तार्थ ब्राह्मण और निरुक्त नामी ग्रन्थों में बराबर वर्णन हो आये हैं ॥

मत पर टानीसाहब की जो यह संमति है कि मैंने जो भाष्य बनाया है वह इस कारण से रचा कि सायन और अंगरेज़ी उल्थाकारों के भाष्य कट जावें अर्थात् अशुद्ध ठहरें सो इस विषय में मैं कभी दूषित नहीं हो सकता हूं अगर सायन ने भूल की है और अंगरेज़ों ने उसको अपना मार्ग प्रदर्शक जान कर अंगीकार कर लिया तो भले करें परन्तु मैं जानबूझ कर भूलका काम नहीं कर सकता परन्तु मिथ्या मत बहुत काल तक नहीं ठहर सकता केवल सत्यही ठहरता है और असत्य सत्यता के सन्मुख शीघ्र धुंमैला हो जाता है पंडित गुरुप्रसाद हेड पंडित ओरियंटल कालिज लाहौर ने यह बात कह करके स्वामीजी के भाष्य में कोई अशुद्धी छापे की कहे सो नहीं मेरे प्रत्येक आशय को दूषित ठहराया है तथापि मैं उनको धन्यवाद देताहूं उनने मेरे भाष्य के छापनेवाले का विश्वास माना यह या थोड़ी बात है। परन्तु मैं कहता हूं कि उस्का भी दोष वे मेराही जानें लेकिन थोड़ा मुंह खोलकर कहें तो कैफ़ियत खुले नहीं तो क्या जान पड़े और जो वे मुझे दूसरे स्थल पर यह दोष लगाते हैं कि अपने पंथ का प्रचार किया चाहता है सो मैं ऐसी बातों को सुन अतिपश्चात्ताप से कहता और समझता हूं कि वे वेद विद्या से बिलकुल अजान हैं

यदि उन्होंने प्राचीन भाष्योंका अवलोकन किया होता तो कभी ऐसा न कहते ॥ और तीसरा कलंक जो वे मुझे यह लगाते हैं कि इन्द्र मित्र और त्वष्टा आदि शब्दोंके अर्थ स्वामीजीने अपनी ओर से गढ़े हैं सो उनकी इस शंका के उत्तर में मैं उनको वेद भाष्य के विज्ञापनका प्रमाण देता हूं और एक प्रति साथही इस उत्तर के ऐसी लगाये देता हूं कि जिसमें उन शब्दों का यथावत् वर्णन है फिर भी इन सब बातों के परिणाम में मुझे निस्संदेह हो यही कहना पड़ता है कि उनमें पुरातन संस्कृत विद्या अत्यन्त ही कम है ॥

चौथा दोष जो वे मेरे व्याकरण में यह आरोपण करते हैं कि परस्मैपद के स्थान में आत्मनेपद लिखा है सो अब मैं इस बात का निश्चय कराने को कि खुद पंडित जी व्याकरणका ज्ञान नहीं रखते कैयट और नागेश आदि ग्रन्थों के कई एक प्रामाणिक उदाहरण पृथक् लिखता हूं और उन स्थलों की नक़लभी हूबहू उनको भेज सक्ता हूं जिससे मेरा क्रिया प्रयोग कैसा शुद्ध है यह प्रतीत यथेच्छ हो जावेगी और मैंने मौके पर पाणिनीय व्याकरणके प्रथमाध्याय के तीसरे पाद का ४७ वां सूत्र भी लिखा है परन्तु विना व्याकरण बोध क्योंकर उनके समझ में आवे ॥

पांचवीं शंका उनको मेरे एक छंद के प्रयोग पर उपस्थित हुई वह अत्यन्त ही हास्य जनक है जो मैं उसका इस संक्षिप्त उत्तर में कुछ वर्णन करूं तो असार विस्तार होगा रहा उनका समाधान सो उसके लिये पैङ्गल सूत्र और उसके भाष्यकार हलायुध भट्ट का एक स्पष्ट प्रमाण पृथक् लिखता हूं उसे देख शान्त होवें ॥

ज्ञात होता है कि पंडित हृषीकेश भट्टाचार्य द्वितीय पंडित

ओरियंटल कालिज लाहौर सर्वज्ञ पंडित गुरुप्रसादजी के ही अनुगामी हुए हैं इससे उनकी शंकाओं का उत्तर वही समझना चाहिये जो पीछे लिख आए हैं (उपचारक) शब्द में उनकी एक शंका पृथक् है सो उन्हें यह बात सुझाने को कि मेरा अर्थ बहुत ही निर्मल है मैं उन्हें केवल पाणिनीय व्याकरण के प्रथमाध्याय के तीसरे पाद के ३२वें सूत्र का प्रमाण देता हूं उसको देख पुष्ट होवें॥

अब रहे पंडित भगवानदास असिस्टेन्ट प्रोफ़ेसर संस्कृत गवर्नमेन्ट कालिज लाहौर सो उनकी कोई नवीन शंका नहीं है इस लिये जो कुछ मैंने ऊपर कहा वही बहुत है वेभी होवें इति॥

आर्यगण इस प्रकार इन सब सशंकितों की शान्तिः पुष्टि स्तुष्टि अस्तु करके श्रीमान् दयानिधि स्वामीजी महाराज ने इस आशय का उल्था अंगरेज़ी में कराय उसकी बहुत सी प्रति छपवा उक्त सशंकितों के सिवाय बहुत से प्रतिष्ठित अंगरेज़ व आर्यों के पास भेज गवर्नमेन्ट को प्रतिज्ञा पूर्वक निश्चय कराया कि मेरा भाष्य यूरोप आदि के भाष्यों से विरुद्ध होने पर भी पुरातन भाष्य सम्मत होने के कारण सर्वत्र आदरणीय होना चाहिये इसके प्रचार से समस्त पाठशालाओं को भी बड़ा लाभ होगा संपूर्ण सत्य विद्याओं की वृद्धि के सिवाय अपरिमित देशोन्नति के साथ अधर्म की निवृत्ति- सत्य धर्म कर्म की प्रवृत्ति और मोक्षान्त सुख की प्राप्ति नितराम होती रहेगी॥ तब से कोई दिग्गज तो चिंघारा नहीं आलोकि बहुत ठौर सुनने में

आई उनको धुतकार भी होगई और होती रहेगी अस्तु ॥ यथाकृतिस्तथाफलम् ॥ हमको अपने काम से काम सो कर्ते हैं अर्थात् आगे इसके आपको आधुनिक आचार्यों के रचित वेद भाष्यों का कुछ निदर्शन दिखलाना बहुत अवश्य है क्योंकि (लोकापवादात् भयम्) अर्थात् लोग कहेंगे कि अपनों की स्तुति औरोंकी निंदा करना जनरीति है सो यहां लेश मात्रकोभी नहीं है हम ज्योंका त्यों दिखला रहे हैं ॥

देखिये महीधराचार्य्य जी की यजुर्वेद भाष्य रचनाको पृष्ठ ७०८ से लेकर ७२२ तक कैसा भ्रष्टार्थ ऋग्वेद ... के मंत्रों का किया है सत्य पढ़िये तो ऐसा असंभव आशय बालभाषणों काभी कभी किसी ने न सुना होगा और आचार्यजी ने तो ग्रन्थही पूरा किया है पोप लोग भी इन्हीं का दम भरते हैं हा कितना खेद ॥

अथ महीधर भाष्यम्॥

गणानां त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनां त्वा निधिपतिꣳ हवामहे वसोमम ॥ आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम् ॥१॥

॥भाष्यम्॥

अस्य मन्त्रस्य व्याख्याने महीधरेणोक्त मस्मिन्मंत्र गणपति शब्दादश्वो वाजी ग्रहीतव्य इति । तद्यथा ।

महिषी यजमानस्य पत्नी यज्ञशालायां पश्यताम् सर्वेषामृत्विजां अश्व समीपे शेते शयाना सत्याह हे अश्व गर्भधं गर्भं दधाति गर्भधं गर्भधारकं रेतः अहं आ अजानि आकृष्य

क्षिपामि त्वं च गर्भधं रेतः आ अजासि आकृष्य क्षिपसि ॥

ता उभौ चतुरः पदः संप्रसारय याव स्वर्गे लोके प्रोर्णुवाथां वृषा वाजी रेतोधा रेतो दधातु ॥२॥

॥ महीधरस्यार्थः ॥ अश्वशिश्नमुपस्थे कुरुते वृषा वाजीति। महिषी स्वयमेवाश्वशिश्नमाकृष्य स्वयोनौ स्थापयति॥

यकासकौ शकुन्तिका हलगिति वंचति। आहन्ति गभे पसो निगल्गलीति धारका ॥३॥

महीधरो वदति।

अध्वर्य्वादयः कुमारीपत्नीभिः सह सोपहासं संवदन्ते। अंगुल्या योनिं प्रदर्शयन्नाह स्त्रीणां शीघ्रगमने योनौ हलहला शब्दो भवतीत्यर्थः। भगे योनौ शकुनिसदृश्यां यदा पसो लिंगमाहन्ति आगच्छति। पुंस्प्रजननस्य नाम हन्तिर्गत्यर्थः।

यदा भगे शिश्नमागच्छति तदा धारका धरति लिंगमिति धारका योनिर्निगल्गलीति नितरां गलति वीर्य्यं क्षरति यद्वा शब्दानुकरणं गल्गलेति शब्दं करोति (यकासकौ०)

कुमारी अध्वर्य्युं प्रत्याह। अंगुल्या लिंगं प्रदर्शयन्त्याह। अग्रभागे सच्छिद्रं लिंगं तव मुखमिव भासते॥

माता च ते पिता च तेऽग्रं वृक्षस्य रोहतः। प्रतिलामीति ते पिता गभे मुष्टिमतंसयत् ॥४॥

॥ महीधरस्यार्थः ॥

ब्रह्मा महिषीमाह महिषि हयेहये महिषि ते तव माता च पुनस्ते तव पिता यदा वृक्षस्य वृक्षजस्य काष्ठमयस्य मंचक-स्याग्रमुपरिभागं रोहतः आरोहतः तदा ते पिता गभे भगे मुष्टिं

मुष्टि तुल्यं लिगमतं सयतं स्थानि प्रक्षिपति स० तवोत्पत्तिरित्य श्लीलम्। लिंगमुत्थाने नालं करोति वा तव भोगेने स्निह्यामीति वदन् एवं तवोत्पत्तिः॥

ऊर्ध्व मैना मुच्छ्रापय गिरौ भार६ हरन्निव। यथास्यै मध्ये मेधतां शीते वाते पुनन्निव ॥५॥

॥ महीधर स्यार्थः॥

यथा अस्यै अस्या वा वाताया मध्य मेधतां योनिप्रदेशो वृद्धिं यायात् यथा योनिर्विशाला भवति तथा मध्ये गृहीत्वोच्छ्रापये त्यर्थः। दृष्टान्तान्तर माह। यथा शीतले वायौ वाति पुनन्धान्य पवनं कुर्वाणाः कृषीबलोधान्य पात्रं ऊर्ध्वं करोति तथेत्यर्थः

यदस्या अं२ हु भेद्याः कृधुस्थूल मुपातसत्।
मुष्का विदस्या एजतो गोशफे शकुलाविव॥६॥

यत् यदा अस्याः परिवृक्तायाः कृधु ह्रस्वं स्थूलंच शिश्नमुपात सत् उपगच्छत् योनिं प्रतिगच्छत् तंस उपक्षये तदा मुष्कौ वृषणौ इत् एव अस्याः योने रुपरि एजतः कंपेते लिंगस्य स्थूल त्वा द्योने रल्प त्वा द्वृषणौ वहिस्तिष्ठत इत्यर्थः। तत्र दृष्टान्तः गोः शफे जलपूर्णे गोः खुरे शकुलौ मत्स्याविव यथा उदकपूर्णे गोः पदे मत्स्यौ कंपेते।

यद्देवासो ललामगुं प्रविष्टीमिन माविषुः। सक्थ्नादेदिश्यते नारी सत्यस्याक्षिभुवो यथा॥७॥

॥ महीधर स्यार्थः॥

यत यदा देवासः देवाः दीव्यन्ति क्रीडन्ति देवाः होत्रादयः ऋत्विजो ललामगुं लिंगं प्राविषुः योनौ प्रवेशयन्तिललामेति

सुखनाम ललाम सुख गच्छति आप्नोति ललामगुः शिश्नः।
यद्वा ललाम पुंड गच्छति ललामगुःलिंगं योनिं प्रविष्टादुत्थितं
पुण्ड्राकारं भवतीत्यर्थः। क्री दृष्टां ललामगुं विष्टीमिनं शिश्न-
स्य योनिप्रदेशो क्रोदनं भवतीत्यर्थः। यदा देवाःशिश्न क्रीडि-
नो भवन्ति ललामगुं योनौ प्रवेशयन्ति। तदा नारीसक्थ्या ऊ-
रुणा ऊरुभ्यां देदिश्यते निर्दिश्यते अत्यन्तं लक्ष्यते। भोग
समये सर्वस्य नार्य्यंगस्य नरेण व्याप्तत्वा दूरुमात्रं लक्ष्यते। इ-
यं नारीतीत्यर्थः॥

यद्धरिणोय वमत्ति न पुष्टं पशु मन्यते। शूद्राय
दर्य्यजारा न पोषाय धनायति॥८॥

॥महीधरस्यार्थः॥

क्षता पालागली माह। शूद्राशूद्र जातिः स्त्री यदा अर्य्य जारा
भवति वैश्यो यदा शूद्रां गच्छति तदाशूद्रः पोषाय न धनायते
पुष्टिं न इच्छति मद्भार्य्या वैश्येन भुक्तासती पुष्टा जातेति न
मन्यते किन्तु व्यभिचारिणी जातेति दुःखितो भवतीत्यर्थः।
(यद्धरिणो०) पालागलीक्षतारमाह। यत् यदा शूद्राः अर्य्याये
अर्य्याया वैश्याया जारो भवति तदा वैश्यः पोषंपुष्टिं नानुमन्य
ते मम स्त्री पुष्टा जातेति नानुमन्यते किंतु शूद्रेण नीचेन भुक्तेति
क्लिश्यतीत्यर्थः।

उत्सक्थ्या अवगुदंधेहि समंजिं चारयावृषन्।
यस्त्रीणां जीवभोजनः॥९॥

॥ महीधरस्यार्थः ॥

यजमानोःश्वमभिमंत्रयते। हे वृषन् सेक्तः अश्व उत् ऊर्ध्वे

सक्थिनी ऊरू यस्या तस्या महिष्या गुदमव गुदोपरि रेतो धे हि वीर्य्यं धारय। कथं तदाह अंजिलिंगं सञ्चारय योनौ प्रवेशय। यों ऽ जिः स्त्रीणां जीव भोजनः। यस्मिन् लिंगे योनौ प्रवेष्टे स्त्रियो जीवन्ति भोगांश्च लभन्ते तं प्रवेशय॥ इति महीधर भाष्य निदर्शनम्॥

आर्य्यगण देखा आपने महीधरभाष्य कहिये जैसा हम ऊपर लिख चुके उससे अधिक निंद्य है वा नहीं। जिन पाठक गणों को संस्कृत में अभ्यास न होवे पैसा टका दक्षिणा देकर किसी नामी पोप देवजी से इसका अर्थ सुन कर महीधरादि भाष्य कारों को साष्टांग नमस्कार करें॥ वाह धन्य हैं उनकी विशाल बुद्धि को उनके सिवाय कौन ऐसा वेदों का गुप्त भाव बतावे। मैंने बहुतेरा साहस इसका भावार्थ प्रकाशित करने में किया परंतु लेखनी न चली॥ यजमान की स्त्री घोड़े के साथ बीच यज्ञशाला में हज़ारों मनुष्यों के सन्मुख अश्वमेध नामके यज्ञमें मैथुन करवा रही है उस समय उससे पुरोहित हंसते और वह भी उनको वैसाही उत्तर देती है इत्यादि जोर अश्लील और असंभव कर्म इन महात्माजीने वर्णन किया है ऐसा कभी कोई मूर्ख मनुष्य भी मुंह से नहीं निकाल सक्ता कहिये कैसे किसी की वेदों पर श्रद्धा होवे और जो ऐसे भाष्य हों तो क्यों वेद सर्वथा सर्वत्र भ्रष्ट न कहावें इसी लिये श्रीमान् वेदोद्धारक महाराजने अति प्राचीन रीतिका नवीन अपना भाष्य रचकर सब जगत का भ्रम और अन्धकार दूर किया है॥ देखिये इन्हीं मन्त्रोंका अर्थ श्रीमान् ने परमेश्वर और राजा प्रजापालन विषयों में कैसा सर्व सत्य प्रमाणों से सिद्ध किया है तभी हम उनको बहुविध धन्य

वाद देते हैं ऐसा ही समझना और करना सबको सदैव उचित है ।

इति श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य दयानन्द सरस्वती दिग्विजयार्कीय द्वितीयांके श्री भाष्यप्रदर्शनं नाम चतुर्थो मयूखः ।

अथ पंचमो मयूखः।

तत्रादौ सामाजिक चरित्रम्

आर्यगण पिछले ४ मयूखों के द्वारा आपलोगों को श्रीमान् सकल विद्या निधान श्री स्वामीजी महाराज की ग्रन्थ रचना भली भांति देखी चुका इतनाही नहीं किन्तु इस एक प्रसंग से बहुत सी परमोपयोगी बातें सब पर प्रकाशित कर दी गई हैं॥

प्रसिद्ध है कि ग्रन्थ रचना जैसी की चाहिये वैसी बिना एकान्त स्थिति के नहीं बन सक्ती परम प्रतापी श्रीमान् बराबर देशाटन करते हुये इस काम को कर रहे हैं सहस्रशः धन्य वाद है उन के पुरुषार्थ को देखिये प्रतिदिन सन्मुख आये हुए सैकड़ों मनुष्यों को यथेच्छ उत्तर देकर तथ्य समझाना नियमित समयपर सभामें जाकर तीन घंटा व्याख्यान देना और ऐसे २ अतुल ग्रन्थो को बनाना ये तीनों देशोपकारी काम सतत करते हैं सिवाय इसके दैहिक आत्मिक और सर्व सामाजिक कार्य भी प्रत्यह यथावत् होता है परन्तु सदैव एक रस और निरालस्य ही देखे गये उन के समीप कोई राजा आवे चाहो रङ्क। वह उत्साही हो वा विरोधी एक हो अथवा अनेक परन्तु हमने श्रीमान् को उन सब के साथ एक ही सा कृपालु और आनंद मग्न पाया॥

विक्रमी सम्वत् १९३२ से लेकर अबतक अर्थात् इस सात वर्ष के भीतर लाखों मील चले किरोड़ों मनुष्यों से मिले और पूर्वोक्त सब ऐसे ग्रन्थ बनाये कि जिनके प्रकाश और प्रभाव से हजारों वर्ष के भूले लाखों मनुष्य सुमार्ग लगे और बम्बई लाहौर फ़ीरोजपुर, अम्बा

र, गुरदलापुर, रावलपिंडी, वज़ीराबाद, गुजरात, गुजरानवाला, भेलम, मुल्तान, लुधियाना, सहारनपुर, रुड़की, मेरठ, मिर्ज़ापुर, दानापुर, पिशावर, देहरादून, मुरादाबाद, फ़र्रुखाबाद, बरेली, रामगढ़, कानपुर, बदायूं, बनारस, प्रयाग, मैनपुरी, आगरा, देहली, एटा, नरसिंहपुर, आदि बहुत से नगरों में आर्य समाज स्थापित हुए और होते जाते हैं॥

सन् १८८० ई० के आरम्भ में पानियर अख़बार वाले ने कुल ५० समाज और तीन लाख आर्य संख्या लिख प्रकाशित की थीपश्चात् एक परिवत्सर के थ्यूसूफ़िकल सुसैटी के सभापति अमेरिका वाले कर्नैल अलकाट साहब ने (जोकि २० मास से इस भरतखंड में आबसे हैं) जहां तहां अपने व्याख्यानों में ६० समाज और वे शुमार उनके अनुयायी वर्णन किये हैं इस से सिद्ध होता है कि इन दिनों ७० समाज और पांच लाख के लगभग उनकी मनुष्य संख्या है आगे जैसा काल बढ़ता जाय वैसी ही ये दोनों संख्या वृद्धिंगत समझते रहो अब रहा इन समस्त समाजों की कर्त्तव्यता का जानना सो आगे लिखे उनके नियमों से प्रकाशित होगा॥

अथ सामाजिक नियमाः

(१) सब सत्य विद्या और विद्या से जो पदार्थ जाने जाते हैं उन सब का आदि मूल परमेश्वर है॥

(२) ईश्वर सच्चिदानंद स्वरूप निराकार अनुपम सर्वाधार सर्वेश्वर सर्वव्यापक सर्वान्तर्यामी अजर अमर अभय नित्य पवित्र और सृष्टि कर्त्ता है उसी की उपासना करनी योग्य है॥

(३) वेद सत्य विद्याओं की पुस्तक है वेद का पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना आर्यों का परम धर्म है॥

(४) सत्य के ग्रहण और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये॥

(५) सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार कर करना चाहिये॥

(६) संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना॥

(७) सब से प्रीति पूर्वक धर्म्मानुसार यथा योग्य बर्त्तना चाहिये॥

(८) अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये॥

(९) प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिये किन्तु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये॥

(१०) सब मनुष्यों को सामाजिक सर्व हितकारी नियम पालने में परतन्त्र और प्रत्येक हितकारी नियम में स्वतन्त्र रहना चाहिये॥

इति नियमाः॥

कहिये आर्य गण कितने निर्मल और श्लाघ्य ये सब नियम हैं यदि ठीक २ इन पर लोग चलें तो क्या करना बाकी रह जाय॥

भाई हो! मनुष्य जन्म तभी सफल होगा जब इन परम प्रशस्त और सर्व मान्य नियमों पर तन मन धन से आरूढ़ होंगे॥ जिन को अपने और अपने देश के कल्याण करने की इच्छा होवे क्षण मात्र अब विलम्ब न करें क्योंकि जितनी देर करेंगे उतनी ही हानि होगी और जान बूझ के हानि कर लेना बुद्धिमत्ता नहीं इस लिये चेतो चेतो चेतो और झट पट छूटो पोपों के जाल से देखो

ऊपर जो हम पांच लाख आर्य संख्या लिख चुके हैं ये कोई इस७ वर्ष के भीतर इतर देशों से नहीं आगये न आकाश से आकर गिरे हैं ये सब के सब तुम्हारे ही देश निवासी इष्ट मित्र और सुजन संबंधी हैं। कामकी बात है कि ये सब लोग मूर्ति पूजक ही थे टुक देखो और सोचो कि ये क्यों अपने बाप दादों की चाल ढाल त्याग क्षण मात्र में और के और हो गए यदि कहो कि अज्ञानता से तो हो नहीं सक्ता क्योंकि वह धर्म ऐसी वस्तु है कि इसका परित्याग सहसा कोई भी नहीं कर सक्ता कहो संबत १९१४ के गदर का क्या कारण है देखो मुसलमानों ने अपने समय में बड़े२ राजा रईस और ब्राह्मणादि कों पर धर्म छोड़ने के अर्थ कैसा२ ज़ोरो जुल्म किया। लोगों ने अपने प्राण गंवाये पर धर्म नहीं छोड़ा पादरी और ईसाई लोग सोचो कैसे२ यत्न करते और नाना प्रकार के लोभ लालच दिखाते हैं परन्तु उनका सब रुपया और प्रयत्न तथा परिश्रम व्यर्थ जाता है यदि हज़ारों में कोई एक निर्बुद्धि वा लालची वा कृतघ्नी वा कुसंस्कारी फंस भी गया तो वह दूसरे ही दिवस रोता और जन्म भर पछताता है जब देखता है कि अब मैं किसी प्रकार इधर नहीं मिल सक्ता तब लाचार हो उन्हीं में कालक्षेप करने लग जाता है ऐसों में जो मूर्ख निर्लज्ज होते हैं वे मनादी भी करने लग जाते हैं परन्तु ऐसे बहुधा वही होते हैं जो अल्पावस्था में किसी प्रकार ईसाईयों के हाथ पड़ गये वा कोई चांडाल जाति के हुए जब इस प्रकार बल वत्तर यह धर्म संकट है तो फिर कहो कि आप लोग क्यों वृथा आर्यों की तर्फ़ से भ्रम में पड़े हो कोई कहे कि आर्य समाजियों में कोई विद्वान् तो अब तक

हुआ ही नहीं सो भी अत्यन्त भूल है नैक नीची (४) दृष्टि करके देखो और इस पुस्तक के पृष्ठ ६१ से लेकर ९९ तक लौटो पलटो कपाट खुल जावेंगे अर्थात् जान जाओगे कि इन समाजोंमें बहुत से ऐसे बड़े २ विद्वान् और वेद शास्त्र के जानने वाले सत् पुरुष मौजूद हैं कि जिनके सन्मुख पोप तो क्या किसी पोप राज कोभी साधारण बात न कहते बनेगी फिर शास्त्रार्थ करना कैसा। सिवाय इसके परमात्मा ने आप हिन्दू नाम धारियों कोभी आंख कान मुंह और बुद्धि दी है थोड़ा काल खर्च कर इन समाजियों के पुस्तक देखो व्याख्यानों को सुनों जी में आवे वह पूछो

नोट (४) थोड़े दिन हुए तब मुक़ाम कलकत्ता में पंडितों की एक सभा हुए थी सभा क्या थी मानों ठीक कुछक लोगों का एक जलसा था कैफ़ियत इसकी यह थी कि जो २ पंडित महेशचन्द्र न्याय रत्न पूछते गए उसउसको सुब्रह्मराय शास्त्री उनकी प्रसन्नता के अनुसार वैसाही साधते गए जैसा कि उक्त पंडितजी महाराज को अभिमत था और शास्त्री जी जो शब्द मुंह से निकालते थे उसको सब पंडित लोग वाह वा जी वाहवा बहुत ठीक बहुत ही ठीक कहते गए बस थोड़ी ही देर में सिद्ध कर मौजूद किया कि स्वामी दयानन्द जीका कहना सब अशुद्ध और पंडित महेश चन्द्र जीका विचार परम शुद्ध है इसपर अख़बार बिरादर हिन्द भी बहुत कुछ उछले उनको जामे से बाहर हुए देख मेरठ समाज ने फिर लौट उसी पिंजरे में किया जिसमें कि वे प्रथम थे॥

ख़ुलासह उसका यह है कि मेरठ समाचार कहता है कि हम मानते हैं एडीटर साहब बिरादर हिंद की इस बातको कि मूर्ति पूजकों में सब नर एकही सांचे के ढले और बेईमान नहीं हैं परंतु यह कहना तब ठीक था जब कोई ईमानदार मूर्ति पूजक स्वामीजी महाराज रचित ग्रन्थों को पढ़ उसे उस प्रकार के इतर ग्रन्थों से मिला कर क़ाइल हो आर्य समाजी न बन गया होता इन दिनों जो विद्वान् हमारे समाजों में हैं सोचैं कि वे कहां से आए उनमें से बहुतेरे स्वामीजी के वेद भाष्य बनने से प्रथम मूर्ति पूजक थे बहुत से ऐसे हैं कि जो उक्त भाष्य रचना से पूर्वही अपनी पूर्ण विद्याबल से वेदों का मुख्यार्थ समझ मूर्ति पूजा त्याग चुके थे परन्तु थे सब कुलपरंपरा से मूर्ति पूजक थे और बहुत काल तक ख़ुद भी मूर्ति पूजा करते रहे कदाचित्

और उनके दिये उत्तरों को एकान्त बैठ विचारो कि कौनसा पक्ष सत्य है और ठीक मार्ग न जानने से अबतक अपने देशवासियों की क्या २ हानि हुई और जो अबभी सत्य मार्गावलम्बी न होंगे तो क्या २ दुर्दशा न होगी परन्तु यह ठीक समझ तभी आवेगी जब पक्षपात छोड़ विचार करोगे और जो पोपों ही की बहकावट में पड़े रहे तो अवश्य सड़ने और बहने कहीं तो भी जरूर जा डूबोगे इस लिये जो किनारे लगना है तो सत्य रूपी नौका में शीघ्र होकर जगद्विख्यात श्रीजी महाराज की आज्ञा पर चलो नहीं तो गंधर्वसेन की कहावत सिर होगी॥ वह कथा इस प्रकार है कि एक नगर के चौकीदार ने प्रातःकाल चौकी पर जाकर रपट दी कि रात सब प्रकार मेरे मुहाल में खैर सल्ला रही पर गंधर्वसेन मर गये जमादार ने शोक के साथ तुरन्त वैसी ही

में सन्देह उत्पन्न हुआ तब विचारार्थ उद्यत हुए निदान जान गए कि मूर्ति पूजा वेद विरुद्ध है यों तो आर्य समाजों में संस्कृत विद्या के सैकड़ों उत्तमोत्तम विद्वान हैं परन्तु नाम मात्र को ऐसे हैं जिनको अपने देश का अलंकार कहना चाहिये जैसे बम्बई आर्य समाज के सभापति श्रीयुत राव बहादुर गोपाल राव हरि देशमुख लंदन के संस्कृत विश्व विद्यालय के मेम्बर श्रीयुत श्याम जी कृष्ण वर्मा हैदराबाद सिंध के रानडे साहब बंबई के कुंटे साहब मुरादाबाद के मुन्शी इन्द्रमणिजी सहारनपुर वाले पं० लक्ष्मीदत्तजी मुल्तान के पं० कृष्ण नारायणजी आदि।

असल मतलब यह है कि जिन खोजा तिन पाया पर गहरे पानी पैठ भला जिन बेचारों ने कभी खोजा ही नहीं न इसका उनको कुछ ध्यान न उतनी विद्या वे क्या पावेंगे बस खंडन हो गया परन्तु और भी सुनों बहुत से मूर्ति पूजक विद्वानों से जिन्हें हम पोप कहते हैं हमको प्रसंग पड़ा जिससे यह हाल खुल गई कि उनको अंतः करण से पूर्ण निश्चय हो गया है कि स्वामीजी जो कुछ कहते व लिखते हैं वह सब सत्य है कितनों ही ने तो स्पष्ट कह भी दिया कि भाई स्वामी जी महाराज की प्रशंसा हमसे हो नहीं सकी परन्तु जो हम अपना ये सिद्धान्त सर्वत्र प्रकाशित करें तो सेर भर आटे से भी जायं [illegible] य सो जुदा पंडित नन्दकिशोर साहब भरतपुरी और पंडित [illegible] साहब

रपट कोतवाल को जा सुनाई उसने बड़े दुःख के साथ दीवान रियासत
तक वह ख़बर पहुंचाई वे वैसेही बहुत उदास दर्बार में पहुंचे
दर्बारियों ने दीवान जीको उदास देख अपनी भी सूरत उनसे अधि
क ग़मगीन बना कर उनसे इस उदासी पूंछा उन्होंने भारी उसां
स खींच वह हाल कह सुनाया सुनतेही दर्बारी लोग झूठ सच
आंसू बहाने लगे यह ख़बर धीरे २ राजा साहब के भी गोशज़द
(कर्णगोचर) हुई सुनते ही बोले हाय बड़ो ग़ज़ब भओ घंटा
भर सन्नाटा रहा फिर हुक्म हुआ कि दीवान जी से कहो कि द
र्बार बरख़ास्त करदें और जल्दी भद्र करने को नाऊ पठवें निदा
न क्या राजा क्या प्रजा सबने ख़ूब भद्र कराया-चार दिन बाद किसी
दूसरे राज्य के कोई अमिनिधि (एलची) आये उन्होंने मुलाक़ात के स
मय सब का कुरूप देख बड़े अदब के साथ पूंछा कि हुज़ूर इस द
र्बार के भद्र का कारण क्या हुआ राजा साहब ने चौंक कर कहा ऐं क्या अ
ब तक आपके यहां गंधर्वसेन की ख़बर नहीं भई वाह तुमारी रियास
त में तो बड़ोई अन्धाधुन्ध है इधर दर्बारियों ने भी हंसकर दाद दी।
बेचारे प्रतिनिधि साहब प्रथम तो कुछ लज्जित से हुए फिर होंठ द

नजीबाबादी यद्यपि अभी मूर्ति पूजक ही हैं परन्तु स्वामीजी की बात को मिथ्या ब
ने वालों से जुट जाते हैं। पंडित रघु लाल साहब का जो कुछ मासिक किसी समाज में
यत हो जाय तो देखो कैसा जी खोलते हैं पंडित श्याम दास जी अमृतसरी साफ़ कहते हैं कि
कोई आकर हमको स्वामी जी की अशुद्धि दिखावें तो सही इसी प्रकार के हम चालीस प
स पंडितों का नाम बता सक्ते हैं कि मूर्ति पूजक तो हैं पर हठधर्मी नहीं कमाऊ वाले का
पृथ्वी सिंह साहब शपथ पुरस्सर करते हैं कि हमसे काशी के स्वामी विशुद्धानंद जी
स्पष्ट कहा कि निः संदेह पंडित दयानंदजी का वेद भाष्य बहुत ठीक सर्वांग शुद्ध
अति मान्य है परंतु ऐसा सबके सामने कहूं तो सारी प्रतिष्ठा धूर में मिल जाय
... बुद्धि ... विचारें कि इस जगत को क्या ... है।

बोले कि हुज़ूर गंधर्वसेन कोन थे राजा साहब बोले "जौ हम का जाने" दीवानजी से पूछो। दीवानजी बोले कि हुज़ूर ठीक हाल तो मोऊ को नहीं मालूम मोसे तो कोतवाल ने कही थी यों होते २ फिर लौट चौकीदार के सिर आई उसने मकुआ धोबी पर उतारी वह रोबरू दर्बार के हाज़िर किया गया पूछा क्योंरे धोबी वाले गंधर्वसेन के मरबे की खबर तूने इस चौकीदार से कही थी वह हाथ जोड़ कर बोला कि हां हुज़ूर कही तो ज़रूर हती कोतवाल ने धमका कर कहा अच्छा तो बताबे को हते बोला हते को कोऊ नहीं बो तो हुज़ूर के गुलाम को गधा हतो। यह सुन तेही भांति निधि साहब ने मुंह को रूमाल लगा कर अपनी हंसी रोकी राजा सहित दर्बार चुप और आंखें तले धरती की ओर – कहिये आर्यगण क्यों यह दर्बार इस प्रकार आज लों बदनाम क्यों इसको मूंछ मुड़ी और क्यों दूसरों के आगे इसको ऐसा लज्जित होना पड़ा। केवल बिन सोचे विचारे काम कर बैठने से वा कुछ और। बस यही दशा पोप प्रचारित धर्म की जानो। सैंकड़ों वर्ष से मुसल्मान् जैनी और ईसाई इनके धर्म की धूल उड़ावें और ये चुप सुनें यों होते २ सर्वत्र वैदिक धर्म दूरित होगया हज़ारों अपने हकीकी भैय्या हाथ से निकल गए अर्थात् वैदिक धर्म छोड़ जैनी मुसल्मान् और ईसाई हो गए और होने को थे। हाय कैसा शोक और अपार यह दुःख था। कि जिस्को श्रीमान् परमदयालु स्वामीजी महाराज ने नर सिंह रूप धारण कर दूर किया नहीं तो न मालूम अब तक और कितने हमारे भाई बेटा हम से न बिछुड़ जाते अर्थात् जितने ये नव्य शिक्षित युवा इन दिनों पढ़ कर स्कूल कालिज छोड़ते उनमें से बहुत कम अबलों घर के रहते खैर गुज़री जो वह बला बूटकोट पतलून और चुरट तकही रही अब तो हमारे १० वर्ष के लड़के ईसाईयों का नाक में दम करते हैं इस लिये कहा जाता है कि यारो चेतो और आंखों से बंधी अपनी पट्टी खोलो अपने गए दिन फिर कर फिरे समझो। देखो अखबारों को वही जैनी आदि लोग अब धड़ाधड़ तुम्हारा वैदिक धर्म स्वीकार कर रहे हैं - कहो यह किसका प्रताप। जिनका तुम अबलौं विश्वास करते और दम भरते हो वे तो डुबो ही चुके थे अर्थात् धन विद्या बुद्धि चतुराई और राज पाट तो खोही चुके थे भाई बेटा और जानहार थे सो बच गए यदि इन पोपों में कुछ सत्य विद्या होती तो अवश्य उसके

द्वारा ये लोग वेद द्वेषियों का मुखध्वंस करते जब कहीं कोई एक भी ऐसा न कर सका तो फिर क्यों कर ये लोग विद्वान् वा बुद्धिवान् कहे जा सके हैं इन्होंने तो वेद रक्षा के ठौर अपनी तोंद रक्षा को मुख्य धर्म समझ रक्खा है जब उसकी रक्षा में बाधा दीखी तभी आर्य समाजों के मिटाने को घुस गये और उनका नाम धर्म सभा रख हाय तोबा मचाने लगे पर आर्यों का सामना करना बहुत दुर्घट होता है दूर से ही ढुहक कर झूठे सन् के गोले चलाने लगे भला क्यों कर ग्राफ़ और बम्ब के गोलों के आगे वे धुआं ठहर सके थे सब उड़ गए और उनके ठौर बड़े २ गार पड़ गए निदान चार दिनकी टर फिस करके सबके सब घायल से घर पड़े हाय टका हाय टका पुकार रहे हैं और उपकार मानने के बदले हज़ारों दुर्वचन श्रीमान् को सुनाते हैं अनेक मिथ्यादोषों से आर्यों की सभा और सभासदों को दूषित करते हैं उनके चलन व्यवहारों और विवाहादि कार्यों में हानि पहुंचाने में अनन्त प्रयत्न भी करते हैं बहुतों ने अपने मेली कुछ आहिलियों को ले उनको पावल (बनावटी) आर्य बनाय उनको सर्वत्र घुमाय उनसे पश्चात्ताप करवाय प्रायश्चित्त देना प्रसिद्ध किया है (५) इस लिये जिस से फिर कोई आगे इन·

नोट (५) देखिये आर्यगण इनका बुद्धि वैचित्र्य। सर्व जगत् के उपकारक सत्य सनातन वैदिक धर्म प्रचारक आर्यों को प्रायश्चित्त के योग्य ठहरावें और नीचे लिखे समस्त दुराचारणियों को लीन कुलीन और परम प्रवीण बतावें। आंखों के अन्धे नाम नैन सुख वा कमल नैन। इस कहावत को भला सिवाय ऐसों के और कौन सत्य कर दिखावें वाह पोपजी वाह धन्य है आपकी विद्या और चतुराई उई। का यह प्रभाव है कि इतर जातीय सभ्यों के सदृश तुम्हारे सजातीय और स्वदेशीय भी तुमसे घृणा करने लगे। तुम लोग तो आयुधारा के किनारे जा लगे परन्तु बड़ा भारी खेद है हमको तुम्हारी सन्तान का सोचो उनकी क्या दशा होगी॥

लोग ब्राह्मणादि उत्तम वर्णों के कहावें परन्तु पशु पक्षियों को स्वहस्त से मारें और खावें तथा होटलों में भी खाते पकड़े जावें और बहुतेरे अफ़ार २

फिर कोई आगे इनके समाजों में न जा मिले और जो हैं वे डर कर इधर आजावें बाज़ ठौर फौजदारी भी कर बैठे अंत को कोई जुर्माना दे घर आए कोई जुर्माना देने और मुचलका लिखने के सिवाय कारा गार सेवी भी हुए यहां तकही नहीं किन्तु ये लोग श्रीमान के

कर मद्य ... ये गांजा चर्स और चंडू की भीद में उड़ावें। महा भ्रष्ट कामी कुचाली और कुपात्रों को आचारी पुजारी और कुलपूज्य कुलाचार्य गुसाईं कह कर उनकी जूठन और भूना व्रत वस्त्र के निचोड़न को महा प्रसाद मानें और पावें और उनको अपनी स्त्रियां समर्पण करें तथा भंगी चमार चूहरे और मुसल्मान मूड़ मुड़ाय संत महंत बन इनके मास खावें और अपने हाथ का इनको भी खवावें तथा यहां से कारे पानी तक रह कर सातोंजात का खाय आवें परन्तु घर आये पीछे ज्यों के त्यों बाजपेई बन जावें जुआ खेलें चोरी करें और कर वावें धनिकों के यहां भडुओं का सा काम देवें नाचें मटकें गावें और नकलें करें तथा उनकी गाली जूती और वेश्याओं की भी दस्तूरी खावें तथापि त्रिवेदी और चतुर्वेदी ही बन कर पुजें बुड्ढों को अबला कन्या व्याह कर रोकड़ लेवें और उनकी राँडी करवाय आयुभर सारा कुटुंब उसका माल खावें परंतु पवित्रही जाने जावें। रूपकी भी ग्लानि विवाहिता को छोड़ चमारी चूहरी और यवनी को उसके स्थान यावज्जन्म बिठालें और विधवा सधवा अपनी पराई मात सम चाची भाभी माई बुआ मौसी गुरुस्त्री और बहन बहू बेटी को भी न बचावें। मंदिरों और तीर्थ स्थानों में पर स्त्रियों को घूरें और दाव पड़ें वहीं धर मारें तथापि भगतजी कहावें। लड़कों के साथ वृथाही अपना अमोल्य वीर्य बहावें अनन्त गर्भ गिरावें और हर्ते के हुए लड़का लड़की और चलते फिरते आदमियों को मार फेंकें पर बुरे न जाने जावें प्रति दिन गंगा तुलसी सालिग्राम उठा कर हज़ारों मिथ्या गवाही देवें और सत्य गवाही आपड़े पर मुंह छिपावें अनेक जाल फंद फरेब कर घातपात करें और अनेक विध लोगों का धन धरती जोरू छीन अपनी कर लेवें पर कदापि दूषित न ठहरें कसाइयों के हाथ गौ बेंचे कट वावें तथापि गंज के अग्नि होत्री और गंगा यमुना के प्यारे पुत्रही बजें और माने पूजे भी जावें ऐसे ऐसे अनेक प्रकार के सब पातकी और महा पातकी पोपों को टका देने के कारण उनके मत में लीन और उन्हें टका न देने के कारण आर्य समाजी अति शुद्ध होने पर भी मलिन ठहराये जावें वाहरे न्याय॥

मारण हरणार्थ भी बहुविध बल कर चुके हैं और यह काम नगर फ़र्रुख़ाबाद तथा काशी आदि कई स्थानों में हुआ निदान जब कोई उपाय काम न आया तब हार मान चुप हुए। इस प्रकार के स्वार्थी कुलघ्न पातकी लोगों के समागम से किसका कल्याण हुआ वा होगा वा होने को है और जो ऐसे लोग सभ्य कहावें तो कहिये राक्षस किनका नाम धरा जावे मूर्ति पूजा को परम धर्म बतावें परन्तु उस मत के पुष्टि करने वालों पर उस विषयक कोई विपत्ति आ पड़े तो कभी उसके सहायक न होवें देखो मुरादाबाद के मुंशी इन्द्रमणिजी पर पार साल मुसल्मानों ने कैसी विपत्ति ला डाली थी कि जिस में भरत खंड भर में हिल चल पड़ गई व था उन पर ५००) रुपया जुर्माना हुआ सैकड़ों रुपया मालियत के पुराण और मूर्ति पूजा पुष्टि करके उनके बनाये हुए सब ग्रन्थ चलाये गये परन्तु किसी पोपोक्त धर्म सभा वाले ने उनकी मदद न की धन देना तो दूर तन वा मन तक किसी ने उस तरफ़ न लगाया॥ आर्य समाज फ़र्रुख़ाबाद ने एक प्रार्थना पत्र अपनी गवर्नमेंट को इस विषय में न्याय होने के लिये लिखा था उस पर समस्त आर्य समाजियों के हस्ताक्षर हुए पीछे विचार हुआ कि इस पत्र पर पोप धर्म सभा वालों के भी हस्ताक्षर हो जायं तो अच्छा है निश्चय है कि वे लोग कर भी देवेंगे क्योंकि यह अनर्थ वास्तव्य में उन्हीं के मत पर है परन्तु विचार हीनों ने हस्ताक्षर न किये मुख्य सभासद ने वह पत्र द्वितीय सभासद के पास ले जाने को कहा द्वितीय ने तृतीय के इसी प्रकार सब पंचो ने पत्र दर्शन करके उलटा दिया एक साहब इस सभा के पंच तो पत्र देख ऐसे चौंके [illegible]

था चट पीछे हट दोनों हाथ समेट कर बोले कि मुझको इससे कुछवा स्ता नहीं चाहो हिन्दू मरें चाहो मुसल्मान् ॥

कहिये भ्रातगण इसीका नाम धर्म सभा होता है यदि इस समय आर्य समाज सर्वत्र बन गये होते तो इस न्यायकारी गवर्नमेंट के भी राज्य में यवनों के हाथ से भरत खंड का धर्म बचना अति कठिन होजाता अब यहां और कुछ विस्तार लिखने की अवश्यकता नहीं क्योंकि हज़ारों अखबारों के द्वारा यहां से विलायत तक प्रसिद्ध होचुका है कि सब आर्य समाजों से हज़ारों रुपया चंदा एकत्र हुआ और तीन दर्जे तक यह मुकद्दमा आर्य समाजियों ने तन मन धन से पहुंचा कर मुसल्मानों से विजय प्राप्त की यद्यपि इस प्रबल चिन्ता में एक वर्ष से अधिक दिन व्यतीत तो हुए परन्तु भरत खंड वासियों का धर्म रहा यदि किसी प्रकार यहां मनोरथ सिद्ध न होती तो अवश्य यह मुकद्दमा लंदन पहुंचाया जाता ॥

अब कहें सत्य धर्म रक्षक विचार शील लोग कि आर्य समाजों की स्थिति से कैसा क्या लाभ अपने देश को हुआ और होगा सैकड़ों बल्कि हज़ारों वर्ष पीछे यह एक नया ऐक्यता का उदाहरण हाथ आया ॥

मैं लिख चुका हूं प्रथम खंड के प्रथम मयूख में कि वेदों की आज्ञानुसार सर्वत्र सभाओं का नियत होना परमावश्यक है क्योंकि ऐक्यता जो देशोन्नति की भारी जड़ है वह बिना ऐसी सभाओं के ठहर नहीं सक्ती और देशोन्नति अर्थात् संसार का उपकार करना इन समाजों का मुख्य उद्देश्य है ऐसा इन समाजों के छपे नियम में भी स्पष्ट लिखा हुआ आपको दिखा चुका फिर यह कब हो सक्ता था

कि आर्य समाजी देषा पर आती विपत्ति देख धर्म सभा वालों की नाई अलग होजाते और जो ऐसा करते तोउन का भीधर्म बनावटी कहा जाता और जो धिक्कार अब मूर्ति पूजकों पर चारों ओर से पड़ रहा है उससे अधिक इनपर पड़ता और जब का आगे चूकेंगे तब पड़ेगा भाई हिन्दू लोगो यह मुन्शीजी वाला प्रसं कोई सामान्य बात नहीं थी न जाने उस समय आप लोगों ने क्यों चूड़ीपहन लीं लज्जित हो अब भी लज्जित हो और आगे को चेतो। यद्यपि प्रसिद्ध है कि तुम्हारा उक्त धर्म सब जाल और सरासर बनाव है तथापि धर्म इस नाम पर आर्य समाजी झुकपड़े हज़ार आर्य समाजियों को जुदा समझो लाख गाली दो और उनकी हानि करने में अनन्त यत्न भी करो परन्तु वे कभी तुमसे बदला नहीं ले सक्ते हैं तो तब जब वे तुमको संसार से बाहर समझें निश्चय रक्खो अवश्य निश्चय रक्खो वे लोग तुमसे पेट भरू और स्वार्थी न हीं हैं वे जो कुछ तुम लोगों के विषय में लिख कह रहे हैं वह सब तुम्हारे ही मंगलार्थ कह रहे हैं वे तुम्हारे अत्यंत शुभचिन्तक हैं जैसे रोगी और कुचालियों को कुपथ्य और कुचाल से रोकने वाले वैद्य मा बाप और मित्रादिक बैरी जान पड़ते हैं वही हाल तुम अपना और उनका जानो और याद रक्खो कि जैसे बह के हुए लड़के सिड़ी और नशेलों को सूधी और हित की सब बातें विपरीत सूझ पड़ती हैं परंतु उक्त दोषों के उतरे पीछे वे पछताते हैं वैसे तुम लोग भी किसी दिन शोक करेंगे, देखो कितने प्रकार से तुमको सब ठीक२ हाल लिख समझाया पर बनेगी तब जब तुम भी कुछ सोचोगे॥ हे जगदीश्वर तू हमारे इन सब हिन्दू नामधारी भाइयों को शुद्ध बुद्धि और

सुदृष्टि दे जिस से इनको हितकी सूझे और जे अपनों को अपना समझें। बंधुगण जैसे थोड़े २ भेद के कारण होगए हैं दो दो भेद जिनके ऐसे मुसलमान और अंगरेज़ लोग आपस में एक दूसरे से विरोध रखकर भी स्वदेश का हितही चाहते हैं और बाहर वालों के लिये दोनों प्रकार के यवन वा अंगरेज़ एक हो जाते हैं वैसा तोभी तुम बाहर वालों के लिये आर्यों के साथ अपना बर्त्ताव कर रक्खो फिर देखो कि इतने ही से कितना सुख और लाभ तुमको होता है सारांश यह है कि आर्य समाजियों के दश नियमों में से उतने नियम तुम चुन कर स्वीकार करलो जितने में प्रस्तुत जिसको तुम स्वधर्म जान रहे हो वह तुम्हारा सधा चला जावे॥ देखो गोरक्षा में सब आर्य समाजियों ने कैसा धन चन्दा करके एकत्र किया है और कैसे २ उत्तम नियम उस काम के प्रबन्ध के लिये बांध रहे हैं तुम लोग भी उसको परम धर्म समझते हो फिर क्या कारण है जो तुम उस काम में अपना उत्साह नहीं प्रकाशित करते और क्या कारण है जो तुम जानबूझ कर इस गोरक्षिणी सभा में मुसलमान और ईसायों की भांति इन आर्यों से जुदे हो तमाशा देख रहे हो क्या यह बात भी तुमको लज्जित नहीं करती कहांमानो ऐसे अनेक कलंकों से कलंकित तुम हो रहे हो इस लिये कदापि इन आर्यों से जुदाई जतलाना तुमको शोभा नहीं देता इन कारणों से तुमको अटल दुःख भोगना पड़ेगा अतएव दूरदर्शी तुम्हारे परम मित्र ये आर्य लोग तुमको बारंबार चिताते हैं जब तक तुम ठीक मार्ग पर न आओगे तब तक आर्य लोग बराबर दोष तुम्हें दर्साते रहेंगे इसका कदापि तुमको बुरा न मानना चाहिये

स्मरण रक्खो कि इन आर्य लोगों के लाभ और मुख्य कर्तव्यता की हानि उस भांति होती है जैसे किसी गृहस्थ को उसके किसी भाई व बेटा के पागल हो जाने से होती हो अर्थात् जैसे वह गृहस्थ दिन रात उस पागल की सम्हाल के कारण अपना रोज़गार हाट आदि काम यथेच्छ नहीं कर पाता केवल उसी की दुरुस्ती की चिन्ता में मग्न रहकर उसके उपाय सोचा करता है। वैसे ही ये लोग तुम्हारी चिन्ता में रहते हैं तो क्या तुमको इनका उपकार नहीं मानना चाहिये। कहाती यह है (सन्त स्तृणोत्तारणा मुक्तमांगा त्सुवर्णकोत्यर्पणामामनंति॥ प्राणव्यये नापि कृतोपकाराः खलाः पुनर्वैरमिवोद्वहन्ति॥१॥) कि सज्जन लोग अपने सिर से तिनका उतार फेंकने वाले का उपकार किरोड़ सुवर्ण मुद्रा दिये के बराबर मानते हैं परन्तु दुर्जनों की लीला ही जुदी है अर्थात् वे लोग अपने ऊपर प्राणों तक खो देने वालों से उस काम के बाद बैर ही मानने लग जाते हैं॥

कहिये बुद्धिवान् को उक्त दो प्रकारों में से क्या करना उचित। हमने स्वनेत्रों से देखा कि एक प्रतिष्ठित आर्य सभासद ने सुना कि फलां रईस साहब की आज कुछ गड़बड़ सी हुई जाती है उसी दम कहला भेजा कि घबड़ाए नहीं मैं हाज़िर हूं फिर वैसा ही कर दिखाया हालांकि रईस साहब पूर्व से ही इनके भारी ऋणी और हिन्दू धर्म सभा के नामी खम्भ थे बल्कि सभा जब तक उन्हीं के स्थान पर हुआ करती थी॥ परन्तु इससे क्या। समय निकल गया, लाला साहब भी कुछ घाटे में न रहेंगे परंतु उदाहरण हो गये ऐसा करना सब को उचित है परंतु वैसा कदापि कोई न करे जैसा कि उक्त रईस साहब के किसी विश्वासु मित्र पोप सभा के दूसरे खम्भ ने किया हालांकि बड़े भक्तों में से हैं दे-

लिये एक प्रसंग में दो उदाहरण उपस्थित होगये जिन में से एक की निन्दा दूसरे की स्तुति सर्वत्र नगर में होरही है ॥

आर्यगण इस प्रकार के सर्वोत्तम सर्व मान्य आर्य समाजों के नियम और उपनियम हैं कि जिन के थोड़े ही दिन के प्रचार से ऐसे सैकड़ों एक से एक बढ़कर उदाहरण वर्णन में आसक्ते हैं जिस समय परम कृपालु श्रीमान् ने ये प्रशंसित नियम रचे थे निश्चय था कि बहुत शीघ्र हमारे सब देशनिवासी स्वीकार कर लेवेंगे और अवश्य कर भी लेते परंतु बेचारों को पोप देवों ने ख़राबी में डाल रक्खा है। पोप भी क्या करें जिन पर हो पेट देव सवार ॥

भाई आर्य समाजियो भूख तो आप साहबों को भी लगती होगी फिर क्या वजह जो गौ रक्षा में इस प्रकार धूम धाम पर इन से नहीं किसी को कुछ काम। इसवजह इनकी ओर से आंख बंद होना न चाहिये देखो परमेश्वर का नाम गो ब्राह्मण हितकर है अतः गौ और ब्राह्मण का बराबर पद है अंतर है तो केवल इतना कि वह पशु ये नर। तो अवश्य हुआ कि पशु रक्षा से मनुष्य रक्षा प्रथम कीजाय (१) मनुष्यों में भी उनकी रक्षा अवश्य है जिन की उपजीविका लिखना पढ़ना हो (२) लिखने पढ़ने वालों में से भी वे विशेष ग्राह्य हैं जिनकी सत्य विद्या में अभिरुचि हो (३) उनसे अधिक वे रक्षणीय हैं जिनकी प्रकृति निर्मल हो (४) ये सब चार प्रकार के मनुष्य हुए। प्रथम को छोड़ा तो रहे तीन, उनमें से प्रत्येक के उत्तम कनिष्ठ नाम के दो २ भेद करने से छः प्रकार हो जावेंगे इनमें छुटे हुए को फिर मिला लेने से सब मनुष्य सात दर्जों में हो जावेंगे उनमें से जिन्हें पेट देव सता रहा हो उनकी रक्षा अवश्य मेव होनी चाहिये

उसका उपाय भी सोचा जावे और वह यथा योग्य अर्थात् जैसे को वैसा हो इन दिनों लिखने पढ़ने वालों को कहीं २ कुछ २ सुबीता है परन्तु नहीं है लोगों का जिन को भिक्षुक वृत्ति कहते हैं। उनके लिये कर्म उपासना और ज्ञान इन तीनों कांडों के साधक छोटे बड़े सत्य धर्म प्रचारक ग्रन्थ बनवाकर विज्ञापन दिये जावें कि इस बरस में वा सदैव चैत्री श्रावणी और कार्तिकी को तीन बार नीचे लिखे पुस्तकों में भिक्षुक ब्राह्मणों की परीक्षा होगी जो उसमें उत्तीर्ण (कामयाब) होंगे उनको इस २ प्रकार पारितोषक (इनाम) और सनद मिलेगी और फिर सनद वालों से आर्य लोग अपने यहां वेद विहित १६ षोड़श संस्कार और होम हवनादिक कर्मों का काम लेवेंगे और मिठाई भी खिलावेंगे, यथा कार्य दक्षिणा भी होगी- सनद वाले ब्राह्मण लोग खुद भी शुद्ध पवित्र और सत्य परायण रह कर दोनों काल संध्या वंदनादि नित्य और नैमित्तिक तथा उक्त संस्कारादि कर्म सदैव प्रीति पूर्वक करते देखे जावें ऐसा न हो कि बजाई ढोलक और हुई पसनों वा मुड़न ॥

ऐसे अनेक काम उनके लिये आर्य लोग सोचें और उनका सन्मान प्रतिष्ठा उनकी योग्यतानुसार करें जिससे उनका चित्त शांत हो और वे दुर्गा सप्ताह और सत्य नारायण आदि कथाओं को भूलें और आपके समाजों को सराहें। ऐसा होने से एक लड़ाई फ़तें की कहावत होगी अर्थात् पुराय और पुरुषार्थ दोनों सधेंगे। अन्यथा आप लोग कुछ नहीं कर सकेंगे सदा विघ्न ही होता रहेगा और सुखके पलटे सदैव शोका कुल रह कर यही कहोगे कि हाय बहुतेरा सिर मारा पर इन दुष्टों के मारे दाल नहीं गलती। इसलिये

वह काम कीजिये जिस्में आप की दाल गले - कदाचित् कहो मान और गौर व उन्हीं का किया जाता है जिनके गुण और काम वैसे होते हैं ये लोग तो बड़े ही कृत्रिमी और मिथ्यावादी हैं। ब्रह्मजानाति ब्राह्मणः। ब्राह्मण वह जो ब्रह्म अर्थात् वेद वा ईश्वर कोजाने सो यह कहना आप लोगों का बहुत ठीक परन्तु कहिये तो सही कि स्वदेश में ऐसी कौनसी पवित्र जाति रही है जो अपने रोज़गार में इन दोषों से लिप्त नहीं और जो कहा कि " ब्रह्मजानाति ब्राह्मणः " सो ऐसी व्युत्पत्ति क्षत्रिय आदि शब्दों की भी है जैसे " क्षतात् त्रायते सो क्षत्रियः " अर्थात् क्षत्रिय वह जो सबको दुःखों से बचावे जब ऐसा कोई क्षत्रिय भी नहीं दिखाई देता और न कोई अन्य जाति तो फिर केवल ब्राह्मणों पर ही लक्षणा करनी व्यर्थ है अभी तो अपना सब देश ही बिगाड़ में है सबके संगये भी सुधर रहेंगे फिलहाल उनकी नींद चौंकने दो, और आप उनके भूख की फ़िकर करो क्योंकि भूखा सिवाय पाप और कुछ नहीं कर सक्ता ऐसा अनुभव है और कहा भी है " बुभुक्षितः किन्न करोति पापं " अर्थात् वह कौन पाप है जिस को भूखा नहीं करता। अब कहोगे कि आपने बहुत ठीक सिद्ध किया परन्तु क्या करें ऐसों के पालने और मानने में स्वामीजी की आज्ञा नहीं पाई जाती। वाहजीवाह। यह तो आपने ख़ूबही कहा। भाई आर्यो कभी स्वामीजी महाराज का ऐसा विचार ध्यान में मत लाओ। मैं लिख चुका हूं प्रथम खंड के द्वितीय मयूख में कि स्वामीजी महाराज का प्रथम हेतु यही था कि ये समझें और इनको पूर्ण लाभ हो तथा इन्हीं के द्वारा सारी सृष्टि सुधरे परन्तु " प्रतिकूले हरौ कां वा दशां नाप्नोति व द्युमान " अर्थात् हर रूठे तो क्या बाक़ी

रहे। सोभाबर्ई इनकी ने इनको सुपथ न लगने दिया। नहीं तो नमालूम अवलों इनमें से कोन कैसे गुणवान् व धनवान् न हो जाते अस्तु ,, गतं न शोचामि,, अबसेही सही। बस भाई ब्रह्म वर्ग, मैं बहुत कुछ आपकी ओर से वकालत कर चुका और इस वक्त आप को डिग्री भी दिलादी लेकिन् बशर्त नेक चलनी आपकी यह रियासत क़ायम रहेगी वर्नह मिस्ल मल्लारि राव गायक वाड़ के ज़ब्रन् व क़हरन् बेद़खल करदिये जाओगे इसलिये आपका शुभ चिन्तक आप सबको प्रथक् २ हाथ जोड़ बारंबार नमस्कार पूर्वक प्रार्थना करता है कि आप लोग अपने २ पुराने आदि पुरुषों का नाम अर्थात् गोत्र (ख़ान्दान) एक बार याद कीजिये और फिर विचारिये कि वे कैसे थे और उनकी सन्तान हम कैसे हैं और उनकी कृति वा आचरण क्या थे और हमारे क्या हैं तो आपको निश्चय हो जावेगा कि धरती और आस्मान का अंतर है केवल इसी कारण कि वे जिस शुद्ध सनातन वैदिक मार्ग पर चलते थे आप नहीं चलते। फिर कहिये आपका मान गौरव और प्रतिष्ठा वैसी क्योंकर हो सक्ती है जैसीकि आप चाह रहे हो। भला बिना गुड़ आदि ना दृश्य पदार्थ के कभी किसी ने शर्बत कर पिया है कभी नहीं कभी नहीं तो बस अब आप लोग वृथा बंचित न होकर आगे लिखी ग्रन्थनामावली को देख अर्वाचीन ग्रन्थों का प्रचार एक साथ उठा कर प्राचीन ग्रन्थों को देखभाल अति पूर्ण प्रवीण हूजिये जिससे कामना चतुष्टय आपके सुशोभित हो जावे॥ नरजन्म पाकर जिसने सत्यासत्य विचार न किया वह आत्मघातक है संसार में किसी का आत्मा असत्य नहीं है चोर चुराकर चोरी करता है और किसी से अपना

भेद नहीं कहता परन्तु मन में चोरी करना सदैव क़बूलता रहता है। ऐसे सत्य स्वरूप आत्मा को जो असत्यों में सानता है वह उत्तमोत्तम भोजन को हलाहल मिला कर खाता है इस प्रकार रस में विष मिलाना कभी किसी बुद्धिमान् को उचित नहीं सदैव सबको अपने सत्य स्वरूप आत्मा को सब सत्य कामों से युक्त रखना चाहिये अर्थात् सत्य कहे सत्य सुने सत्य करे सत्य पढ़े और सत्य ही को माने और पूजे। देखो जैसी कि धर्म की ग्लानि अब देखते हो वैसी कोई तेरह सौ वर्ष से अधिक दिनों की बात है जब भी होगयी थी उन्हीं दिनों परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रीमान् स्वामी शंकराचार्य जी महाराज ने वैदिक धर्म को फिर कर स्थापित करने के लिये बड़ा परिश्रम उठाया था परंतु परम शोक बात यह हुई कि वे पूर्णायु न हुए अर्थात् केवल ३२ वर्ष की आयु में चल बसे इसी से उनके पीछे जल्द ही फिर वैदिक मार्ग में गड़बड़ा चौथ पड़ गई अर्थात् जिन मिथ्या मतों का उन्होंने खंडन किया था वे सब फिर हरे होगये और बहुत से रामानुजी वल्लभकुली आदि मत और नए उत्पन्न हुए उन सब पूर्वापरों का नाम आगे देख मिलेगा जिन दिनों श्रीमान् स्वामी शंकराचार्य जी महाराज खंडन मंडनादि में प्रवृत्त थे उन दिनों अब की अपेक्षा बहुत सी बातों का सुबीता था प्रथम तो यह कि इस देश में ईसाई व यवनादिकों का कहीं कुछ दाखल न था दूसरे सब राजा लोग स्वदेशी थे उनमें से बहुत से आचार्य जी के सहायक थे तीसरे इस देश निवासियों में इस प्रकार झूठ जाल फंद फ़रेब और पक्षपात न था जैसा कि अब देखा जाता है उस समय यदि कोई मतवादी हार पीछे हठ वा दुराग्रहादि से उपदेश नहीं मानता था उसको राजगण मना

छोड़ते थे ऐसा प्रबंध था॥ तात्पर्य वह समय ऐसा था कि जहां उक्त आचार्यजी पहुंचे तहां उन्होंने लोगों को उपदेश किया जिसमें जितना पांडित्य हुआ उतनी उसने आचार्यजी महाराज से बहस की जब न चल सका तब गिड़ गिड़ा कर उसी दम चरणों में गिर पड़ा और तुरंत सत्य मार्गावलम्बी हुआ ऐसा लेख शंकर दिग्विजय में सर्वत्र है उसकी एक कथा यहां भी आगे उदाहरणार्थ लिखी है उक्त ग्रन्थ सबका सब संस्कृत में है परंतु कृपा की भाषा भी लिख दी है॥

आर्यगण देखिये वह उदाहरण कैसा चित्त को समाधान पहुंचाता है अर्थात् उससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि श्रीमान् स्वामी शंकराचार्यजी महाराज और श्रीमान् स्वामी दयानन्दजी महाराज के कामों में तिलमात्र की कमी वा बेशी नहीं है परन्तु हाय समय में तो धरती आकाश कासा अंतर हो गया उस समय जहां लोगों को अपनी बात मिथ्या समझी और वे तुरन्त शरण हुए फिर जो कहा वह किया और अबका बिपरीत हाल तो सब प्रसिद्ध ही है यह सब खराबी केवल सत्य विद्या न होने के कारण हो रही है सो अब उस विद्या की पहिचान के लिये वेदादि सब सत्य शास्त्रों और ग्रन्थों के नाम लिखे जाते हैं॥

मनुष्य लोग वेदार्थ जानने के लिये अर्थ योजना सहित व्याकरण[१] अर्थात् अष्टाध्यायी धातुपाठ उणादिगण गणपाठ महाभाष्य। शिक्षा कल्प[२] निघंटु व निरुक्त[३] छंद[४] और ज्योतिष[६]। ये छः वेदों के अंग, मीमांसा[१] वैशेषिक[२] न्याय[३] योग[४] सांख्य[५] और वेदांत[६]। ये छः शास्त्र जो वेदों के उपांग। अर्थात जिनसे वेदार्थ ठीक

जाना जाता है तथा ऐतरेय[1] शतपथ[2] साम[3] और गोपथ[4]। ये चार ब्राह्मण, इन सब ग्रन्थों को क्रम से पढ़ के अथवा जिन्होंने उन सम्पूर्ण ग्रंथों को पढ़ के जो सत्य २ वेद व्याख्यान किये हों उनको देख के वेद का अर्थ यथावत् जान लेवें क्योंकि (नावेदवित्) वेदों को नहीं जानने वाला मनुष्य परमेश्वरादि- सब पदार्थ विद्याओं को अच्छे प्रकार से जान सकता और जो २ जहां २ भूगोलों वा पुस्तकों अथवा मन में सत्य ज्ञान प्रकाशित हुआ है और होगा वह सब वेदों में से ही हुआ है क्योंकि जो २ सत्य विज्ञान है सो २ ईश्वर ने वेदों में धर रक्खा है इसी के द्वारा अन्य स्थानों में भी प्रकाश होता है और विद्या के बिना पुरुष अंधे के समान होता है इससे सम्पूर्ण विद्याओं के मूल वेदों को बिना पढ़े किसी मनुष्य को यथावत् ज्ञान नहीं हो सक्ता इसलिये सब मनुष्यों को वेदादि शास्त्र अर्थ ज्ञान सहित अवश्य पढ़ने चाहियें ऐसी आज्ञा श्रीमान् जगद्गुरु श्री स्वामीजी महाराज की सब मनुष्यों के वास्ते है जिनको अपने श्रेय की पूर्ण इच्छा होवे शीघ्र स्वीकार करें॥

विदित हो कि मंत्रभाग की चार संहिता कि जिनका नाम वेद है वे सब स्वतः प्रमाण (६) कहे जाते हैं और उन से भिन्न ऐतरेय शतपथ आदि जो प्राचीन सत्य ग्रन्थ हैं वे सब परतः प्रमाण के योग्य हैं तथा ग्यारह सौ सताईस (११२७) चारों वेदों की शाखा भी वेदों के व्याख्यान होने से परतः प्रमाण तथा (आयुर्वेद) अर्थात्

* नोट (६) जिन ग्रन्थों के आचार्यों पर दूसरे ग्रन्थों का साक्षित्व अर्थात् गवाही नहीं चाहने पड़ती वे स्वतः प्रमाण और जिन पर वेदों का साक्षित्व होना अवश्य है वे परतः प्रमाण कहाते हैं॥

जो वैद्यक शास्त्र चरक सुश्रुत और धन्वन्तरिकृत निघंटु आदि ये सब मिलकर ऋग्वेद का उपवेद कहाता है (२धनुर्वेद) अर्थात् जिसमें शास्त्र अस्त्र विद्या के विधानयुक्त जोकि अंगिरा भरद्वाजादि कृत संहिता हैं जिनमें राज विद्या सिद्ध होती है परंतु वे ग्रंथ प्रायः लुप्त से होगए हैं। जो पुरुषार्थ से इसको सिद्ध किया चाहे तो वे दादि विद्या पुस्तकों से साक्षात् कर सक्ता है॥

(३गंधर्ववेद) जोकि सामगान और नारदसंहिता आदि गान विद्या के ग्रन्थ हैं (४अर्थवेद) अर्थात् शिल्पशास्त्र जिसके प्रतिपादन में विश्वकर्मा त्वष्टा देवज्ञ और मयकृत संहिता रचीगई हैं येचारों (उपवेद) कहाते हैं॥

इसी प्रकार पहिला पाणिन्यादि मुनिकृत ग्रन्थ (शिक्षा) और दूसरा मन्वादि कृत मानवकल्पसूत्रादि आश्वलायनादिकृत श्रौतसूत्रादि (कल्प) और तीसरा पाणिनि मुनिकृत अष्टाध्यायी धातुपाठ गणपाठ उणादिपाठ और पतंजलि मुनिकृत महाभाष्य पर्यंत (व्याकरण) तथा चौथा यास्क मुनिकृत निरुक्त और निघंटु (निरुक्त) और पांचवां वसिष्ठमुनि आदिकृत सूर्यसिद्धांत आदि रेखा बीज गणितात्मक (ज्योतिष) और छठा पिंगलाचार्यकृत सूत्रभाष्य आदि (छंद) ये वेदों के छः अंग भी परतः प्रमाण के योग्य हैं और ऐसेही वेदों के छः उपांग अर्थात् जिनका नाम षट्शास्त्र है उनमें से एक व्यास मुनि आदिकृत भाष्य सहित जैमिनि मुनिकृत पूर्वमीमांसा जिसमें कर्मकाण्ड का विधान और धर्म धर्मी दो पदार्थों से सब पदार्थों की व्याख्या की है दूसरा वैशेषिक शास्त्र जोकि कणाद मुनिकृत सूत्र और गोतममुनिकृत प्रशस्तपाद भाष्यादि-

व्याख्या सहित है तीसरा न्यायशास्त्र जो कि गोतममुनि प्रणीत सूत्र और वात्स्यायन मुनिकृत भाष्य सहित है चौथा योगशास्त्र जो कि पतंजलि मुनिकृत सूत्र और व्यास मुनिकृत भाष्य सहित है पांचवां सांख्यशास्त्र जोकि कपिल मुनिकृत सूत्र और भागुरिमुनि कृत भाष्य सहित है और छठा वेदान्तशास्त्र जोकि ईश केन कठ प्रश्न मुण्डक माण्डूक्य तैत्तिरीय ऐतरेय छान्दोग्य और बृहदारण्यक ये दस उपनिषद तथा व्यास मुनिकृत सूत्र जोकि बौद्धायन इत्यादि व्याख्या सहित है ये छः वेदों के उपांग कहाते हैं इसका यह अभिप्राय है कि जो शाखा शाखान्तर व्याख्या सहित चार वेद चार उपवेद छः अंग और छः उपांग हैं ये सब मिल के चौदह विद्या के ग्रन्थ हैं ॥

इन ग्रन्थों का तो पूर्वोक्त प्रकार से स्वतः परतः प्रमाण करना सुनना और पढ़ना सबको उचित है इन से भिन्नों का नहीं क्योंकि जिसने ग्रन्थ पदार्थ ती क्षुद्र बुद्धि कम विद्या वाले अधर्मात्मा असत्य वादियोंके कहे वेदार्थ से विरुद्ध और युक्ति प्रमाण रहित हैं उनको स्वीकार करना योग्य नहीं आगे उनमें से मुख्य २ मिथ्या ग्रन्थों के नाम भी लिखते हैं जैसे रुद्रयामल आदि तन्त्र ग्रन्थ। ब्रह्मवैवर्त श्रीमत्भागवत आदि पुराण। सूर्यगाथा आदि उपपुराण। मनुस्मृति के प्रक्षिप्त श्लोक और उससे पृथक् सब स्मृति ग्रन्थ। व्याकरण विरुद्ध सारस्वत चन्द्रिका कौमुद्यादि ग्रन्थ। धर्मशास्त्र विरुद्ध निर्णय सिन्धु आदि ग्रन्थ। तथा वैशेषिक न्यायशास्त्र विरुद्ध तर्कसंग्रह मुक्तावल्यादि ग्रन्थ तथा हठ प्रदीपिका आदिग्रन्थ जो कि योग शास्त्र से विरुद्ध हैं। तथा सांख्य शास्त्र विरुद्ध सांख्यतत्त्व कौमुदी आदि ग्रन्थ वेदान्त

शास्त्र विरुद्ध वेदान्तसार पंचदशी योगवासिष्ठादि ग्रन्थ। तथा ज्योतिषशास्त्र से विरुद्ध मुहूर्तचिन्तामण्यादि मुहूर्तजन्मपत्रफलादेश विधायक पुस्तक। ऐसेही श्रौत सूत्रादि विरुद्ध त्रिकुंडिका स्नान विधायकादि सूत्र। तथा मार्गशीर्ष एकादश्यादि व्रत काश्यादि स्थल पुष्कर गंगादि जल यात्रा, माहात्म्य विधायक सब पुस्तक तथा दर्शन नामस्मरण जड़मूर्तिपूजा करने से मुक्ति विधायक ग्रन्थ। इसी प्रकार पाप निवारण विधायक, और ईश्वर के अवतार वा पुत्र अथवा दूतोत्पादक, वेद विरुद्ध शैव शाक्त गाणपत वैष्णवादि मत के ग्रन्थ, तथा नास्तिक मत के पुस्तक और उनके उपदेश ये सब वेद युक्ति प्रमाण और परीक्षा से विरुद्ध ग्रन्थ हैं। इसलिये सब मनुष्यों को उक्त अशुद्ध ग्रन्थ त्याग कर देने के योग्य हैं॥

कदाचित् इन ग्रन्थों के विषय में कोई ऐसा प्रश्न करे कि इन असत्य ग्रन्थों में भी जो २ सत्य बातें हैं उनका ग्रहण करना चाहिये तो इसका उत्तर यह है कि जैसे अमृत तुल्य अन्न में विष मिला हो तो उसको छोड़ देते हैं क्योंकि उनसे सत्य ग्रहण की आशा करने से सत्यार्थ प्रकाशक वेदादि ग्रन्थों का लोप हो जाता है इसलिये इन सत्य ग्रन्थों के प्रचार के अर्थ उन मिथ्या ग्रन्थों को छोड़ देना अवश्य चाहिये क्योंकि विना सत्य विद्या के ज्ञान कहां। विना ज्ञान के उन्नति कैसी और उन्नति के न होने से मनुष्य सदा दुःखसागर ही में डूबे रहते हैं॥ अथ आदेशः

अथ शंकरदिग्विजयोदाहरणम्

तस्मादनन्तशयनं नाम भगवदर्चामूर्त्ति सन्निहित प्रदेशं संप्राप्तः
तद्देव दर्शनं कृत्वा निजशिष्यै र्मासपर्यन्त मास तत्र भक्ता भागवता
श्चैव वैष्णवाः पाञ्चरात्रिणः । वैखानसाः कर्म्महीनाः षड्विधा वै-
ष्णवाः मताः ॥ क्रियाज्ञान विभेदेन ते च द्वादशाभवन् । तानाह शङ्क-
राचार्य्यः किंवो लक्षण मुच्यतां ॥ आदौ भक्ता इद मूचुः । स्वामिन्
वासुदेवः परमपुरुषः सर्व्वदा जगद्रक्षनपरः सर्व्वज्ञः सर्व्वदेवकार-
णः स एव रामकृष्णाद्यवतार विभेदेन भूभारं निवर्त्तयितुं शिष्टावन
मशिष्ट संहारं च कुर्व्वन् पुण्यस्थलेषु निजाविर्भूत मूर्त्ति प्रतिष्ठा
माचकार । मूढा वयं किल तदीयपादपङ्कजसेवया विगत पापास्त
ल्लोकवासं प्राप्स्याम इति निश्चयवुद्ध्या कौण्डिन्य मुनेः प्रसन्नो वि-
ष्णुरनन्तनाम्ना किलात्रैव वर्त्तते, तदीय चरणमेवादिन मनुदिनं कृत्वा
तीर्थप्रसादादिभिस्तृप्तिमेत्य गोपुरप्राकारादिषु सम्मार्जन प्रोक्षणादि-
कं कुर्व्वन्तः [illegible] वसामः । अङ्कन रहिता नेतान् स्मार्त्तवंश समुद्भवा
न् । ऊर्द्ध्वपुण्ड्रपरान् भक्तान नन्तांशि हृदये नयेत् ॥ स्नानमूलमिदं ब्रा-
ह्मण्यमित्याह्निक चोदिता ॥ नित्यकर्म्मण्यप्रामाण्य मिव प्रति
भाति वः किमप्रामाण्यमिति । यतिवर्य्य मदीयाचारो द्विविधः
ज्ञान क्रियाभेदात् । ज्ञानिनो वयं विष्णुशर्म्मादयः परे कर्म्मठाः ब्रह्म
गुप्तादयः श्रीमदनन्तभक्ताः अत्रैव वर्त्तन्त इति विष्णुशर्म्म वचनं
निशम्य शङ्कराचार्य्यस्त मपृच्छत् भवत्प्रमुखा ज्ञानिनः किल ज्ञा
नस्य किंवा लक्षणं तेन फलमपि किमित्युक्ते विष्णुशर्म्माह श्रीमद-
नन्तभगवत्पादकमल मेव शरणमिति तूष्णी मनस्यगिरेव

ज्ञानं तदनुत्त्वां विना त्वरा चल नमपि न भवतीति, तमाचार्यो ऽब्रवीत् मूढ विष्णु शर्म्मन् ।
"जन्मना जायते शूद्रः कर्म्मणा जायते द्विजः।" इत्याश्रमधर्म्मानुकूलं कर्म सर्व्वेषामलंघ्यं तस्यैव तपः शब्द वाच्यत्वात् सन्यासिनामपि विहितं कर्म कर्त्तव्यमेव "कर्म्म हीने तु पातित्यमिति दर्शनात्" अहरहः सन्ध्यामुपासीत, उदिते सूर्य्ये प्रातर्जुहोति, उद्यन्तमस्तं यान्तमादित्यमभिध्यायन् कुर्व्वन् ब्राह्मणो विद्वान् सकलं भद्रमश्नुते ऽसावादित्यो ब्रह्मेति ब्रह्मैव सद्ब्रह्माप्येति य एवं वेद॥ इति च· सर्व्वे वेदा ब्राह्मणोचितं नित्य कर्म्म प्रशंसन्ति श्रौतस्मार्तादिकं यतः कर्म्मार्थमेव श्रुति प्रवृत्तिः अतः सर्व्वैराश्रमिभिः वेदोक्तं कर्म्म अवश्यं कर्तव्यमेव। जीवन् कर्म्म परित्यागंयः करोतिनराधमः। समूढो नरकं याति यावदाहूतसंप्लवं॥ इति मनुवचनदर्शनात् देवार्च्चन स्नान भिक्षा चार्य्यादिकं कर्म्म यतीनाञ्च विद्यत एव।शौचा चमन स्नान सन्ध्यावन्दन जपाग्नि होत्र स्वाध्याय माध्यान्हिक देवातिथि पूजादिकं कर्मवानप्रस्थ गृहस्थयोस्तुल्यमेव वनस्थस्येयान् किल विशेषः तपोनानशनात्परमिति, ब्रह्मचारिणस्तु स्नान सन्ध्या स्वाध्यायेश्वरपूजागुरुकुल वासादिकं कर्म उचितं अतः स्वकर्म्म भ्रष्टानां भवतां ब्राह्मण्य हानि प्रसक्तिः स्यात्। किञ्च ज्ञानमार्ग वर्तिनो वयमिति भवद्भि रुक्तं तत्राप्यधिकारो नास्त्येवयद्यस्ति तर्हि सदसल्लक्षणं ब्रह्मनाड़ी विभेदनं चित्परामर्शभावं षट्चक्रमार्गंच दर्शयध्वं। एवमाचार्य्यै रुक्ते विष्णु शर्म्मादयः इद मूचुः यतिनाथ अयकर्म्म ज्ञानं चोभयमेवास्माभिर्व्विदितं त्रिकाल मनन्त देव पाद दर्शनं विना नकिञ्चिदिति, तद्वचः श्रुत्वा सम्भूता-

अथर्व्वा श्रीशङ्कराचार्य्य इदमाह, विष्णुशर्म्मन कतिपयैरब्दैरेवं स्थास्यति सत्याह, मत्सदृशः सन्नमः पुरुषः तत्पिता किञ्चित्कर्म्मशील इति बाल्ये मया श्रुतं। तन्निशम्य कोपाऽऽर्यो भयात्मकमानसः सकल गुरुराह। हे व्रात्य सकल धर्म्मबहिष्कृत दूरं गच्छेति त्वत्संसर्गेऽस्माकं दोषो भवेदिति विष्णुशर्म्माणमवादीत् स तु क्लेशपरितमानसः सगणः समस्तामपराधं क्षमस्वेति दण्डवत्प्रणम्य सम्पुटित करद्वयः स्थाणुवत्समातिष्ठत। विष्णुशर्म्माभिध्न मेनं शरणागतं दुर्मार्गाद्रक्षमो वयमिति धिया सगणस्य तस्य प्रायश्चित्तकरणे हस्तामलकादीन्निजशिष्याना ज्ञापयामासाते विष्णुशर्म्मप्रमुखाना स्नान ब्रह्मदण्ड समर्पण पुरश्चरन सहस्र घट स्नान प्राजापत्य कृच्छ्र प्राच्योदीच्याङ्ग गोदान भूप्रायल गोगर्भजन नजानकर्म्म नाम करण चोलोपनयन विवाह प्रमुखकर्म्माणि यथाविधि समाचरन्त। विष्णुशर्म्मादयोऽपि विहित ब्राह्मणानुष्ठान तत्पराः श्रीपरमगुरु मिदमूचुः। स्वामिन् भवत् कृपया ब्राह्मण्य सिद्धिरासीत्। मोक्षसिद्धिः केनोपायेन नो भविष्यतीति जल्पन्त विष्णुशर्म्माण मिदम ब्रवीत् कुरुता मेव वैदिकी क्रियामिति॥

अथ भाषार्थ

जब श्रीमान् स्वामी शंकराचार्य जी महाराज घूमते २ अनन्तशयन नाम स्थानमें पहुंचे तो वहां बारह प्रकार के वैष्णव लोग जिनमें से छः क्रियाभिमानी और उतने ही ज्ञानाभिमानी थे देखे गये उनसे स्वामीजीने कहा कि तुम अपना धर्म लक्षण कहो बोले कि स्वामीजी महाराज जो सर्वज्ञ जगत् पालक परमेश्वर राम कृष्ण

आदि अवतार लेकर धरती का भार उतारता है वा कौण्डिन्य मुनि की तपस्या से होकर उनकी इच्छानुसार इस पुण्य क्षेत्र में अनन्त नाम की पाषाण मूर्ति बनकर वास करता है हम लोग प्रति दिन उसके चरणों में प्रेम रख उसका चरणोदक और प्रसाद पाय अति तृप्त हो उसके मन्दिर की झार पोंछ करके पापरहित होते रहते हैं यही हमारा परम धर्म कर्म है स्वामीजी ने कहा कि तुम लोग ब्राह्मण हो परन्तु आचार तुम्हारा प्रमाणहीन अर्थात् वेद विरुद्ध है वे बोले कि नहीं हम विष्णु शर्मादिक ज्ञानी हैं हमको आचार की आवश्यकता नहीं आचारी लोग ब्रह्मगुप्तादिक हमसे जुदे यहीं बसते हैं यह सुन स्वामीजी बोले कि तुम ज्ञानी लोगों में जो बड़ा विद्वान् हो वह कहे कि ज्ञान का क्या लक्षण है तब विष्णु शर्माजी बोले कि ज्ञान हमारा यह है कि हे अनन्त भगवन् हम आपके चरणों में शरण हैं आप की बिना आज्ञा कुछ भी नहीं होता तू हमको तार ऐसा बारंबार कह कर चुप रहना यही हमारे परम ज्ञान का लक्षण है तब स्वामीजी बोले कि अरे मूढ़ विष्णु शर्मा कर्म से द्विजत्व होता है पश्चात् सबको वर्णाश्रम धर्म मुख्य है कर्म हीनों को शूद्रत्व वेदों में लिखा है ब्राह्मण लोग उदय और अस्तकाल के समय प्रति दिन संध्या वंदन करके आहुति देवें इस प्रकार ब्राह्मणों को श्रुति और स्मृति के अनुसार वर्णाश्रम धर्म करना मुख्य है जो लोग कर्म छोड़ते हैं वे मूढ़ नराधम कल्प भर नरक में पड़ते हैं ऐसा मनुजी का वचन है इसलिये कभी किसी वर्ण और आश्रम वाले को कर्म का त्याग नहीं करना चाहिये वानप्रस्थ और

ग्रहस्थों की शौच आचमन स्नान संध्यावंदन जप अग्निहोत्र वेदाध्ययन माध्यान्हिक देवअतिथिपूजा और ब्रह्मचर्य को स्नान संध्या वेदाध्ययन ईश्वर पूजा गुरुकुल में वास इसी प्रकार सन्यासियों कोभी देवार्चन स्नान भिक्षादिक कर्म करना अवश्य है इससे तुम लोग कर्म त्याग करने के कारण ब्राह्मणत्व से पतित होगये ज्ञानभी तुमको कुछ नहीं है वृथा हम ज्ञानी हैं ऐसा तुमको अभिमान है यदि तुम ज्ञानी हो तो हमको सत्असत् का लक्षण ब्रह्म नाड़ी भेद चित्परामर्श षट् चक्र मार्ग का विस्तार प्रमाण सहित सुनाओ तब विष्णुशर्माजी बोले कि यतिनाथ हम अपना ज्ञान और कर्म प्रथमही सुना चुके कि त्रिकाल अनन्त देव का दर्शन करने के सिवाय संसार में कुछ नहीं जानता। तब हंस कर स्वामीजी बोले कि कितनी बरसों से तुम्हारा यह हाल है बोले कि स्वामीजी मेरी सात पीढ़ी से यही रीति चली आती है हां हमारा आठ वां कोई पुरषा सुना है कि कुछ आपने कहे से कर्म करता था इतना सुनते ही स्वामीजी क्रोध में भर आये और आश्चर्य में तो थे ही बोले कि अरे संस्कार हीन चांडाल शीघ्र मेरे सन्मुख से हट जा तेरे संसर्ग से हम भी दोषी होंगे यह सुन जितने वे विष्णुशर्मादिक वैष्णव थे सब अति दुःखित होकुड़ी के सदृश स्वामीजी के चरणों में गिर पड़े और कहने लगे कि हे स्वामिन् हम लोगों का अपराध क्षमा कीजिये फिर उठ हाथ जोड़ अति दीन मुख मलीन नेत्रों से जल बहाते सूखे ठूंठ से खड़े हो रहे बहुतेरा हटाये जाते थे पर नहीं हटते थे बार बार क्षमा कीजिये की धुनि भर रहे थे तब स्वामीजी को करुणा उपज आई अपने शिष्य हस्तामलकादिकों से

बोले कि अच्छा तुम इन सबको यहांसे लेजाकर अच्छे प्रकार प्रायश्चित्त दो उसी समय वे उनको ले गये और प्रथम उनको सचैल स्नान कराकर उनसे ब्रह्म दंड ले फिर उनकी मूंछ मूड़ मुड़वाकर एक २ को हज़ार २ घोड़ों से न्हिलाय उनसे सौ सौ आजा पत्य कृ कृच्छ्रचांद्रायणादि व्रत और प्राच्याङ्ग उदीच्याङ्ग गोदान भूप्रायन गोगर्भ जननजातकर्म नाम करण चौल उपनयन विवाह आदि संस्कार यथा विधि करा कर परम गुरू के सन्मुख एक दिन लाये आतेही वे सब विष्णु शर्मादिक वैष्णव आचार्यजी महाराजके चरणों में गिर पड़े और हाथ जोड़ कर बोले कि महाराज आपकी कृपा से हमको ब्राह्मणकर्म का अधिकार तो हुआ अब कृपा करके ऐसा उपदेश कीजिये जिस से हमको मुक्ति प्राप्त हो तब परम कृपालु श्रीमान् स्वामी शंकराचार्य जी महाराज उनका प्रेमभाव देख प्रसन्न हुए और उनको प्रत्यह त्रिकाल वेदोक्त नित्य नैमित्तिक वर्णाश्रम के कर्म करते रहने का उपदेश किया ॥ इति शंकर दिग्विजये वैष्णव मत. निबर्हणम्

इस प्रकार श्रीमान् शंकराचार्यजी महाराज ने नीचे लिखे ४६ मतों का खण्डन करके वैदिक मत पर चलने का उपदेश किया है ॥

(१) भागवत मत (२) षड् विध वैष्णव मत (३) पंचरात्रागम मत (४) वैखानस मत (५) कर्महीन वैष्णव मत (६) हैरण्य गर्भ मत (७) अग्निवादि मत (८) सौर मत (९) महागणपति मत (१०) हरिद्रा गणपति मत (११) नवनीत गणपति मत (१२) उच्छिष्ट गणपति मत (१३) स्वर्णसंतान गणपति मत (१४) शक्ति

मत(१५) महालक्ष्मी मत(१६) वागदेवता मत(१७) वामाचार मत (१८) कापालिक मत(१९) कापालिकैकदेशि मत(२०) चार्व्वाक मत(२१) सौगत मत(२२) जैन मत (२३) बौद्ध मत (२४) मल्लारि मत(२५) विश्वकसेन मत (२६) मन्मथ मत (२७) कुवेर मत (२८) इन्द्र मत (२९) यम मत (३०) वरुण मत(३१) शून्य मत (३२) लोक मत(३३) गुण मत(३४) साङ्ख्य मत (३५ योग मत(३६) पीलुवाद मत (३७) कर्म्म मत (३८) चंद्र मत (३९) राहु मत (४०) क्षपणक मत (४१) पितृ मत (४२) शेष मत (४३) सिद्ध मत (४४) गंधर्व मत (४५) भूत वैताल मत (४६) गरुड़ मत

आर्यगण यद्यपि यह शंकर दिजय पोपों नेही बनाया है तथापि खोजने वाले बहुत सा सत्य निकाल सक्ते हैं

अब उन आधुनिक मतों के नाम सुनिये जिनका खंडन श्रीमान् सकल विद्या निधान परमाचार्य स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी महाराज ने किया और कर रहे हैं और बराबर करते रहेंगे ॥

(१) श्रीवैष्णव वा रामानुजी (२) वल्लभाचारी वा गोकुलिया गुसाईं वा गोकुलस्थी (३) सनकादिकी वा माध्व वा मध्वाचारी वा निंबर्की (४) रामानन्दी वा रामावत् (५) राधावल्लभी वा गौड़ गुसाईं (६) नित्यानन्दी वा चैतन्यी वा बंगाली वैष्णव (७) सधनपन्थी (८) कबीरपन्थी (९) नानिकपन्थी (१०) दादू पन्थी (११) खाकी (१२) वैरागी (१३) नागा (१४) मूलक दासी

(१५) रैदासी (१६) चरणदासी (१७) सैनाई (१८) मीरांबाई (१९) सखीभाव (२०) माधवी (२१) हरिश्चन्द्री (२२) योगी (२३) जंगम (२४) ऊर्ध्वबाहु (२५) आकाशमुखी (२६) नखी (२७) गूदड़ (२८) रूखड़ (२९) सूखड़ (३०) कड़ालिंगी (३१) शाक्तिक (३२) दक्षिणाचारी वा दक्षिणी (३३) वामी वा वामाचारी वा वाममार्गी वा कौल आदि (३४) कानचेली (३५) करारी (३६) अघोरी (३७) गाणपत्य (३८) सौर (३९) बाबालाली (४०) प्राणनाथी (४१) साध (४२) सत्तनामी (४३) शिवनारायणी (४४) शून्यवादी (४५) जैनी (४६) दिगम्बर (४७) श्वेताम्बर (४८) ढौंढिये (४९) बौद्ध (५०) दोनों ब्रह्म समाजी

आर्यगण। ये ऊपर लिखे सब मत भरत खण्ड वासियों में प्रचरित हैं। कहो कैसे सत्यानाश नहो उस देश का, जहां इतने मिथ्या मत प्रवृत्त हों। कहावत है "एक घर दो मना। वह घर कैसे बना" जब एक ही घर के बनाव में आफ़त तो देश के बनाव की क्या आशा। फिर इतने ही यहां मत हैं ऐसा भी निश्चय न करलो किन्तु इनमें से बहुत से शाखा पल्लव भी रखते हैं। अंत में जो दो प्रकार के ब्रह्म समाज लिखे हैं उन बेचारों की तो अभी छूटी भी नहीं पुजी। ये दोनों मत बंगालियों ने चलाये हैं-इनमें से एक तो वेद को बिल्कुल ही नहीं मानता, दूसरा सान्दग्ध है सम्वत् १९२८ में श्री जी महाराज ने जब कि कलकत्ता में थे ब्रह्म समाज के अधिष्ठाता केशवचंद्र सेनजी आदि का भी सन्देह भली भांति दूर कर दिया था। जिन पुरुषों की तृप्ति इतने मतों से नहीं होती वे बहु [illegible]

यावनी और ईसाई मताख्य कुंडों में भी जा डूबते ये धन्य श्रीमान् जिन्हों ने ये सब अनर्थ रोके। परमात्मा उनको दीर्घायु करे॥

इति श्रीमत्परमहंस परिव्रजकाचार्य्य दयानन्द सरस्वती दिग्विजयार्कीय द्वितीयांके सामाजिकचरित्र विवर्णनं नाम पंचमो मयूखः ॥

अथ षष्ठो मयूखः

आर्यगण पंचम मयूख द्वारा आर्य समाजोंका बहुतसा वृत्तान्त वर्णन होचुका है उन्हींका अब कुछ प्रबन्ध सुनिये ॥

प्रत्येक समाज में मुख्य पांच पंच अर्थात् अध्यक्ष होते हैं (७) १ उनमें से पहिला सभापति दूसरा नायबसभापति तीसरा मंत्री चौथा पुस्तकाध्यक्ष पांचवा कोषाध्यक्ष कहाते हैं और ये सब प्रत्यह-

१ (७) ये पांचों पंच समाजका सारा बोझ उठाने वाले होते हैं इसलिये इन पदों पर बहुत योग्य पुरुषों का नियत होना अवश्य है अन्यथा बना बनाया समाज ऊजड़ जाता है ऐसा अनुभव है यदि भूलसे कहीं ऐसे स्वार्थ तत्पर लोग किसी राज समाज में नियत होंवा होवें तो उनको अनुभव आने पर शीघ्र वहां से ऐसा हटादे जैसा कि श्रीमान् स्वामीजी महाराज ने बम्बई समाज से हरिश्चन्द्र चिन्तामणि और अपने वैदिक यंत्रालय से सिंहजी को विज्ञापन देकर हटा दिया था देखिये अब वहां दोनों ठौर कैसा धर्मराज्य है अधिकारियों को भी उचित है कि स्वार्थ तत्परता से जो असत्कीर्ति होती है उससे सदा बचें- ठीक अपने नियमों पर चलें सदा धरती की ओर निहारें न यह कि पदवी पाकर अधिक आस्मान् को मुंह उठ जाय। इसढंग से चाहे कुछ दिन राज काज ढिकल भी जाय परंतु समाज काज कदापि न सधेगा। समाजों में भरती होने की रीति यह है कि जब कोई मनुष्य उसमें दाखिल हो तो उसे उचित है कि अपने पेशे रुतबे खान्दान और लियाक़त वगैरः का ख्याल कतै छोड़ दे और अपने को उन सब लोगों के समान समझे जैसे कि और लोग जलसे में शामिल हों क्योंकि छोड़देने को कहे हुए ख्यालों के बने रहने से आपस की वह रीति प्रीत और कर्त्तव्यता जाती रहती है जिसका सदैव कोकायल रखना निहायत ज़रूर है। हर अधिकारी मनुष्य को अपने समाज का वैसा प्यादा बनजाना चाहिये जैसा कि सुशिक्षित सेवक कि जिसको बैठते उठते बिलम्ब नहीं लगता न यह कि जगह घेरकर बैठ गया

अपना २ काम अपनी व्यवस्था पुस्तक के अनुसार करते हैं और प्रति रविवार को समाज नियमित स्थान में नियमित समय पर होता है जितने आर्य और सभासद् लोग दर्ज़ रजिस्टर होते हैं वे सब वहां एकत्र होकर परमेश्वर की स्तुति और प्रार्थना के पीछे देशोन्नति कारक

सो वै वही गया अब कोई आओ कोई जाओ उसे कुछ परवा नहीं। हर एक समाजी हर प्राणी के खुश करने की कोशिश करे-केवल उन्हीं लोगों से समाज में बैठ बात करना उचित नहीं कि जो तुम्हें पसंद रखते हों वा जिनसे तुम्हारा दिल मुहब्बत करता हो ऐसे लोग तुमको फिर भी मिल सकते हैं परंतु पैठ पैठ ही के दिन लगती है। जो लोग समाज में तुमसे दूर बैठे हों वा कुछ खेद में हों अथवा जिनसे और लोग बातें न करते हों उनको विशेष कर अपनी बातों में लगाओ इसके साथ हर मनुष्य की तबीअत का भी खूब लिहाज़ रक्खो अर्थात् उससे कभी कोई ऐसी बात न छेड़ो जिससे उसे वा दूसरों को रंज पहुंचे किसी की दिल्लगी वा गंवारों की तरह एक साथ ज़ोर से हंस देना भी उचित नहीं। जिसकी प्रथम मुलाक़ात हो उसके साथ तो बहुत ही इख़्लाक़ के साथ पेश आओ फिर देखो कैसा काम बनता और सुख होता है इस प्रकार बहुत से विषय समाज वालों को सोचने बिचारने और करने को हैं उन सब पर जिसका पूर्ण ध्यान होता है वही सामाजिक कामों को यथावस्थित चला सक्ता है अन्यथा समाज नहीं बहदपाल है (अविवेक मतिर्नृपतिर्मन्त्री गुणवत्सु वक्रितग्रीवः॥ यत्र खलाश्च प्रबलास्तत्र कथं सज्जनावसरः)१) जहां का राजा वा सभापति कौन मनुष्य कैसा है ऐसा विवेक नहीं रखता और मंत्री गुण वालों की ओर से मुह फेर फिसादी वा खिलाड़ियों की तरफ़ मुखातिब रहता है और जितने कर्मचारी वहां के हैं वे भी सब दुराचारी ही होने के कारण उस राज वा समाज में भले और बुद्धिवान् कहाते हैं वहां आने जाने में संपुरुष भिचते हैं इसी लिये कहा जाता है कि भाई आर्य्यगण ऐसे बनो जिस्में तुम्हारे पास आने को सज्जनों का भी जी चाहे॥

व्याख्यान देते और सुनते हैं और जिनकी इच्छा होती है वेभी वहां जाते हैं अर्थात् किसी को उस दिन वहां रोक टोक नहीं होती सारांश वह दिन परम आनन्द का होता है सब लोग बड़ी रीति से परस्पर मिलते और सात दिन के भीतर की सब नूतन खबरें और समाचार पत्रों को कहते सुनते और सुनाते हैं इन समाजों में जितने लिखे हुए पंच और सभासद होते हैं वे सब अपने समाज का जिस प्रकार वार्षिक खर्च होना अवश्य जानते हैं उतना रुपया वर्ष के प्रारंभ में एकत्र कर देते हैं और फिर जो कोई विशेष खर्च आपड़ता है तो उसके लिये सब लोग चाहे जिस दिन एकत्र होकर उतना रुपया जमा कर लेते हैं जितने की कि आवश्यकता उस समय होती है। इस प्रकार से हुई आमदनी नामवार समाज कोष में लिख कर धरी जाती है फिर उसका खर्च अंतरंगसभा की मंजूरी से होता है। अंतरंगसभा की व्यवस्था इस प्रकार है कि जिस समाज में जितने सभासद होते हैं उनमें से सबकी प्रसन्नतानुसार विशेष धन देने वाले सभ्य और विद्वान् लोग सैकड़ा पीछे सके हिसाब से चुन लिये जाते हैं इनमें उपरोक्त सभापति उपसभापति और मंत्री ये तीन पुरुष मिलाकर जो एक कमटी बनाई जाती है उसको अंतरंग सभा कहते हैं। यह सभा प्रतिमास एक वा दो र नियमानुसार बैठती हैं और आवश्यकता पड़े पर बीच में भी न्न एकत्र होजाती है। इसी के विचार और स्वीकार से मासिक वार्षिक और नैमित्तिक खर्च और सब काम काज तथा नौकरों की मौकूफ़ी बहाली आदि हुआ करती है जब दो तिहाई सभासद (मेम्बर) जमा होजाते हैं तब इसका काम छिड़ता है और बहु पक्षानुसार काम किया जाता है अन्यथा कदापि नहीं॥

जहां उक्त सभा अपना काम यथोचित नहीं कर सकती वहां उसी की सम्मति के अनुसार उसी सभा के सभासदों में से पांच परम सभ्य विद्वानों की एक जुदी सभा बना ली जाती है उसको मीमांसक सभा और उसके पंचों को मीमांसक के सभासद कहते हैं बहुत से सूक्ष्म और गुप्त विचार तथैव अंतरंग सभा से ठीक नहीं हुए कामों की मीमांसा (न्याय) इस सभा में होकर तीन पुरुषों की सम्मति के अनुसार काम लौटता पलटता और प्रचरित होता है इन दोनों सभाओं में कोई अन्य पुरुष नहीं आने पाता, समाज का एक दफ्तर भी होता है उसमें आवश्यकता के अनुसार लेखक और परिचारक होते हैं इस दफ्तर में समाज का सब हिसाब और कागज़ रहता है- बाहर के समाजों और अन्य २ स्थानों से यहां पत्रादिक आते और उनके उत्तर प्रत्युत्तर लिखे जाते हैं जो काम श्रीमान् स्वामीजी महाराज से पूछकर करना होता है उसकी लिखा पढ़ी उनके समीप भेजी जाती है अर्थात् ये सब समाज प्रशंसित महाराज के आधीन रहते हैं और बहुत कुछ श्रीमान् के देशोपकारक कामों में ये लोग तन मन धन से सहायता भी करते रहते हैं।

जब श्रीमान् एक स्थान से दूसरे स्थान को जाते हैं तब इन सब के नाम तार वा पत्र भेज देते हैं और मासिक वेदभाष्य के टैटल तथा अखबारों में भी खबर छप जाती है जहां पहुंचते हैं वहां के समाजी राजा बाबू अथवा रईस लोग बड़ी हूल फूल और उत्सव के साथ उनकी अगवानी करके पहिले से तैय्यार कर रक्खे हुए दिव्य स्थान पर पहुंचाते हैं और वहां पहुंचते २ सारे शहर में विज्ञापन (इश्तिहार) लगवा दिये हैं कि फ़लां दिन इतने समय से इतने समय तक फ़लां स

न में इतने दिन तक श्रीमान् स्वामीजी महाराज व्याख्यान देवेंगे वहां सुनने वालों को उचित समय पर एकत्र हो जाना चाहिये। बहुधा एक वा डेढ मास कहीं इससे अधिक वा न्यून काल तक उस स्थान में काम के अनुसार स्थिति रख कर सब को आत्मोपकारक तथा देशोन्नति कारक वेदानुकूल व्याख्यान सुनाते और ऐक्यता उत्पादक आर्यसमाज स्थापित करने का भी उपदेश करते हैं॥

जहां कहीं सच्चे सत्पुरुष होते हैं वहां तुरन्त वा कुछ दिन पीछे समाज स्थापित हो जाते हैं अब तक जितने समाज बैठ चुके हैं यदि वे सब के सब उत्तम दशा में होते तो देश को बहुत सा लाभ हो रहता परन्तु परम शोक की बात है कि हमारे देश भाई जैसी कुछ आरंभ शूरता दिखाते हैं उसका शतांश क्या सहस्रांश भी पीछे को शेष नहीं रखते। कोई२ समाजी तो बहुत ही हीन दशा में पड़ गये हैं। प्रथम जिन समाजों में अतीव होता था घमसान- तहां बराबर देखी जाती है अब सुनसान। जिन्ने बहुतों का चित्त फ़ाड़ जुदा किया- उन्ने क्या दुनियां का भला किया। नामवरी को सभी चाहते परन्तु वह कैसे होती है सो नहीं जानते। आर्य समाजी कहावें- परन्तु घृणित काम करने में न डरावें। दिवाली दसहरा को छोड़ो बतावें- फिर क्यों स्वयं दीवाने हो उन दिनों हज़ारों ही के दाव लगावें। किसी जीव को ना सताना कदापि ऐसा उपदेश करें- पर स्वयं शिकारी बन- बन२ फिरें विवाहादि कामों में मितव्ययी होने के व्याख्यान छपवावें- परंतु स्वयं वैसे प्रसंगों पर उसे भूल हज़ारों रुपया रांड़ भांड़ और आतिशबाज़ी में गमावें। यदि पूछो कि आपने इस खुशी का कितना रुपया समाज कोष में स्थापित किया तो टका नहीं- भला आप को जो जात

कर्ण नामक णादि नामक संस्कार इस समय करना बहुत आवश्यक थे सोभी किये तो साफ़ जवाब कि वह भी नहीं। ऐक्यता का डंका बजाकर अनैक्यता के अनेक भांति बीजारोपण करें और करावें-तथापि क्या ऐसे ऐसे लोग आर्य्यों के ताज ही कहावें। संस्कृत की उन्नति में खर्च एकगुना तो यावनी और गोरंडी के लिये दस गुना। और जो कहीं पाय जावें वाहिर वालों की सहायता तो तुरंत कर दें उसको सौ गुना। हो गई है मूर्ति पूजा में अनरुचि-फिर क्यों नहीं होती है संध्या बंदनादि कामों में अभिरुचि। सामाजिक कामों में परम भक्त लेखकों का जो करते हैं विश्वास-उनसे कभी नहीं हो सक्ती देशोन्नति की आस। यदि वैसे कामों में आपको है सदा अनवकाश-फिर चंगचौसर और शतरंज का कैसे होता है अहर्निश प्रकाश। और भी उनके ऐसे ही अकथनीय अनेक कर्म-कि जिनके लिखने में आती है लेखनी को बहुत शर्म। सारांश उद्देश्य कुछ। और कृत्य कुछ कहो कौन ऐसों की सुने और क्यों कर श्रीमान् चाहते हैं सो बने। यह बुराई केवल स्वार्थ तत्परता (८) करती है उसे छोड़ो और भले बनो॥

(८) यह बड़ा भारी दोष है विशेष कर इस देश की बड़ी जाति वालों में अधिक देखा जाता है फूट और विरोध की ठीक जड़ है इसका सुभाव सत्यधर्म के विरुद्ध है जो लोग इन्द्रियों का दमन और परमात्मा की पहिचान तथा उसकी पूरी भक्ति रखते हैं उन्हों में यह नहीं होती बाकी हमारे सब देश पर इसका पूरा दखल है जो नर सबकुछ होकर अपने तईं तुच्छ जानते हैं उन्हीं से यह हार मानती है इसके बहुत करके पांच स्वरूप हैं १ द्रव्य २ सुख ३ दुःख ४ बिना निर्मल चित्त के सज्जन कहलाना ५ अपनी तारीफ़ सुनना सो विरले ही ऐसे हैं जिनको ये नहीं भोरते अर्थात् इन पांचों में से कोई न कोई एक बात उसके चित्त में ज़रूर ही होती है जहां उ-

अढ्योस्मि धनवास्मि कोन्योस्मि सदृशो मम

अर्थात् मैं बहुत बड़ा आदमी तथा धनवान् और चलात्र वाला हूं वह कौन ऐसा है जो मेरी बराबरी करेगा वा कुछ कहेगा. मेरा जी चाहेगा वही मैं करूंगा। ऐसा विचार कभी किसी आर्य समाजी को चित्त में न लाना चाहिये ख़ास कर तब जब कि कुछ बनाना चाहता है ॥

देखो विद्वानों का क्या कौल है (विद्या विवादाय धनं मदाय शक्तिः परेषां परि पीड़नाय। खलस्य साधोर्विपरीत मेतत् ज्ञानाय दानाय च रक्षणाय १॥) अर्थ यह है कि संसार में सर्वोत्तम पदार्थ केवल विद्या है वह सुतपुरुष में होने से उसके ज्ञान को बढ़ाती है जिससे संसार के बहुत से लोगों को सुख होता है। और यदि वह दुर्जन में जा पड़ती है तो उससे विरोध और उन्मादही के कामों को कराती है जिससे बहुत से लोगों का बिगाड़ होता है।

स्के बस में होकर किसी ने खेंचा तानी किसी पक्ष की की और सब बने बनाये काम बिगड़े॥ जिस्को द्रब्य का लालच है वह ऐसी राय देता और पसन्द करता है जिससे वह मिले या घर में बचे जिसको सुख की चाह है वह आलसी उस राय को पसन्द करता है जिसमें अपने ऊपर किसी काम का बोझ न आपड़े वा उस काम के न बनने से कहीं कलई न खुल जाय तीसरा रूप दुःख का ऐसा है कि कितने ही आदमी थोड़े दुःख को इतना बढ़ाकर दिखाते हैं कि जिस्से उस्के यार दोस्त आदि जो वह चाहता है उसी चाल पर चलैं चौथा रूप इस रीति का है कि संसार में सिवाय मेरे और कोई बुद्धिवान् वा प्रतिष्ठित वा विद्वान न कहावे और जो इस प्रकार के हों उनको धब्बा लग जाय पांचवां रूप ऐसा है कि आप में दर असल कोई भी गुण स्तुति योग्य नहीं

उसी प्रकार दूसरा पदार्थ धन है वह सत्पुरुष के पास होता है तो उसके वितरण से अनेक पुरुषों और जीवों को लाभ पहुंचता है और भी उससे बहुत से अनुपम उपकारक कार्य सिद्ध होते हैं तात्पर्य यह कि सज्जन धनी अपने धन को परमेश्वर की अमानत समझकर उसी के कामों में लगाता है। परंतु यदि वही धन किसी दुष्टजन के पास होता है तो वह भाई बिरादरी और अड़ोसी पड़ोसी तथा नगर ग्राम और देश निवासियों का विनाश ही करता है सारांश दुर्जन धनी बढ़२ कर कहता है कि मेरा एक से हज़ार वा लाख तक खर्च क्यों न पड़ जाय परंतु मैं उसको धूल ही में मिला छोड़ूंगा और सदा वैसा ही करता रहता है॥　तथा तीसरा पदार्थ शक्ति अर्थात् जिस्मानी ताक़त वा चलाव वा हुकूमत है यदि वह किसी सभ्य में हुई तो वह सबको दुःखों से छुड़ाता है और जो किसी खल में जा रही तो वह सबको अनेक प्रकार की पीड़ा में फांसता रहता है

सिद्धान्त यह है कि विद्या[1] धन[2] और शक्ति[3] ये वास्तव्य में तीन पदार्थ हैं परंतु संग पाकर प्रत्येक से दो२ गुण प्रगट होते हैं एक से पदार्थ वाले के सहित संसार का यथावत् उपकार सिद्ध होता है। दूसरे से पदार्थ वाले के सहित संसार का अपकार अर्थात् विनाश होता है। उनमें से द्वितीय और तृतीय पदार्थों के दृष्टान्तों का बाहुल्य यहां लिखना कुछ आवश्यक नहीं क्योंकि सदैव सर्वत्र देखा ही जाता है कि धनवाले कैसे हमेशाह सत्यासत्य मुक़द्दमा लड़ाते रहते हैं और ताक़तवाले अर्थात् बदमाश वा जत्थावाले अथवा सब प्रकार के नीतिहीन राज्याधिकारी अथवा चुंगी आदि के मेम्बर लोग किस प्रकार तोड़२ कुर्सी हां

तथापि दूसरों के गुणों का फल अपने में जतला कर अपनी मिथ्या स्तुति औरों के मुख वा स्वमुख से कहकर प्रकाशित करते हैं॥

में हां मिलाकर दे २ मूकों पर ताव प्रजा को दुखित कर रहे हैं रहा दृष्टान्त विद्या का सो वह भी इन दिनों सूर्यवत् प्रकाशित हो रहा है ॥

देखो एक तरफ़ श्रीमान् सकल गुण निधान स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी महाराज और उनके अनन्तर श्रीयुत मुन्शी इन्द्रमणि * व कविराज हरिश्चन्द्रजी और पंड्या मोहन लालजी आदि विद्वानों और पूना बंबई लाहौर मेरठ आदि के उत्तम आर्य समाजियों और हिन्दीप्रदीप भारतमित्र तथा अवध अख़बार आदि के श्रेष्ठ सम्पादकों को कि कैसा जगत् में निस्पृहता के साथ आनन्द बरसा रहे हैं ॥

और उसके विरुद्ध दूसरी तरफ़ देखो श्रीयुत स्वामी विशुद्धानन्दजी तदनंतर राजा शिवप्रसादजी व राजपुराणिक चतुर्भुजजी और पंडित श्रीगोपालजी आदि पोपों और सब पोप समाजियों और मित्रबिलास कवि वचनसुधा और जामजमशेद आदि अख़बारों के नष्ट सम्पादकों को किस प्रकार देश का नाश मार पेट भर रहे हैं श्रीमान् और आर्य्य समाजियों की मिथ्या निंदा करना तो मानों इन सब लोगों की ख़ास उपजीविका ही है ॥

इनसब में से पंडित श्रीगोपालजी तो बड़े ही विचित्र पुरुष हैं ये ज़िला मेरठ में कोई भूडबराल नाम ग्राम है वहां रहते हैं इनका गांव भी सब लोग वैसा ही समझें जैसा कि ज़िला मैन पु-

* परमशोक का विषय यह है कि इन महाशयों ने पीछे से लोभ के वश हो कर अपनी प्रकृति और प्रतीति ख़राब करदी कि जिससे वे सर्वत्र अति निंद्य हो गए वह सर्व प्रकार मुझको बदर्जे लाचारी तृतीय खंड के चतुर्थाध्याय में प्रकाशित करना अत्यावश्यक हुआ- परमेश्वर अब भी उनको सत्यथानुवर्ती करे ॥

री में भोगांव (९) महात्माजी ने सवा हाथ लंबी चौड़ी ४१८ पृष्ठ की एक पुस्तक बनाकर उसका नाम वेदार्थप्रकाश रक्खा है यह वास्तव्य में वेदार्थ प्रकाशक तो नहीं दीख पड़ती परंतु वेदार्थनाशक कहें तो यथार्थ होगी क्योंकि जो वेदोंको नहीं जानते वे उसके अर्थको क्योंकर प्रकाश कर सकते हैं जगत् में खूब सच्चे पंडित और विद्वान कहाते थे सो ऐसी रचना रची जो ढोलसे खाल भी गई यदि इनकी इस कृति पर कोई विद्वान लेखनी गहे तो उसका ग्रन्थ इनके ग्रन्थ से अपरमित बढ़े आगे (१०) स्थाली पुलाकन्यायवत् कुछ दोष दर्शित करदिये हैं (११) उन्हें देख इनकी विद्याका परिचय सबको भली भांति होजायगा प्रथम-आपने पद्यमय ग्रन्थ रचने का उद्योग किया (१२) कुछ दूर चलकर गिर पड़े तब गद्य पर जा रहे सो भी ठीक नहीं कहो कितना भारी यह दोष यदि श्लोक मय ग्रन्थ बनाने की शक्ति न थी तो पहिले ही से क्यों न सोच लिया और जो आरंभ कर चुके थे तो उसी प्रकार सब ग्रन्थ

(९) यह गांव उस पक्की बड़ी सड़क पर आबाद है जो कलकत्ता से पेशोर तक गई है इसका दूसरा नाम चूतियोंका शहर है यहांके रहने वालोंकी बहुत सी कहानी प्रसिद्ध है जिनको सुन वह गांव यथानामतथा गुण मालूम होने लगजाता है॥

(१०) इस न्यायका अर्थ यह है कि जैसे हांडीभर चांवलों में से एक सीतके टटोलने से हांडीभर की परीक्षा हो जाती है॥

(११) आगे मुख्य पांच दोष छांटकर वर्णन किये हैं उन्हीं के अन्तर्गत बहुत सी बातें आगई हैं और जो बातें कही हैं उनका उदाहरण उसीके नीचे नोटों में लिख दिया है॥

(१२) इनके कुल ग्रन्थ में १२ अध्याय हैं उनमें से आरम्भ के छोटे २ दो अध्याय ज्यों त्यों श्लोकों में चलाकर बाक़ी दस संस्कृत भाषा में चलाए हैं और वे बहुत बड़े २ हैं यदि ये भी पद्य रूप होते तो कम से कम दो हज़ार श्लोक बनाने पड़ते परन्तु पण्डित जी महाराजकी तो गरमी केवल सवा सौ श्लोकों की रचना से ही पटा गई फिर आगे कैसे चलते॥

समाप्त करना उचित था जब दोनों प्रकार के (१३) बुद्धि ल-
क्षणों से गिरे तो फिर किस काम के रहे क्योंकि इन चूकों से
उनकी स्थिति तीसरी कक्षा (दर्जे) में हुई सो वह कक्षा के-
वल निर्बुद्धियों ही के लिये है अतः ऐसों के ग्रन्थ कदापि मान-
नीय नहीं होते मूर्खों को चाहे भले ही ठगें। कदाचित् कहें कि हमने
ऐसी रचना से अपनी दोनों प्रकार की विद्वत्ता दिखलाई है तो इसका कु-
छ प्रसंग भूमिका में लिख देना उचित था सो कुछ नहीं लिखा तो बस॥
द्वितीय- किसी विद्वान् को कभी कोई मिथ्या (१४) बात भूल

(१३) श्लोक। अनारम्भो मनुष्याणां प्रथमं बुद्धि लक्षणम् ॥
आरम्भितान्त गमनं द्वितीयं बुद्धि लक्षणम् ॥१॥

(१४) जैसे महाराज काशी नरेश को छली वा बहाने बाज़ कहना और कानपुर के शास्त्रार्थ में स्वामीजी की हार बताना और उसी मिथ्या बात की गवाही में वहां के साहब कलक्टर आदि का नाम निःशंक लिखना इनका कैसा निकृष्ट कर्म- सत्य वार्ता तो वहां की यह है कि जब श्रीमान ने पंडित लक्ष्मण शास्त्री और हलधर ओझा को शास्त्रार्थ किया- तब हज़ारों प्रतिष्ठित हिन्दू मुसल्मान और अंगरेज़ों के बीच संस्कृत के विद्वान् असिस्टेंट कलक्टर ने जो कि उस शास्त्रार्थ में मध्यस्थ थे अपनी कुरसी से उठ- खड़े हो- टोपी उ- तार स्वामीजी महाराज को सलाम कर उच्चस्वर से सबको श्रीमान् की जीत सुनाई और नीचे लिखे अनुसार लेख अंगरेज़ी में लिख हस्ताक्षर कर दिये हैं सो यह सब शास्त्रार्थ पत्र यथावत् मेरे पास मौजूद है कहो- क्यों ऐसों के पूजने वाले नरक को न जावें

नक़ल अंगरेज़ी चिट्ठी साहब असिस्टेन्ट कलेक्टर व डि॰ मजिस्ट्रेट कानपुर॰

कर भी अपने ग्रन्थ में न लिखनी चाहिये इनने जानबूझ कर अनेक मिथ्या प्रसंग भर दिये हैं जिनमें कितनेही कड़ुआतिरिक्तों को माना है कहो इसका नाम विद्वत्ता है वा अविद्वत्ताका यह छोटा दोष और क्या ऐसों को कभी कारागार इत्यादि पंडितजी ने नहीं

True, copy

Cawnpore

Gentlemen

At the time in question I decided in favour of Daia Nand Sarasswati Fakir and I believed his arguments in accordance with the Veds. I think he won the day. If you wish it I will give you my reasons for my decision in a few days.

yours obediently

Sd W. THAIRC

अनुवाद वा तर्जुमा

प्रतिष्ठितजन कानपुर

मैंने इस शास्त्रार्थ के समय स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी की जीतका निश्चय किया मेरे यक़ीन से उनका सब कहना वेदानुकूल है इस लिये मैं कहता हूं कि अवश्य उनकी जीत हुई यदि किसीको मेरे किये निर्णय का प्रमाण अपेक्षित हो तो मैं थोड़े दिनों में अपनी सब वे दलीलें लिख दूंगा जिनसे स्वामीजी की जीत मैंने प्रसिद्ध की है ॥ इति ॥ ता०१७ अगस्त सन् १८६९ ई०

द० आपका सेवक डब्ल्यू थेयर्स असिस्टेन्ट कलक्टर कानपुर

सुत्र (१५) सच कहा है। लोभः प्रतिष्ठापापस्य ॥

तृतीय- किसी विद्वान् के लेख में अभिमान और पक्षपात तथा

(१५) संवत १९२५ की बात है कि श्रीमान् मुकाम अनूपशहर जिला बुलंद शहर में बिराजमान थे वहां के एक थगरी नाम के गुसाईं पर-कनकार्य गुर्जर वैद्य ने मुनशी प्यारेलाल साहब तहसीलदार कोम खत्री साकिन् बरेली के इजलास में नालिश की कि यह गुसाईं आज गंगा तट पर फ़लां फ़लां गवाहों के सामने श्री स्वामी जी को गृहस्थ किरस्तान और अंगरेजों का तनख़्वाहदार उपदेशक कहता है वह अपने कहे का सुबूत दे या मुताबिक़ क़ानून सज़ापावे- चुनांचे गुसाईं गिरफ़तार हुआ और उससे पूंछा गया कि बता स्वामी जी के स्त्री पुत्रादि कहां हैं- और किस पादरी ने उनको ईसाई बनाया और किस सर्कारी ख़ज़ाने से उनको प्रतिमास तनख़्वाह मिलती है- रेल तार का ख़र्च हम से ले और पता लिखाकर तू अभी सबको जहां तहां से पकड़ा दे। अब तो गुसाईं जी हूं हूं करने लगे। चट हुक्म छः महीने की सजा का हुआ— धन्य श्रीमान् के दयालु स्वभाव को कि जिन्हों ने यह ख़बर पाते ही उसी दम वैद्य राज को उलटा दौड़ा कर उसे छुड़वाया —— वैद्यराज ने तो अपनी जान तुरन्त आकर श्रीमान् को बड़ी फूल के साथ ख़ुश ख़बरी सुनाई थी परन्तु यहां आते ही बिचारे आपत्ति में पड़ गये— पीछे उसको छुटा सुन जब श्रीमान् शांत हुए तब सबको उपदेश दिया कि भाई जब तक मनुष्य में अविद्या रहती है तब तक वह स्वार्थ तत्परता में ही डूबा रहता है और उससे सदा ऐसाही व्यवहार होता है —जैसा कि तुम देखते हो इस गुसाईं का—बल्कि बहुत से लोग इस संसार में इससे कहीं बढ़ कर हैं और मेरा उद्योग विशेषकर ऐसोंही के सुधार के लिये है॥

आत्मश्लाघा और मिथ्या प्रमाण कदापि लेशमात्र को न होना चाहिये जैसे है अमर कोश पर आप उसे बताते हैं स्मृति सो इन का ग्रन्थ इन सब दोषों से यथेच्छ परिपूरित है (२६) कहो कैसा और

---

(२६) अब देखिये इनकी आत्मस्तुति और अभिमान कि कैसा अपने को प्रसिद्ध करते है ॥ श्रीमत् पदवाक्य पारावारीण — श्रीगौड़वंशतिलक — श्रीगोपाल शरण प्राप्त — महातेजस्विविप्रोयं बुधादृते — हमारे पहुंचते ही मेरठ निवासी सब विद्वान् कृत कृत्य हुए — उन सबने हमको सभापति बनाया — हमारी आज्ञा को वे सब ऐसी समझते थे जैसे राजा की — हमारा नाम सुन प्रथम पराजित होने के कारण दयानन्द थर २ कांपते और वे होश हो जाते थे हमको सब लोग महादेव की नाईं जानो और धीरज धरो — जो २ दयानन्द कहते गए सो २ सब हमने मंजूर की पक्के कागज़ पर शर्तें लिख रजिष्टरी कर देने तक को कहा परन्तु वे अपनी किसी एकभी बात पर न जमे — निदान यह कहकर मेरठ से भागे कि कहीं श्रीगोपालजी हमको सर्कार में अर्ज़ी देकर पकड़ा न देवें — और भी सब देश देशांतर में श्रीमान् का हारना और सब ठौर से भागना ही लिखा है — पक्षपात की यह रंगत कि — आर्य्यावर्त्त भर के ब्राह्मणों में सिवाय गौड़ों के और कोई ब्राह्मण न पवित्र हैं न पूजनीय — गौड़ों की जिस प्रकार उत्तमता महात्मा जी ने वर्णन की है वह सब प्रकरण देखने ही के योग्य है — आप लिखते हैं कि जैसा गुड़ सब पदार्थों में उत्तम वैसे ही हम, बल्कि इसीलिये गुड़ शब्द का हमारी जाति में सम्बन्ध रक्खा गया है — दूसरे गुड़ शब्द का गोल गोल का मध्य मध्य का आवर्त अर्थ हुआ वह ब्रह्म से संबन्धित हो ब्रह्मावर्त नाम का पवित्र देश बना है तहां के मुख्य निवासी हम गौड़ों को जानो और मानो ॥ वाहजी महाराज वाह आपने व्याख्यान तो खूब ही की परंतु यह विचार न किया कि प्रथमार्ध में चौंटे और द्वितीयार्ध में देश भर के विद्वान् आपको चिमट जावेंगे फिर

कितना गरुआ यह कलंक ॥

चतुर्थ– श्रेष्ठ लेख वह होता है कि जिसमें प्रतिष्ठितों के साथ उनकी प्रतिष्ठानुसार शब्दों का ऊह हो जिससे उसकी समालोचना के समय किसी के चित्त में ग्लानि न उपजे और न किसी को उसके पढ़ने व सुनने से किसी प्रकार का पश्चात्ताप वा क्षोभ हो सो इसका भी कुछ विचार नहीं किया गया है (१७) कहां कैसा यह अप्रतिष्ठित कर्म और

आपका पता भी न चलेगा और विद्वानों को अर्थ करने में आप के समान खैंचा तानी भी न करनी पड़ेगी वे लोग आपकी उसी त्रिकांडी स्मृति के अनुसार गुड़ का अर्थ गोल और गोल से स्वार्थ में कु प्रत्यय करके आपको कुण्ड का सहोदर बना छोड़ेंगे और आपकी गिन्ती हरयानियों और गोलापूरबों में करावेंगे फिर आपका मीठा मथमार्थ भी ठीक होजावेगा और ब्रह्मावर्त देश यथा शास्त्र कान्यकुब्जों ही के अधिकार में रहेगा और आदि तथा शुद्ध गौड़ वे रहेंगे जिनकी जड़ गौड़वाना नाम प्रदेश में है और „ सारस्वताः कान्यकुब्ज गौड़ो मैथिल उत्कलाः „ इस वाक्य के पाठ क्रम से भी उनका कहा शुद्ध ठहरेगा इसलिये बहुत अच्छा हो जो आप हनु से अधिक न बढ़ें क्योंकि प्रसिद्ध है कि बढ़ता है वह गिरता है ॥

(१७) दयानन्दः परास्तः— ऐसा हज़ारों बार लिखना तथा जगत् मान्य श्रीमान् को छली भ्रमी नास्तिकादि कह कर — स्वयं वरिष्ठ होना तथा ऐसा लिखना कि „ पाठनराअपि गौड़ा अधीत वेदेभ्यो दाक्षिणात्येभ्यः श्रेष्ठ तरा एव „ अर्थात् वज्र मूर्ख भी गौड़ लोग समस्त वेद पाठी अच्छे २ विद्वानों से बढ़ कर ही श्रेष्ठ होते हैं — „ दक्षिणात्यानां वेदाध्ययनं शूद्रवन्निषिद्धम्„ अर्थात् जैसा शूद्रों को वेदों का पढ़ना अनुचित वैसा ही दक्षिणी ब्राह्मणों को भी न पढ़ना चाहिये। सार इनके हृदय का यह है कि पंच गौड़ों के नाईं पंच द्राविड़ भी वेदों को डुबो देवें तो हमारी बन पड़े— इसी हेतु आपने लिखा है कि कभी वेदों की वाणी कल्याणकारणी नहीं ठहर सकी। सो दयानन्द ठहराते हैं — अतः दयानन्दः परास्तः॥

लेकिन कभी ऐसे लोग विद्वानों से प्रतिष्ठा नहीं पाते॥
पंचम— सब बात रही एक तरफ़ अर्थात् और कुछ नहो तो जिसका नाम विद्वान् का लेख उसका हर एक आशय संगत तथा युक्तियुक्त और वेदानुकूल तो हो और उस्के सब पद पदार्थ तथा छन्दादिक व्याकरणादि शास्त्रों की यथावत् शुद्धि रखते हों (१८) अन्यथा व्यर्थ

(१८) असंगत और परस्पर विरुद्ध ऐसे लेखों को कहते हैं जैसे कहीं लिखा कि दयानन्द मारे डर के कभी किसी विद्वान् के साम्हने नहीं हुए और फिर कहीं जाकर लिखा कि बम्बई काशी लाहौर आदि में फलाने पंडितों से हारे— मनुष्यों से सूर्य चन्द्रादि ग्रह उत्पन्न हुए दाक्षिणात्यों की भाषा को अशुद्ध कहना फिर उसकी अशुद्धता के परिचय में अपनी उस भाषा के अपशब्दों को दिखाना जिसे प्रथम बहुत शुद्ध कह चुके थे— "एष धर्मस्य वै योनिः" इस मनुवाक्य का विपरीतार्थ यह जताना कि ब्राह्मण मात्र की उत्पत्ति के बीज हम गौड़ लोग हैं "नोपतिष्ठति" इस मनुवाक्य से दो संध्या की जगह चार संध्या करने को बताना अंगिरा ऋषि[1] - ईदी[2] और पार्वती[3] का संबंध अंगरेज़[1] ईसामसीह[2] और गिरजाघर[3] में यथा कथं घुसेड़कर उनको वेदानुकूल कहना तथा स्त्रियों के मुख योनि की उपमा देना- युक्तिरहित और वेदविरुद्ध समझा यह कही जाती है। कि "वैशेष्यात् प्रकृति श्रैष्ठ्यान्नियमस्य च धारणात्॥ संस्कारस्य विशेषत्वात् वर्णानां ब्राह्मणो गुरुः॥१॥ यद्यप्येते त्वनिष्टेषु वर्तन्ते सर्वकर्मसु॥ सर्वथा ब्राह्मणाः पूज्या ब्राह्मणो दैवतं महत्॥२॥" ये दोनों श्लोक यद्यपि मनुस्मृति में ही पाये जाते हैं परन्तु विचारवान को स्पष्ट विदित होजाता है कि प्रथम श्लोक से द्वितीय श्लोक का आशय बहुत विरुद्ध है मनुजी ऐसे महात्मा के लेख में ऐसा विरोध नहीं आसक्ता सो इसका किंचिदपि विचार न करके प्रधान को गौण मान प्रक्षिप्त और सर्वथा त्याज्य वचनों को प्रधानता देकर लिखा कि ऐसे ही ब्राह्मण होना चाहिये नहीं तो कलि किस प्रकार प्रवर्त होय॥ अब उनके गद्य और पद्यों की थोड़ी अशुद्धि को और देख लीजिये॥ १९ वें श्लोक के चतुर्थ पदांत में खंड पदोपन्यास रूप यतिविच्छेद दोष है— १९ वें श्लोक में कान्तिकान्त का पद अशुद्ध और २० वें का भावार्थ भ्रष्ट २९ व ३० वें श्लोक लक्षण विरुद्ध और

विकत्थन और वृथा परिश्रम कहाता है इन दिनों तो सभ्यमान्य वह लेख होता है जिसकी देश भाषा तक सर्वथा और सर्वांश शुद्ध हो सो यह

४७ वें श्लोक में छंदोभंगदोष है इसी प्रकार और भी बहुत से पद्य हैं ॥

३०२ पृष्ठ में " स्वस्मिन् शूद्रत्व निरसनायोपनयन मवश्यमेव द्विजत्व सिद्धा संध्योपासन पुरस्सरं वेदाधिकार सिद्धौ विधेयमिति सिद्धान्तः " इस पङ्क्ति की अनन्वितता और अशुद्धता विद्वज्जनों को स्वतः स्पष्ट हो जायगी ग्रन्थकार का भाषार्थ भी देखिये " अपने शूद्रता के दूर करने को उपनयन अवश्य करना चाहिये इस प्रकार द्विजत्व सिद्धि करके संध्योपासन पूर्वक वेदाधिकार है सिद्धान्त हुआ " अब किंचित् यहां भी कटाक्ष निक्षेपणीय है कि इस प्रकार यह किस पद का अर्थ है और प्रकार के अनुक्त होने से " इम " इस पद से किसका परामर्श है एक और विचित्र चमत्कार देखिये " सन्ध्योपासन पुरस्सरं " इस पद को " समासान्तःस्थ " वेदाधिकार पद का विशेषण लिखा है और " वेदाधिकार सिद्धौ " इसका " वेदाधिकार है " यह अर्थ निरूपण किया गया है॥ क्यों न हो व्युत्पन्नों का तो यही लक्षण होना चाहिये व्युत्पन्नता तो इसी प्रकार दिगन्त गामिनी होती है साष्टाङ्ग है आप ऐसे व्युत्पन्न शिरोमणियों को। और भी देखिये पृष्ठ ३९० में आपने लिखा कि " सन्न्यासाश्रमस्तु मुक्तिरूपः फलं परमपुरुषार्थत्वादिति सिद्धम् " इस वाक्य का अर्थ कहिये क्या है। पृष्ठ ४०५ में आपका निस्नातं पद तो बहुत ही शुद्ध है समाप्ति के श्लोक में " वेदार्थ शब्देनि मुख प्रकाशः " ऐसा लिख, देखिये आप कैसे वैय्याकरणभूषण बने हैं। भला कहिये तो सही कि आपने यहां कौनसा समास माना और इस लेख से किस रीति वेदार्थ प्रकाश यह नाम निकला। आर्यगण महात्माजी वेदार्थ प्रकाश करने को चले तो यह प्रकाशित किया कि परमेश्वर निराकार होने के कारण श्वासरूप वेद उससे उत्पन्न ही नहीं हो सके, और नियोग तथा मातुलसुता परिणयन में दोषारोपण कर जिन वेदों का प्रकाश करना चाहते थे उनका स्पष्ट खण्डन किया इसी प्रकार बाल विवाह की पुष्टि करना भी इन लोगों का अनर्गल कर्म और देश विनाश का परम हेतुभूत इनका सारा ग्रन्थ है ॥४॥

शुद्धि तो बहुधा ऐसे पंडितों से होनी परम दुर्घट तिसमें इनकी भाषा तो सब से निराली और अतीव विलक्षण है॥ बस यही लीला पं० अक्षराम फुल्लौरी और राजपुराणिक पं० चतुर्भुज जी तथा रामसुब्रह्मण्य शास्त्री जी और पं० उमादत्तजी आदि सब भूतग्रंथकारों की जानो जब बड़े २ पण्डित नाम धारियों ही की पोथी निरी थोथी फिर और लाला लोगों आदि की ऊटपटांगों का तो कहना ही क्या है इनका साहस तो इस कहावत का सा है कि "बड़े २ बहे जायं कोरिया कहे मोय पार उतार" इन सब लोगों ने अपनी रचना का नाम मन माना उस प्रकार रक्खा है जैसे कोई अपने जन्मान्ध पुत्र का नाम धरे कमलनयन हां इस विषय में प्रशंसनीय और निर्दोष हैं तो पं० उमादत्तजी महाराज (१६) जिन्होंने आत्मरचित ग्रंथ का नाम वास्तव्य में यथार्थ अर्थात बहुत ही ठीक सादृश्यता के साथ रख कर छपवाया है॥ वह नाम सन्मतेन्दु है इसमें पीछे जो इन्दु शब्द आया है उसका वाच्यार्थ चन्द्रमा है सो सब लोग जानते ही हैं कि वह कलंकी और दोषाकर अर्थात् रात्रि अर्थात् अन्धकार का करने वाला होता है यदि पंडितजी महाराज सकार की जगह मकार लिखते तो उनके ग्रन्थ का नाम विशेष शुद्ध कहा जाता इस अशुद्धि को सब लोग उनकी और विशेष कर मेरी प्रार्थनानुसार शुद्ध कर लेवें॥

प्रथमग्रासे मक्षिका पातः। इस संस्कृत और "बिस्मिल्लाही गलत" इस फ़ारसी वाक्य का पूर्ण परिचय इनके सिवाय और कौन करा-

(१६) ये पंडितजी वास्तव्य में उस बरेली के रहने वाले हैं जहां सर्कारी पागलखाना है जो नहीं जानते वे उनको फ़र्रुख़ाबाद निवासी कहते हैं॥

वे। महात्माजी ने यह ग्रन्थ १४ वर्ष में बना पाया जिसकी यह कैफ़ियत कि प्रथम ही श्लोक में जो गुरु की वंदना लिखी है उस में गुरु शब्द को नपुंसक लिखा है (२०) तिस्पर आप व्याकरण ज्ञानी का दम भरते और श्रीमान् पूर्ण विद्वान् स्वामीजी महाराज को (जिन्होंने संसार भर के पंडितों की ७२ पीढ़ियों की भूल मिटाकर (२१) सत्पथ दिखाया है) व्याकरण शास्त्र का अनभिज्ञ अपने ग्रन्थ में लिख मूर्खों के आंखों में धूल झोंक ठगते और काशी तक के विद्वानों के शिरोमणि बनते हैं वाहजी वाह नमस्कार है आपको। चेतो भाई चेतो हुआ सो हुआ अब भी चेतो और रहा सहा भ्रम निम्न लिखित वृत्तान्त (२२)

---

(२०) हां यदि पंडितजी महाराज कहें कि जैसे के लिये वैसा लिंग प्रयोग लिखजताना क्या दोष है तो हमभी क्षम्यताम् कहेंगे॥

(२१) विचार करना चाहिये कि पांच हज़ार वर्ष के भीतर आप से कहीं बढ़ कर उस विद्वानों की चालाकी कि "जिसको उन्होंने व्यासवशिष्ठादि के नामों से बनाकर चला दी थी" जिसने पकड़ कर सब को दर्पणवत् दिखादी उसके सन्मुख आप आधुनिकों का काव्य क्या चीज़ है॥

(२२) सम्वत् १९२७ के जेष्ठ मास में एक माह से अधिक श्रीमान् स्वामीजी महाराज नगर फ़र्रुख़ाबाद में विराजमान थे उन दिनों ये महात्माजी हम स्वामीजी से शास्त्रार्थ करेंगे ऐसी गर्मा गर्म ख़बरें प्रत्यह उड़ाते रहे परंतु सैकड़ों युक्तियां लगाने पर भी श्रीमान् के सन्मुख घड़ी भर को भी खड़े न हो सके यह बात सर्वहितकारी समाज के १७वें मासिक पत्र द्वारा विस्तार पूर्वक प्रकाशित हो चुकी है तथापि पंडितजी बहुत कुछ पाण्डित्य का दम भरते और श्रीमान् को अपनी पुस्तक में सैकड़ों जगह धूर्त और वेषधारी आदि अनेक दुर्वचनों से वेष्टित करते और अपना वेदभाष्य बनाने का विज्ञापन देते हैं और लिखते हैं कि मेरे ग्रंथ को वेद ही जानो जो कोई इस मन्मतं तन्तु का खण्डन करेगा वह वेदों ही का खंडन कर्ता होगा परंतु परमेश्वर का नाम गर्वापहारी है

गड़बेटो—आर्यगण महात्माजी अनेक दुर्वचन श्रीमान्को लिखकर सफ़ाई दिखाते हैं "तनुमात्सर्य भावतः" कहिये संसार की कैसी विचि

उसने इनको तात्काल पारसाल ऐसी पटकदी कि महात्माजी का जी ही जान्ता होगा॥ वह वृत्तान्त यह है कि यहां ज़िला स्कूल में इटावे के निवासी पंडित भैरवदत्तजी के प्रख्यात एक सच्छिष्य पंडित ललिताप्रसादजी नाम के एक विद्वान् हैं उनके साथ शास्त्रार्थ छिड़कर उमादत्त पराभूति प्रकाशित हुई॥ यहां आगे उस्में का थोड़ासा उदाहरण लिख दिया है सब लोग उसको देख निर्णय करें कि ये कैसे क्या विद्वान् हैं॥

अथोदाहरणम् — वस्तुतस्तु पद्मान्ते वृत्तमपि श्रीमद्दण्डिनः सूक्तिं यथार्थ्ययतीत्यस्य अथया इच्छयादण्डिन स्सूक्तिं गौर्गौ रित्यादिकामयति अगच्छति भवति सति विपरीति लक्षणया गच्छति सति पद्मान्तेर्थि वृत्तमपि श्रीमत् काङ्क्षा श्रीमदित्यर्थो यथार्थी दण्डिनो राज्ञ इच्छया दीयता मस्मा इत्याकार कां सूक्तिं मयति याञ्चवदत्रापि गच्छति सति किं श्रीमानिति ध्वनी तोना वबुद्ध एव भवता नैतच्चित्रम्॥ इस पंडित ललिताप्रसादजी के लेख का आशय ठीक २ यह है कि जिस प्रकार कोई भिखारी राजा की यह आज्ञा पाकर भी कि इसे कुछ दो सुशोभित नहीं होता। उसी प्रकार आपका श्लोक भी लक्षणा विरुद्ध होने के कारण अशोभित है॥ सो यह अर्थ पंडित उमादत्तजी नहीं समझे उन्होंने पं० ललिताप्रसादजी को यह लिखा कि। अस्मिन्नगरे स्वप्नेपि मम राज्ञा सह समागमा भावाद्दीयता मित्युक्ते स्तु दूरा देवा पास्तत्वात्। अर्थात् मांगना तो दूर रहा कभी सपने में भी मेरा इस नगर में किसी राजा से समागम नहीं हुआ॥ अब विद्वान् लोग विचार कर लेवें कि पं० उमादत्तजी महाराज कैसे विद्वान् हैं और उनसे पूछें कि पं० ललिताप्रसादजी ने यह कहां लिखा था कि तुम राजा से मांगते फिरते हो। जब पं० ललिताप्रसादजी सवाल दीगर जवाब दीगर की कहावत देखी तब उन्ने पं० उमादत्तजी को दूसरा पत्र लिख उसमें यह श्लोक

त्र लीला है अर्थात् ये लोग कैसा उछल२कर पांडित्य दिखा रहे हैं परंतु खूब जान
लो कि बहुत सा बुड़ बुड़ शब्द और छलक अपूर्ण ही घट में देखी जाती है न कभी
किसी पूर्ण में भाई पंडित नाम धारी लोगो तुम अपने मुंह जितना अपना बड़प्पन

लिखा " अर्थबोधप्रमादभ्रकिमज्ञः पूरपूरिते। लेखोपाये न किं नोव स्मृसुष्युन्मी लिले मया॥१॥"
अब पं० उमादत्तजी महाराज ने अपनी पहिली भूलको छोड़ पं० ललिताप्रसादजी के इस श्लोक पर तर्क
किया कि चक्षुषी इति प्रथमान्ते प्रकृत भावाभावः केन, सप्तम्यन्तस्त्व नन्वितः॥ इसे देख पं० ल०
प्र० ने लिखा कि वाहजी वाह आपने तो खूब ही वैयाकरणता छांटी॥ अर्थ न समझकर सप्तम्यन्त
अनन्वित है यह लेख तो स्पष्ट आपकी यथा ज्ञातता विदित करता है॥ फिर इसका अन्वय लिख
भेजा वह उमादत्त पराभूति ग्रन्थ में स्पष्ट लिखा है॥

अब इन महाशय की कुछ और भी वैयाकरणता उमादत्त पराभूति ग्रन्थ से संग्रह की जाती है॥

जैसे अपराह्ण शब्द जो कि उत्तर दिन वाची है उसे महात्मा जी अपरान्ह और प्रतिद्वन्द्वि शब्द को
प्रतिद्वान्दि लिखते हैं और बड़ ऋषि वचन विरोधात् यहां संहिता भी नहीं कर जानते॥ अब
कुछ साहित्य का विषय देखिये। "दीपति सर्व मसी प्रकृते रह महमिका मनुसत्य पथग्ज्जनः
॥ बुधजनस्तु विवेकवशेन तां यशायतुं यतते विगतस्मयः॥१॥ यह श्लोक पं० उमादत्तजी का
है इस पर ललिताप्रसादजी लिखते हैं कि इस श्लोक के प्रथम पाद में गुरु के स्थान में लघु व-
र्णो पन्यास से छन्दोभङ्ग है और जो पादान्त का लघु भी गुरु होता है यह समाधान, सो भी
असङ्गत है क्यों कि काव्यप्रकाश साहित्यदर्पणादि में स्पष्ट लिखा है कि यह वचन द्वि-
तीय चतुर्थ पाद विषयक है और "अवावसायके मया बिदूहिता सदर्थ के" ॥ अमासंम
नगासुपायता न्ययाति सन्मुदे ॥२॥ इस दूसरे वृत्त में हत वृत्तता दोष है। बस यह दि
ग्दर्शन मात्र कर दिखाया विशेष देखना चाहें सो असल ग्रन्थ में देख लेवें ॥ कहिये
पंडित राज यह पराभूति क्यों हुई और आप कैसे हार मान जवाब खा बैठे और आप

प्रकाशित कर घना बाई बनते हों उतनेही परीक्षकों के समीप कच्चा न ठहरते हो महत्व उसी का ठीक जिसकी स्तुति बिना स्तुत्यपुरुषकी इच्छा और खर्च के औरों के मुंह लेखनी द्वारा सुनाई दे। सो ऐसा कोई एक भी दृष्टान्त आप लोगों में से किसी का देखा नहीं जाता थोड़े स्थल और मनुष्यों के सिवाय आप लोगोंको कोई यह भी नहीं जानता कि कौन किस खेत की मूली हो। श्रीमान् सकल विद्या निधान स्वामीजी महाराज सारे भूमंडल पर सहस्रांशु के समान प्रकाश कर रहे हैं उसी प्रकार दसो दिशा उनकी सत्कीर्त्ति से आच्छादित और उज्वलित हो रही हैं लक्षावधि लोग उनपर अहर्निश धन्यवाद रूपी पुष्पों की वृष्टि करते और उनका उपकार मानते हैं परन्तु उनको इन बातों का किंचित्मात्र गौरव वा प्रतिष्ठा वा अभिमान नहीं न आप ऐसे अनेक लोगों की निन्दा कृति सुनकर उनको कभी कुछ क्षोभ वा ताप उपजता है। मुख्य तत्व इसका यही है कि वे मुक्त हैं और आप बद्ध इतना भारी अंतर उनमें और आप में है परन्तु शोक कि उसको आप [illegible]हीं जानते तभी आपलोग सब कुछ को न कुछ और न कुछ को बहुत कुछ समझते और लिखते हो श्रीमान् के निकट त्रिलोकी का राजा (२३) और उसका सारा वैभव तृण प्राय है।

के यजुर्वेद भाष्य के छपने में क्या देर है कुछ दरखास्तें भी आगई हैं वा नहीं॥

(२३) प्रसिद्ध है कि फ़र्रुख़ाबाद के विख्यात साहूकार लाला पन्नीलाल आदमी बड़े ही जुज़रस थे तथापि श्रीमान् की आज्ञानुसार सैकड़ों रुपया मासिक ख़र्च उन्होंने स्वीकार कर लिया था थोड़े से अनुचित पर श्रीमान् ने उनको क्षणमात्र में फटकार दिया-श्रीगोपालजी ने लिख मारा है कि वे इज़्ज़ती के डर से दयानन्द किसी राजधानी में नहीं गये परंतु प्रसिद्ध है कि जयपुराधीश महाराज रामसिंहजी को भी श्रीमान् ने इसी प्रकार सन्मुख

आप लोग इतनी हाय२ और अन्याय तथा खुशा मद से भी अपना पेट नहीं भर पाते और श्रीयुत परम निस्पृहता के साथ हज़ारों रुपयों का जगदुपकारक वार्षिक ख़र्च आनन्द पूर्वक चला रहे हैं। आप उनका सर्वथा विनाश और वे आपका सर्वथा प्रकाश चाहते हैं सो यह सब आप लोगों का कर्म आपकी केवल अविद्या और स्वार्थ तत्परता के कारण है और उनका सर्व कर्म उनकी सद्विद्या और परमार्थ दृष्टि से प्रवृत्त हो रहा है। इसी कारण आप सर्व प्रकार से दुखी और श्रीमान्

से हटा दिया और संबत १९१२ में श्रीमान् जब महाराजा तुकोजी राव हुल्कर वाली इंदौर के यहां मेहिमान हुए तब प्रशंसित महाराज ने उनको अपने ख़ास बाग़ की कोठी में ठहराया था दोनों काल श्रीमान्को साथ ले हवा खानेको जाते थे प्रति दिन सर्कारी पाठशाला में व्याख्यान होता था महाराज की आज्ञानुसार सारा दर्बार और प्रजागण बराबर हाज़िर रह कर व्याख्यान सुन धन्य बाद देते थे एक दिन सर्कारी कोठी में पंडितों की सभा भी हुई थी उसमें श्रीमान् ने समस्त राज मान्य बड़े२ विद्वज्जनों को क्षणमात्र में मूक कर दिया था राजा साहब बहुतेरा चाहते रहे कि श्रीमान् सदैव इसी ठौर विराजमान रहें परन्तु १५ रोज़ से अधिक श्रीमान् नहीं ठहरे यात्रा के समय जो महाराजा साहब ने बहुत से महार्घ वस्त्र और थाल भर मुद्रा श्रीमान्को भेट की थी उसका उन दिनों अनुपयोग जान श्रीमान् ने स्वीकार नहीं किया क्योंकि जब तक वेद भाष्य का आरंभ भी नहीं हुआ था कि जिसमें वह उपाय न काम आता॥ ऐसे अनेक दृष्टान्त हैं॥

अतुल सुखयुक्त रहते हैं सिद्धांत यह कि जिनको सदैव त्रिविध संताप घेरे रहै उनके उपदेशों पर चलने वालों का कहो किस विध कल्याण हो अतएव श्रीमान् सबको वास्तविक सुख हेतु का बोध अनेक बिध कर रहे हैं कि भाई आर्यो अपना सत्य सनातन वैदिक धर्म गहो जिससे तुम्हारी पराधीनता छुटे और कामना चतुष्टय की सिद्धि हो और "पराधीन सपने सुख नाहीं" यह कहावत देश भर में भली भांति प्रथित है परंतु उस पर किसी का कुछ ध्यान है न बिचार आर्यगण यद्यपि यह ऊपर लिखी कहावत मोटी और भद्दी है परन्तु आशय इसका बहुत ही गम्भीर जानो जिस दिन वह हमारे देश निवासियों के चित्त में ठीक२ धसेगा उसी दिन से देश का सुधार होने लग जावेगा॥ श्रीजगदीश्वर श्रीमान् परम सुजान सकल सद्गुणों की खान इन स्वामीजी महाराज को परमायु करे जिन्हों ने देश सुधार का बीज सर्वत्र अनेक भांति बोकर उसके अंकुर को हरा करा रखने के लिये ठौर२ समाजों को जमाया है और उनमें से बहुतेरे अपना काम वैसाही कर रहे हैं जैसा कि चाहिये। आशा है कि सर्वशक्तिमान् उनके भी हृदय को आशु निर्मल करेगा जिनका शोक वास्तविक सत्पुरुषों को है— परन्तु बिना उपाय कुछ नहीं होता अतएव प्रशंसित श्रीमान् ने अंतःकरण की शुद्धि के लिये परमेश्वर की स्तुति प्रार्थना और उपासना जिस प्रकार करने को कही है वह सबरीति हमने अपने ज्ञान सागर ग्रन्थ में यथावत् लिखी है जिनको अपना और अपने देश का हित अभीष्ट हो वे उसमें अच्छे प्रकार मन लगा कर निर्मल होवें

और सुगमता के साथ सकल सुख भोग संसार से तरें परन्तु बिना अंत:करण की शुद्धि के कभी किसी मनुष्य का कल्याण नहीं हो सकता न ऐसा पुरुष औरों का कल्याण कर सकता है इसी कारण जगत् में थोड़ों को छोड़ क्या पंडित क्या मूर्ख क्या राजा क्या रंक क्या अमीर क्या फ़क़ीर अर्थात् सब के सब (२४) ख़राबी में पड़े सड़ गल रहे हैं- इन में किसी एक को भी मुख्य कर्तव्य

(२४) देखो जगत् में कोई एक भी सुखी नहीं देखा जाता न किसी का कोई व्यवहार शुद्ध होता है। सब एक दूसरे से कपट छल रखते हैं। नहीं करना सोई करते हैं। देशान्तरीय थोड़े ही प्राचीन इतिहासों में लिखा देखा जाता है कि कहीं भरत खंड में मिथ्या वादी नहीं देखा गया — देनलेन उनका ऐसा शुद्ध है कि जो लेनदार- देनदार से कहे कि तुम जब तक मेरा रुपया अदान करदो कभी इतनी हद से बाहर न निकलो तो वह वैसाही करता है। लाखों रुपयों का माल बिना रक्षक दिन रात महीनों तक जिधर देखो उधर पड़ा रहता है परंतु कोई उस पर दृष्टि पात तक नहीं करता। इत्यादि अनेक भांति जहां की स्तुति तहां की देखो अब कैसी फ़ज़ीयत सब के अग्रगंता पंडित संत महन्त आचारी पुजारी और गुसाईं- सोई अधिक झूठे लोभी कपटी और दुराचारी। देखो कल की बात है कि पूर्व में तारकेश्वर के महन्त एक पर स्त्री के प्रसंग में तीन वर्ष को और गुजरात में जाम नगर के बड़े लक्षाधीश लाखों मनुष्यों के कुल पूज्य गोकुलिया गुसाईं ब्रजेशजी एक चोरी के अपराध में दो वर्ष को कारागार सेवी हुए। इसी प्रकार जगन्नाथपुरी के वे राजा साहब जिनकी उपस्थिति के बिना जगन्नाथजी चोला ही नहीं बदलते थे जन्म भर को कारे पानी गये। और गुजरात बडौदा के गायकवाड़ बद चलनी के कारण गद्दी से उतार मदरास में

क्या है सो नहीं सूझता—करना धरना तो दूर कोई इतना भी तो नहीं सोचता कि मनुष्य संसार भर के जीवों में श्रेष्ठ कहा जाता है सो

नजूर बन्द कियेगये। इनसब के लिये वे घुमार खर्च और प्रयत्न ज्ञया परन्तु सब व्यर्थ ही गया इनका दुःख आर्यों से पूछे॥

पंडित २ बजे परंतु पंडित और विद्वान् शब्दों का ठीक अर्थ सत् और असत् का विवेक करना कराना है तदनुरूप ये लोग चाल न चल कर जैसा धनी मानी लोगों का मन देखें वैसा ही चट शास्त्रों का प्रमाण बना देवें कहो यह वास्ते पंडिताई के धब्बा नहीं॥ इसी प्रकार ये लोग सबके गुरु बनें परन्तु गुरु शब्द का ठीक अर्थ सबका दिन रात हित ही करना जो है सो कभी किसी पर प्रकाशित न करें। देखो वेदों में गायत्री मंत्र का कैसा बड़ा माहात्म्य है इसी कारण देखो उसके उपदेश के समय ब्राह्मणों में अब तक कैसा उत्सव किया जाता है परंतु इन दिनों के गुरु बनने वालों ने संसार को ठगने के लिये उस परम दिव्य अनुपम वेद सार मंत्र को व्यर्थ करके अपने न्यारे २ बहुत से मंत्र गढ़ लिये हैं उनका माहात्म्य सुना कर जने‌ऊ दारों से भी कहते हैं कि तुम अब तक गुरु मुख नहीं ज्ञए तुम्हारी काया अपवित्र और नर जन्म वृथा है इनकी सुनने वाले लोगभी उनके जाल में फसकर तुरत ज्ञआ सो ले ले चेला हो वैठते हैं। चेला क्या ज्ञए मानो उसी दिन घर वार सहित जन्म भर को उनके हाथ विकगये। जव दिन रात पंडितजी वा गुसाईं जी वा ब्रह्मचारीजी वा किसी संत वा महंत जी की धौंस सिर पड़ने लगी तव देखो कितने चेलाजी वैसे मनही मन दुखी होते हैं फिर इसकी न कहीं दाद है न फ़रियाद—कुछ हो गुरु जी तो अपना काम बना चुके—होय तहां लौं दे—न होय तव अपनी ऐसी तैसी में जा॥ कहो गुरुजी का मंत्र चेला को फला वा गुरु को। अतएव गुरु शब्द का ठीक अर्थ जो हितोपदेष्टा था सो अब

क्यों- विना इस सोच विचार के कभी कोइ मनुष्य - मनुष्य नहीं कहा जाता। जैसे सड़ा गल्ला बीज वा मेवा वा लकड़ी आदि पदार्थ अपनी

संसार में ठग डाकू और बदमाश वाचक हो गया। जैसे किसी ने किसी को दम झांसा दे दिवाकर किसी प्रकार से अपना काम गांठ लिया तो लोग उस्से कहते हैं कि वाह भाई तुम तो बड़े ही गुरू हो आख़िरकार तुमने उसको अपना चेला बना ही छोड़ा- इत्यादि अनेक इस्के दृष्टान्त जा एन हैं॥

एक और नया गुरुचरित्र सुनिये वह। इस तौर पर है कि कश्मीर के पास सुकेत मंडी नाम के एक वज्रस्तुल्य राजा विजयसिंह जी संस्कृत पढ़े शिवभक्ति में प्रसिद्ध हैं वे किसी कारण अपने यहां के किसी कुल पूज्य कुछ पढ़े हुए ब्राह्मण से रुष्ट हो काशी निवासी पंडित बालशास्त्री जी के शिष्य हुए जब शास्त्री जी उनको खूबही लूटने लगे तब कुल पूज्य जी का हृदय शान गुणितबद्ध गया - गांव के बाहर थोड़ी दूर पर एक शिवालय है राजा साहब वहां अपने इष्टदेव के दर्शन को प्रायः जाते थे उसी के निकट पूज्य जीने धूनी रमाई कुछ दिन पीछे प्रसिद्ध किया कि शिवजी मुझसे एकान्त में बातें करते हैं इस बात की कितने ही मनुष्य जोकि साधक थे कुछ२ साखी भी भरने लगे परंतु उसने सुना कि राजा साहब सत्य नहीं मानते बोला कि "हाथ के कंकन को आरसी क्या" जो मैं कहूं वह राजा साहब करें और आंखों से देख लें- वहां क्या कमी थी दो एक हज़ार रुपया पुरश्चरणादि के नाम से ले लिखाकर एक दिन बोला कि बस काम फ़तह है- कह दो राजा साहब से कि कल शिवजी की महा पूजा लेकर साथियों को पांच सौ क़दम दूरी पर छोड़ हाथ वांध मंदिर में हाज़िर होवें इस प्रकार हाज़िर हुए राजा साहब ने मंदिर में आदेखा कि शिवजी का अचल लिङ्ग दो तीन बार डगमग२ हुआ और ऊपर से दूध की धारा और कुछ बारीक से फूल शिवजी पर गिरने लगे फिर

आकृति में होकर भी उनका गुण उनमें न होने के कारण संग्रह योग्य नहीं ठहरते- उसी प्रकार बिना मनुष्यता के उपरोक्त पंडित

एक आकाश वाणी यह सुनी कि " राजन् धन्योसि धन्योसि नान्योस्ति सदृशस्तव ॥ अति पुण्य बलात्तवेयं सिद्धिः ॥ अब क्या पूछना है जो कुल पूज्य थे सो जगत्पूज्य होगये। और हज़ारों के वारे न्यारे होने लगे नित नये ऐसे ही चमत्कार राजा साहब को दिखला कर शिवजी महाराज राजा जी पर यह ताकीद करने लगे कि " राजन् त्यज बालशास्त्रिणः संसर्गम् " यह सुन राजा साहब को सुख के स्थान में विषाद खड़ा हो गया क्योंकि उनको तो इस वाक्य पर भरोसा था कि " शिवे रुष्टे गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन " दिन रात चैन नहीं कभी शिवजी बोलें कभी बोलें ही नहीं जब नाराज़ हो जायं तब बहुत सी खुशामद सिद्धजी करें तब यह आवाज़ आवें कि " राजन् त्वमधमोसि न स्मरणोचितं वचः- वेद्म्यहं तव मानसम्- शुद्धो भवत्यज का पत्यम्- अनेनैव विग्रहेण मल्लोकं प्राप्स्यसि- नो चेन्नाशमेष्यसि- शिवजी कहते हैं कि बालशास्त्री को छोड़ दे जो ऐसा करता हूं तो अपकीर्ति और नहीं करता हूं तो आपत्ति इस धर्म संकष्ट में फंसे हुए राजा साहब पर एक दिन सिद्धजी का यह सब भेद खुल ही गया कि फ़लां २ मनुष्यों का यह सब फ़रेब है उन्हों ने मैदान के उस अंधेरे दालान के अंदर से एक सुरंग खोद कर मंदिर के नीचे उसे लाकर एक कल शिवजी के नीचे जमाई है और उसी ठौर से एक ज़ीना भीतर ही भीतर गुम्मज़ में पहुंचा दिया है दोनों ठौर दो आदमी बैठ कर यह सब फ़रेब करते हैं अंत को संग लेजाकर वह सब मार्ग दिखा दिया चट सब पकड़ गये और भेद को छोड़ सबको कारागार हुआ ॥

कुछ हो हमको तो बड़ा खेद इन राजा साहब ऐसे सत्पुरुषों का है कि जो मन नहीं

आदि लोग सब निकम्मे कहे जाते हैं- जो लोग अन्त तक इसी दशा में रहकर मर जाते वे आत्मघातक कहाते और स्वकर्मानुसार नीच अर्थात् पश्वादि योनि पाते हैं[१] और जो अपने में किसी प्रकार की मनुष्यता उत्पन्न करके मरते वे फिर भी यथा कर्म मनुष्य योनि प्राप्त कर लेते हैं[२] और जो लोग जहां तक हो सके वहां तक परिश्रम करके अपनी मनुष्यता प्रगट कर के मरते वे अमर हो जाते हैं[३] इसी को " अन्ते मतिः सा गतिः वा अन्त मता सो गता " ऐसा कहते हैं। तीसरे प्रकार के मनुष्यों में से जो लोग जन्मादारभ्य मरण पर्यन्त यथाविधि-यथा शास्त्र; परम शुद्ध वैदिक मार्ग पर साबित क़दम रहते वे योगी ज्ञानी मुक्त सिद्ध वा परम हंस कहाते हैं[४] सो भाई आर्य गण इस चतुर्थ कोटि में साक्षात् श्रीमान् स्वामीजी महाराज

मन परमेश्वर प्रापक मार्ग की खोज में मछली के सदृश तड़फते हैं परन्तु सत्य गुरु की प्राप्ति न होने के कारण बेचारे आप्त काम नहीं होने पाते हे जगदीश्वर तूने जिस प्रकार सत्योपदेष्टा श्रीमान् स्वामीजी महाराज को महा राना साहब उदयपुर व महाराजा साहब इन्दौर तथा राजा साहब मसूदा आदि से मिला कर उनका कल्याण कराया उसी प्रकार इन पर भी अपनी कृपा दृष्टि करके शीघ्र इनको स्वामीजी वा उनके ग्रन्थों से मिलाप करा जिसे ऊपर लिखे सब स्वार्थी शास्त्री पंडित आदि वधिकों के पास कट पट इन का गला छुटे और ये लोग जो चित्त से चाहते हैं वह इनको आनन्द पूर्वक प्राप्त हो जाय और इनके हाथ से अनन्त मनुष्यों का हित हो ॥

की परम स्तव्य भव्य और दिव्य मूर्ति है। इनके परम श्लाघ्य गुणों को जानना और मानना कोई सामान्य बात नहीं है। इस देश में सब २४ किरोड़ मनुष्य अभी थोड़े दिन हुए नव गिने गये हैं उनमें से कम से कम २३ किरोड़ मनुष्यों को तो प्रथम ही दर्जे में जानों। बाकी रहे १ किरोड़ उनमें से थोड़ों को छोड़ और सबको दूसरे दर्जे में मानो। और जिस क़दर छोड़ चुके हो उनको तीसरे दर्जे में ले आओ और उन्हीं को श्रीमान् के कुछ गुणों को जानकार समझो॥

सिद्धान्त यह है कि महान् भारब्धोदय होय तब सकल जगत् पावन श्रीमान् के सदुपदेशों पर किसी को श्रद्धा वा विश्वास होय। फ़ारसी कहावत है कि "क़दरे न्यामत बाद ज़वाल" निश्चय जानिये कि ठीक ऐसा ही हाल होगा अर्थात् एक दिन ऐसा आवेगा कि उस समय के लोग श्रीमान् के लिये इतना शोक करेंगे कि जिसका वारापार न होगा उसी प्रकार प्रस्तुत काल के निकम्मे लोगों की निन्दा करते २ भी वे लोग न अघावेंगे। इसी लिये वार वार कहा जाता है कि भाई आर्यगण नेक चेतो और श्रीमान् के अनन्त अनुपम अतुल अमल अचल और अनई गुणों में हो सके वहां तक अनुराग करो—आप सुधरो और अपनी सन्तति तथा देश को भी विपत्ति से उबारो। बस यही उपदेश सबको श्रीमान् का है सोई प्रार्थना मेरी और कर्तव्य सब आर्य समाजों का है॥

आर्यगण अब स्थालान्तर में श्रीमान् सकल विद्या निधान स्वामी जी महाराज के विषय में कौन लोग यहां से यूरूप तक

कैसा क्या विचार करते हैं उसका थोड़ासा उदाहरण आपको दिखला कर अपने इस ग्रन्थ की परिपूर्ति करता हूं ये सब लेख बड़े २ प्रसिद्ध, विद्वान् और जागृत पुरुषों के हैं

अथ प्रमाणाष्टकम्

हरिश्चन्द्रचन्द्रिका मास मार्गशीर्ष

स्थान नाथद्वार राज्य उदयपुर।

(१) श्रीयुत स्वामी दयानन्द सरस्वती जीका स्वागत देश मेवाड़ ये स्वामीजी हम हिन्दुओं के पूरे हितेच्छु हैं क्योंकि हमारे मुख्य प्रमाणभूत वेदों को सर्वार्थ चिन्तामणि मान कर जैसा किचाहिये वैसे सर्व काल उसकी मान्यता की वृद्धि के लिये उद्योग करते ही रहते हैं और हिन्दु पशुओं को स्थान २ में यथा शक्ति यथा काल सदुपदेश भी करते फिरते हैं यह उनकी परम प्रशंसनीयकृत्य है अतः ऐसे सत्पुरुष श्रेष्ठ वान्धव का स्वागत करना हम लोगों को अवश्य प्राप्त है क्योंकि उनका पधारना इस मेवाड़ देश में सांप्रत हुआ है यद्यापि कतिपय बिषयों में अल्प २ कारणों से हमारा और उनका एक मत्य नहीं है तथापि बहुत से विषय ऐसे हैं कि जिन में एक मत्य भी तो हैं और सर्व विषय में एक मत्य हो जाना सांप्रत इस जगत् में बन्ध्यापुत्र के सदृश असभवित ही भासता है क्योंकि पिता पुत्र स्त्री पुरुष भाई बन्धु इष्ट मित्र इन में भी जब सर्वांश में एक मत्य कहीं भी हो ऐसा नहीं कह सकते तब अन्यत्र कहां उपलब्ध हो सक्ता है। संक्षेप से इनके और हमारे मत के ऐक्य और अनैक्य का विशेष जैसे

कि आज तक समझा हुआ है इसके अनुसार लिखते हैं इस पर से और लोग भी विचार करलेवें कि ऐक्य विशेष अंश है वा अनैक्य विशेष अंश है ऐक्य अंश— ईश्वर को मानते हैं १ वेद को परम प्रमाणिक मानते हैं २ और स्मार्त कर्मों का अनुष्ठान करना आवश्यक मानते हैं ३ पठन पाठन क्रम सूत्रादि मूल २ ग्रन्थों का युक्त है ऐसा मानते हैं ४ यावत् बिधि निषेध की उपपत्ति युक्ति से सिद्धि समझते हैं ५ पदार्थ विद्या आदि जो देशांतरीय लोगों ने विषय कल्पना किये हैं उनको भी सिद्धता वेद मूलक ही मानते हैं ६ स्मृत्यादिकों का प्रमाण भी वेद मूलक ही स्वीकार करते हैं ७ वर्णजाति विवेक मानते हैं ८ नियोग विधि को छोड़ विधवा विवाह को अशास्त्रीय समझते हैं ९ अनैक्य अंश— वेद में विहित नहीं इसी लिये मूर्ति पूजा आदि व्यवहार ठीक नहीं ऐसा मानते हैं १ जीवते हुए ही पितृ पिता महादिकों का श्राद्ध करना मानते हैं २ इत्यादि ये जो ऊपर ऐक्य और अनैक्य विषय के सिद्धान्त दिखलाए एतन्मूलक ही अनेक स्थल में ऐक्य मत्य और थोड़े स्थल में अनैक्य सिद्ध होता है इसको निष्पक्षपाति लोग विचार कर देखें कि थोड़े विषयों के लिये हम लोगों से स्वामीजी से विरोध है यह कहां से सिद्ध होगा और जो लोग विरोध है ऐसा समझते हैं उन्हें इतना भी ज्ञान कहां कि स्वामीजी के और अन्य विद्वानों के शास्त्रार्थ को समझ भी सकें मूर्ख लोगों को इतनाही उत्साह रहता है कि शास्त्रार्थ हो अपने भी देखें और शास्त्रार्थ होने के पीछे पूछते भी हैं कि कौन हारा और कौन जीता

क्योंकि संस्कृत का अक्षर भी तो नहीं जानते लीजिये इस प-
र से इन मूढ़ उत्साहियों को कितना ज्ञान होगा यह स्पष्ट है
कि नहीं अस्तु इन मूढ़ों को तो क्या कहें परंतु जो अपने को वि-
द्वान् लगाते हैं वे भी अपना और खेल देखने वालों का खेल चा-
र विद्वानों को और स्वामीजी को दिखलाते हैं, ये लोग क्या कर-
ते हैं कि रात दिन सिर फ़ोड़ २ कर कहीं वेद में से ढूंढ ढांढ मू-
र्ति पूजा का प्रमाण अपनी समझ के अनुसार निकाल कर स्वा
मीजी को बतलाते हैं और कहते हैं कि देखो वेद में मूर्ति पूजा
लिखी है। स्वामीजी भी ऐसे लोगों के पूरे गुरू हैं कि उन प्रमा-
णों को देखते ही देवका अर्थ विद्वान् मूर्ति का अर्थ स्वरूप प्र-
तिमा का अर्थ तोल पूजा का अर्थ प्रशंसा वा सत्कार इत्यादि
बतला कर उनका रात दिन का सिर फ़ोड़ना एक क्षण में व्यर्थ
कर देते हैं उस पर वे महाप्राय दाव पेच में अज्ञात मल्लों के ऐ-
सी चिकोटों से वा दांत से काटने के सदृश स्वामीजी से उलझ
पड़ते हैं तब स्वामीजी तो स्वामीजी ही हैं वे भी कब छोड़ें ब-
ना कर ही छोड़ते हैं। सारांश शास्त्रार्थ तो शास्त्रार्थ की ही री-
ति से हो सकता है परंतु इसका मूर्खों को स्वाद ही क्या आवे मेरी
दृष्टि से तो जो इस जगत् में दीखते हैं सो सब वाद विवाद क-
रा कर विरोध को बढ़ाने वाले ही दीखते हैं कोई ऐसे नहीं दीख-
ते कि सबों से ऐक्य मत्य करें और करावें यद्यपि मैंने भी स्वामी
जी पर कटाक्ष रख कर कवि बचन सुधा में बहुत सा विषय लि-
ख मारा है और उससे फल वही समझ रक्खा है कि बड़े से
लड़ने में बुद्धि बढ़ती है अथवा जो स्वामीजी को बड़े २

उद्योग करने में इष्ट फल हैं वेभी सब फल मेरे लिये सही अब प्रार्थना करता हूं कि स्वामीजी अपनी क्षमा शीलता के अनुरूप मेरे लेख को विचार मुझको बुला कर दर्शन देवें

पाठकगण मैं संस्कृत विद्या और संस्कृत भाषण और समग्र वेदावलोकन और वक्तृता और निस्पृहता आदि में स्वामीजी के समान् नहीं हूं अर्थात् स्वामीजी मुझ से सर्वथा बड़े हैं अतएव मुझे माननीय हैं ‟ किमतः परंतेषां स्वागत मेव कार्यं” यही सिद्धान्त है। ‟ तुष्यन्तु सुजना बुध्वा विशेषान् मदुदीरितान्॥ अबोधेन हंसतो मांतोषमेष्यति दुर्जनाः॥१॥ वाचक लोगों से भी प्रार्थना है कि इस लेख में जितना कुछ लिखा है जहां तक मेरे समझ की दौड़ है सत्यही है यह लेख मेरे हृदय का ठीक २ चित्रही है ऐसा समझिये परन्तु इस चित्र के देखने के लिये उसी सूक्ष्म दर्शक काचकी अपेक्षा है जिस हृदय से दूसरे का हृदय जाना जाता है अलं किं बहुनेतिशम्

मुकाम बाकीपुर पटना इलाकासूबे बिहार

(२) क्षत्रिय पत्रिका

पाखण्ड तिमिर नाशक पत्र चन्द्रिका नाम की पुस्तक के देखने से मालूम हुआ कि आर्य्यावर्त में दयानन्द सरस्वती स्वामी ऐसे हैं कि जिनसे अनेक देशीय लोग इस देश का गौरव करते हैं इति

मुन्शी दुर्गाप्रसाद स्थान दानापुर

(३) आगे तो हो गये हैं बहुत से मुनी ऋषी॥

पर अब विदित हैं स्वामी दयानन्द सरस्वती॥

हैं चारों वेद बसते जिनकी ज़बान पर। और छः हो अंग वेद के हैं जिन के ध्यान पर॥ उज्जल है ज्ञान जिनका शास्त्र औ पुरान पर। मारे हैं तर्क जिन ने बाइबल कुरान पर॥ तैंदुए बोशास्त्री भी किये उनसे शास्त्रबाज़ी। पादरी भी जा भिड़े हैं मौलवी और क़ाज़ी॥ कर डाली खंड खंड सब धूर्तों की धूर्त बाज़ी। पाखंडियों की खोलदी सारी जाल साज़ी॥ फ़ाज़िल हैं उनसे राज़ी अच्छे बयान पर। आक़िल हैं धन्य कहते उनके ज्ञान पर॥ जाहिल हैं मरते अपने मिथ्या गुमान पर। ऐसा दिया है छापा वेदों को जान कर॥ अब कोई कीर्तिमान न उनके समान है। अगले महात्मों का नामी निशान है। हर्षो विषाद दोनों समान कर रक्खा है। बूझो तो यारो दिल में कैसा मज़ा चक्खा है॥ पाजी से बत्तर हैंगे अब के हरामज़ादे। जो ऐसे एकता आलिम को दुर्बचन सुनादे॥ आगे कहे या पीछे ख़ुद कह दे या कहादे। है काम यह असल का मुझको कोई बतादे॥ धन्य धन्य धन्य स्वामी नामी वगामी सुपथ के। सुयश के होगे कर्ता हर्ता ही तुम असत् के॥ सन्मार्ग के हो राही न्याई हो सत् असत् के। दाही हो तुम अघों के थाही सुमत कुमत के॥

जैसे कि व्यास गौतम भृगु बृहस्पति।

तैसे विदित हैं जग में दयानन्द सरस्वति।

(४) मुन्शी इंद्रमणिजी स्थान मुरादाबाद

गई पोप लोगों की क्या बुद्धिमारी । कहें अपने शिष्यों को दुष्क क-
र्म चारी ॥ कहें अज हुए अपनी पुत्री पै मोहित । हुई सर्वथा बु-
द्धि जिनकी तिरोहित ॥ कथा विष्णु ब्रह्मा की जो मूर्ख गावें । कहो
ऐसे पापी नरक क्यों न जावें ॥ लिखी शिव कि निन्दा पुराणों में जै
सी । हमें मुख से कहनी नहीं योग्य वैसी ॥ कहें इन्द्र गौतम की
जो कुछ कहानी । न क्यों बुद्धि मानों का हो उस से ग्लानी ॥ कहें
कृष्ण को चौर और जार कर्मी । रहे वेद रत जो सदा पूर्ण धर्मी ॥
बृहस्पति को दोष मिथ्या लगाया । यह क्या पोपजी के हृदय में
समाया ॥ किया व्याह गंधर्व ऋषि वर पराशर । लगावें उ-
न्हें दोष व्यभिचार पामर ॥ हुए वेद विपरीत जो कर्म जारी । सु
नो सज्जनो सत् असत् लो विचारी ॥ प्रगट मूर्ति पूजन हुआ
धर्म जब से । हुआ ध्यान जगदीश का नष्ट तब से ॥ बढ़े हा
बहुत धर्म हर्ता कुकर्मी । डरें ना नरक से टके के हैं जो मर्मी ॥
जगत् में कठिन जाल ऐसा बिछाया । जो फंदे में आया निक
ले न पाया ॥ हुए भूत प्रेतों के विश्वास कैसे । डरें रज्जु को जान
कर सर्प जैसे ॥ लगे स्याने दीवानों को घर बुलाने । लगे सीस नि
आ हर किसी को भुकाने ॥ हुए आर्य हा शोख स हो के यात्री । छु
पा धर्म का भानु छाई कुरात्री ॥ लगे पूजने पीर गूगा अनारी । हुई
धर्म की नष्ट मर्याद सारी ॥ असत् धर्म बहु भांति छांड़े निहारी
। हुआ सज्जनों के हृदय दुःख भारी ॥ लखी धर्म की जब सभी
भांति हानी । किया धर्म रक्षा को उत्साह ठानी ॥ सुसद्धर्म भा
नु यथावत प्रकाशो । दयानन्द स्वामी सकल दुःख नाशो ॥

यथा योग्य की सत् असत् की परीक्षा। हुई जिनकी पातालपर्य्यन्तदीक्षा॥ कियाकापुरी आदि में शास्त्रार्थ भारी। हुए शांत पूर्व पोप दुष्कर्म चारी॥ दया और आनन्द है मूल जिनके। करो धर्म जिज्ञासु पाद ग्रहण तिनके॥

(५) मुन्शी कन्हैयालाल अलखधारी स्थान लुधियाना मुल्क पंजाब

किताब कुल्लियात अलखधारी मक़ाला दोयम सफ़ा ७१ में लिखते हैं कि मुझसा दहेरिया स्वामी दयानन्द की तीज़ीम करता है अंगरेज़ और मुसलमान भी- जाहिलों को क्या कहा जावे जो ख़ान्दान का गुर्ए करते हैं- उनकी इज़्ज़त कुत्तों के बराबर है॥

(६) मुक़ाम कानपुर

महाशय नमस्ते आप सुना होगा कि इधर कुछ दिनों से यहां के समाज में गड़ बड़ हो गई कारण यह हुआ कि पंडित गिरधरानन्द जी जैसे कुछ विद्वान् और वक्ता हैं सो अब आप को प्रकाशित है उनका सन्मान् समाज में विशेष देख मंत्रीजी से न देखा गया और वे मन मैले काम कर उठे होते २ पंडित जी समाज छोड़ बैठे बस यह समाज भी फ़र्रुख़ाबाद कासा हो गया- अब कुछ दिन से श्री स्वामीजी महाराज की प्रेरणा से यहां के आर्य लोग गो रक्षणी सभा में बड़ा उत्साह कर रहे हैं १३ हज़ार के ऊपर रुपया जमा हो चुका परन्तु सब की

इच्छा यह है कि जब तक लाख रुपया एकत्र न होले इस सभाका काम छेड़ा न जावे सो इतना रुपया जमा होजाना श्रीजी महाराज की कृपा से कुछ बड़ी बात नहीं परंतु मुझे निश्चय है कि जो समाज वाले समचित्त रहें तो यह सिद्धि जल्द हो जावेगी — यदि आपको गो रक्षा के चंदे का कुछ हाल इधर उधर का जाना गया हो तो कृपा कर लिखना बहुत दिन हुए तब सुना था कि आगरे में हज़ार सात तक रुपया स्वामीजी महाराज के सामने दाखिल हो चुका था अब तो विशेष हो गया होगा - अलीगढ़ आदि नगरों में भी प्रबन्ध हो रहा था आप के समाज में भी प्रबन्ध हुआ होगा इति, आपका आज्ञा कारी गिरधारी तारीख ४ अगस्त सन् १८८१ ॥

(७) राजधानी मसूदा ज़िला अजमेर

मान्यवर नमस्ते आपने सुना होगा कि राजा साहब बहादुर सिंह जी श्रीमान् स्वामीजी महाराज के चरणों में अति प्रीति रखते हैं उनकी आज्ञानुसार बड़ा भारी होमकुण्ड बनाया है होम के लिये बड़े २ रजत पात्र श्रीजी ने अपने सामने बनवा दिये हैं राजा साहब दोनों काल प्रति दिन सेवा में उपस्थित रहते हैं और भी बहुत से उपकारक उपदेशों पर चलते हैं जैसे आपस में मेल खूब बढ़ाना मुद्दत के वैर छोड़ देना कसरत करना शस्त्रास्त्र विद्या में निपुण होना पाठशाला बिठलाना. वृक्ष लगाना धरती को उपजाऊ करना बागात को निर्मल रखना प्रजा को पुत्रवत् पालना सत्य विद्या में श्रद्धा करना पक्षपात से वैर -

न्याय से प्रीति करना अप्राज्ञों और सन्मार्ग पर चलने वालों की यथेच्छ सहायता करना आदि आदि – क्या कहूं राजा साहब तो गुणागार हैं हीं हैं परन्तु उनके मंत्री हुवे छगनलालजी भी बहुत ही प्रशंसा योग्य पुरुष हैं ईश्वर इसी प्रकार की बुद्धि इस देश के सब राज गणों और उनके मंत्री आदि काम चारियों को देवे इति॥ आपका वही सेवक ॥

जब श्रीजी महाराज यहां से चलने को हुए तब राजा साहब ने ५००) वेद भाष्य की सहायता के अर्थ भेट किये और ख़ुद आप को तथा अपने अधिकारियों को वेद भाष्य का ग्राहक बनाया सैकड़ों जिल्दें पंच महा यज्ञ आदि की भी राजधानी वालों ने ख़रीदीं॥ ३५ जैनी लोगों ने अपना जैन मत छोड़ वैदिक मत अति आनन्द पूर्वक श्रीमान् के सन्मुख स्वीकार किया ऐसी ख़बर बहुत से भारत मित्र आदि समाचार पत्रों के सम्पादकों ने लिख श्रीमान को बहुविध धन्य वाद दिया है - कहने को यह राज्य बहुत छोटा है परंतु काम राजा साहब के देखिये आर्य गण कितने सुख मद हैं ईश्वर परमायु करे इसी प्रकार जब श्रीमान् स्वामी जी महाराज राजधानी मसूदा से चलकर कुछ दिन पीछे स्थान चीतोड़ राज्य उदयपुर आकर बिराजमान हुए तब श्रीमन्महाराजाधिराज मही महेन्द्र या वदार्य कुल दिवा कर श्रीमदेकलिंगावतार विविध विरदावलि वंदित श्री १०८ श्रीमन्महाराणा सज्जन सिंह जी उदयपुर देश मेवाड़ के अधीश ने अपनी कीर्ति के अनुसार श्रीमान् का बड़ा ही आदर और सत्कार किया प्रति दिन दो चार श्रीमान् की सेवा में उपस्थित होकर

उनके स्वास्थ्य को अति विनय से पूंछते और उपदेशों को सुनते थे यद्यपि इन दिनों श्रीमान् महाराजा साहब बहादुर को बड़े लाट साहब बहादुर की उपस्थिति होने के कारण बहुत कम अवकाश था तथापि किसी दिन उक्त नियम में अंतर नहीं हुआ अंत में पंच ग्रात मुद्रा भेट कीं और नीचे लिखे पुरुषों सहित वेद भाष्य के आरम्भ से ग्राहक गण शिरोमणि हुए इति॥

पुरोहित पद्मनाथजी, राजा राणा श्री ५ फ़तेसिंहजी, बाबूभवानीसिंहजी नेटिवडा०, श्रीयुत् अर्जुन सिंहजी आसीन, पण्डित मोहनलालजी पंड्या, पंडित ब्रजनाथजी गोतम

(८) मुक़ाम लंदन नगर

आर्य्यगण। अखबार अथीम में जोकि लंदन नगर में छपता है देखिये श्रीमान् पूर्ण प्रतापी स्वामीजी महाराज की कितनी प्रशंसा लिखी है॥ उसका आशय यहां सब लोगों पर प्रकाशित होने के लिये लिखा जाता है॥ विदित होकि प्रथम उस अखबार में बहुत कुछ तारीफ़ संस्कृत विद्या की लिखी फिर लिखा कि इस अखबार के देखने वालों को याद होगा कि एक बर्ष की अवधि हुई होगी तब इस लंदन नगर में श्यामजी कृष्ण वर्मा के पधारने की ख़बर छापी गई थी वे संस्कृत में बड़ी भारी योग्यता रखते हैं उनकी विद्या अथाह दर्जे पर है इस लिये लंदन के विद्वानों ने उनको उचित जान पण्डित नामकी पदवी समर्पित

की है— इस तरुण पुरुष ने एक ऐसे परमसुप्रसिद्ध और पूर्ण विद्वान् से विद्या प्राप्त की है जो केवल प्राचीन संस्कृत विद्या ही नहीं जानते किन्तु उन्होंने सारे आर्य्यावर्त के मतमतादियों में हिलचल डाल दी है और इस प्रकार मूर्ति पूजनादिक विषयों का खंडन करते हैं कि उनके सन्मुख कोई वहां का विद्वान् और पुजारी आदि ठहर नहीं सकता वे परमेश्वर को अद्वितीय निर्विकार और निराकार जानते हैं उनका मत ठीक वेदानुकूल है इस आर्य्यावर्त की सुधार और उन्नति करने वाले सत् पुरुष का नाम स्वामी दयानन्द सरस्वती है इनके वक्तृत्व का माधुर्य और लेख के गांभीर्यका मैं खुद पूरा २ साक्षी हूं क्योंकि जब मैं बंबई में था उस समय मैंने प्रशंसित स्वामीजी को आर्य्य समाज के आमजल्सों में धर्म विषयक व्याख्यान देते देखा और सुना है और उनका एक संस्कृत का पत्र (जो उन्होंने अपने विद्यार्थी श्यामजी कृष्णवर्मा को कि जो इन दिनों अक्सफ़ोर्ड कालिज के मेम्बर हैं लिखा था) मैंने देखा है और अब मैं उस पत्रका तर्जुमा अर्थात् अनुवाद उक्त पंडितजी की आज्ञा लेकर छापता हूं वास्तव्य में यह पत्र श्लोक बद्ध था ॥

उक्त पत्र का अनुवाद

नमस्ते— विदित होकि यद्यपि तुम बावजूद साबित क़दमी तरीक़ह वेद और अपनी विद्या के स्तुति योग्य हो परन्तु परम पश्चात्ताप की बात है कि तुमने अपने पत्र द्वारा बहुकाल से मुझ को आनंदित नहीं किया अब मैं आशा करता हूं कि तुम अपने कुशल और नीचे लिखे विषयों के जबाब से मुझ को बहुशीघ्र

प्रमुदित करोगे — इङ्गलिस्तान के रहने वाले लोग किस प्रकार के हैं + और उनकी प्रकृति और ढंग व चलन कैसे हैं- वहां की पृथ्वी और वायु जल कैसा है और सामान खाने पीने आदि आराम का वहां किस प्रकार मिलता है-जब से तुम यहां से गये हो तब से तुम्हारी शारीरक आरोग्यता की क्या दशा है और इङ्गलिस्तान में तुम्हारी ख़ास इच्छा पूरी भी होती है वा क्या- वहां के लोग किस प्रकार प्रेम रखते हैं और क्या२ पुस्तकें तुमसे पढ़ते हैं— तुम्हारी मासिक प्राप्ति और व्यय क्या है और तुम्हारे अधीत ग्रंथों के पूर्वा पर अवलोकन करने व विचारने और दूसरें के पढ़ाने का समय क्या२ नियत है— इसका क्या कारण है कि धर्मोपदेश करने में आर्यावर्त के अनुरूप अभी तक तुम्हारी प्रसिद्धि इङ्गलिस्तान में नहीं फैली—कदाचित् मेरी दूरस्थिति होने के कारण मुझ को तुम्हारी प्रसिद्धि के समाचार न मिलते हों अथवा इस काम के करने का तुमको अवकाश न मिलता हो- यदि इसका कारण द्वितीय है तो अब मेरी प्रबल इच्छा यह है कि जिस वक्त तुम पढ़ाने से निश्चिन्त हुआ करो उस समय वैदिक मत की उन्नति में जिस प्रकार हो वहां ख़ूब यत्न करो पश्चात् यहां चले आओ क्योंकि ऐसे सर्वोत्तम और सर्वोपकारी काम में अपनी प्रसिद्धि करना रुपया पैदा करने से विशेषतर उत्तम है— हमारे मित्र प्रोफ़ेसर मोनियर विलियम और माक्स मूलर साहबों की वेद और शास्त्रों के विषय में तथा वहां के और२ विद्वानों की मेरे वेद भाष्य पर कैसी क्या संमति

अर्थात् राय है – क्या यह सत्य है कि थ्यूसूफ़िकिल सुसेटी ने कोई वेद मत की शाखा लंदन में स्थापित करदी है – कभी तुमने भरत खण्ड की राज राजेश्वरी से भी सन्मान परिचय प्राप्त किया है और कभी पारलीमेंट में भी गये हो–परम प्रीति पूर्वक इन सब प्रश्नों का उत्तर अति शीघ्र भेजदो. और वे भी बातें लिखो जिनको तुम अपने निकट लिखनेके योग्य समझो– प्रस्तुत मेरा इतना ही लेख बहुत है क्योंकिबुद्धिवानों को संकेत मात्र अपेक्षित होता है न विस्तार इति– तिथि ज्येष्ट शुक्ला ७ मंगलवार सम्बत् १९३७ विक्रमी

इसके पीछे अखबार वाले ने अपनी यह राय लिखी है कि यह ऊपर की चिट्ठी निहायत साफ़ पाक संस्कृत में लिखी हुई थी– यों तो बहुत से आर्य्यावर्त के विद्वानों से मुझे काम पड़ता है और कश्मीर व त्रावणकोर वगैरः के बड़े २ नामी पंडितों से मेरी लिखा पढ़ी जारी है परन्तु यह चिट्ठी सर्वोपरि एक निमूना है और इसलिये छापी गई है कि यूरोपनिवासियों को आर्यों की योग्यता और कृति तथा राजभक्ति प्रकाशित हो जाय॥

इति प्रमाणाष्टकम्

कहिये आर्य्य गण कैसा प्रज्वलित निर्मल और निर्विवाद यह प्रमाणाष्टक है जिनको परमात्मा ने थोड़ी सी बुद्धि अर्पण की होगी वे इस ग्रन्थ को देख सदैव को निर्विकार हो जावेंगे रहे बुद्धि हीन सो उनके लिये तो पुराने मनुष्य प्रथमही निर्धार कर गये हैं जैसे ॥ मन्येदुर्जन चित्तवृत्ति हरणे धातापि

भग्नोद्यमः" अर्थात् मूरख हृदै न चेत जो गुरु मिलें विरंचि सम॥ जब ऐसों के सुधार के लिये ब्रह्मा सरीखे हार मान बैठे तो आगे और कौन उनसे अधिक सामर्थ्य लेकर इनके लिये आवेगा बुद्धिमानों को उचित है कि ऐसों को उनकी प्रारब्ध के हवाले करके आपको जो कर्त्तव्य है वह करें और कदापि अपना अमौल्य समय वृथा न गमावें जहां तक हो सके वहां तक विद्योपार्जन करके अपना और अपने देश का भला करें देखो यही काम श्रीमान् स्वामीजी महाराज ने किया है स्वामीजी क्या जितने ऋषि मुनि और राम कृष्णादिक प्रशंसनीय सत्पुरुष हुए हैं वे सब इसी एक मार्ग के ग्रहण से हुए हैं और जो होंगे व भी इसी मार्ग से होंगे इसी को शुद्ध सनातन वैदिक मार्ग कहते हैं। कभी कोई भूल कर भी आज से पीछे ऐसे वैसे लोगों की बातों का विश्वास न करें और याद रक्खें कि इन सब लोगों ने जितना धर्म के नाम का जाल फैलाया है वह सब तुम्हारे ही फांसने को फैलाया है इनके उस जाल के काटने और तुम्हें उससे मुक्त करने को श्रीमान् उद्यत हुए हैं यह देख ये लोग अति दुखित हैं तभी ये खिसयाने होकर शुद्ध मार्गावलम्बियों को कलंकित करते हैं। जो अजमाना चाहो तो इनको इसी एक बात से अजमालो जैसे ऊपर निर्णय हो चुका है कि इनका और स्वामीजी के कथन का अंतर केवल यह है कि स्वामीजी मूर्ति पूजा जिसको कि जड़ पुराण है वेदविरुद्ध और ये लोग उसको वेद विहित बताते हैं सो यह अंतर

वास्तव्य में ऐसा नहीं कि जिस पर इतना विरोध रहे परन्तु मुसल्मानों का वैदिक मत से धरती आकाश कासा अन्तर है सो देखा जाता है कि उनकी मियाँमदार आदि अनेक नाम की क़बरें अच्छे२ वाजिपेयी और बड़े २ पंडित लोग तक जा जा कर पूजते हैं। जो पूछोगे कि जखई और मियाँ मदार की भी पूजा तुम्हारे वेद और पुराणों में लिखी है तो कहेंगे कि कहीं नहीं लिखी फिर क्या कारण है कि जिनका तुम्हारा कुछ भी मेल नहीं है उनकी क़बरें बड़ी ख़ुशी से पूजो और किञ्चित अंतर वालों को इतना बुरा कहो — बस साबित हो जायगा कि सरासर खिसयानपन और अन्याय की बातें हैं कुछ हो करो कोई भोक्ता होता है परन्तु आर्य्य धर्म भी कठिन है उनका वचन है " तथापि खलु खिद्यते चेतः " अर्थात् अपनी क्या हानि जो पराये अंगूर कोई गधा चरजाय — पर क्या कीजिये ग़ैर मुनासिब देख रहा ही नहीं जाता यदि उनसे कुछ कहने को जाओ तो उपकार के पलटे अपकार खड़ा होता है सीधी गाली सुनना पड़ती हैं वहां यह विचार कर लिया जाता है कि इनके पास यही धन है सो देते हैं दूसरे आर्य्यों की शिक्षा स्मरण हो आती है " निन्दन्तु नीति निपुणा यदि वा स्तुवन्तु लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम् ॥ अद्यैव मे मरण मस्तु युगान्तरे वा न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः॥१॥ अर्थात् कोई भला कहो वा बुरा हानि हो वा लाभ मरें वा जियें हम अपनी लकीर के बाहर पैर नहीं धर सकते — कहो जिनका ऐसा सर्वत्र सुयश और ऐसी उत्तमोत्तम

शिक्षा और अखंड प्रताप उनकी प्रशंसा यदि कोई मुझसा तुच्छ करना चाहो तो कहां लोकरे— इस ग्रन्थकार ने बहुधा छोटे मुंह बड़ा ग्रास की कहावत कर दिखाई है तथापि उसको विद्वज्जनों की कृपादृष्टि रहने ही की आशा है क्योंकि वे लोग अच्छे प्रकार जानते हैं कि सच्ची का तात्कालिक स्वाद कड़वा ही होता है। जिस परमात्मा की कृपा से यह ग्रंथ यहां तक निर्विघ्न आ पहुंचा उसकी सेवा में अनन्त धन्यवाद करके आशा करता हूं कि वह इस भरत खंड पर अपनी पूर्ण दृष्टि से निहारे। धन्य हैं वे लोग जिन की अभिरुचि और सहायता से यह ग्रंथ आविर्भूत हुआ आगे को वे लोग भी धन्यवाद के योग्य होंगे जो इस का लालन पालन करेंगे॥ विज्ञेषु किम्बहुने निश्रम्

अथ विनयाष्टकम्॥

श्रीस्पर्शिना च्छुरिता गता गतीनां तमस्तमच्छन्न रुचां मतीनाम्
श्रीमद्दयानन्द सरस्वतीनां जयन्तु वाचो नितरां यतीनाम्॥१॥

अर्थात् शास्त्रों के ज्ञान में प्रवृत्ति रहित तमो गुण रूप अन्धकार से आच्छादित बुद्धियों को विज्ञान देने के हेतु श्रीमान् दयानन्द सरस्वती जी महाराज के वचन अतिशय करके जय को प्राप्त हों॥१॥

परापरा वेदन वाक्पतीनां सद्वेद वादानय शास्तती नाम। श्री मद्दयानन्द सरस्वतीनां जयन्तु वाचो नितरां यतीनाम्॥२॥

अर्थात् परा कहें से वेदत्रयी और अपरा ब्रह्म विद्या अर्थात्

उपनिषद्भाग के जानने में बृहस्पति और समीचीन वेद विषयक वाद में प्राप्त किया है यशसमूह जिन्होंने ऐसे श्रीमान्दयानन्द सरस्वती जी महाराज के वचन अतिशय करके जय को प्राप्त हों ॥२॥

वैशेषिका शेषित हृद्गतीना मशेष शेषाशय सादृतीनाम् ॥
श्रीमद्दया नन्द सरस्वतीनां जयन्तु वाचो नितरां यतीनाम्॥३॥

अर्थात् वैशेषिक अर्थात् कणाद मतावलम्बियों के समस्त आशय के जानने में प्रीति युक्त और सम्पूर्ण शेष अर्थात् पतञ्जलि भाष्यकार के हार्द ज्ञान में सादर श्रीमान् दयानन्द सरस्वती जी महाराज के बचन अतिशय करके जय को प्राप्त हों ३

साङ्ख्यज्ञ सङ्ख्या विदुषां नतीनां भुवां भवेऽभव्यभिदांसतीनाम्
श्रीमद्दया नन्द सरस्वतीनां जयन्तुवाचो नितरां यतीनाम् ॥४॥

अर्थात् सांख्य अर्थात् कपिल मुनि प्रणीत प्रकृति पुरुष विवेचक शास्त्र के ज्ञाता विद्वानों के नमस्कार की पृथ्वी रूप अर्थात् साङ्ख्य शास्त्रियों के नमस्कार करने को योग्य और दुराचार के नाशक श्रीमान् दयानन्द सरस्वती जी महाराज के बचन अतिशय करके जय को प्राप्त हों ॥४॥

पाखण्डि पाखण्ड तमो धुतीनां सुधर्म्म रक्षा विलसद्द्युतीनाम्
श्रीमद्दयानन्द सरस्वतीनां जयन्तु वाचो नितरां यतीनाम् ॥५॥

अर्थात पाखण्डियों के पाखण्ड रूप अन्धकार के दूर करनेवाले और वेद विहित सुधर्म की रक्षा करके शोभायमान है दीप्ति जिनकी ऐसे श्रीमान् दयानन्द सरस्वती जी महाराज के वचन अतिशय करके जय को प्राप्त हों ॥५॥

मूर्त्यर्च्च का नामुरु संहतीना मबोध विध्वंसन भारती नाम् ॥
श्रीमद्दयानन्द सरस्वतीनां जयन्तु वाचो नितरां यतीनाम् ॥६॥
अर्थात् मूर्ति पूजक लोगोंके बहुत समूहों के अज्ञान के नाश करने में सरस्वती रूप श्रीमान् दयानन्द सरस्वतीजी महाराज के वचन अतिशय करके जय को प्राप्त हों ॥६॥
यथार्थ्य मुद्बोधयतां कृतीनां श्रुति स्मृतीनां महतां सती नाम्
श्रीमद्दयानन्द सरस्वतीनां जयन्तु वाचो नितरां यतीनाम् ॥७॥
अर्थात् विद्वानों के बीच में महा पुरुषों के मार्ग भूत श्रुति स्मृतियों का याथार्थ्य प्रकट करने वाले श्रीमान् दयानन्द सरस्वतीजी महाराज के वचन अतिशयकर के जयको प्राप्त हों ॥७॥
याचध्व मार्याश्चय शाश्वतीनां स्थितिं समानां विषया रती नाम ॥
श्रीमद्दयानन्द सरस्वतीनां जयन्तु वाचो नितरां यतीनाम ॥८॥
अर्थात् हे आर्यो विषय से प्रीति रहित श्रीमान् दयानन्द सरस्वतीजी महाराज की बहुत बर्ष तक इस संसार में स्थिति रहने की श्रीजगदीश्वर से आप सब लोग अंतः करण से प्रार्थना करो जिससे उनके वचन सार्वकाल जयको प्राप्त हों ॥८॥

इति श्री मत्परमहंस परिव्राजकाचार्य्य दयानन्द सरस्वती दिग्विजयार्कीय द्वितीयाङ्के उपदेशाख्यः षष्ठो मयूखः॥ समाप्तोयम् द्वितीयाङ्कः मङ्गलानि भवन्तु

वसुरामांक चन्द्रेब्दे तपस्यस्य सिते दले ॥
दशम्यां चन्द्र वारेच ग्रन्थोयं पूर्णतांगतः ॥१॥

भवाब्धि भव भवाया बोधितो द्बोधनाया गणित गुणि गणेोयन्त्वाशय स्वाशयोयम् ॥
कलि पथ परि पन्थी भिक्ता मात्र शंसी सदय हृदय मद्ये धारणी यस्सदैव ॥१॥

विज्ञापन

इसके छापनेका किसी अन्यपुरुषको अधिकार नहीं जोकोई किताब मेरे हस्ताक्षर वा मुहर से रहित देखा जावे वह चोरी की समझ औ कोई मेरे पास पकड़ भेजेगा उसको ५) रु० पारितोषक दिया जावेगा और जो कोई इसको वा नीचे लिखीहुई किताबों की इकट्ठी बीस से अधिक जिल्दें खरीदेगा उसको चालीस जिल्दों तक साढ़े बारह रुपये सैकड़ा कमीशन दिया जावेगा और विशेष के खरीदार को फी बीस जिल्द ढाई रुपया कमीशन विशेष मिलता जावेगा हद कमीशन बीस रुपये सैकड़ा होगी परन्तु ऊपर लिखे अनुसार कमीशन नक़द के खरीदार को मिलेगा न किसी एक दिन के भी उधार वाले को और नमूना चाहने वालों को प्रत्येक किताब की क़ीमत के टिकट डाक महसूल सहित भेज देने होंगे और इस विषयक किसी का बैरंग पत्र न लियाजावेगा ॥

१ राजा शिवप्रसाद कृत तिमिरनाशक तृतीय खंड का खंडन क़ीमत ≈) महसूल डाक)॥

२ श्रीयुत दयानन्द दिग्विजयार्क प्रथम खंड क़ीमत ।) महसूल)॥

३ तथा द्वितीय खंड क़ीमत फ़ी जिल्द १।) महसूल ≈)

४ श्रीजी महाराज की बड़ी तस्वीर फ़ोटूग्राफ़ की खिंचीहुई ।) वा बड़ी खड़ी के ।) महसूल -)

इन किताबों की दरख़्वास्त मुक़ाम फ़र्रुख़ाबाद में बनाम ग्रन्थकार आना चाहिये ॥

विनायकमुकुन्दाख्यौ लक्ष्मी यौ यस्य द्वौ सुतौ ॥
मुद्रांकितं सकुरुते ज्ञानकी हरिजः कविः ॥ १ ॥

ॐ

नमः सर्वात्मने श्री जगदीश्वराय

श्रीमत्

दयानन्ददिग्विजयार्क

तृतीय खण्ड

यह सद्ग्रन्थ ज़िला फ़र्रुख़ाबाद के पूर्व पाठशालाधीश और

आर्य्यसमाज मीमांसक सभा के संस्थापक व सभासद

पण्डित गोपाल शास्त्री शर्म्मा

ने

सकलार्य्यावर्त्तनिवासियों के प्रमोद और सशंकितों

के

भ्रमनिवारणार्थ बनाया

कन्य

फ़तहगढ़ यन्त्रालय व एहतमाम पंडित जग-
न्नाथ प्रसाद के छपी

संवत १९४४ वि०

प्रथमवार ५०० जिल्द

सन् १८८७ ईसवी

मौल्य प्रति पुस्तक १)
महसूल =)

विज्ञापन

इसके छापने का किसी अन्यपुरुष को अधिकार नहीं जो कोई किताब मेरे हस्ताक्षर वा मुहर से रहित देखी जावे वह चोरी की समझ जो कोई मेरे पास पकड़ भेजेगा उसको ५) रु० धारि तोषिक दिया जावेगा और जो कोई इस- की वा नीचे लिखी हुई किताबों की इकट्ठी बीस से अधिक जिल्दें ख़रीदेगा उसको चालीस जिल्दों तक साढ़े बारह रुपये सैकड़ा कमीशन दिया जावे- गा और विशेष के ख़रीदार को फ़ी बीस जिल्द ढाई रुपया कमीशन विशेष मिलता जावेगा हद्द कमीशन बीस रुपये सैकड़ा होगी परन्तु ऊपर लिखे अनुसार कमीशन नक़द के ख़रीदार को मिलेगा न किसी एक दिन के भी उधार वाले को और नमूना चाहने वालों को प्रत्येक किताब की क़ीमत के टिकट डाक महसूल सहित भेज देने होंगे और इस विषयक किसीका बे- रंगपत्र न लिया जावेगा दिग्विजय का दूसरा खंड यदि कोई प्रथम खंड रहि- त लेना चाहेगा तो उसे चार आना मौल्य अधिक देना पड़ेगा फ़क़त ॥

१ राजा शिव प्रसाद कृत तिमिर नाशक तृतीय खंड का खंडन क़ीमत =) महसूल डाक)॥

२ श्रीयुत् दयानन्द दिग्विजयार्क प्रथम खंड क़ीमत ॥) महसूल)॥

३ तथा दूसरा खंड क़ीमत फ़ी जिल्द [redacted] ।।।) महसूल -)

४ श्रीजी महाराज की तस्वीर फ़ोटू गिराफ़ की खिची हुई ॥) व दूसरी रवड़ी के ।) महसूल -)

दरख़्वास्त इन किताबों की मुक़ाम फ़र्रुख़ाबाद में व नाम ग्रंथकार आना चाहिये

ॐ

तत्सत्

सर्वात्मा सच्चिदानन्दो सर्वेशोसर्वकृत्प्रभुः
भूयात्तमां सहायोनो दयालुःसर्वसिद्धिदः १

भूमिका

प्रकाशित रहै कि इस ग्रन्थकार को जगत्पूज्य पाद पीठ श्रीमान् सकल विद्या निधान श्री १०८ स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज का इस नगर फर्रुखाबाद में बहुकाल समागम रहा. उस अवसर में इस ने उनके समीप कुछ अध्ययन भी किया है: उस समय उनका परम दयालु स्वभाव और लोकोत्तर चरित्र तथैव आत्मीय जनोंका उनके साथ विचित्र और विपरीत बर्ताव तथा शरीर वान् की जगत् में अस्थिरता देख भाल - जल्द लोकोपकार होने की दृष्टि से मेरे विचार में यह आया कि उनके परम पावन कृत्यों का प्रदर्शक और स्मारक कोई एक ऐसा सद्ग्रन्थ बना छोडूं जिससे श्री मान् के अस्तित्वकाल में ही लोक संस्था सुधरने लगजाय और उनके पीछे अर्थात् भविष्यत् काल में भी उक्त ग्रन्थ लाभ प्रद रहै औरउसमें स्थूल मान से उनका सब चरित्र आजाय परंतु इस प्रकार का ग्रन्थ उस पुरुषकी विद्यमान दशामें पूर्ण होना असंभव सा होता है जिसको कि अशेष सत्कीर्त्ति उसमें लिखी हो अतः उसको कई खण्डों में बनाना अवश्य हुआ भगवत्कृपा से इसके दो खण्ड तो प्रशंस्य महानुभाव के अस्तित्व काल अर्थात् सम्बत १९३८ विक्रमीमें ही मुद्रित होकर प्रचरित होगये थे उनसे बहुत कुछ उद्देश्य की सिद्धी भी हुई अब रह गया तदनन्तर का वृत्तान्त वह इस तृतीय खण्ड में लिखता हूं - आशा है कि जिस समय जो सत् पुरुष इसके आद्योपान्त किसी एक वा तीनों खण्डों को हितचित्त से देखें वा सुनें गे उनको

यह ग्रन्थ बहु फल प्रद होगा विज्ञेषु किं बहुनेति याम् ॥

संवत् १९४२ वि० स्थान नगर फर्रुखाबाद

ऋषि वेदांक भूवर्षे इषमास सितेदले

दशम्यां रवि वारेच ग्रन्थारम्भः कृतोमया १

१९ – १० – ८५ ई०

सूचना

अज्ञान तिमिरांधस्य ज्ञानांजनशलाकया

चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै सद्गुरवेनमः १

विदित रहे कि इस दिग्विजयार्क तृतीय खण्ड में सब १२ द्वादश मयूख निम्न लिखितानुसार यथा नाम तथा गुण हैं–उनमें से सात विद्यमान और पांच स्वामी जी महाराज की अविद्यमान दशा प्रदर्शक जाने जावें ॥

संख्यांक	मयूखों का नाम	संख्यांक	मयूखों का नाम
१	पूर्वसिद्ध दिग्विजयार्क समा	७	अनिष्टोत्थान
	लोचक प्रशमन	८	महाप्रस्थान वा परम पदाव
२	गोरक्षादि विचार विवर्णन		गाहन
३	थ्योसोफिस्टादि संसर्ग विसर्जन	९	भयंकर विलाप कहो वा घोर
४	कृतघ्नोत्पादित मिथ्यापवाद संमार्जन		क्रन्दन
५	श्रीमदुदयपुराधीश समागम	१०	परमोपकारिणी सभाधिवेशन
	संभूतानंदवारिदाभिवर्षण		रूप भक्त वृन्दाश्वासन
६	श्रीमच्छाहपुरजोधपुराधीश	११	श्रीमदुद्धारित सिद्धान्तानुदर्शन
	र सम्मिलन	१२	फलपाकानुवर्णन पूर्वक आत्मनिवेदन इति

अथ

श्रीमद्दयानन्दीय

दिग्विजयार्क ऽवशिष्ट वृत्तान्तारम्भः॥

तृतीयां कीय

(परमेश्वर प्रार्थना)

ओ३म् नमो महद्भ्यो नमो अर्भकेभ्यो नमो युवभ्यो नम आशिनेभ्यः॥
यजाम देवा न्यदि शक्नवाम माज्यायसः शंसमा वृक्षि देवाः १
ॐ आतुं यज्ञाय गातुं यज्ञपतये॥ देवी स्वस्तिरस्तु नः स्वस्तिर्मानुषेभ्यः २
ऊर्ध्वं जिगातु भेषजम्॥ शन्नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे॥ ३॥
ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

हे अनन्त रूप भगवन्- आप का यह वेदाभिमानी परमाल्पज्ञ दासानुदास आपकी परम पवित्र सेवा में बहु बिनय पुरस्सर अनेकानेक प्रणाम करके श्रीमान् वेदोद्धारक स्वामीजी महाराज का अवशिष्ट वृत्तान्त लिखकर अपने पूर्वारम्भित दिग्विजयार्क ग्रन्थ की अब परिसमाप्ति करना चाहता है- आशा है कि जिस प्रकार जिस रीति आप की पूर्ण कृपा से उक्त ग्रंथ के प्रथम व द्वितीय खण्डों की परिसमाप्ति आनन्द पूर्वक हुई उसी प्रकार इस अन्तिम अर्थात् तृतीय खण्ड की भी होगी और आप यथा पूर्व सर्वत्र सब प्रकार की शान्ति रखकर सदैव के लिये इस ग्रन्थ के प्रचार द्वारा आर्य्यावर्त को यथार्थ कृत्य करने में सोत्साहित करेंगे- इस व्यतिरिक्त अन्य कोई याचना और कामना मुझ दीन की इस विषय में नहीं है॥

सुहृद्वर

श्री मान् जगन्मान्य स्वामीजी महाराज का शेष वृत्तान्त अशेष करूं- इससे पूर्व सर्व महाशयों को इतना लिख जताना अत्यावश्य है कि इस समय तक जो इस ग्रन्थ के दो खण्ड बनकर प्रचरित होचुके हैं- उन से उद्देश्य सिद्धी कैसी क्याहुई और उनपर सामयिकोंकी प्रीति और सम्मति किस प्रकार पाई वा देखी गई- तो अब ये दो मुख्य प्रश्न अब तीर्णहुए और इन्हीं का उत्तर लिखना है सो वह नीचे लिखाजाता है

(प्रथम) उद्देश्य सिद्धी में तो कोई सन्देह ही नहीं क्योंकि बहुत से प्रमाणिक प्रमाणों से ज्ञात हो चुका है कि उक्त दोनों खण्डोंके प्रचार से बहुत से स्वदेशीय नये २ मनुष्यों के चित्तमें वैदिक धर्म की श्रद्धा उत्पन्न होगई और बहुत से बहके बहकाये राहरास्तपर आगए और कितनेही खूब जानगए कि ठीक बात यह है. न वह जिसको कि कई पीढ़ियों से समझे हुए थे वैदिक यंत्रालय के पुस्तकों की बिक्री बढ़ी और प्रयाग के दो मुहती ईसाई स्वस्वीकृत धर्म की घृणा मान प्रायश्चित्त ले यथा पूर्व अपनी जाति में जामिले और कितनेही मनुष्य ईसाई होते होते बचगए (१) इत्यादि ॥

पत्राशय- (१ नोट) मान्यवर महाशय पश्चात् अभिवादन के विनय यह है कि यहां जिस कार्य के लिये आया था वह आपकी कृपा से होगया- निम्नलिखित आनन्द समाचार पढ़कर इधर मुझे विलंब हुआ यह अपराध क्षमा कीजिये- यहां के दो ईसाई स्वस्वीकृत धर्म छोड़कर वैदिक धर्मावलंबी होने को यहां के आर्य समाज में प्रार्थी हुए हैं उनका आगत रविवार को प्रायश्चित त्रिवेणी संगम पर यहां के अध्यक्ष धर्माधिकारीजी जोकि दाक्षिणात्य हैं सब विद्वानों की संमत्यानुसार करावेंगे यह श्रेष्ठ उद्योग आर्यों का है और ईसाई धर्म से घृणा होने का मूल कारण आप कृत दिग्विजयार्क ग्रंथ है उसी को पढ़कर इन को पश्चात्ताप हुआ फिर उन्होंने स्वामी जी के ग्रन्थ देख इस प्रकार निश्चय किया- ईश्वर निर्विघ्न इन का मनोरथ सिद्ध करे इति शुभम् मिती भाद्रपद कृष्णाष्टमी गुरौ संवत् १९४१ ता० १४ अगस्त सन् १८८४ ई० स्थान प्रयाग आपका अनुग्रहीत चौबे तोताराम प्रियवर नमस्ते आप की ऐसी पूर्ण कृपा क्यों? आगे ऐसा न होगा सदैव इस अनुचर के योग्य कार्य भी लिखाकरें ॥ भवदीय समर्पण ... ॥

(द्वितिय) प्रीति की रीति तो ऊपर के ही लेख से स्पष्ट हो चुकी परन्तु उसमें केवल इतना विदित करना शेष रह गया है कि वे दोनों छप चुक गए और दुबारा मुद्रित हो रहे हैं -

अब रही समालोचना सो आर्य समाजियों ने अच्छा कहा इसका लिखना ही क्या - उनसे विशेष संख्याक मत्सरीयों ने बुरा भी कहा होगा. तो बस वह लेख पूरा छपा - रही बड़ी बात आर्याधिपति श्री जी महाराज की सो वे तो अप्रसन्न ही रहे जानो (२) वहां तो छमा मात्र मुनाफ़े में रही कारण इसका यह कि वे नहीं चाहते थे कि कोई हमारा प्रशंसक बने और खासकर उनको स्व इतिहास में ^श्री जी तथा^ मिथ्या लेख से बचना अति अभीष्ट था सो आगे चलकर बाबा जी का लेख देखें स्पष्ट होजावे गा अब रहा वृत्तान्त सम्पादक समुदाय का और सच्ची सनद भी मानों जगत् में इन्ही महाशयों की होती है सो वह भी उन्हों ने यथा मति दे दी जानो यहां उसका विस्तार वा नकल कर दिखाना केवल वेश्या ठाठ है - हां विद्वानों को देखने दिखाने को योग्य सरस समालोचना यदि है तो हरिश्चन्द्र मोहन चन्द्रिका के सम्पादक वर पण्डित दामोदर जी शास्त्री और बूंदी राजधानी के बाबा अम्लराम जी महाराज की है - देखिये वह यहीं आप के सन्मुख उपस्थित है।

पत्राशय - (२ नोट) पण्डित गोपाल राव हरि जी आनन्दित रहो - आज एक साधू का पत्र मेरे पास आया वह आप के पास भेजता हूं साधू का लेख सत्य है परन्तु आपने चीतौड़ सम्बंधी इतिहास में न जाने कहां से क्या सुन सुनाकर लिख दिया उस काल उस स्थान में मेरा उदय पुराधीश से केवल तीन ही वार समागम हुआ आपने प्रति दिन दो बार होता रहा लिखा है - आप जानते हैं कि मुझे ऐसे कामों के परिशोधन का अवकाश नहीं यद्यपि आप सत्य प्रिय और शुद्ध भाव भावित ही हैं और उसी हितचित्त से उपकारक काम कर रहे हैं परन्तु जब आप को मेरा इतिहास ठीक ठीक विदित नहीं तो उसके लिखने में कभी साहस मत करो - क्योंकि थोड़ा सा भी असत्य हो जाने से सम्पूर्ण निर्दोष कृत्य विगड़ जाता है ऐसा निश्चय रक्खो और इस पत्र का उत्तर शीघ्र भेजो॥ वैशाख शुक्ला २ संवत् १९३९ स्थान शाहपुरा।

(दयानन्द सरस्वती)

दयानन्द दिग्विजयार्क प्रथम और द्वितीय भाग- इसके दोनों भाग आगरे में पण्डित गोपालराव हरी ने छपवाये हैं बोली शुद्ध हिन्दी है पुस्तक के नामानुसार यह सच मुच दिग्विजय का अर्क ही उतारा है. ग्रन्थ कर्त्ता की जैसी भक्ति स्वामी दयानन्द पर है वैसी कदाचित् वेद प्रति पाद्य वेदात्मा भगवान् पर नहीं होगी ऐसा अनुमान होता है. कारण ग्रन्थ भी स्वामी जी की ओर से मूर्त्ति पूजा की प्रणाली निंद्य और निर्मूल जानता है और इसी विषय में स्वामी जीने बड़े बड़े शास्त्रार्थ किये और किसी ने उनको इस विषय में नहीं हराया इस बात से यह बहुत प्रसन्न हुआ है. परन्तु हमने पहिले ही लिखा था कि संस्कृत ज्ञान के बिना जो ऐसी ऐसी लोक व्यवहार बंद्य बातों को चाहे वे कैसे हो विद्वान् की क्यों न हों मानते हैं. वे अंधे के समान ही दूसरे के सहारे से चलने वाले हैं. मूर्त्ति पूजन के विषय में हमारे चंद्रिका ही में कई लेख छपे हुए होंगे परन्तु उन पर ध्यान देवे. कौन सबों ने यही समझ लिया है कि जो दयानन्द स्वामी कहें कि वेद में मूर्त्ति पूजा नहीं तो वही बात प्रमाण मान कर मूर्ति पूजा छोड़ देना वा मूर्त्तियों को तोड़ डालना. परन्तु विचार से देखा जाय तो यह उनकी बड़ी भूल और अज्ञान दशा है कारण आज जो प्रणाली दो हजार अधिक वर्ष से प्रचलित होती आई है क्या उस समय में कोई दयानन्द स्वामी के समान विद्वान् नहीं थे वा उस समय वेदार्थ जानने वाले वा वेद ही न मिलते थे ।।

माना कि वेद में मूर्त्ति पूजा का लेख नहीं तो क्या बद्रीनाथ द्वार का नाथ, जगन्नाथ आदि देवताओं को फोड़ तोड़ दिया

जाय. अथवा जिन के आधार से ऐसी हम लोगों की भावना होकर हम इस विषय में केवल स्वांतरंग के सिवाय जब दूसरा प्रमाण ही नहीं देखते तब क्या उन आधार ग्रन्थों को स्वस्थान से बटोर कर डुबा दिया जाय। प्रथमतः यही विचारना चाहिये कि प्रमाण वस्तु कौन होती है. जिसपर जिसको अपना चित्त प्रमाण मानेगा वही प्रमाण की कही जायगी. तो दयानन्द ही क्या उनके हजारों अधकच्चे अनुयायी आज बारह वर्ष से इसके विषय में मार देस दिसावर जाकर प्रयत्न कर रहे हैं परन्तु आजतक कोई संस्कृतज्ञ उनके अनुयायी हुये हैं। नहीं. इसी से सिद्ध होता है कि जो अंगरेज़ी वा अन्य फ़ारसी आदि विद्या पढ़कर विद्वान् कहलाते हैं उन्हों ने ही कृस्तानों के समान गुप्त भाव से अपने प्रचलित धर्म का परित्याग किया और उसी को निंद्य गिना तो कोई प्रशंसा की बात नहीं — अलं खेदेन भूपाला: किं न संति मही तले॥

संवत् १९३९ ज्येष्ठ कृष्ण के हरिश्चन्द्र चन्द्रिका और मोहनचंद्रिका को देखने से विदित हुआ कि पंडित गोपाल राव हरी जी कृत दयानन्द दिग्विजयार्क पर दर्शित पत्र के सम्पादक महाशय दामोदर शास्त्री जी ने अपनी बुद्धि और चातुर्य्यतानुसार उक्त ग्रन्थ कर्ता और स्वामी जी के कथन पर व आर्य्य लोगों को भी कुछ असमंजस लेख धर मारे हैं. इस कारण मुझ को भी उत्तर लिख देना अवश्यनीय है। पाठक। उक्त महाशय ने प्रतिमा पूजन का मंडन और आर्य्य वर निर्मित पुस्तक का खण्डन तो किया परन्तु सत्य की जय सदैव काल से होती रही है। अब सभ्य महाशयो। सत्यासत्य का विचार

करिये. हमारे शास्त्री जी महाराज अर्थात् उक्त पत्र के सम्पादक श्री दामोदर जी (पं॰ गोपालराव जी प्रति) लिखते हैं कि " ग्रन्थ कर्त्ता की जैसी भक्ति स्वामी दयानन्द पर है वैसी कदाचित् वेद प्रति पाद्य वेदात्मा भगवान् पर न होगी ऐसा अनुमान होता है कारण ग्रंथ कर्त्ता भी स्वामी जी की ओर से मूर्ति पूजा की प्रणाली निंद्य और निर्मूल जानता है. और इसी विषय में स्वामी जी ने बड़े २ शास्त्रार्थ किये और किसी ने उनको इस विषय में नहीं हराया इस बात से यह बहुत प्रसन्न हुआ है. परन्तु हमने पहिलेही लिखा था कि संस्कृत ज्ञान के बिना जो ऐसी२ लोक व्यवहार वंद्य बातों को चाहे वे कैसेही विद्वान् की क्यों न हों मानते हैं वे अंधे के समानही दूसरे के सहारे से चलने वाले हैं" उत्तर शास्त्री जी का यह लेख कि " ग्रन्थ कर्त्ता की जैसी भक्ति स्वामी दयानन्द पर है वैसी कदाचित् वेद प्रति पाद्य वेदात्मा भगवान् पर न होगी" संताप से संयुक्त दृष्टि पड़ता है। जो हो। भला विचारणीय है कि यदि सद्गुरु पर किसी की दृढ़ उत्तम भक्ति हुई तो क्या वह आक्षेप पात्र हो सक्ता है. कदापि नहीं। शोक। कि पत्र सम्पादक ने अपने नामानुसार भी इसका विचार न किया कि " यो गुरुः सशिवः प्रोक्तः.. शिवे रुष्टे गुरुस्त्राता, आचार्य देवो भव॥ और मनु भगवान् ने जैसी गुरु की भक्ति करनी लिखी है वह भी सब को विदित है। इत्यादि प्रमाणों से ज्ञात होता है कि गुरु भक्तिही धर्म. अर्थ. काम. मोक्ष इन चार पदार्थों के प्राप्ति का निदान (आदि कारण) है और शास्त्री जी का यह अनुमान करना कि " जैसी भक्ति ग्रन्थ कर्त्ता की स्वामी

दयानंद पर है इत्यादि" अत्यन्त अशुद्ध है क्योंकि अनुमान ज्ञा
न ज्ञान में प्राप्ति ज्ञान मुख्य कारण होता है. और प्राप्ति उसे कह
ते हैं कि साध्य के साथ हेतु का एकाधिकरण्य होना. अर्थात् सा
ध्य और साधन दोनों का एक स्थान पर अवश्य होना. और हेतु
अपने साध्य को छोड़ कर कभी पृथक् नहीं रहता. जैसे अग्नि से
धूम्र अलग नहीं रहता क्योंकि अग्नि साध्य है और धुआं सा
धन इसी प्रकार गुरु भक्ति भी साधन कोटि में गिनी जाती है
और ईश्वर भक्ति साध्य कोटि में. इसलिये उक्त प्रकार से ज
हां गुरु भक्ति है वहां ईश्वर भक्ति भी अवश्य मेव होगी. जैसे
पाक कर्ता की मुख्य उद्देश्यता पाक पर ही रहती है. और
तद पेक्षया काष्ठादि साधनों पर गौण. क्योंकि साध्य के उद्दे
श्यही को लेकर साधन में प्रवृत्ति होती है. इससे अब सिद्ध
हो गया कि शास्त्री जी का अनुमान ठीक नहीं ॥

(शा०) ग्रंथ कर्ता भी मूर्ति पूजा को निंद्य और निर्मूल जानता
है इस विषय के शास्त्रार्थ में स्वामी जी कहीं नहीं हारे हैं
इससे यह बहुत प्रसन्न हुआ है ॥

(उ०) क्या यह भी ग्रन्थ कर्ता में कोई बुराई की बात है, यह
तो सत्य पुरुषों का काम ही है कि सत्य को देख प्रसन्न और
असत्य को देख अप्रसन्न वा खेद करना. ग्रन्थ कर्ता अर्थात्
पंडित गोपाल राव हरी जीने. जब अपनी बिचार की तुला
से सत्यासत्य को ठीक २ तोलन किया तो सत्य से प्रसन्न हुए
और प्रतिमा पूजन की प्रणाली को अशास्त्रीय जानकर निंद्य
ठहराया. तो कोई आश्चर्य की बात नहीं और न कोई दोष

की बात है। यद्यपि आप भी किसी कारण से कथित बाह्य व्यवहार में नहीं मानते हैं तथापि अंतःकरण तो आप का भी साक्षी भरता है. क्योंकि आप के लेख ही से प्रगट होता है" इस विषय में स्वामी जी ने बड़े २ शास्त्रार्थ किये और किसी ने उनको नहीं हराया" इससे सिद्ध होता है कि जब स्वामी जी की बात सत्य थी तभी तो उनका पराजय नहीं हुआ अन्यथा यह कब संभव था कि वे न हराते अजी महराज!!! सदा जय सत्य ही की होती है। अन्य की नहीं।

(आ०) संस्कृत ज्ञान के बिना जो ऐसे २ लोक व्यवहार वंश बातों को चाहे वे कैसे ही विद्वान् की क्यों न हों मानते हैं वे अंधे के समान हीं दूसरे के सहारे से चलने वाले हैं।

(उ०) यह आप का कथन करना आप को शोभा नहीं देता देखिये संस्कृत ज्ञान के बिना यदि उस बात कहने वाले की विद्वान् कोटि में गणना है तो उसकी बात क्यों न मानी जाय. विद्वान् की बात अवश्य माननी पड़ती है. यदि कहो कि संस्कृत ज्ञान के बिना विद्वान् ही नहीं हो सकता तो यह कहना आप का महा अशुद्ध है कि "संस्कृत ज्ञान के बिना कैसे ही विद्वान् की क्यों न हों" क्योंकि वह मूर्ख हुआ. और संस्कृत ज्ञान रहितों को जो आप ने अंधा बनाया ऐसा कहना आप को योग्य न था क्योंकि मैं देखता हूं आज कल्ह जो पंडिताभास. सद सद्विचार शालिनी बुद्धि रहित. हठाग्रह. स्वार्थता. मिथ्याभि कथन. आदि दोषों से ग्रस्त ग्रसित" समान हैं उन से कई गुण अच्छे प्रायः अन्य विद्याभिज्ञ लोक हैं. परन्तु उन पूर्ण विद्वान संस्कृ

त्तों को बात हम भी नहीं कहते सारांश यह नियम नहीं है कि केवल संस्कृत के पठन मात्रही से श्रेष्ठ होसकते हैं अन्यथा नहीं देखो न्याय दर्शन के भाष्य में वात्स्यायन मुनि जी ने क्या लिखा है "ऋष्यार्य म्लेच्छानांस समानं लक्षणम् तथाच सर्वेषां व्यवहारा प्रवर्त्तन्तेति" न्याय दर्शने सू० ७ अ० १ आ० १।

अर्थात ऋषी आर्य्य म्लेच्छों का समान लक्षण है आप्त होने में कारण आप्तही की बात मानी जाती है अनाप्त की नहीं। किसी देश किसी जाति का कोई पुरुष हो आप्त होना चाहिये अस्तु क्या आप के जानने में गोपालराव हरी जी संस्कृतविद्या के अनभिज्ञ हैं। शास्त्री जी महाराज उक्त पंडित तो संस्कृत में बहुतही अच्छा पांडित्य रखते हैं उनकी इच्छा तो दिग्विजय रचना संस्कृत में करने की थी इस दृष्टि से भाषा में रचन किया गया कि प्रायः संस्कृतज्ञ कम हैं जो हैं भी सो उक्त दोषों से भरे हुए हैं और दूसरे संस्कृतानभिज्ञों को भी लाभ पहुंचे वे इस लाभ से खाली न रह जांय" और इसी दृष्टि से मैंने भी यह उत्तर भाषा में अर्थात् प्रतिदिन की बोलचाल में लिखा है मेरी अनुमति में तो संस्कृत विद्या का यथार्थ अभिप्राय आर्य्य वेद मतावलंबी ही जान सकते हैं अनार्य्य जो अल्प काल से प्रचलित कपोल कल्पित बातों अर्थात् जड़ मूर्ति पूजादि वेदबाह्य पाखंड धर्म को मानते हैं वे कभी शास्त्र का ठीक २ रहस्य नहीं समझ सक्के अन्यथा मिथ्या बातें क्यों चलते॥ इस स्थान पर मुझे मुरारि का श्लोक स्मरण होता है श्लोक॥ "देवीं वाच मुपासते हि बहवः सारंतु सारस्वतं जानी

मति मान सौ गुरुकुल क्लिष्टो मुरारिः कविः॥ अब्धिर्लंघित एव वानरभटैः किन्त्वस्य गम्भीरता मापातालनिमग्न पीवरतनुर्जानाति मंथाचलः॥१॥ अर्थः॥ शास्त्र को तो बहुत से लोग पढ़ते है परन्तु शास्त्र के सार को तो यह बुद्धिमान् मुरारि कवि ही जानता है, जिसने कि गुरुकुल में बहुत बड़ा परिश्रम उठाया है। दृष्टान्त इसमें यह है कि वानर भटों ने समुद्र लंघा तो है पर ऊपर ही ऊपर, समुद्र की गहराई को नहीं जानते, किन्तु उसकी गहराई को तो मंथाचल ही जानता है, जो कि पाताल तक अपने पीवरतनु से निमग्न हुआ है॥

ऐसे ही आज कल के पंडित लोग भी स्वार्थता के कारण, ऊपरी दृष्टि से शास्त्र के रहस्य को न जान कर अपने आप दुर्दशा में पड़ रहे हैं और इस देश को भी दुर्गति में डाल रक्खा है। हा शोक ऐसी समझ पर!!

(प्रश्न) मूर्ति पूजन के बिषय में हमारे चंद्रिका ही में कई लेख छपे हुए होंगे परन्तु उन पर ध्यान देवे कौन, सबों ने यही समझ लिया है कि जो दयानन्द स्वामी कहें कि वेद में मूर्ति पूजन नहीं तो वही बात प्रमाण मानकर मूर्तिपूजा छोड़ देना वा मूर्तियों को तोड़ डालना परंतु बिचार से देखा जाय तो यह उनकी बड़ी भूल और अज्ञान दशा है, कारण आज जो प्रणाली दो हज़ार अधिक वर्ष से प्रचलित होती आई है क्या उस समय में कोई दयानंद स्वामी के समान नहीं थे वा उस समय वेदार्थ जानने वाले वा वेद ही नहीं मिलते थे (उत्तर) अहा हा हा!! क्या आनन्द की बात है "सत्यमेव

भिजयति नानृत मिति" पाठकगणों! जय सत्यही की होती है
झूंठ की कभी नहीं. देखिये न्याय करिये सत्यवादी आर्य्य पुरु
षो। शास्त्री जीका कैसा परस्पर अर्थात् पूर्वा पर विरुद्ध. लेख है
कि " हमारे चंद्रिकाही में कई लेख मूर्तिपूजा विषयक छ-
पे होंगे उनपर ध्यान देवे कौन" सभ्यजनो - प्रथम तोशास्त्री
हो जी को संदेह है कि "छपे होंगे" शायद हों वा नभी हों।
फिर कहते हैं कि" उनपर ध्यान देवे कौन" अजी शास्त्री
जी महाराज वे कैसे आप के लेख हैं तनिक हमें तो दिखला
इये अनुभव होता है कि आप के वे लेख वेदोक्त तो होंगे
ही नहीं. क्योंकि आपही लिख चुके हो कि" मूर्ति पूजा अनु-
मान दो हजार वर्ष के लगभग से चली है" फिर यदि होंगे
भी तो वही गड़बड़ स्मृति प्रति पाद्य लेख होंगे. फिर ऐसा
कौन मूर्ख है कि जो उन लेखो पर ध्यान देकर अपना अमूल्य
समय वृथा खोवै. दूसरे यह कहना भी आप का यथार्थ नहीं
हो सका. कि" इस समय में क्या दयानन्द स्वामी के समान कोई
विद्वान नहीं थे" इत्यादि॰ शास्त्रीजी! सभी कुछ था वा होगा
पर आप्तता न होकर स्वार्थता ही होगी. जिससे यह सत्यानाशी
मार्ग प्रचलित हुआ. क्या वर्तमान समय में कोई विद्वान् नहीं
रहा। इस बिषय में वेदोक्त प्रमाण क्यों नहीं देते॥
संवत् १९२६ के कार्तिक में काशी के मध्य इस विषय में
बहुबार विज्ञापन देने पर भी काशीस्थ और अन्य देशों के सभी
विद्वान् मुख छुपाये लज्जार्णव में डूबे हुए मच्छ मार बैठे
रहे किसी का भी हियाव न पड़ा कि स्वामी जी से एक घड़ीभी

सन्मुख वेद के शास्त्रार्थ करें सत्य है प्रचंड ग्रीष्म ऋतु के आदित्य के सन्मुख दीपक की क्या सामर्थ्य जो प्रकाश होसके जुगुनूं (एक प्रकार के जीव) आदि के गाढ़ान्ध कार युत रात्रि ही में चमकते हैं दिन में नहीं। बस शास्त्री जीमहाराज। यही दशा जो आज कल है उस समय में भी होगी अब मैं आपसे यह प्रश्न करता हूं कि जब आप मूर्ति पूजा को केवल दो हज़ार वर्ष सेही प्रचलित होना सिद्ध कर चुके हो (हम तो कुछ अधिक भी मानते थे) उससे पूर्व क्या विद्वान् न थे वा वेद न मिलते थे! कदाचित् आप के कहे हुए समय में वेदार्थ भिज्ञ विद्वान् भी न हों तो कुछ आश्चर्य नहीं क्योंकि महाभारत के घोर युद्ध में धर्म्म स्थापक महाराजा और महा विद्वानों की बहुत कुछ हानि हो चुकी थी तब आपत् काल था. परन्तु उससे पूर्व तो बड़े २ विद्वान् महर्षि वेद व्यासादि सत् पुरुष थे (इसमें किसी को संदेह ही नहीं) फिर यदि मूर्ति पूजन वेदोक्त होता तो दो हज़ार वर्ष से पूर्व प्रचलित क्यों न होता। अत एव आपही के कथनानुसार जाना जाता है कि यह निस्संदेह पाखंड व्यवहार है. और यदि दो हज़ार वर्ष की अवधिही मत मतांतर मानने में प्रमाण है तो अवश्य है कि पश्चात् दो हज़ार वर्ष के रैदास चमार और धन्ना कसाई आदि का चला हुआ मत. मानना भी उचित होगा. और आप ने जो आर्य्यों की भूल और अज्ञान दशा बताई सो सब सत्य २ कहिये कि यथार्थ में आर्य्य लोग भूले हुए हैं वा आप लोग. सिद्ध हुआ कि गाढ़ान्धकार अज्ञान दशा में आपही पड़े हैं न कोई आर्य्य।

(शा०) माना कि वेद में मूर्त्ति पूजा का लेख नहीं तो क्या बद्रि-का द्वारिका नाथ जगन्नाथादि देवताओं को फोड़ तोड़ दियाजा-य. अथवा जिनके आधार से ऐसी हम लोगों की भावना हो-कर हम इस विषय में केवल स्वान्तरंग के सिवाय जब दूसरा प्र-माणही नहीं देखते तो क्या उन आधार ग्रन्थों को स्वस्थान से ब-टोर कर डुबादिया जाय. प्रथमतः यही विचारना चाहिये कि प्रमाण वस्तु कौन होती है. जिस्पर जिसको अपना चित्त प्रमा-ण मानेगा वही प्रमाणीक कही जावेगी. तो दया नन्दजीका उनके हजारों अथकउन्हे अनुयायी आज बारह बरस से इस विषय में मार देश दिशावरों में जाकर प्रयत्न कर रहे हैं परंतु आज तक कोई संस्कृतज्ञ उनके अनुयायी हुए हैं। नहीं! इसी से सिद्ध होता है कि जो अंगरेजी वा अन्य फ़ारसी आदि वि-द्या पढ़कर विद्वान् कहलाते हैं उन्होंनेही किस्तानों के समान गुप्त भाव से अपने धर्म का परित्याग किया. और उसी को नि-न्द्य गिनातो कोई प्रशंसा की बात नहीं "अलंवेदेन भूपाना किन्नसन्ति महीतले"॥

(उ०) आनन्द! आनन्द!! आनन्द!!! आर्य्यवरो! सत्य कै-सी उत्तम वस्तु है!! देखो शास्त्रीजीने श्रीयुत पुनीत वेद में मूर्ति पूजा का लेख न होना अन्त को मानही लिया! सत्य तो यह है कि "गणेशं कुर्वाणो वानरं चकार" किसी पुरुषने गणेश की मूर्ति बनाना चाहीथी परन्तु बन गई बन्दर की बस शास्त्रीजी चाहते थे मूर्ति पूजा का मंडन. परन्तु उन्हीं के लेखसे होगया उस्का खंडन. सभ्यगणो यह सत्यही

का प्रताप है॥ फिर भी हमारे भोले भाले शास्त्रीजी महाराज लिखते हैं कि जो वेद में इसका (पाषाण मूर्ति पूजा का) लेख नहीं था तो क्या बद्रिका द्वारिका और जगन्नाथादि देवताओं को तोड़ दिया जाय॥ अहा हा हा!!! वाहरे भोलापन! वाहरे शास्त्री जी की कुशाग्र बुद्धि! धन्य है! अजी शास्त्री जी महाराज! बिचार तो करिये! कहीं जगन्नाथ और देवता का भी तोड़ना सम्भव होसक्ता है! यह तो आपने ऐसी बात कही जैसे कोई कहे कि हम आकाश को तोड़ मरोड़ डालें जो ऐसा कहे उसको बुद्धिमान क्या कहेंगे! अजी शास्त्री जी महाराज! जो जगन्नाथ है अर्थात् या वद्विश्व का नाथ-स्वामी-आश्रय-व्यापक जो वस्तु है वह कभी तोड़ी भी जासक्ती है! निरवयव पदार्थ जो सर्वत्र विद्यमान और अचल है वह कभी टूटसक्ता है! वाह क्या कहना है! हां जो कहिये कि जिनको हमने अनन्वर्थक संज्ञा धरी है अर्थात् जिनका नाम गुणों के अनुसार न होकि न्तु स्वक पोल कल्पित किसी काष्ठ पाषाण आदि मूर्त्ति का नाम जगन्नाथादि धरलिया होय-यदि उसके बिषय में पूछिये तो उसका तोड़ना क्या है वह तो आपही कालान्तर में टूट जायगी॥ अब रही उन ग्रन्थों की बात जिनके आधार से हम लोगों की भावना बिगड़ कर आर्य्यावर्त्त मात्र की हानि हो रही है निःसंदेह वे डुवा देने योग्य हैं. उन वेदादि सद्ग्रन्थों का विस्तार और प्रकाश कीजिये जिनके आश्रय से फिर कर हम लोगों की भावना सुधरैं और अपनी पूर्वावस्था को पहुंचे जिसमें यह आर्य्यावर्त्त देश भूमंडल मात्र में सूर्यावत्प्रकाशित फिर

होजाय! देखिये प्रमाणवस्तु वह कहाती है जिसमें शास्त्रार्थ और स्वांतःकरण दोनों सम्मति दें। केवल चित्तही के मानने से इस विषय में कुछ नहीं होता! दूसरे यह सिद्ध करना आप का कदाचित् ठीक नहीं हो सकता कि आज बारह वर्ष से दयानन्दही क्या उनके हज़ारों अनुयायी देश देशान्तरों में जाकर इस के विषय में प्रयत्न कर रहे हैं परन्तु आजतक कोई संस्कृतज्ञ उनके अनुयायी नहीं हुए। वाहजी वाह!!! देखिये संस्कृतज्ञ भी उनके अर्थात् श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज के अनेक अनुयायी विद्यमान हैं. परन्तु दिन दोपहरी के सूर्य्य के प्रकाश में भी न सूझे तो इसकी औषधि भी हमारे पास नहीं यह तो ईश्वरीय नियम है कि किसी को रात्रि में दीखे और किसी को दिवस में। अजी शास्त्री जी महाराज! निम्नलिखित संस्कृत के विद्वान् स्वामी जी के दृढ़ अनुयायियों के नाम भी सुन लीजिये देखिये प्रथम श्याम जी कृष्ण वर्म्मा जो संस्कृत के बड़े विद्वान् हैं जिन को गवर्मेन्ट हिन्द ने संस्कृतज्ञों की अग्र कोटि में गणनीय समझकर जर्म्मन में सर्व प्रकार की विद्याभिज्ञ पुरुषों की सभा में भेजा था। दूसरे श्री गोपालराव हरी देशमुख जो बम्बई के जजरह चुके हैं और अब आर्य्य समाज बम्बई के प्रधान हैं। तीसरे दानापुर आर्य्य समाज के आदित्य नारायण जी जिनका अध्ययन न्याय में जागदीशी पर्य्यन्त और व्याकरण में भाष्यान्त है और शास्त्र भी अच्छा जानते हैं। चौथे और पंडितवर गोपालराव हरी जी तथा पंडित गौरीशंकर आदि अनेक संस्कृत के विज्ञ भी श्रीयुत स्वामी जी के अनुयायी हैं. जिनके नामादि लिखने से पत्र बहुत

बढ़ जायगा. परन्तु शास्त्री जी महाराज इस मार्ग में अनुयायी वेही हो सकते हैं जो सत्य को मान असत्य का परित्याग कर अपनी शिष्टता के कारण कितनी ही लौकिक हानि होने पर भी कदापि असन्मार्ग में अर्थात् वेदबाह्य पाषाण प्रतिमा पूजनादि पाखंड पथ में नहीं प्रवर्त्त होते हैं परन्तु उनकी बात हम नहीं कहते कि जिनको स्वार्थ ने घेरा है जो परार्थ बिल्कुल नहीं जानते और जिनको ईश्वर का किञ्चित भी भय नहीं कि हम मरके सर्वान्तर्यामी भगवान् के आगे क्या कहेंगे और क्या हमारी दशा होगी. परन्तु जो हो. वे जानें उनका काम. हमारा तो कह देनाही मुख्य धर्म है फिर उस मार्ग में चलने वा न चलने की उनकी रुचि है॥ अब देखिये स्वामी जी का और उनके अनुयायियों का प्रताप कि जिन्हों ने लाखों मनुष्यों का मन असन्मार्ग से विमुख कर सन्मार्ग में लगा दिया है और अनेक संस्कृताभिज्ञ सत्पुरुषों को भी कंटकाकीर्ण कुत्सित मार्ग से हटाकर इस वेदोक्त दिव्य मार्ग में चलाया है। फिर आप का यह कहना कदाचित् सिद्ध नहीं हो सकता कि कोई भी संस्कृताभिज्ञ उनका अनुयायी नहीं हुआ और अंगरेजी फारसी पढ़े हुओं को प्रचलित पाखंड धर्म के परित्याग करने से जो आप ने क्रिस्तानों के समान माना और उनको निंद्य गिना तो यह भी आप की अपूर्व चातुरी है "शब्दार्थौ विचार्य्यः" क्योंकि इस प्रकार के और लोग भी कहा करते हैं "आलंबे देनेत्यादि" पुकार जो राजा महाराजाओं से आप ने की है सो तो समान न्याय है क्योंकि मैं भी कहता हूं कि यदि राजा रामचन्द्र, युधिष्ठिर आदि धर्मात्मा इस समय में होते तो काहे को

खं. ३

आप सदृश महात्मा पुरुषों का मुखार विन्द इतना खुलता. परन्तु शततः धन्यवाद उस परमात्मा को है कि जिसकी कृपा से आज हमारे समय में श्री राज राजेश्वरी विक्टोरिया महारानी का राज्य इस आर्य्यावर्त्त में वर्त्तमान है सर्व शक्तिमान् जगदीश्वर चिरायु करे उस न्याय शीला महारानी को कि जिसके प्रताप से बाघ बकरी एक घाट पानी पी रहे हैं ॥

किमधिकम् विज्ञ बरेषु शास्त्री जी महाराज क्षमा कीजियेगा नमस्ते ! आप का कृपा कांक्षी लक्ष्मीदत्त ज़िला स्कूल सहारनपुर ॥

दयानंद दिग्विजयार्कोपराग-दुर्दिन

देश हितैषी अंक ८ खंड १ में लक्ष्मीदत्त ने दयानन्द दिग्विजयार्क की समालोचना जो इस चंद्रिका में छपी थी उसपर आक्षेप किया है इस आक्षेपक ने अपनी लेखन पद्धति से यह भी दिखाया है कि वे न्या . व्याकरणादि शास्त्र भी पूर्ण रीति से जानते हैं हमको तो यही आनन्द है कि चलो हमारे लेख वृथा नहीं जाते अब उनके आक्षेपों पर ध्यान देने से उसके पुनः खंडन की इच्छा हमें नहीं होती कारण पुनर्विवाह के विषय में भी किसी हमारे पत्र प्रेरक ने लिख ही दिया है कि आजकल वाद जो लोग करते हैं वे मूल विषय छोंड़ शाखाओं पर दौड़ते हैं चंद्रिका कला ८ किरण ६ देखना। वैसे ही इस विषय में आक्षेपक ने किया है-"आजतक मूर्त्तिपूजा विषयक हमारी चंद्रिका में ही कितने लेख छपे होंगे. इस हेतु हेतु मद्भाव बोधक लृङ् को उसने संभाव नार्थक लिङ् माना है। गुरु प्रशंसा की और न्याय का साध्य भाव झाड़ा-पर गुरु शिष्यों के लक्षण क्यों छोंड़े. अथवा वही आपका समाधान ठीक है कि उनके वे गुरु हैं इसलिये उन्हों ने प्रतिष्ठा लिखी हमारे वे दोनों कोई नहीं इससे हमने सूधी सुनाई दूसरे समालोचना में "स्वामी दयानन्द के अनुयायी प्रायः असंस्कृतज्ञ ही हैं" ऐसा जो आशय था उसपर भी उन्हों ने कई विद्वानों के नाम लिखे हैं इन्हीं नाम को देख हमने अपनी लेखनी रोक ली-"अरसिक जन भाषणतो रसिक जनैः सहस्त्रं वरम्" तीसरे हमारे लेख तभी इन आक्षेपकों को ठीक लगेंगे जब हम भी इन्हीं के समान अंधे बन दूसरे के सहारे चलने लगे चौथे यह भी विशेष कारण है

कि यदि स्वामी जीके शुद्ध आशय हम न पाये हों वा उन्हों ने अग्र-
हन किये हों पांचवें मित्र विलासादि में नित्य नवीन छपनेवाले
लेख यथार्थ और जाग रूप नहीं छपे जब इसी व्यापिष पेषण में
हमें दिन बिताना हो जो भाषा लेख भी नहीं जानता उनको क्या
हम समझावें क्योंकि " अनुमान " शब्द जो तर्क वा संभावनार्थक है
उसी को आप ने शास्त्रोरूढ़ मान कर छल से इतनी झंग तोड़ी और
अन्यों भ्रमाया है ॥

सारांश- यद्यपि हमें आप द्वारे भी समझें वा आप की ही बात
आप के सहवर्त्तियों को युक्त देख पड़े तो भी कुछ हर्ज नहीं हमारे
जो उद्गार लिखे हैं वा निकलने हैं वे तो निष्पक्षपात ही हैं बहुत
क्या- जिनका यह दिग्विजयार्क है उन्हीं से आप उस की यथार्थता
वा अक्षरशः युक्तता का सार्टिफिकेट मंगवा लें तो वही सबको
समाधायक होगा (३) वैसे आप हज़ारों रीति से इधर उधर ले खेंची

(नोट ३) ऊपर लिखी अपनी चोथी कलम से विरुद्ध यह लेख शास्त्री जी म-
हाराज ने किया है - कभी कोई विद्वान् और श्री जी महाराज के शुद्धाशयों का अ-
भिज्ञ ऐसा प्रयोग नहीं कर सकता परन्तु स्वार्थपरता सब करा छोड़ती है अत
एव इन के इस लेख के प्रत्युत्तर में पं॰ लक्ष्मीदत्त जी को नीचे लिखा श्लोक
लिखना पड़ा अन्यथा क्या आवश्यकता थी अस्तु अलं खेदेनेति ॥
(श्लोक) आक्रान्तेव महोपलेन मुनिना शप्तेव दुर्वाससा सातत्यं बत मु-
द्रितेव जतुना नीतेव मूर्छां विषैः ॥ बद्धेवाऽतनुरज्जुभिः परगुणान्वक्तुं न
शक्ता सती जिह्वा लोहशलाकया खलमुखे विद्धेव संलक्ष्यते ॥१॥
सुनते हैं कि शास्त्री जी की बुद्धि जब से अच्छी है क्यों न हो सत्य सत्य ही होता
है- ईश्वर इस से भी अधिकतर उनको कामका कर दिखावे ॥

फड़कावें और अपने देश हितैषी के पत्रों के पत्र रंगवावें तो भी यहां कुछ हर्ष वा समाधान नहीं भला जिन विद्वान् अनुयायियों के आपने नाम लिखे उनमें आप भी अपना नाम देते तो भी आप के ही कथनानुसार हम को आप की बात माननी पड़ती।

हरि० चं० पौ० कृ० १९३६ कि० २२

(दामोदररूपोपरागविध्वंसानंदसुदिन)

महाशयो! देखा आपने चंद्रिका कला ६ किरण २२ में! दामोदर शास्त्री जी महाराज का पाण्डित्य!! जब इन ऐसे महाशयों से ही कुछ नहीं बन पड़ता तो इतर क्षुद्रों से क्या कहा जाय--सत्य है! "नाम बड़े दर्शन थोड़े वा ऊंची दुकान के फीके पक्वान" आदि कहावतें ऐसों ही पर तो यथावत् घटित होती हैं। भला कहां विद्वच्छिरोमणि श्रीयुत पण्डित गोपालराव हरी जी महाराज रचित परम दिव्य देशोपकारक दिग्विजयार्क ग्रन्थ और पण्डितवर श्रीमान् लक्ष्मीदत्त जी महाराज का वह सुललित और मनोहर शास्त्रीय लेख और कहां इन महापुरुष की यह चपलता" काव्यं धिक्कुरु यत्परैर्विरचितम्-- "पाण्डित्ये चापलं वचः"- इत्यादि पूर्वजों की दिखलाई हुई सब युक्ति देखिये कैसी इन में सुशोभित हो रही है- पढ़े लिखे सब कुछ समय पर ठीक हुआ पर!!! वेद शास्त्र का तो कहीं कुछ पता ही नहीं बातों की खूब रेलंठाल आप का लेख तो यह" उनके वे गुरु इसलिये उन्होंने प्रतिष्ठा लिखी- हमारे कोई दोनों नहीं इससे हमने सूधी सुनाई- और निष्पक्षपाती का दावा-(भला कोई अपने और पराये का

अहंकार रखने वाला भी कभी निष्पक्षपाती हुआ है? पर क्या कहैं बड़ों की बड़ीही बात होती है- और २ अपनी चंद्रिका में श्रीमान् आर्यकुल दिवाकर महाराजा के समीप पढ़ना प्रकाशित कर स्थलान्तर में उनके शिष्यों को अंधा बनाना कैसी अनिर्वाच्य लीला है क्या इन शिष्यों में श्रीजी हजूर नहीं आये- शास्त्री तो हैं ही कह देंगे " स्वार्थी दोषं न पश्यति " क्या ऐसेही स्वार्थी रसिक और हमारे प्रशंसित पण्डित वर गोपाल राव हरि आदि विद्वान् अरसिक कहावें! हां निःसंदेह उक्त शास्त्री जी के सदृश हमारी विद्वन्मोद विवर्द्धनी सभा के विज्ञ लोग (न कोन को भाषण तत्पराया: और सति प्रदीपे सत्यग्नौ सतसु तारा रवीन्दुषु। विनाम मृग शावाक्ष्या तमो भूत मिदंजगत्) ऐसे निंद्य रसों में कभी मग्न नहीं रहते इससे जो शास्त्री जी हम को अरसिक ठहरावें तो लाचारी है।

पाठकगण! हमारे थोड़े से विख्यात विद्वानों के नाम सुनतेही जिसकी लेखनी हाथ से छुट पड़े अथवा रुक जाय तो क्या उस्के भीरु और कातर होने में किसी प्रकार का कोई संदेह कारता है जब इतनी दूर से यह दशा है तो ऐसे पुरुष सन्मुख कब ठहर सकते हैं उष्ट्रोन्माद तभी तक रहता है जब तक वह किसी पर्वत के नीचे नहीं आता आप कहते कैसे हैं कि " हम स्वामी जी के प्रकाशित शुद्ध भावों से यथावत् जानकारी रखते हैं" पर हम कहते हैं कि कभी इन ऐसे हत दृष्टि लोग श्रीमद्दयाचित्त परम प्रकाशक आदर्शों से किंचित मात्र भी लाभ नहीं उठा सकते प्रथमतः ऐसों को हम ऐसे सद्वैद्यों से अपनी दृष्टि सुधरवाले नी

उचित है अन्यथा भङ्गभङ्गातेही रहेंगे। महात्माजी अपनी लेखन पद्धतियों के बल से राहु केतु बन बड़े आनंदित हुए हैं अन्त को हार मान लेनी ही पड़ी अस्तु अब मुझको यही उचित है कि इनको लेख की युक्ति और उसका रूप रंग ढंग आप लोगों के सन्मुख धर उत्तर देने में उद्यत हूं सो सुनिये ॥

हमारे मरकट मित्र शास्त्री जी महाराज लिखते हैं कि "हमने दयानंद दिग्विजयार्क परजो समालोचना अपनी चंद्रिका कला ६ कि० ६ में लिखी है उसपर देश हितैषी अं० ६ के द्वारा लक्ष्मीदत्तने आक्षेप किया है इस आक्षेपक (लक्ष्मीदत्त) ने अपनी लेखनी पद्धति में यह भी दिखलाया है कि वे न्याय व्याकरणादि शास्त्र भी पूर्णरीति से जानते हैं और हमारे अनुमान प्रश्न को आस्त्रारूढ़ मान छल से इतनी टांग तोड़ी" ॥

उत्तर। शास्त्रीजी महाराज! यदि आक्षेपक जानता कि चंद्रिका संपादक जी महाराज न्याय व्याकरणादि शास्त्र शून्य हैं वृथा शास्त्री कहलाते हैं तो निश्चय था कि वे कभी आपपर शास्त्रीय आक्षेप करने का परिश्रम न उठाते अनजाने आपकी टांग टूटी तो क्षमा योग्य है। और जो आप लिखते हैं कि हमको यही आनन्द है कि हमारा लेख वृथा नहीं जाता सो यह आप का केवल कथन मात्रही है जब कि आप ऐसों के पितृपितामहादि ७२ पीढ़ियों का लेख देश भर में घोषित होगया तो अब ऐसे लीक पीटन दासों का लेख क्या सफलता कर सक्ता है॥ मूल विषय को छोड़ शाखाओं पर चलना यह आपही का कार्य है न आप के आक्षेपक का क्योंकि वाद प्रकरण में मूल तो

केवल यही है कि पाषाणादि मूर्त्तिपूजा वेद विरुद्ध है. और जो अज्ञता आदि कलंक आप आर्यों में प्रकाशित करते हैं—उन सर्व कलंकों से आप और आप के सब सहचर लोग पूर्ण रीति से कलंकित हैं बस यही पंडित लक्ष्मीदत्तजीने अपनी प्रशंसनीय लेख पद्धति से अच्छे प्रकार सिद्ध कर दिखाया है. आप को उचित था कि उसका मार्जनोपाय कुछ करते. स्वतः समर्थ नहीं थे तो कोई सहायक ढूंढ लेते सो कुछ एक भी न करते बना लगे उलटे दुर्वचन सुनाने. वाह! धन्य!! भला यह कौन सभ्यता की बात है- अथवा यही ठीक है कि काने से काणा कहने पर चिड़ता ही है क्योंकि उस बिचारे की इस जन्म में तो फूटी आंख जुड़ ही नहीं सकती फिर केवल गाली प्रदान के और क्या उपाय कर सकता है। शास्त्री जी महाराज! आप के लेखानुसार लोग जब तक आप की चंद्रिका क॰ ८ कि॰ ६ देखें तब तक आप भी अपनी उसी कला के मार्गशीर्षाख्य कि॰ में श्रीमान् जगद् गुरु स्वामीजी महाराज का देश मेवाड़ में स्वागत लिखा है उसको देख लीजिये अथवा दिग्विजयार्क तृतीय खंड के पृष्ठ १५६ से १६२ तक देख सोचिये परन्तु शपथ है लज्जित न हूजिये। और जो आप "छपे होंगे" इस क्रिया को अब हेतु हेतु मद्भाव बोधक लड़ दर्साकर जो निष्कलंक हुआ चाहते हैं सो भी नहीं हो सकते क्यों कि आप के कर्म (नसीब) में जो कर्म्माक्षर पड़ने हार थे सो आप केही लेख से स्वयं पड़गये. यही एक क्या शास्त्रीजी महाराज आप के तो उस लेख में एक भी पंक्ति अखंडित दृष्टि नहीं पड़ती वही दशा आप के दूसरे इस प्रासंगिक लेख की भी है।

क्या करो पश्चात् ताप किये भी तो अब सिद्धी नहीं होती। हां मित्र विलास का आश्रय पकड़ लेना यह उपाय इस अवसर पर आप को भला सूझ पड़ा। चलो भाई आर्य वृन्द। एक नसही दोसही अजी महाराज क्यों शास्त्री शब्द की निन्दा कराते हो क्या आप ने नहीं सुना है कि! (नव ह्वी धूर्तमंडली) सैरांश अनेक भी हो जाओ तो क्या? लक्षावधि घूक और चिमगादड़ दिनभर आंख मूंदे हुए मार्तंड मंडल श्री के विना शनो पायों को क्या सोचते नहीं रहते? फिर क्या कर सक्ते हैं वा कभी कुछ कर सकेंगे- उसी प्रकार आप लोगों का भी यह समस्त आडंबर है॥

यह आर्यावर्त्तस्थ प्रताप भानु (श्री स्वामी जी) अपनी प्रखर सूक्ति रश्मियों से आप को संतप्त कर रहा है सहस्रशः उपायों से यदि आप ऐसे लोग राहु केतु बन उपराग उपस्थित करते भी रहें तो विचार करिये कि कितने समय को वह उपराग और आप कृत दुर्दिन उपस्थित रहसक्ता है। होसके तो अब भी विचार को स्थान दीजिये और क्षमा कीजिये अग्रे (हरे रिच्छावनीयसी) यह आपही की टेक है शोक! कि यह वाक्य आपने अपरमित वार लिखा और पढ़ा परन्तु अद्यावधि उसका भाव न जाना परोप देश कुशलोंही में बने रहे अंत में क्या उत्तर करोगे. सत्य जानिये वहां आप का [illegible] सहायक न होगा आपने जाना कि जैसे बहुत से लोग इन दिनों लेडी और मेम साहवा की शुश्रूषा से काम निकालते हैं वैसीही हमारी भी युक्ति चलजायगी. सब कुछ कर्म करे और द्वारपाल भी बने तो भी कुछ हाथ न आया। — जब आप का यह लोक ही सिद्ध न हुआ तो परलोक की क्या आशा होसक्ती है।

न जाने उन आप के गुरू दाक्षिणात्य ठठेरों की संगति का फल कब आप के हृदय से उठेगा जितनी आपने इस दुष्टा कमला से हार खाई इतनी यदि हमारे पैथनुआं कुलाल की दांतघिषी करते तो कदाचित् निहाल भी होजाते अथवा अपनी वाग् देवता के स्नावक् बनते तौभी कभी के निर्मल हो गये होते! हाय एक भी न हुआ" दोनों दीन से गये पांड़े हलुआ मिले न माड़े" अंत को हार मानतेही बनी छि:!!!

यह शोक तो था सो थाही परंतु इस ओर आप अपने पंचत्वकी खबरें कहचले अर्थात् चंद्रिका बंद करना चाहते हैं यह महान् शोक है। अत एव आप की अव शिष्ट लेखनी पद्धतियों के उत्तरों से अब उपरत होता हूं तनिक विचार कीजियेगा तो कुछ शेष भी न मिलेगा - सर्वान्तर्यामी करे आप को यह पत्र रसायन हो लगे बच गये तो देखा जायगा क्योंकि प्रसिद्ध है"न वैद्यः प्रभुरायुषः" शुभमस्तु॥

आपका मित्र अनंतराम शास्त्री व्याख्यानाध्यक्ष सं० ने०

इसी प्रकार का एक उत्तर पं० लक्ष्मीदत्तजी ने भी शास्त्रीजी को भारत सुदशा प्रवर्त्तक के ५६वें अंक के द्वारा उपराग मोचन नामसे दिया है वह विस्तार भयात् छोड़ दिया गया॥

शास्त्रीजी का प्रत्युत्तर

श्री नृसिंहो जयति॥ ता: २०-५-८३ रविवार ब्राह्मणकार्यालय- कानपुर- महाशय- कृपा करके उनको यह ज्ञात हो कि आपके द्वितीय खण्ड में अर्थात् वैशाख के प्रथम अंक के जो उनका

लेख मैंने पढ़ा "अथ होलिकोत्सवे दामोदर पराग विध्वंसानंदसुदिनम्" नामक विषय छपा है. वह मैंने आद्योपांत पढ़ा- इसके उत्तर देने में कई वाक्य स्मरण हुए उन में प्रथम चंद्रिका का सिद्धान्त वाक्य "अ सि केषु" दूसरा "अति वाच मदन्त केशवः अथ मानाय नचेदि भू भुजे" माघवाक्य- तीसरा "रसिक जनैः सहवरं कलहः" चौथा "अवि दूद भि विवादस्तु न कस्यापि हि तुष्टिदः" इत्यादि इतना भी इसी लिये लिखा है कि अनन्त शास्त्री अपनी मेहनत व्यान समझें- विशे षस्तु मंगलं- (दामोदर विष्णु शास्त्री सप्रे ॥

॥ सप्रा प्रोयंविवादः ॥

माधू जीका आक्षेपस्वामीजीपर

॥ ओं० खंडनस्य- श्रीमद्दय ऽऽ नन्द स्वामी की सेवा में प्रार्थना श्रीम द्भारतीय प्रजा के अतीव हितकारी हैं- अतएव श्रीमान् को परमेश्वर चिरायु करें- श्रीमान् २८ ६६ मतन को खंडित करते हैं सो परस्पर पक्षपातीय होने से खंडनीय हैं- उक्त मतानुसार श्रीमत् स्थापित मत का भी खंडन होने से- श्रीमन्ने यह निर्णय किया है कि मिथ्याभि मान् स्वार्थ साधन में तत्पर अन्याय का करना पाप में प्रवृत्ति चोरी जारी अनृत भाषण पक्षपात किसी का नुकसान इत्यादि निषिद्ध कर्मों को छोड़ना और इनसे विपरीत सद्धर्मानुष्ठान करना इस प्रकार श्रीमत के मुखारविन्दु से समक्ष श्रवण कि या है परंतु शोक की वार्त्ता यह है कि दयानन्द दिग्विजयार्की य द्वितीय खंड समाजिक प्रकरण प्रमाणाष्टक के सातवें अ ष्टक में पृष्ठ १६६ पंक्ति २ वा ६ विषें जन्मरा चित्तोड़ में

(महाराणा श्री उदयपुराधीश श्रीमत् दयानंद स्वामी की सेवा में दो वार उपस्थित होते थे यद्यपि लाट साहब के आने से महाराणा साहब को अवकाश कम मिलता था) इतनाही लिखने से महाराणा साहब का दोवक्त पधारना सिद्ध होजाता परंतु आप नृगराज के गोदान विषय में श्लोक फर्माते हैं कि ॥ यावन्त्यः सिकता भूमे र्यावन्त्यो दिवि तारकाः ॥ यावन्त्यो वर्ष धाराश्च तावतीः ददं स्सगाः ॥१॥ इति. तात्पर्य्य के झूठ बोलने वाले को तृप्ति नहीं होती यह आप का फर्माना यथार्थ है (तथापि उक्त नियम विषय कसर नहीं पड़ने दी) महाराणा साहब ने इति शेषः यह क्या आर्य पुरुषों का समाज है. नहीं झूठ दंभादिक दोषन ते रहित का नाम आर्य है जाको तो लोभी. झूठे. दांभिकों का समाज कहना चाहिये। इस प्रकार १ जगह झूठ के लिखने से स्थाली पुलाकान्याय ते सर्वत्र झूठ की संभावना होवे है अब विचार करना चाहिये कि श्रीमान् के प्रतिष्ठित आर्य गोपाल शास्त्री ने अन्नत क्यों लिखा है। क्या श्रीमान् उनको अधर्म छुड़वाने का सदुपदेश नहीं देते वा स्वयमेव आप के आर्य लोग ग्रंथकर्त्ता तो अधर्म्माचरण करें और अन्यों के ताईं धर्म शैचिक वाक्य कहिकर निज मत में लेना. और श्रीमान् न्यायशील धर्माधर्म के निर्णय में कथन भी करते हैं। पक्षपात रहित न्यायाचरणं धर्मः। और पक्षपात सहित न्यायाचरणमधर्मः। अत एव हम को आशा है कि द. ति. खं. सा. प्र. पृ. ष. के सातवें अष्टक पृष्ठ ५६८ पंक्ति २ वा ६ विषे पक्षपात रहित सत्यासत्य विचार करेंगे इति चैत्रवदि १३ गुरुः सं. १९३९ (आप का कृपा-

भिक्षार्थी साधु अमरराम नवीन वेदान्ती।
इदानींतन निवासी शहर बूंदी ठिकाना गुप्तेश्वर महादेव।
कृपा पत्र वेग से चैत्र शुक्ला १२ तक भेजना॥

ग्रन्थ कार का प्रथम विनायां

(१)

श्रीयुत साधु मण्डली भूषण बाबा अमरराम नवीन वेदान्ती जी के चरणों में सविनयं निवेदनम्॥ बाबा जी महाराज श्रीमान् जगद्गुरु स्वामी जी महाराज ने अपने एक पत्र के साथ आपका चैत्र बदि १२ लिखित पत्र मेरे पास भेजकर आज्ञा लिखी कि यद्यपि तुम गुरुभाव भावित हो तथापि जब तुम को मेरा यथावत् इतिहास नहीं तो ऐसा इतिहास आगे कदापि मति लिखो क्योंकि थोड़ा भी असत्य सम्पूर्ण सत्य को बाधित करता है और लेख साधुजी का ठीक २ है इत्यादि - इसका उत्तर उनको तथास्तु के अतिरिक्त और कुछ देय वा दातव्य नहीं परन्तु आप से बहुत कुछ प्रार्थना करनी परमावश्य है - महाराजजी आप ने जो कुछ मेरी अशुद्धि दिग्विजयार्क द्वितीय खण्ड में देख लिख सूचित की इसका मैं जितना गुण मानूं वह थोड़ाही होगा। मैंने अपना ग्रन्थ उदयपुर के कितनेही सत्पुरुष और वहां के तथा नाथ द्वार के यंत्रालय और मसूदा नगर के मंत्री आदिके पास भेजकर प्रार्थना की थी कि जो कुछ मेरा दोष देखा जाय उससे अवश्य मुझे सूचित करें परन्तु किसी ने उपकृत न किया धन्य हैं आप सदृशों का जन्म जिससे हम लोग घर बैठे बिना

परिश्रम पवित्र होते हैं वास्तव्य में आप श्रीयुत ने बहुत ही कुछ मुझे उपकृत किया. दयालु ऐसों ही को कहना चाहिये। यदि आप एतद्विषयक लेख में हमारे श्रीमान् पर दोषारोपण न करके जो कुछ लिखना था वह केवल मुझ दोषी को ही लिख सन्तोष मानते तो निःसंशय विशेष धन्यवादार्ह होते- वैसा न करने का हेतु कदाचित् नवीनत्व ही हो क्योंकि प्राचीन अर्थात् शमादि सम्पत्ति संपन्नों से तो कभी अन्यथा व्यवहार हो ही नहीं सकता तथैव कभी कोई तादृग्बुद्धि पुरुष श्रीमान् सर्वज्ञ समदृक् जगद्गुरु के उपदेशों में भी द्विविधा नहीं कर सकता न उनके सिद्धान्तों को कोई विचार शील नवीन मत ठहरा सकता है कदाचित् इसके उत्तर में यह कहा जाय कि जो जैसा होता है उसको क्या वे अर्थात् स्वामी जी वैसे ही भासित न होना चाहिये अन्यथा" मज्ञाना मथानि नृणां नरवरो" इत्यादि बचन असंगत होजावेंगे। एव मेव जो सब आर्य्य समाजी झूठे. छली. लोभी और दांभिक न कहे जायं तो" विनष्ट दृष्टे र्भ्रमतीव दृश्यते" इत्यादि बचनों का चरितार्थ भी न करी सकोगे॥ तो इसके उत्तर में सत्यबचन महाराज ऐसा ही अवश्य हाथ जोड़कर हम लोगों कह देना पड़ेगा- इसी भांति जिन्हों ने कभी दर्शनों का दर्शन ही नहीं किया उन के स्थालीपुलाकन्याय की संभावना भी जहां वे कर बैठेंगे हमको माननीय होगी- और कदाचित् कोई दर्शनी भी ऐसा ही न्याय करेगा तो हम दर्वीरसन्याय से उसका भी आदर ही करेंगे। परन्तु नवीन वेदान्ती जी महाराज आर्य्यों का वास्तविक सिद्धान्त कुछ और ही होगा अर्थात् वे लोग

सत्य को सत्य. असत्य को ही असत्य. कहेंगे- उन से कदापि यह नहीं हो सकता कि सच्चे हजार रक्खे हुए रुपयों में किसी प्रकार से कोई खोटा रुपया पड़गया तो वे स्थाली पुलाकन्याय से उनसब रुपयों को खोटाही बतादें. और न यह हो सकता है कि खोटे को सच्चा ही कहें वा तुरन्त उसको निकाल फेंकने का यत्न न करें। अस्त्वत्र तु ष्यत्विति न्यायेनैव समाधानम् अर्थात् आप श्रीयुत चाहो जिस रीति संतुष्ट हों और भलेही श्री स्वामी जी महाराज का आत्मवत् नवीन वा पृथक् मत बतावें. आर्य्यों को भी भरपेट बुरा कहें. हम लोगों की कुछ तादृश हानि नहीं ॥ उपसंहार में मेरी प्रार्थना यही है कि क्षमा कीजिये और सदैव इसी प्रकार कृपा दृष्टि रख मेरे श्रुत विषयों को निर्दोष करने में प्रति समय सावधान रहें जिस से यह सत्य सेवक कृत कृत्य हो - सत्य जानिये मुझे किंचिन्मात्र मिथ्या का पक्ष नहीं और न ऐसे आग्रही को कभी अच्छा समझता हूं. आपने जिन पंक्तियों पर आक्षेप किया निःसंदेह वे क्षेपक ही हैं छपने के प्राक् उस तमाम प्रमाण को निकाल देने का यत्न था परन्तु शोक कि उद्रक नहीं समझा. अतएव. आप देखिये कि प्रमाणाष्टक में ८ की जगह ९ प्रमाण होगये हैं. अब यहां यह शंका हो सकती है कि न जाने उस समय ग्रंथकार आपने किस प्रमाण को निकाल देना चाहता था. इसका समाधान प्रत्येक प्रमाण पर थोड़ी २ दृष्टि करने से यथावत् हो सकता है अर्थात् अच्छे प्रकार निश्चय हो सकता है कि सिवाय सातवें प्रमाण के और कोई ऐसा लचर और पोच अन्य प्रमाण नहीं जिस पर किसी एक भी वृद्ध पुरुष की साक्षी न हो. अतः जिसको

कहता हूं वही एक लेख सेवक अर्थात् सुना हुआ वृत्तान्त तो है परन्तु नृगराज कथवत् गढ़ा हुआ नहीं—सो यह दोष अब तो तभी दूर होगा जब ग्रन्थ फिर कर मुद्रित होगा और वह भी समय सत्वर ही ईश्वर ने चाहा तो आवेगा. तावत् जो आप मेरे दोनों खण्डों को पुनर्बार अपनी निर्मल दृष्टि से अवलोकन कर प्राप्त दोषों से मुझको अपना जान अवश्य सूचित करेंगे तो बड़ मानी हूंगा—इस व्यतिरिक्त और भी जब जो सेवा म दुचित जान पड़े उसकी भी आज्ञा सदैव होती रहै॥ विज्ञेषु किं बहु नेति—आप का कृपा कांक्षी गोपालराव हरि॥ २७:४:८६॥

प्रथम विनयोत्तर

॥श्रीरामजी॥१॥ श्रीयुत गोपालराव हरि मंत्री आर्य समाज फर्रुखाबाद समीपेषु

महाशय नमस्ते—श्रीयुत का २७।४।८४ ईसवी का मुद्रित पत्र १८—६—८३ ईसवी को बहुत दिन बाद मेरे पास पहुंचा समाचार विदित हुवा श्रीयुत ने यथार्थ पक्ष के स्वीकार पूर्वक कटाक्ष सहित लेख लिखा तिस कटाक्ष २ दो का संक्षिप्त प्रत्युत्तर॥ उदयपुर के तथा नाथ द्वारा के वा मसूदा के सत्पुरुष आप को घर बैठे बिना परिश्रम पवित्र नहीं कर सके तब हम सारिखे असत्पुरुष बिना परिश्रम कैसे पवित्र करेंगे—समादि सम्पत्ति संपन्न और विचार शील श्रीमत्स्वामी जी महाराज स्थापित मतानुयायी ही हैं। या कोई और मतानुयायी है—जो जैसा होता है उसको वा अस्मदादिक वैसे ही भासित न होम

चाहिये- वास्तव्य में नवीनत्व विशेषण भी हम को स्वामी जी महाराज का ही दिया हुआ है ॥ अतएव " मल्लानामशनिर्नृणां नरवरो स्त्रीणां स्मरो मूर्त्तिमान् ॥ यह वाक्य तो ठीक चरितार्थ हो सक्ता है ॥ तात्पर्य प्रथम श्रीयुत में नवीनत्व प्राप्त है ततः पश्चात् श्रीयुत नें अस्मदादि कों कूं दिया है- दिग्विजयार्क की कः २ बक्त यथारणादि जब सत्य होवे- तोभी तिसका लेखदंभादि दोष कारक है तबमिथ्या का लेख दोषित क्यों न होय अब आप चाहे क्षेपक कहो या कुछ और कहो ॥ परंतु झूंठ दंभादिक दोष प्रथमही श्रीयुतमें प्राप्त थे तब हमने आप को दोषित लिखा था अतः "बिनष्ट द्रष्टे भ्रमती व दृश्यते॥ यह वाक्य हमारे उपर चरितार्थ नहीं हो सक्ता किंतु अद्य पर्यन्त आप के उपर ही चरितार्थ है। स्थाली पुलाकन्याय की संभावनामें स्वामी जी महाराज नें मेरे नाम पहिलें प्रत्युत्तर लिखा था तिसमें ऐसी ऐसी भूलें दिग्विजयार्क में और भी बहुत हैं सो भूलें तुम उनों ही की समझो हमारी नहीं ॥ इत्यादि और आप के प्रति स्वामी जी का प्रत्युत्तर में भी येही लिखा है कि थोड़ा भी असत्य सम्पूर्ण सत्य को बाधित करता हैं दर्शनी भी क्या श्रीमन्नृप्यर्पित मतानुयायी ही है या कोई और मतानुयायी भी हैं और लेख आप का अति शुद्ध है। आर्य को हम बुरा नहीं कह सके हैं क्योंकि हमभी तो आर्य ही हैं। जो कटाक्ष युक्त लेख नहीं लिखते तो निस्संशय धन्यवादार्ह होते। चापल्य लेख में अलेख होवे तो क्षमा कीजियेगा॥ और सदैव इसी प्रकार कृपालपत्र प्रेषण करेगा इति पत्र व्यवहार इस पत्ते से करेगा देश मेवाड़

उदयपुर देलवाड़ा की हवेली साधु अमृतराम के पास पहुंचे
आपका हितान्वेषी साधु अमृतराम नवीन वेदांती
२५।६।८३ ईसवी का

द्वितीय विनयांक ॥

(२)

श्रीयुत साधु मंडली विभूषण बाबा अमृतराम नवीन वेदान्ती जी महाराज के चरणों में सविनयं निवेदनम् ॥ महाशय आप स्थान्तर में होने के कारण मेरा प्रार्थना पत्र श्रीयुत के निकट विलंब से पहुंचा होगा उसका उत्तर जो आपने कृपा करके भेजा उसको देख पढ़ बहुत प्रमुदित व उपकृत हुआ। वस्तुतः वह मेरे पत्र का तथ्योत्तर तो नहीं किन्तु हूबहू उसकी छाया उतार कर मुझे भेज दी है अतः पुनर्वार उस पर कुछ लिखने को उत्साह नहीं होता था परन्तु प्रति दशा में आप बड़ों का मान करना परमावश्यक है ॥

विदित हो कि आप वेदान्ताश्रितों को "क्रोधं कोपेन पूरयेत्" इस कहावत को काम में लाना सुशोभित नहीं करता क्योंकि आप सामान्य और सत्यभाव भावित लेख को देख शान्त हो जाना चाहिये थे सो न होकर शोक कि उसके उत्तर में अपने तईं आप असत् पुरुष बताते और मेरे लेख को कटाक्ष युक्त भी समझते हैं—सत्य पूछिये तो मैंने आप को उत्तम पुरुष ही समझकर स्वहित की प्रार्थना की थी और अपने लेख में कोई आप पर कटाक्ष भी नहीं किया हां कटाक्षों का उत्तर अवश्य मेव लिखा है और स्पष्ट यह भी विनय कर दिया गया था कि मेरे दोषों से श्रीमान् जगद्गुरु स्वामी जी महाराज को दोषित करना आप को उचित न था क्योंकि वे सर्वज्ञ सम दृग हैं

अर्थात् उनको हम और आप एकही से हैं परन्तु असमर्थ वशात मेरी कोई भी प्रार्थना आप के ध्यान में नहीं आई और अबतक आप, प्रशंसित श्रीमान् और हम लोगों का मत पृथक् और नवीन ही समझे जाते हैं ॥

उसी पत्र में आपने कतिपय प्राम चमत्कृत प्रश्न भी किये फिर अपने तईं आर्य भी बनाते और यह भी लिखते हैं कि हम आर्यों की बुराई नहीं करते, हालांकि प्रथम स्पष्ट भर पेट बुराई कर चुके बल्कि अब भी आप श्रीयुत उसी स्थानाधिरूढ़ देखे जाते हैं तो कहिये ऐसी दशा में क्या ठीक समझा जावे जब कि प्रत्येक लेख आप का परस्पर विरुद्ध है ॥

बावाजी महाराज कोई भी क्यों न हो जबतक वह श्रीमान् स्वामीजी महाराज के समस्त वास्तविक सिद्धान्तों से जानकारी प्राप्त नहीं करता कभी आर्य नहीं होसक्ता और जो ठीक आर्य है वह कभी जगद्विख्यात श्रीमान् के निर्द्धारित मत को पृथक् वा नवीन नहीं बता सक्ता न ऐसे प्रश्न कर सक्ता है

"कि शमादिसंपन्न विचारशील और दर्शनी लोग, श्रीमान् स्वामीजी महाराज स्थापित मतानुयायी ही हैं वा कोई अन्य भी क्योंकि वह खूब जानता है कि आर्य जाति और आर्य देश जब कि एकही एक हैं तो उनका मत भी कोई एक ही होगा न अनेक, उसी मत को वैदिक कहते हैं उसी का उपदेश श्रीजी महाराज सब को करते और स्वयं भी उसी पर चलते हैं तो फिर कहिये उनका मत जुदा वा नया कैसे कहा जा सक्ता है ॥ जो लोग ऐसा न समझकर "मुख मस्तीति वक्तव्यं दश हस्ता हरीतकी" के समान धांधली करे जाते हैं वे अवश्य

भ्रांत-विनष्ट दृष्टि और अनार्य वा इन सब के मुकुट मणि सि-
द्ध होते हैं इस हेतु अच्छा हो जो आप अपना न्याय अपने ही
हस्तगत रक्खें और समझें कि मैं क्या कहता हूं-सत्य तो यह
है कि जब तक आप अपनी निर्मल दृष्टि से मेरे पूर्वापर लेखों को
न देखेंगे. न सोचेंगे। न विचारेंगे. तब तक कभी शान्ति न होगी
वितंडा और पिष्ट पेषण में जी लगाना अपने और पराये अमोल्य
समय को वृथा खोना है एवमेव मूल को छोड़ शाखाओं पर जा
चिपटना कर्म भी परम गर्हित है॥

देखिये मुख्य आप का पक्ष वा कटाक्ष (श्रुति) सहित हम पर यह
था कि तुम औरों को मिथ्या का दोष लगाते परन्तु स्वयं उस दोष से
मुक्त नहीं होते- सो वह आप का भ्रम भली भांति दूर किया गया
कदाचित् अब भी आप को मेरे और श्रीमान् स्वामी जी महाराज
के दिए हुए उत्तरों में कहीं कुछ मिथ्या का पक्षपात प्रतीत होता
हो तो आगे चलिये नहीं तो तूष्णीभूत होना ही उत्तम है क्यों कि
हम लोगों का उद्देश्य सिवाय सत्य ग्रहण के इतर कुछ नहीं
है यदि किसी प्रकार असत्य छू भी जावेगा तो कह देवेंगे कि हां
ठीक है आप का कहना - इस का अनुभव भी लोगों को है इतने
पर भी जो कोई अंधकार में ही पड़ना चाहे तो भले ही पड़ा और
यावदाहूत संप्लव पड़ा रहो - हम लोग सर्वथा निरुपाय और
निर्दोष हैं॥

नवीन वेदान्ती जी महाराज यथार्थ स्वीकार पर भी वारंवार
किसी पर दोषारोपण किये जाना अथवा किसी के यथार्थ तथा
भ्रांत बताने पर स्वयं लज्जित न होना वरंच अनर्थ तथा [illegible]

उसको आप वैसाही प्रतिध्वनि सुनाना वा लिखना केवल वालिशत्व कहाता है अतः सभा के साथ उचितावलम्बी हो कर सदैव सदुचित सेवा मुझको अपना जान समर्पित करते रहें॥ विज्ञेषु किं बहुनेतिशम्॥ आपकाकृपापेक्षक गोपाल राव हरिः

८।७।८३

(द्वितीय विनयोत्तर)

ॐ नमो ब्रह्म – श्रीयुत गोपालराव हरि मंत्री आर्यसमाज फर्रुखाबाद समीपेषु मान्यवर आप श्रीयुत ने मुझपर अनुग्रह करि पुनर्वार कृपा पत्र भेजा उसको पढ़कर बहुत आल्हादि हुवा सत्य है कि आप के पत्र का वह तथ्योत्तर तो नहीं था जरूर उस पत्र की छायाही थी॥ परंतु आप श्रीयुत से मैंने उस पत्र में जो कछु परम चमत्कृत प्रश्न किये थे अर्थात् "शमादि संपत्ति संपन्न और विचार शील और दर्शनी क्या श्री मत् स्वामी जी महाराज स्थापित मतानुयायीं ही हैं वा आर्यावर्त भर में कोई और भी है" इनका ठीक २ उत्तर देना आपको आवश्यक था सो न देकर अत्युत अटसट लिखना श्रीयुत को योग्य नहीं था "आर्य देश और आर्यजाति जबकि एकहि एक हैं तो उनका कोई मत भी एकही होगा नकि अनेक। प्रश्न वह एक मत कोनसा हैं जिसमें सब आर्यों का सम्मति होवे। जो कहोगे सत्य भाषणादि एक मत तो यामें आर्यों काही क्या विशेष है या में तो यवन इसाई चीनि आदि सर्व की सम्मति है। अस्तु वेद पुराण गीता व्यास वशिष्ठादिक प्राचीन आचार्यन कर

निर्णीत वेदान्त सिद्धान्त के अनुगामि अस्मदादिक कोनवीन श्रीयुत स्वामीजी महाराज तथा आप कैसे कहते हैं,,कोईभी कोंन होय जबतक श्रीमान् स्वामीजी महाराज के समस्त वास्तविक सिद्धान्तों से जानकारी नहीं प्राप्त करता तब तक कभी आर्य नहीं हो सकता और जो ठीक आर्य है वह न कभी स्वामी महाराज के निरधारित मत कों नवीन या पृथक् बता सकता है। यह भी श्रीयुत् का लेख अयुक्त है क्योंकि जबअगले समय में स्वामीजी न थे तब महर्षि व राजे महाराजे आर्यत्व कों कैसे प्राप्त हुए होंगे॥

द्वितीय आर्यावृत के सर्व आर्य व आर्यवर सिरोमणि राजेमहाराजे स्वामीजी के मत कों पृथक और नवीन ही बतलाते हैं इस पत्र का यथार्थ उत्तर के आये पर श्रीयुत स्वामीजी महाराज के मत कों दिक्विजयार्क की अन्य पंक्तियों के साथ आक्षेप कर नवीन मत पना प्रकाशित करेंगे॥

उपसंहार में श्रीयुत आप शुद्ध भाव भावित ही हैं मैंने अपनी दोष द्रष्टि करि श्रीयुत के लेख कों कटाक्ष और विपरीत समझ करि अनुचित लिखा है सो क्षमा कीजिये और सदैव इसी प्रकार धैर्यन्वित होकर मुज बालिशत कों समझाना योग्य है॥

पत्र व्यवहार इस पत्ते सें। बुंदी शुक्लेश्वर महादेव। सेवकन आग्रह करि पुनरपि इहांही आना पड़ा और अब भाद्रपद शुक्ला १५ तक यहांही रहेंगे आप पत्र फोरन भेजसी। आपका कृपाभिलाषी साधु अम्रतराम॥ ता० २६-७-८२

तृतीय विनयांक

(३)

श्रीयुत साधुमंडली विभूषण बाबाअमृतरामवेदान्तीजी महाराजके चरणारविन्दोंमें सविनयं निवेदनम्

विदित होकि आप का तृतीय कृपापत्र २९ जोलाई सन् ८३ लिखित पाकर बड़ा अनुग्रहीत हुआ वास्तव्य में आप की इस सत्य सेवक पर बड़ीही दया है परन्तु परम विस्मय यह है कि आप श्रीमान् के इस प्रकार वारंवार परिश्रम उठाने पर भी लाभसा पदार्थ को सोंदूर होता जाता है देखिये चार पांच मास का अवधि होचुका अभीतक प्रथमही दिन है सोचिये इस में क्या निकासी है वा कभी होगी और व्यथा परिश्रम है वा नहीं सद्यः साधु समागमः दर्शना देव साधवः इन वाक्यों को सत्यकरदिख लाना मेरा काम नहीं था तोका आप का भी काम नहीं है॥

वाद प्रकरण में जिन दोषों को सभ्य गण अति बुरा कहते हैं उन से बचने और उचितावलंबी होनेकी प्रार्थना आपने पत्र द्वारा की गई थी उसके अभ्यंतर आप के प्रश्नों का उत्तरभी था उसको पूर्णतया ध्यान में लाने के लिये बल पूर्वक यहभी विनय किया गया था कि जब तक आप मेरे पूर्वापर लेखों को अच्छे प्रकार नविचारेंगे कभी शान्ति न होगी. अंत को वैसाही हुआ अर्थात् उसी शांति प्रद लेख से आप श्री मान् कई गुणित क्षुब्ध होगये यहां तक कि स्वस्वरूप कोभी भूलगये ऐसी दशा में मेरे दिये उत्तर को अनुत्तर वा अंड बंड अथवा अयुक्त बताना कोई आश्चर्य की बात भी नहीं है॥

महाराज जी गर्भित आशयों को समझना तो बहुत दूर जहां स्प
ष्ट ऐसा लिख दिया था कि आर्य्यावर्त्त भर का जो एक मत होना
चाहिये वह मत वैदिक है उसको भी श्रीमान् न समझे अतए
व व्यर्थ आप को यह प्रश्न करना पड़ा " कि वह एक मत कौन
सा है कदाचित् सत्य को कहोगे तो हो नहीं सकता " कहिये इस प्रश्न और
उत्प्रेक्षा की यहां क्या आवश्यकता थी हा हंत- हंत- हंत ॥
जाना जाता है कि यह सब खेल आप को महा वंचक लोभ खि
ला रहा है उसमें फंसे हुए की कभी कलई बिना खुले नहीं रहती
दूसरे बड़ी कसर शब्द शास्त्र न जानने की है उसकी पूर्त्ति कौन
कर सकता है इन्हीं कारणों से आप वादी को प्रतिवादी का ले
ख यथावत् भासित नहीं होता और यही कारण है कि मुझ प्र
तिवादी को भी जैसा कि चाहिये आल्हाद नहीं होता तिसपर
तुर्रा यह कि श्रीमान् स्वामी जी महाराज का नया मत सिद्ध करने
की आप इस प्रकार गाढ़ प्रतिज्ञा करते हैं जैसे कोई गगन को
कुसमाय मान और वन्ध्या पुत्र दिखाने की करे अस्तु आप बड़े
समर्थ हैं चाहे सो करें मैं लिख चुका हूं कि मुझ को प्रतिदशा
में आप ऐसे महा पुरुषों का सन्मान करना ही अभीष्ट है तद
नुसार आप के सब पूर्वा पर प्रश्नों का उत्तर सविस्तर नीचे लि-
खता हूं हो सके तो अब भी सुहृदता से देख सुन अपनी वांछा पूरी
कर स्वस्थ हूजिये और कुछ हानि न हो तो इस झगड़े को छोड़ कोई
सत्कार्य साधक वा ज्ञान वर्द्धक कर्म में रत हूजिये अन्यथा उत्तर आगमन हो
गा इतिदिक् विशेषक्या लिखूं आत्मीय जान यथापूर्व दयाभाव रखिये
इति भवदीयो गोपाल एवं हरि: ॥ ५-८-८३ ई० स्थान फ़र्रुखाबाद ॥

(बाबाजीकृत प्रश्न १)

आमादिसम्पत्तिसंपन्न-विचारशील-दर्शनी-श्रीयुतस्वामी महाराज स्थापित मतानुयायी ही हैं वा अन्य मतानुयायी भी हैं ॥ ॥

(उत्तर)

आपके द्वितीय पत्र में लिखित दो प्रश्नों का यह एक प्रश्न किया गया है - इनकी यथार्थता प्रकाशित करने में आप श्रीयुत का गौरव कम होता देख इतनाही सूचित कर दिया था (कि प्रश्न आप के परम चमत्कृत हैं कभी कोई आर्य ऐसा लेख नहीं कर सक्ता) बस उत्तर होगया था- इससे आप को और नहीं तो इतना जान लेना तोभी अवश्य था कि न जाने हमारा प्रतिवादी किस पकड़ से ऐसा गोल उत्तर दे आगे बढ़ गया- चलो आप भी चुप होजायं नहीं तो न जाने आगे क्या भेद खुले-परंतु बुद्धि के जहाज़ को तो उचित-अनुचित ही सूझ पड़ता है-कुसोचा न बिचारा- चट गुण में दोष रोपण कर बैठे- अस्तु अब सुनिये आप अपने प्रश्नों का उत्तर थोड़ाही देता हूं इतनेही पर संतोष मान बैठे हूजिये। अवगत होकि अयुक्त असंगत और अशुद्ध प्रश्नों का उत्तर कभी देने योग्य नहीं होता- आपके प्रश्नगत तीनों शब्द भाव वाचक हैं- इस कारण कभी ऐसे शब्दों को मत संबंध की अपेक्षा नहीं होती- जो लोग ऐसे शब्दों का मत संबंध में प्रश्न करते वे मूर्ख एद् कहाते हैं अतः यह भी सूचित किया गया था (कि मुखमस्तीति की कहावत न कीजिये और अपना न्याय अपनेही हाथ रखिये) परन्तु आप

ने कुछ भी विचार न किया यह बड़ा शोक है अस्तु यदि इससे कुछ अधिक जानने की इच्छा हो तो कुछ वर्ष व्याकरण में परिश्रम उठाइये और शेष की इच्छा होय तो तावत् कभी किसी विद्वान् से न उलझिये ॥

(प्रश्न २)

वह एक मत कौनसा है जिस में सर्व आर्यों का सम्मति होवे ॥ ५ ॥

(उत्तर)

वह वैदिक मत है जिसपर कि सब आर्यों की सदा से सम्मति चली आई और चली जाय गी हां पर वे ठीक आर्य । आप के पुराण प्रचारित सब मत अपना मूल वेदही को बताते हैं तथैव और भी सब आधुनिक यहां के आचार्य ऐसाही प्रतीत कराते हैं परन्तु वे सब के सब ना समझ और स्वार्थी होने के कारण वंचक है ॥

(प्रश्न ३)

श्रीयुत स्वामी जी महाराज तथा आप अस्मदादिकन को नवीन कैसे कहते हैं ।

स्वामी जी महाराज आप से नवीन कैसे कहते यह तो स्वामी जी महाराज और आप अच्छी तरह जानते होंगे - हम जो आपको नवीन कहते हैं इसका मूल कारण आप अपने हस्ताक्षरों को जानिये अन्यथा हम कभी नहीं लिख सक्ते थे - हम लोग तो आप में उस लंबे पुछल्ले को लगा देख परम विस्मित थे अस्तु ॥

(प्रश्न ४)

स्वामी जी न थे तब पूर्व कालिक लोग आर्यत्व को कैसे प्राप्त हुए होंगे

उत्तर१

पूर्वकाल में जब श्री स्वामी जी महाराज न थे तो क्या पुराणों के भांति वेद भी न थे जो आप पूंछते हैं कि उस समय के लोग आर्यत्व को कैसे प्राप्त हुए। जानना चाहिये कि वैदिक मत के स्वीकार से ही वे सब लोग आर्यत्व को प्राप्त हुए- और उसी रीति अर्थात् वैदिक मत के स्वीकार से ही वर्त्तमान और भविष्यत् काल के भी लोग आर्य- और आधुनिक पुराणादिक मतपर चलने वाले सब अनार्य-तथा नवीन तांत्रिक आदि कहे जावें गे- यही सिद्धान्त और निर्धार श्री मान् जगत्प्रकाशक स्वामीजी महाराज का सकल विश्व विदित है। अत एव प्रार्थना की जाती है कि जो ईश्वर ने बुद्धि दी है तो मेरे पूर्व लेखों को जिन्हें भ्रम से अयुक्त बता चुके हैं अत्यन्त युक्त जानिये और ऐसाही निश्चय अपने समस्त भक्तों को कराते रहिये जिससे नरजन्म सफल हो॥

(प्रश्न ५)

आर्यावर्त के आर्य व आर्य बर शिरोमणि आदि स्वामी जी के मत को पृथक और नवीनही बतलाते हैं।

उत्तर

कोई सत्यथानुवर्ती आर्य व आर्यबर शिरोमणि ऐसा नहीं बता सक्ता- हां हिन्दू और हिन्दुओं के अधिपति बताते हों तो खेद भी नहीं उन में बहुत से अनीश्वर वादी मद्यपी और वेश्या विलासी आदि अनेक दुराचारी भी तो देखे जाते हैं-

उनका दोष तो उन्हीं के माथे है जो उनके पुरोहित पाधा और गुरू घंटार आदि जन उनकी आंखों में धूल झोंक अपनी तोंद बढ़ा रहे हैं धिक् ॥ विशेषस्तु मंगलम् ॥ अम्यताम् ॥ क्षमा साराहि साधव: ॥

(आपका कृपाकांक्षी गोपालराव हरि:)

समाप्तोय मपि विवाद:

॥ महाग्रायो ॥

इस प्रकार पूर्वसिद्ध ग्रंथार्क महाग्रही ग्रहणों से मुक्त होकर सर्वत्र अधिक चमक दमक के साथ प्रकाशित हो रहा है और उसके संयोग से अब तक बहुत लाभ हुआ, होता है और होगा ऐसी भगवत् कृपा से पूर्ण आशा है और अत एव श्री मती परमोप कारिणी सभा के सर्व श्रेष्ठ सभासद पूना निवासी श्री युत परम विज्ञ रा० ए० राव बहादुर गोपालराव हरि जी देश मुख तथा परम विचक्षण मान्यवर महादेव गोविन्द जी रानडे और बहु विद्या विशारद राजमान्य श्याम जी कृष्ण वर्मा की मुझपर बड़ी ताकीद इस ग्रंथ के सत्वर परिसमाप्ति के अर्थ हुई थी तथैव मेरी भी प्रवृत्ति रही परंतु शुभ कार्य में विघ्न भी बहुत उपस्थित होजाते हैं अत: स्वेच्छानुसार त्वरा के साथ यह काम न हो सका तथापि परमात्मा का पूर्ण अनुग्रह रहा समझता हूं क्योंकि गत दो वर्ष में बहुत रोग ग्रस्त रहा था उससे उसने मुक्त किया द्वितीय महान् रोग राज सेवा सक्ती थी उस दुराशा से भी उस सर्व शक्तिमान् ने परमानंद पूर्व

क जन्म भर को निश्चिंत कर दिया इस व्यतिरिक्त अन्य दो चार देशोपकारी काम भी उस सर्वशक्तिमान् ने इस अल्पज्ञ के हाथ बनवा लिये अतः सर्व काल उसकी सेवा में धन्यवाद करता हूं ॥ हे सर्वात्मन् जिस प्रकार हमारे सद्गुरु महाराज को सर्वात्मना सत्य-प्रिय था उसी प्रकार उन का यशोवर्द्धक यह ग्रंथ परम पवित्र सत्याद्भुत सिद्ध होने में आप मेरी पूर्ण सहायता करें जिससे किसी प्रकार इसको असत्य-स्पर्श न कर जाय अन्यथा मुझको महान् दोष होगा उससे बचाने को अब आप ही समर्थ हैं यद्यपि मेरा यह परम आरम्भ से ही है परंतु अभी तक मुझे बड़ा आश्रय गुरु चरणों का था उससे अब रहित होगया हूं इसलिये अधिक तर आप के चरणों की शरण लेता हूं इति ओ३म् शांतिः शांतिः शांतिः ॥

इति श्रीमत् परमहंस परिव्राजकाचार्य वर्य्य श्री स्वामी दयानंद सरस्वती दिग्विजयार्कीय तृतीयां केसमालोच्य कोप शमनं नाम प्रथमो मयूखः ॥ १ ॥

॥ अद्वितीयो मयूखः ॥

मूकं करोति वाचालं पंगुं लंघयते गिरिम्
यत्कृपा तमहं वन्दे परमानन्दविग्रहम् १

सुहृद्गण

श्रीमद्दिग्विजयार्कीय द्वितीय खण्डान्त में प्रसंग हो आया है कि जगद्गुरु श्रीमान् स्वामी जी महाराज स्थान चीतौड़ राज मेवाड़ में विराजमान हैं उन दिनों संवत् ३८ वि० का मार्गशीर्ष मास था - तत्पश्चात् वहां से श्रीमान् कहां२ गए और क्या२ उन्हों ने प्रसिद्ध कार्य किये यह यहां सब सूक्ष्म रीति से लिख प्रकाशित करता हूं प्रथम श्रीमान् चीतौड़ से प्रस्थान कर के इन्दौर खंडुवा होते हुए (४) प्रसिद्ध स्थान मुंबई मुल्क गुजरात में पधारे जहां प्रथम से ही उनके पधारने की तिथि और समय के निश्चय का पत्र पहुंच चुका था तदनुसार रेलवे स्टेशन पर श्रीमान् की अगवानी के लिये थ्योसोफिस्टों के

(४ नोट) जिस समय श्री जी महाराज राजधानी इन्दौर में पहुंचे उस समय वहां श्रीमान् महाराजा तुकोजीराव हुल्कर नहीं थे इसी लिये श्रीजी महाराज वहां से शीघ्र ही चले गए यह बात राजधनी में आकर जब हुल्कर सर्कार ने सुनी तो बहुत पछताये और तुरंत उन्होंने मुंबई को यह तार दिया कि महाराजजी मैं आगया हूं अब कृपा करके जल्द दर्शन दीजिये श्रीजी महाराजने उत्तर दिया कि अब तो हमारा आना यहां से लौटती समय होगा परंतु संयोग की बात है कि श्रीजी महाराज सात मास पश्चात् बंबई से लौटे तो उस समय भी महाराज साहब राजधानी में न थे - यह खबर सुन श्रीजी महाराज फिर राजधानी की ओर नहीं बढ़े कुछ काल खंडुवा ठहर कर उदयपुर की ओर बढ़ गये।

आचार्य कर्नेल ओलकाट सा० और आर्य समा ....
समस्त प्रधान गणादि जन सवारी लेकर उपस्थित थे इतने में नियत
समय पर रेलगाड़ी भी पहुंची उसे देखते ही सब लोग दौड़े और
बड़ेही उत्साह आनन्द और प्रेम के साथ सद्गुरु महाराज के
चरणारविन्दों में झुक नमस्ते कर मिले और अहो भाग्य महाभाग्य
कहते हुए वहां से उनको तुरंत घोड़ा गाड़ी पर सवार कराकर परम
दिव्य स्थान (बालकेश्वर गोशाला) पर ला उतारा - वहां सब लो-
गों ने पुन: नमस्ते पूर्वक उनसे कुशल प्रश्न किया तथैव परमा
नन्द और त्वरा के साथ उनका आतिथ्य सत्कार करने लगगये उ-
धर नगर में इस शुभागमन की खबर जिसको लगती थी वही
दर्श[illegible] आतुर हो दौड़ा आता था उन सब से श्रीमान् अपनी
पूर्ण कृपा दर्शाते हुए कुशलामय प्रश्न करते और उनको अपने
समीप बैठने की आज्ञा देते थे सारांश उस समय मुंबई वालों
के उस अपूर्व आनन्द की सीमा नहीं थी जिन्हों ने वैसा कोई
प्रसंग देखा है वही उसका अच्छे प्रकार अनुभव कर सकते हैं
धन्य महाराज धन्य ॥

आर्यगण - उस समय उन सब को यही जान पड़ता था
कि आज हमको कोई बड़ाही अपूर्व लाभ हुआ है बहुतेक
कहते थे कि आज हम सनाथ हुए कितनोंही का कथन यह
था कि भाई जगत में सर्वोपरि आनन्द ब्रह्मानन्द है वही
मानों आज हमको संप्राप्त हुआ है क्योंन हो बेचारे बहुदीर्घ
काल से चातकवत् सतृष्णाभी थे क्योंकि संवत् ३२ वि०
के पश्चात् अर्थात् ७ वर्ष पीछे तत्रस्थों को यह लाभ हुआ है

इस अन्तर में वे लोग अनेक प्रार्थना पत्र श्रीमान् के आह्वा नार्थ भेजते रहे ज्यों त्यों इस संवत् ३८ के पौषमास में उन का वह अभीष्ट सिद्ध हुआ इसलिये बाबत इसके जो धन्यवाद उन्हों ने किया सो सब ठीकही ठीक है॥

सत्य तो यह है कि पूर्व समागम में थोड़ेही लोग श्रीमान् के गुण ग्रामों से जानकार हो पाये थे. संप्रति जैसा २ समय अधिक व्यतीत हुआ वैसीही वैसी श्रीमान् की सत्कीर्ति भी उत्तरोत्तर अधिक फैलती गयी अर्थात् उनके अनेक सद्ग्रन्थ और ठौर २ के मासिक आदि पत्र तथैव जहां तहां के व्याख्या नों की चर्चा जैसी २ लोगों के समीप पहुंची वैसीही वैसी दिनों दिन मानों परमात्मा की लोगों ने अनुकूलता पाई और गुण लुब्धों का सद्भाव श्रीमान् के चरणों में अधिकता के साथ सुदृढ़ होता गया- इन्हीं परम कारणों से उन सब को उस समय बड़ी लालसा श्रीमान् के चरण दर्शनार्थ हो रही थी. मानों आज उनका वह साक्षात् मनोरथ सिद्ध हु आ इसलिये कहा जा सकता है कि वास्तव्य में परम धन्य वह दिवस था॥

सात मास तक श्रीमान् वहां सुशोभित रहे उतना काल वहां वालों का बड़ेही आनन्द के साथ व्यतीत हुआ तथैव श्रीमान् भी उस स्थल पर उन समस्त सुयोग्य पुरुषों के संयो ग से अति प्रमुदित रहे॥

इस अवसर में उन्हों ने अपना समस्त उपकारक कार्य बराबर यथा नियम और यथा काल विभाग किया - आर्य

गये लोगों से मिलना - सब का समाधान करना - वेदभाष्य बनाना चहुँओर से प्रत्यह आये हुए तार और पत्रादि कों का उत्तर तुरंत देना इत्यादि बहुत सा काम उनके नित्य कृत्य में था उसको ये बड़ी सावधानी और निरालस्य रह करते थे इस व्यातिरिक्त और बहुत से नैमित्तिक कार्य भी उपस्थित हो जाते थे उनको भी वे अच्छे प्रकार निबाहाया करते थे - इस प्रकार के कामों से तीन काम इस स्थान पर संग्रह करने योग्य समझे गये हैं ॥ जैसे - (१) - प्रथम गोरक्षादि बिचार - (२) - द्वितीय थ्योसोफिस्टों के परम गुरु कर्नैल ओलकाट साहब के चाल चलन का स्पष्टी करण - (३) - तृतीय मुन्शी इन्द्रमणि जी के संकष्ट मोचनार्थ कराये हुए चन्दे में कृतघ्नता से उत्पन्न हुए अपवाद का सम्मार्जन ॥

(१)

अथ गोरक्षा प्रकरणम्

यह तो सभी को अच्छे प्रकार विदित है कि हमारे प्रशंसित श्रीमान् आरंभ से ही और सब विषयों के साथ गौओं की भी रक्षा के सहस्रों लाभ और उनके उपाय सदैव सब को सुनाते व समझाते चले आये हैं परन्तु जब देखा कि बहुधा चढ़ाया हुआ रंग चार ही दिन बाद लोगों के चित्तों से उतर जाता है और समझाई हुई कर्त्तव्यता भी ठीक २ उनको याद नहीं रहती - द्वितीय यह कि सामयिक राजा और राज पुरुषों की सहायता बिना यह कार्य जैसा कि होना चाहिये हो नहीं सकता - तब परम कारुणिक महानुभाव ने गो करुणानिधि नाम की एक

पुस्तक अपने यंत्रालय में झटपट छपवाकर सर्वत्र भेज दी-यद्यपि वह अति लघु है तोभी कोई कर्त्तव्यता रह नहीं गयी यह सब आगे लिखे उसके उतारे से स्पष्ट विदित होगा-इसी प्रकार द्वितीय उपाय राज्य की ओर से प्रबंध कराने के अर्थ भारतीय प्रजा गण की ओर से विनय पत्रों पर लक्षावधि हस्ताक्षर हो जाने के विचार से उस प्रकार के बहुत पत्र अपने वैदिक यंत्रालय में बड़ी त्वरा से छपवाकर सम्पूर्ण आर्यावर्त्त में भेजने भिजवाने का आरंभ कर दिया और इसका सर्व व्यय अपने ऊपर लिया- इतनाही नहीं किन्तु अपने सब राजा महाराजाओं का ध्यान इस ओर झुकाने में भी पूर्ण यत्न वान् हुए इत्यादि समस्त वृत्तान्त इस समय सर्वत्र सब को अच्छे प्रकार विदित है वह इसी भांति भविष्यत्काल में भी निरंतर प्रकाशित रहे इस अर्थ उन पत्रों की नकल आगे लिख दी है.

चहुं ओर से उन मुद्रित आयी पत्रों पर लाखों मनुष्यों के हस्ताक्षर हो २ कर आचुके थे और आते जाते थे तथैव बराबर प्रेरणा पर प्रेरणा और यत्नों पर यत्न भी बड़ी धूमधाम के साथ कर रहे थे परन्तु इस अभागे भारत का ऐसा भाग्य कहां जो वह श्रीमान् के विचारे हुए समस्त सुखों को लहे सब होताही रहा. इतने में "समूलंच विनश्यति" की कथा होगई. हा शोक हा शोक हा शोक ॥

गोकरुणानिधिः

ओ३म्

नमो नमः सर्वशक्तिमते जगदीश्वराय

गोकरुणानिधि

इन्द्रो विश्वस्य राजति । शन्नो अस्तु द्विपदे शंचतुष्पदे ॥ य० अ० ३६ मं० ८

तनोतु सर्वेश्वर उत्तमम्बलं गवादिरक्षां विविधं दयेरितः
अशेषविघ्नानि निहत्य नः प्रभुः सहायकारी विदधातु गोहितम् १
ये गोमुखं सम्यगुशन्ति धीरास्ते धर्मजं सौख्यमथाददन्ते
क्रूरा नराः पापरता न यंति प्रज्ञाविहीनाः पशुहिंसकास्तत् २

भूमिका

वे धर्मात्मा विद्वान् लोग धन्य हैं जो ईश्वर के गुण कर्म स्वभाव अभिप्राय सृष्टिक्रम प्रत्यक्षादि प्रमाण और आप्तों के आचार से अविरुद्ध चल के सब संसार को सुख पहुंचाते हैं और शोक है उन पर जो कि इन से विरुद्ध स्वार्थी दयाहीन होकर जगत में हानि करने के लिये वर्तमान हैं । पूजनीय जन वे हैं कि जो अपनी हानि होती हो तो भी सब के हित के करने में अपना तन मन धन लगाते हैं । और तिरस्करणीय वे हैं जो अपने ही लाभ में संतुष्ट रहकर सब के सुखों का नाश करते हैं ऐसा सृष्टि में कौन मनुष्य होगा जो सुख और दुःख को स्वयं

न मानता हो क्या ऐसा भी कोई मनुष्य है कि जिसके गले को काटे वा रक्षा करे वह दुःख और सुख का अनुभव न करे जब सब को लाभ और सुख ही में प्रसन्नता है तो बिना अपराध किसी प्राणी का प्राण वियोग करके अपना पोषण करना यह सत्पुरुषों के सामने निन्दित कर्म क्यों न होवे सर्व शक्तिमान जगदीश्वर इस सृष्टि में मनुष्यों के आत्माओं में अपनी दया और न्याय को प्रकाशित करे कि जिससे ये सब दया और न्याय युक्त होकर सर्वदा सर्वोपकारक काम करें. और स्वार्थ पन से पक्षपात युक्त होकर कृपा पात्र गाय आदि पशुओं का विनाश न करें कि जिससे दुग्ध आदि पदार्थों और खेती आदि क्रियाओं की सिद्धि से युक्त होकर सब मनुष्य आनन्द में रहें इस ग्रंथ में जो कुछ अधिक न्यून वा अयुक्त लेख हुआ हो उसको बुद्धिमान लोग इस ग्रन्थ के तात्पर्य्य के अनुकूल कर लेवें. धार्म्मिक विद्वानों की यही योग्यता है कि वक्ता के वचन और ग्रन्थकर्त्ता के अभिप्राय के अनुसार ही समझ लेते हैं. यह ग्रंथ इसी अभिप्राय से रचा गया है कि जिस से गो आदि पशु जहां तक सामर्थ्य हो बचाये जावें. और उनके बचाने से दूध घी और खेती के बढ़ने से सब को सुख बढ़ता रहे ।। परमात्मा कृपा करे कि यह अभिष्ट शीघ्र सिद्ध हो। इस ग्रंथ में तीन प्रकरण हैं एक समीक्षा. दूसरा नियम तीसरा उपनियम इन को ध्यान दे पक्षपात छोड़ विचार के राजा तथा प्रजा यथावत उपयोग में लावें कि जिससे दोनों के लिये सुख बढ़ता ही रहे ॥

अथ समीक्षा

गोकृष्यादि रक्षणीसभा

इस सभा का नाम गो कृष्यादि रक्षणी इसलिये रक्खा है जिस से गो आदि पशु और कृषि आदि कर्म्मों की रक्षा और वृद्धि होकर सब प्रकार के उत्तम सुख मनुष्यादि प्राणियों को प्राप्त होते हैं और इसके विना निम्न लिखित सुख कभी नहीं प्राप्त हो सकते सर्व शक्तिमान् जगदीश्वर ने इस सृष्टि में जो २ पदार्थ बनाये हैं वे निष्प्रयोजन नहीं किंतु एक २ वस्तु अनेक २ प्रयोजन के लिये रचा है- इसलिये उनसे वेही प्रयोजन लेना न्याय अन्य था अन्याय है. देखिये जिसलिये यह नेत्र बनाया है इससे वही कार्य्य लेना सब को उचित होता है न कि उससे पूर्ण प्रयोजन न लेकर बीचही में वह नष्ट कर दिया जावे क्या जिन २ प्रयोजनों के लिये परमात्मा ने जो २ पदार्थ बनाये हैं उन उन से वे २ प्रयोजन न लेकर उन को प्रथमही विनष्ट कर देना सत्पुरुषों के विचार में बुरा कर्म्म नहीं है पक्षपात छोड़कर देखिये गाय आदि पशु और कृषि आदि कर्म्मों से सब संसार को असंख्य सुख होते हैं वा नहीं जैसे दो और दो चार वैसेही सत्य विद्या से जो २ विषय जाने जाते हैं वे अन्यथा कभी नहीं हो सकते ॥

जो गाय न्यून से दो सेर दूध देती हो और दूसरी बीस सेर तो प्र त्येक गाय के ग्यारह सेर दूध होने में कु[छ] भी शंका नहीं इस

हिसाब से एक मास में ८।) सवा आठ मन दूध होता है॥ एक गाय कम से कम ६ महीने और दूसरी अधिक से अधिक १८ महीने तक दूध देती है तो दोनों का मध्य भाग प्रत्येक गाय के दूध देने में बारह महीने होते हैं इस हिसाब से बारहों महीनों का दूध ९९ निन्नाणवे मन होता है। इतने दूध को औटाकर प्रति सेर में एक छटांक चांवल और डेढ़ छटांक चीनी डालकर खीर बना खावें तो प्रत्येक पुरुष के लिये दो सेर दूध की खीर पुष्कल होती है क्योंकि यह भी एक मध्य भाग की गिनती है अर्थात् कोई दो सेर दूध की खीर से अधिक खायगा और कोई न्यून। इस हिसाब से एक प्रसूता गाय के दूध से १९८० एक हज़ार नव सौ अस्सी मनुष्य एक वार तृप्त होते हैं. गाय न्यून से न्यून ८ और अधिक से अधिक १८ वार ब्याती है इस का मध्य भाग तेरह वार आया तो। २५७४० पच्चीस हज़ार सात सौ चालीस मनुष्य एक गाय के जन्म भर के दूध मात्र से एक वार तृप्त हो सकते हैं इस गाय की एक पीढ़ी में छः बछियां और सात बछड़े हुए इन में से एक का मृत्यु रोगादि से होना सम्भव है तो भी बारह रहे अब रहे छः बैल उन में एक जोड़ी से दोनों साखों में २००) दो सौ मन अन्न उत्पन्न हो सकता है इस प्रकार तीन जोड़ी ६००) छः सौ मन अन्न उत्पन्न कर सकती हैं और उनके कार्य्य का मध्य भाग आठ वर्ष है इस हिसाब से ४८००) चार हज़ार आठ सौ मन अन्न उत्पन्न करने की शक्ति एक जन्म में तीनों जोड़ी की है ४८०० इतने अन्न से प्रत्येक मनुष्य का तीन पाव अन्न भोजन मे

गिनें तो २०८००० दो लाख आठ हज़ार मनुष्यों का एक वार भोजन होता है। दूध और अन्न को मिलाकर देखने से निश्चय है कि ३५१६४० तीन लाख इक्कावन हज़ार छः सौ चालीस मनुष्यों का पालन एक वार के भोजन से होता है अब छः गाय की पीढ़ी पर पीढ़ियों का हिसाब लगाकर देखा जावे तो असंख्य मनुष्यों का पालन हो सकता है। और इसके मांस से अनुमान है कि केवल अस्सी मांसाहारी मनुष्य एक वार तृप्त हो सकते हैं देखो तुच्छ लाभ के लिये लाखों प्राणियों को मार असंख्य मनुष्यों की हानि करना महा पाप क्यों नहीं?

इसी प्रकार भैंस भेड़ बकरी उंटनी और उनके नरों से लाभ समझ लो और जिस प्रकार ऊपर मध्य भाग (औसत) से गाय का लाभ लिख जताया उसी प्रकार भैंस आदि का लगा कर जान लो— सब कोई जान सकता है कि लाभ दायक जीवों की वृद्धि से जब मनुष्यों का पूरा लाभ है तो उनकी हिंसा से हानि भी भारी होगी— परमात्मा ने हाथी आदि जितने पशु और मोर मुर्ग आदि पक्षी बनाये हैं वे सब के सब बड़े उपकारक हैं युक्ति से काम लिया जाय तो सिंह और हिरन आदि से भी लाभ हो सकता है परन्तु उनका पालन उत्तरोत्तर समयानुकूल होगा— वर्तमान में गाय बैल की रक्षा में मुख्य तात्पर्य है क्योंकि जितने आरोग्य कारक और बुद्धि वर्द्धक गुण गाय के दूध और बैल में होते हैं उतने अन्य किसी के में नहीं हो सकते इसलिये आर्यों ने गाय सर्वोत्तम मानी है॥

दोही प्रकार से मनुष्य आदि की प्राणरक्षा. जीवन्. सुख. विद्या. बल और पुरुषार्थ आदि की वृद्धि होती है एक अन्न पान दूसरा आच्छादन इन में से प्रथम के बिना मनुष्यादि का सर्वथा प्रलय और दूसरे के बिना अनेक प्रकार की पीड़ा होती है देखिये जो पशु निःसार घास तृण पत्ते फल फूल आदि खावें और दूध आदि अमृतरूपी रत्न देवें हल गाड़ी आदि में चल के अनेक विध अन्न आदि उत्पन्न कर सब बुद्धि बल पराक्रम को बढ़ा के नीरोगता करें पुत्र पुत्री और मित्र आदि के समान पुरुषों के साथ विश्वास और प्रेम करें जहां बांधे वहां बंधे रहें जिधर चलावें उधर चलें. जहां से हटावें वहां से हट जावें. देखने और बुलाने पर समीप चले आवें जब कभी व्याघ्रादि पशु वा मारने वाले को देखें अपनी रक्षा के लिये पालन करने वाले के समीप दौड़कर आवें कि यह हमारी रक्षा करेगा ॥

जिनके मरे पर चमड़ा भी कंटकादि से रक्षा करे. जंगल में चर के अपने बच्चे और स्वामी के लिये दूध देने को नियत स्थान पर चले आवें अपने स्वामी की रक्षा के लिये तन मन लगावें जिन का सर्वस्व राजा और प्रजा आदि मनुष्यों के सुख के लिये है. इत्यादि शुभगुण युक्त सुख कारक पशुओं के गले छुरों से काटकर जो पुरुष अपना पेट भर सब संसार की हानि करते हैं क्या संसार में उनसे भी अधिक कोई विश्वास घाती अनुपकारी दुःख देने वाले और पापी जन होंगे? इसी लिये यजुर्वेद के प्रथम ही मंत्र में परमात्मा की आज्ञा है कि (अघ्न्याः) + यजमानस्य पशून् पाहि) हे पुरुष तू इन पशुओं को मत मार और यजमान अर्थात्

सब के सुख देने वाले जनों के संबंधी पशुओं की रक्षा कर जिन से तेरी भी पूरी रक्षा होवे. और इसी लिये ब्रह्मा से लेके आज पर्यन्त आर्य लोग पशुओं की हिंसा में पाप और अधर्म समझते थे और अब भी समझते हैं. और इन की रक्षा से अन्न भी महंगा नहीं होता क्योंकि दूध आदि के अधिक होने से दरिद्री को भी खान पान में मिलने पर न्यून ही अन्न खाया जाता है और अन्न के कम खाने से मल भी कम होता है, मल के कम होने से दुर्गंध भी न्यून होता है, दुर्गंधि के स्वल्प होने से वायु और वृष्टि जल की शुद्धि भी विशेष होती है. उससे रोगों की न्यूनता होने से सब को सुख बढ़ता है॥

इससे यह ठीक है कि गौ आदि पशुओं के नाश होने से राजा और प्रजा का भी नाश होजाता है क्योंकि पशु न्यून होते हैं तब दूध आदि पदार्थ और खेती आदि कर्मों की भी घटती होती है. देखो इसी से. जितने मूल्य से जितना दूध और घी आदि पदार्थ तथा बैल आदि पशु ७०० सौ वर्ष के पूर्व मिलते थे. उतना दूध. घी. और बैल आदि पशु इस समय दश गुणे मूल्य से भी नहीं मिल सकते क्योंकि ७०० सात सौ वर्ष के पीछे इस देश में गो आदि पशुओं के मारने वाले मांसाहारी विदेशी मनुष्य बहुत आ बसे हैं वे उन सर्वोपकारी पशुओं के हाड़ मांस भी नहीं छोड़ते तो (मूले नष्टे नैव पुष्पं फलंच) जब कारण का नाश कर दें तो कार्य नष्ट क्यों न होजावे? हे मांसाहारियो तुम लोग जब कुछ काल के पश्चात पशु न मिलेंगे तब मनुष्यों का मांस भी छोड़ोगे वा नहीं हे परमेश्वर तू क्यों इन पशुओं पर जोकि विना अपराध मारे जाते हैं दया नहीं करता? क्या उन पर तेरी प्रीति नहीं है? क्या उनके

लिये तेरी न्याय सभा बन्द होगयी है? क्यों उनकी पीड़ा छुड़ाने पर ध्यान नहीं देता और पुकार नहीं सुनता? क्यों इन मांसाहारियों के आत्माओं में दया प्रकाश कर निष्ठुरता. कठोरता. स्वार्थपन. और मूर्खता आदि दोषों को दूर नहीं करता? जिससे ये इन बुरे कामों से बचें॥

कदाचित् कोई कहे कि पशू को स्वयं मार कर खाने में दोष होगा बाजार से लेकर खाने में नहीं यह भी समझ ठीक नहीं मनुजी ने आठ प्रकार के हिंसक लिखे हैं जैसे "अनुमन्ता विशसिता निहन्ता क्रयविक्रयी॥ संस्कर्त्ता चोपहर्त्ता च खादकश्चेति घातकाः"॥१॥ अर्थ॥ अनुमति (मारने की सलाह) देने. मांस के काटने. पशु आदि के मारने. उनको मारने के लिये लेने और बेचने. मांस के पकाने. और परसने. और खाने वाले. आठ मनुष्य घातक हिंसक अर्थात् ये सब पाप कारी हैं और भैरव आदि के निमित्त से भी मांस खाना मारना वा मरवाना महा पाप कर्म है इसी लिये दयालु परमेश्वर ने वेदों में मांस खाने वा पशु आदि के मारने की विधि नहीं लिखी. मद्य भी मांस खाने का ही कारण है इसलिये यहां संक्षेप से थोड़ा सा लिखा है॥

मांसाहारी और मद्य पी मनुष्य विद्यादि शुभ गुणों से रहित होकर और उन दोषों में फसकर अपने धर्म अर्थ काम और मोक्ष फलों को छोड़ पशुवत् आहार निद्रा भय मैथुन आदि कर्मों में प्रवृत्त होकर अपने मनुष्य जन्म को व्यर्थ कर देता है इसलिये कोई भी मादक पदार्थ सेवन न करना चाहिये॥

हाय बड़े शोक की बात है कि जब हिंसक लोग गाय बकरे

आदि पशु और मोर आदि पक्षियों को मारने के लिये ले जाते हैं तब वे अनाथ तुम हमको देख के राजा और प्रजा पर बड़े शोक प्रकाशित करते हैं कि देखो हम को विना अपराध बुरे हाल से मारते हैं और हम रक्षा करने तथा मारने वालों को भी दूध आदि अमृत पदार्थ देने के लिये उपस्थित रहना चाहते हैं और मारे जाना नहीं चाहते देखो हम लोगों का सर्वस्व परोपकार के लिये है और हम इसी लिये पुकारते हैं कि हमको आप लोग बचावें हम तुम्हारी भाषा में अपना दुःख नहीं कह सकते हममें से किसी को कोई मारता तो हम भी आप लोगों के सदृश अपने मारने वालों को न्याय व्यवस्था से फांसी पर न चढ़वा देते हम इस समय अतीव कष्ट में हैं क्योंकि कोई भी हम को बचाने में उद्यत नहीं होता. और जो कोई होता है तो उससे मांसाहारी द्वेष करते हैं (अस्तु) वे स्वार्थ के लिये द्वेष करो तो करो क्योंकि (स्वार्थी दोषं न पश्यति) जो स्वार्थ साधने में तत्पर है वह अपने दोषों पर ध्यान नहीं देते किन्तु दूसरों की हानि हो तो हो मुझ को सुख होना चाहिये परंतु जो उपकारी हैं वे उनके बचाने में अत्यन्त पुरुषार्थ करें जैसा कि आर्य लोग सृष्टि के आरम्भ से आजतक वेदोक्तरीति से प्रशंसनीय कर्म करते आये हैं वैसे ही सब भूगोलस्थ सज्जन मनुष्यों को करना उचित है ॥

धन्य है. आर्यावर्त्त देशवासी आर्य लोगों को कि जिन्हों ने ईश्वर की सृष्टिक्रम के अनुसार परोपकार में ही अपना तन मन धन लगाया। और लगाते हैं इसीलिये आर्यावर्तीय राजा.महाराजा. प्रधान और धनाढ्य लोग आधी पृथ्वी में जंगल रखते थे कि जिससे पशु और पक्षियों की रक्षा होकर ओषधियों के सार

दूध आदि पवित्र पदार्थ उत्पन्न हों जिनको खाने पीने से आरोग्य बुद्धि. बल. पराक्रम आदि सद्गुण बढ़े और वृक्षों के अधिक होने से वर्षा. जल. और वायु में आर्द्रता और शुद्ध अधिक होती है पशु और पक्षी आदि के अधिक होने से खात भी अधिक होता है परंतु इस समय के मनुष्यों का इससे विपरीत व्यवहार है कि जंगलों को काट और कटवा डालना पशुओं को मार वा मरवा कर खाना और विष्ठा आदि का खात खेतों में डाल डलवाकर रोगों की वृद्धि करके संसार का अहित करना स्वप्रयोजन साधना और परप्रयोजन पर ध्यान न देना इत्यादि काम उलटे हैं (विषादप्यमृतं ग्राह्यम्) सत्पुरुषों का यही सिद्धान्त है कि विष से भी अमृत लेना इसी प्रकार गाय आदि का मांस विषवत् महारोगकारी को छोड़ कर उन से उत्पन्न हुए दूध आदि अमृत रोग नाशक हैं उनको लेना अत एव इनकी रक्षा करके विषवत्याग कर अमृतभोजी सब को होना चाहिये।

सुनो बंधु वर्गो तुम्हारा तन. मन. धन. गाय आदि की रक्षा रूप परोपकार में न लगे तो किस काम का है देखो परमात्मा का स्वभाव कि जिसने सब विश्व और सब पदार्थ परोपकार ही के लिये रच रक्खे हैं वैसे तुम भी अपना तन.मन. धन परोपकार ही के लिये अर्पण करो बड़े आश्चर्य की बात है कि पशुओं को पीड़ा न होने के लिये न्याय पुस्तक में व्यवस्था भी लिखी है कि जो पशु दुर्बल और रोगी हो उसको कष्ट न दिया जावे और जितना बोझ सुख पूर्वक उठा सकें उतना ही उन पर धरा जावे॥

श्री मती राज राजेश्वरी श्री विक्टोरिया महाराणी का विज्ञापन

भी प्रसिद्ध है कि इन अव्यक्त वाणी पशुओं को जो २ दुःख दिया जाता है वह २ न दिया जावे जो यही बात है कि पशुओं को जो २ दुःख दिया जाता है वह २ न दिया जावे तो क्या भला मार डालने से भी अधिक कोई दुःख होता है क्या फांसी से अधिक दुःख बन्दी ग्रह में होता है जिस किसी अपराधी से पूंछा जाय कि तूं फांसी चढ़ने में प्रसन्न है वा बन्दीग्रह के रहने में तो वह स्पष्ट कहेगा कि फांसी में नहीं किन्तु बन्दी घर के रहने में और जो कोई मनुष्य भोजन करने को उपस्थित हो उसके आगे से भोजन के पदार्थ उठालिये जावें और उसको वहां से दूर किया जावे तो क्या वह सुख मानेगा ऐसे ही आजकल के समय में कोई गाय आदि पशु सर्कारी जंगल में आकर घास और पत्ता जोकि उन्हीं के भोजनार्थ हैं बिना महसूल दिये खावे वा खाने को जावे तो बेचारे उन पशुओं और उनके स्वामियों की दुर्दशा होती है जंगल में आग लगजावे तो कुछ चिन्ता नहीं किन्तु वे पशू न खाने पावें हम कहते हैं कि किसी क्षुधातुर राजा वा राजपुरुष के सामने आये हुए चांवल वा डबल रोटी आदि छीन कर न खाने देवे और उनकी दुर्दशा कीजावे तो इनको दुःख विदित न होगा क्या वैसाही इन पशु पक्षियों और उनके स्वामियों को न होता होगा ध्यान देकर सुनिये जैसा दुःख सुख अपने को होता है वैसाही औरों को भी समझा कीजिये और यह भी ध्यान में रखिये कि वे पशु आदि और उनके स्वामी तथा खेती आदि कर्म करने वाले प्रजा के पशु आदि और मनुष्यों के अधिक पुरुषार्थ ही

से राजा का ऐश्वर्य अधिक बढ़ता और न्यून से नष्ट होजाता है इ सी लिये राजा प्रजा से कर लेता है कि उन की रक्षा यथावत् करे नकि राजा और प्रजा के जो सुख के कारण गाय आदि पशु हैं उन का नाश किया जावे इसलिये आज तक जो हुआ सो हुआ आगे आंखें खोलकर सब के हानि कारक कर्मों को न कीजिये और न करने दीजिये ॥ हां हम लोगों का यही काम है कि आपलो गों को भलाई और बुराई के कामों को जता देवें, और आपलो गों का यही काम है कि पक्षपात छोड़कर सब की रक्षा और बढ़ ती करने में तत्पर रहें सर्व शक्तिमान् जगदीश्वर हम और आप पर पूर्ण कृपा करे कि जिस से हम और आपलोग विश्व के हानि कारक कर्मों को छोड़ सर्वोपकारक कर्मों को करके सब लोग आनन्द में रहें ॥ इन सब बातों को मत सुन डालना किं तु सुन रखना इन अनाथ पशुओं के प्राणों को शीघ्र बचाना हे महाराजाधिराज जगदीश्वर जो इन को कोई न बचावे तो आप इनकी रक्षा करने और हम से कराने में शीघ्र उद्यत हूजिये

इस सभा के नियम

१	सब विश्व को बिविध सुख पहुंचाना इस सभा का मुख्य उद्देश है किसी की हानि करना प्रयोजन नहीं ॥
२	जो २ पदार्थ सृष्टि क्रमाऽनुकूल जिस २ प्रकार से अधिक उपकार में आवें उस २ का प्राऽभिप्रायाऽनुसार यथायोग्य सर्वहित सिद्ध करना इस सभा का परम पुरुषार्थ है ॥
३	जिस २ कर्म से बहुत हानि और थोड़ा लाभ हो उस २ को सभा कर्त्तव्य

नहीं समझती ॥

४ जो २ मनुष्य इस परम हितकारी कार्य्य में तन, मन, धन, से प्रयत्न और सहायता करे वह २ इस सभा में प्रतिष्ठा के योग्य होवे ॥

५ जोकि यह कार्य्य सर्व हितकारी है इसलिये यह सभा भूगोलस्थ मनुष्य जाति से सहायता की पूरी आशा रखती है ॥

६ जो २ सभा देश देशान्तर और द्वीप द्वीपान्तर में परोपकार ही करना अभीष्ट रखती है वह २ इस सभा की सहायकारिणी समझी जाती है ॥

७ जो २ जन राजनीति वा प्रजा के अभीष्ट से विरुद्ध स्वार्थी क्रोधी और अविद्यादि दोषों से ग्रस्त होकर राजा और प्रजा के लिये अनिष्ट कर्म्म करे वह २ इस सभा का संबंधी न समझा जावे ॥

उपनियम

१— इस सभा का नाम "गोकृष्यादिरक्षिणी है"

उद्देश्य

२— इस सभा के उद्देश्य वेही हैं जो कि इसके नियमों में वर्णन किये गये हैं ॥

३— जो लोग इस सभा में नाम लिखाना चाहें (*) और इसके उद्देशानुकूल आचरण करना चाहें वे इस सभा में प्रविष्ट हो सकते हैं

(*) नोट- इस सभा में नाम लिखाने को मंत्री के पास इस प्रकार का पत्र भेजना चाहिये कि मैं प्रसन्नता पूर्वक इस सभा के उद्देशानुकूल जोकि नियमों में वर्णन किये गये आचरण स्वीकार करता हूं मेरा नाम इस सभा में लिख लीजिये परन्तु अंतरंग सभा को अधिकार रहेगा कि किसी विशेष हेतु से उनका नाम इस सभा में लिखना स्वीकार न करे ॥

परन्तु उनकी आयु १८ वर्ष से न्यून न हो जो लोग इस सभा में प्रविष्ट हों वे गोरक्षक सभासद कहलावेंगे ॥

४ — जिनका नाम इस सभा में सदाचार से एक वर्ष रहा हो और वे अपने आप का शतांश वा अधिक मासिक वा वार्षिक इस सभा को दें वे गोरक्षक सभासद हो सकते हैं और सम्मति देने का अधिकार केवल गोरक्षक सभासदों ही को होगा ॥

अ+ गोरक्षक सभासद बनने के लिये गोकृष्यादि रक्षिणी सभा में वर्ष भर नाम रहने का नियम किसी युक्ति के लिये अंतरंग सभा शिथिल भी कर सकती है इस सभा में वर्षभर रहकर गोरक्षक सभासद बनने का नियम गोकृष्यादि रक्षिणी सभा के दूसरे वर्ष से काम आवेगा ॥

ब+ राजा सर्दार बड़े २ साहूकार आदि को इस सभा के सभासद बनने के लिये शतांश ही देना आवश्यक नहीं वे एक बार वा मासिक वा वार्षिक अपने उत्साहानुसार दे सकते हैं ॥

ज+ अंतरंग सभा किसी विशेष हेतु से चन्दा न देने वाले पुरुष को भी गोरक्षक सभासद बना सकती है ॥

द+ नीचे लिखी हुई विशेष दशाओं में उन सभासदों को भी जो गोरक्षक सभासद नहीं बने सम्मति ली जा सकती है ॥

१ — जब नियमों में न्यूनाधिक करना हो ॥

२ — जब कि विशेष अवस्था में अंतरंग सभा उनकी सम्मति लेनी योग्य और आवश्यक समझे ॥

३ — जो इस सभा के उद्देश्य के विरुद्ध कर्म करेगा उस को

गोरक्षक और न गोरक्षक सभासद् गिना जावेगा ॥

४ गोरक्षक सभासद दो प्रकार के होंगे एक साधारण और दूसरे माननीय। माननीय गोरक्षक सभासद वे होंगे जो शतांश वा १०) मासिक वा इससे अधिक देवें अथवा एक बार ५०) रुपया देवें, वा जिनको अंतरंग सभा विद्या आदि गुणों से माननीय समझे !!

५ यह सभा दो प्रकार की होगी एक साधारण दूसरी अंतरंग ॥

६ साधारण सभा तीन प्रकार की होवे १ मासिक २ षाण्मासिक और ३ नैमित्तिक ॥

७ (मासिक सभा) प्रतिमास एक बार हुआ करे उसमें महीने भर का आय व्यय और सभा के आर्य कर्त्ताओं की क्रियाओं का वर्णन किया जावे जो कि कथन योग्य हो ॥

८ (षाण्मासिक सभा) कार्त्तिक और वैशाख के अंत में हुआ करे उसमें आप्तोक्त विचार मासिक सभा का कार्य प्रत्येक प्रकार का आय व्यय समझना और समझाना होवे ॥

९ (नैमित्तिक सभा) जब कभी मंत्री प्रधान अंतरंग सभा आवश्यक कार्य जाने उसी समय यह सभा हो और उसमें विशेष कार्यों का प्रबंध होवे ॥

१० (अंतरंग सभा) सभा के सब कार्य प्रबंध के लिये एक अंतरंग सभा नियत की जावे और इसमें तीन प्रकार के सभासद हों एक प्रतिनिधि दूसरे प्रतिष्ठित और तीसरे अधिकारी ॥

११ प्रतिनिधि सभासद अपने २ समुदायों के प्रतिनिधि होंगे और उन्हें उनके समुदाय नियत करेंगे. कोई समुदाय जब

चाहे अपने प्रतिनिधि को बदल सकता है ॥

१२ प्रतिनिधि सभासदों के विशेष कार्य ये होंगे ॥

अ+ अपने २ समुदायों की संमति से अपने को विज्ञ रखना ॥

ब+ अपने २ समुदायों को अंतरंग सभा के कार्य जोकि प्रगट करने के योग्य हों बतलाना ॥

ज+ अपने २ समुदायों से चन्दा इकट्ठा करके कोषाध्यक्ष को देना ॥

१३ प्रतिष्ठित सभासद विशेष गुणों के कारण प्रायः वार्षिक नैमित्तिक और साधारण सभा में नियत किये जावें प्रतिष्ठित सभासद अंतरंग सभा में एक तिहाई से अधिक न हों ॥

१४ प्रति बैशाख की सभा में अंतरंग सभा के प्रतिष्ठित और अधिकारी वार्षिक साधारण सभा में फिर से नियत किये जावें और कोई पुराना प्रतिष्ठित और अधिकारी पुनर्वार नियुक्त हो सकता है ॥

१५ जब वर्ष के पहिले किसी प्रतिष्ठित सभासद और अधिकारी का स्थान रिक्त हो तो अंतरंग सभा आपही उसके स्थान पर किसी और योग्य पुरुष को नियत कर सकती है ॥

१६ अंतरंग सभा कार्य के प्रबंध निमित्त उचित व्यवस्था बना सकती है, परन्तु वह नियमों और उपनियमों से विरुद्ध न हो ॥

१७ अंतरंग सभा किसी विशेष कार्य के करने और सोचने के लिये अपने में से सभासदों और विशेष गुण रखने वाले

सभासदों को मिलाकर उपसभा नियत कर सकती है॥
१८ अंतरंग सभा का कोई सभासद मंत्री को एक सप्ताह के पहिले विज्ञापन दे सकता है कि कोई नियम सभा में निवेदन किया जावे और वह विषय प्रधान की आज्ञानुसार निवेदन किया जावे परंतु जिस विषय के निवेदन करने में अंतरंग सभा के पांच सभासद सम्मति दें वह अवश्य निवेदन करनाही पड़े॥
१९ दो सप्ताह के पीछे अन्तरंग सभा अवश्य हुआ करे और मंत्री और प्रधान की आज्ञा से वा जब अंतरंग सभा के पांच सभासद मंत्री को पत्र लिखें तो भी हो सकती है॥
२० अधिकारी छः प्रकार के होंगे एक प्रधान २ उपप्रधान ३ मंत्री ४ उपमंत्री ५ कोषाध्यक्ष ६ पुस्तकाध्यक्ष॥
(मंत्री) (कोषाध्यक्ष) (पुस्तकाध्यक्ष) इन के अधिकारोंपर आवश्यकता होने से एक से अधिक भी नियत हो सकते हैं और जब किसी अधिकार पर एक से अधिक नियत हों जो अंतरंग सभा उन्हें कार्य बांट देवे॥

प्रधान

२१ प्रधान के निम्नलिखित अधिकार और काम होवें॥
१ (प्रधान) अंतरंग सभा आदि सब सभाओं का सभापति समझा जावे॥
२ सदा सभा के सब कार्यों के यथावत् प्रबंध और सर्वथा उन्नति और रक्षा में तत्पर रहे सभा के प्रत्येक कार्य को देखे कि वे नियमानुसार किये जाते हैं वा नहीं स्वयं नियमानुसार चले॥

३ यदि कोई विषय कठिन और आवश्यक प्रतीत हो तो उसका यथोचित् प्रबंध तत्काल करे और उसकी हानि में वही उत्तर देवे ॥

४ प्रधान अपने प्रधानत्व के कारण सब उप सभाओं का जिन्हें अंतरंग सभा संस्थापन करे सभासद हो सकता है ॥

उपप्रधान

२२ इसके ये कार्य कर्त्तव्य हैं— प्रधान की अनुपस्थिति में उसका प्रतिनिधि होवे यदि दो वा अधिक उप प्रधान हों तो सभा की संमति के अनुसार उनमें से कोई एक प्रतिनिधि किया जावे परंतु सभा के सब कार्य्यों में प्रधान को सहायता देनी उसका मुख्य कार्य है ॥

मन्त्री

२३ (मंत्री) के निम्न लिखित अधिकार और कार्य हैं ॥

१ अंतरंग सभा की आज्ञानुसार सभा की ओर से सब के साथ पत्र व्यवहार रखना ॥

२ सभाओं का वृत्तान्त लिखना और दूसरी सभा होने से पहले ही पूर्व वृत्तान्त पुस्तक में लिखना वा लिखवाना ॥

३ मासिक अंतरंग सभाओं में इन गोरक्षकों वा गोरक्षक सभासदों के नाम सुनाना जो कि पिछली मासिक सभा के पीछे सभा में प्रविष्ट वा उससे पृथक् हुए हों ॥

४ सामान्य प्रकार भृत्यों के कार्य पर दृष्टि रखना और सभा के नियम- उपनियम और व्यवस्थाओं के पालन पर ध्यान रखना ॥

५ इस बात का भी ध्यान रहे कि प्रत्येक गोरक्षक सभासद किसी न किसी समुदाय में हो और इसका भी कि प्रत्येक समुदाय ने अपनी ओर से अंतरंग सभा में प्रतिनिधि किया होवे ॥

६ पहिले विज्ञापन दिये पर मान्य पुरुषों को सत्कार पूर्वक बिठाना ॥

७ प्रत्येक सभा में नियत काल पर आना और बराबर वहरना ॥

कोषाध्यक्ष

२४ (कोषाध्यक्ष) के नीचे लिखे अधिकार और कार्य्य हैं ॥

१ सभा के सब आय धन का लेना. उसकी रसीद देना और उसको यथोचित रखना ॥

२ किसी को अंतरंग सभा की आज्ञा के बिना रुपया न देना किन्तु मंत्री और प्रधान को भी उस प्रमाण से देवे जितना अंतरंग सभा ने उनके लिये नियत किया हो. अधिक न देना और उस धन के उचित व्यय के लिये वही अधिकारी जिसके द्वारा वह व्यय हुआ हो उत्तर दाता होवे ॥

३ सब धन के व्यय का रीति पूर्वक बही खाता रखना और प्रतिमास अंतरंग सभा में हिसाब को बही खाते समेत परताल और स्वीकार के लिये निवेदन करना ॥

पुस्तकाध्यक्ष ॥

२५ (पुस्तकाध्यक्ष) के अधिकार और कार्य ये होवें जो पुस्तकालय में सभा की स्थिर और विक्रय की पुस्तक हों उन सब की रक्षा करे और पुस्तकालय संबंधी हिसाब भी रक्खे

और पुस्तकों के लेने देने का कार्य भी करे॥

मिश्रित नियम

२६ सब गो रक्षक सभासदों की संमति निम्न लिखित दशाओं में ली जावे अंतरंग सभा का यह निश्चय हो कि किसी साधारण सभा के सिद्धान्तपर निश्चय न करना चाहिये किन्तु गो रक्षक सभासदों की संमति जाननी चाहिये॥

२ सब गो रक्षक सभासदों का पांचवां वा अधिक अंश इस निमित्त मंत्री के पास पत्र लिख भेजे॥

३ जब बहुत से व्यय संबंधी वा प्रबंध संबंधी वा नियम अथवा व्यवस्था संबंधी कोई मुख्य विचार आदि करना हो अथवा जब अंतरंग सभा सब गो रक्षक सभासदों की संमति जाननी चाहे॥

२७ जब किसी सभा में थोड़े से समय के लिये कोई अधिकारी उपस्थित न हो तो उस समय के लिये किसी योग्य पुरुष को अंतरंग सभा नियत कर सकती है॥

२८ यदि किसी अधिकारी के स्थान पर वार्षिक साधारणसभा में कोई पुरुष नियत न किया जावे तो जब तक उसके स्थान पर नियत न किया जाय वही अधिकारी अपना काम करता रहे॥

२९ सब सभा और उप सभाओं का वृत्तान्त लिखा जाया करे और उसको सब गो रक्षक सभासद देख सकते हैं॥

३० सब सभाओं का कार्य तब आरंभ हो जब एक तिहाई सभासद उपस्थित हों॥

३१ सब सभाओं और उपसभाओं के सारे काम बहु पक्षानुसार नि निश्चत हों ॥

३२ आय का दशांश समुदाय में रक्खा जावे ॥

३३ सब गोरक्षक और गोरक्षक सभासदों को इस सभा की उपयोगी वेदादि विद्या जाननी और जनानी चाहिये ॥

३४ सब गोरक्षक और गोरक्षक सभासदों को उचित है कि लाभ और आनन्द समय में सभी की उन्नति के लिये उदारता और पूर्ण प्रेम दृष्टि रक्खें ॥

३५ सब गोरक्षक और गोरक्षक सभासदों को उचित है कि शोक दुख के समय में परस्पर सहायता करें आनन्दोत्सव में निमंत्रण पर सहायक हों छोटाई बड़ाई न गिनें ॥

३६ कोई गोरक्षक भाई किसी हेतु से अनाथ वा किसी की स्त्री विधवा अथवा सन्तान अनाथ हो जावें अर्थात् उनका जीवन न हो सकता हो और यदि गो कृष्यादि रक्षिणी सभा उनको निश्चित जान ले तो यह सभा उनकी रक्षा में यथाशक्ति यथोचित प्रबंध करे ॥

३७ यदि गोरक्षक सभासदों में इन्हीं का परस्पर झगड़ा हो तो उनको उचित है कि वे आपस में समझ लेवें वा गोरक्षक सभासदों की न्याय उपसभा द्वारा उसका न्याय करा लें परंतु अपावश्य अवस्था में राजनीति द्वारा भी न्याय करा लेवें ॥

३८ इस गो कृष्यादि रक्षिणी सभा के व्यवहार में जितना लाभ होगा वह २ सर्व हितकारी काम में लगाया जावे किन्तु यह महाधन तुच्छ कार्य्य में व्यय न किया जावे और जो कोई

इस गो कृष्यादि की रक्षा के लिये धन है इसको चोरी से जो हरण करेगा वह गो हत्या के पाप लगने से इस लोक और परलोक में महादुःख भागी अवश्य होगा ॥

३९ संप्रति इस सभा के धन का व्यय गो आदि पशु लेने पालन करने जंगल और घास के क्रय करने उनकी रक्षा के लिये भृत्य वा औषधि, रखने तालाब कूप बावड़ी अथवा बाड़ा के लिये व्यय किया जावे ॥

४० सब सज्जनों को उचित है इस गोरक्षक धन आदि समुदाय पर स्वार्थ दृष्टि से हानि करना कभी मन से भी न विचारें किन्तु यथा शक्ति इस व्यवहार की उन्नति तन, मन, धन, से सदा परम प्रयत्न किया ही करें ॥

४१ इस सभा के सब सभासदों को यह बात अवश्य जाननी चाहिये कि जब गो आदि पशु रक्षित होके बहुत बढ़ेंगे तब कृष्यादि कर्म और दुग्ध घृत आदि वृद्धि होकर सब मनुष्यादि को विविध सुख लाभ अवश्य होगा इसके बिना सब का हित सिद्ध होना संभव नहीं ॥

४२ देखिये पूर्वोक्त रीत्यनुसार एक गो की रक्षा से लाखों मनुष्य आदि को लाभ पहुंचाना और जिसके मारने से उतने ही की हानि होती है ऐसे निकृष्ट कर्म के करने को आप्त विद्वान् कभी अच्छा न समझेगा ॥

४३ इस सभा के जो २ पशु प्रसूत होंगे उन २ का दूध एक मास तक उसके बछड़े को पिलाना और अधिक उसी पशु को अन्न के साथ खिला देना चाहिये और दूसरे मास में तीन स्तनों का

दूध बछड़े को देना और एक भाग लेना चाहिये तीसरे मास के आरंभ से आधा दूह लेना और आधा बछड़े को तब तक दिया करें कि जब तक गऊ दूध देवे ॥

४४ सब सभा सदों को उचित है कि जब २ किसी को स्वरक्षित पशु देवें तब २ न्याय नियम पूर्वक व्यवस्था पत्र लें और देकर जब वह पशु असमर्थ हो जाय उसके काम का न रहे और उसके पालन करने में सामर्थ्य न हो तो अन्य किसी को न दे सके किन्तु पुनरपि सभा के आधीन करे ॥

४५ इस सभा की अंतरंग सभा को उचित है किन्तु आवश्यक है कि उक्त प्रकार से अप्राप्त पशुओं की प्राप्ति प्राप्तों की रक्षा रक्षितों की वृद्धि और बढ़े हुए पशुओं से नियमानुसार और सृष्टिक्रमानुकूल उपकार लेना अपने अधिकार में सदा रखना अन्य किसी को इसमें स्वाधीनता कभी न देवें ॥

४६ जो कि यह बहुत उपकारी कार्य है इसलिये इसका करने वाला इसलोक और परलोक में स्वर्ग अर्थात् पूर्ण सुखों को अवश्य प्राप्त होता है ॥

४७ कोई भी मनुष्य इस सभा के पूर्वोक्त उपदेशों को लिये बिना सुखों की सिद्धि नहीं कर सकता ॥

४८ क्या ऐसा कोई भी मनुष्य सृष्टि में होगा कि जो अपने सुख दुःखवत् दूसरे प्राणियों का सुख दुःख अपने आत्मा में न समझता होगा ।

४९ यह नियम और उपनियम उचित समय पर वा प्रतिवर्ष में यथोचित विज्ञापन देके शोधे वा घटाये बढ़ाये जा सकते हैं ॥

मुनि (७) रामांक (३) चन्द्रे (९) ऽब्दे तपस्यस्यासिते दले
दशम्यां भृगुवारेऽलंकृतोऽयं कामधेनुपः ॥१॥

(१)

ओ३म्

सही करनेका पत्र

ऐसा कौन मनुष्य जगत् में है जो सुख के लाभ होने में प्रसन्न और दुःख की प्राप्ति में अप्रसन्न न होता हो। जैसे दूसरे ने किये अपने उपकार में स्वयं आनंदित होना है वैसेही परोपकार करने में सुखी अवश्य होना चाहिये।

क्या ऐसा कोई भी विद्वान् भूगोल में था. है. और होगा जो परोपकार रूप धर्म के सिवाय धर्म व अधर्म को सिद्ध कर सके। धन्य वे महाशय जन हैं जो अपने तन मन, और धन से संसार का अधिक उपकार सिद्धि करते हैं। निंदनीय मनुष्य वे हैं जो अपनी अज्ञानता से स्वार्थ वश होकर अपने तन, मन, और धन से जगत् में पर हानि करके बड़े लाभ का नाश करते हैं। सृष्टि क्रम से ठीक २ यही निश्चय होता है कि परमेश्वर ने जो २ वस्तु बनायी है वा वह पूर्ण उपकार लेने के लिये है अल्प लाभ से महाहानि करने के अर्थ नहीं। विश्व में देही जीवन के मूल हैं एक अन्न और दूसरा पान इसी अभिप्राय से आर्य्य शिरोमणि राजे महाराजे और प्रजाजन महोपकारक गाय आदि पशुओं को न आप मारते और किसी को मारने देते थे अब भी इन गाय, बैल, और भैंस को मारं

और मरवाने देना नहीं चाहते। क्योंकि अन्न और पानकी बहुताई इन्ही से होती है और इस से सब का जीवन सुख से हो सकता है जितना राजा और प्रजा का बड़ा नुकसान इनके मारने और मरवाने से होता है उतना अन्य किसी कर्म से नही। इसका निर्णय गोकरुणा निधि पुस्तक में अच्छे प्रकार प्रकट कर दिया है अर्थात् एक गाय के मारने और मर वाने से ४,२०,००० चार लाख बीस हजार मनुष्यों के सुख की हानि होती है इसलिये हम सब लोग स्वप्रजा की हितैषिणी श्रीमती राजराजेश्वरी क्विन् विक्टोरिया की न्याय प्रणाली में जो यह अन्याय रूप बड़े २ उपकारक गाय आदि पशुओं की हत्या होती है इसको इनके राज्य में से प्रार्थना से छुड़वा के अति प्रसन्न होना चाहते हैं। यह हम को पूरा निश्चय है कि विद्या• धर्म प्रजाहित प्रिय श्री मती राज राजेश्वरी क्विन् विक्टोरिया पार्लियामेन्ट सभा और सर्वोपरि प्रधान आर्य्यावर्तस्थ श्रीमान् गवरनर जनरल साहब बहादुर सम्मति इस बड़ी हानिकारक गायबैल तथा भैंस की हत्या को उत्साह और प्रसन्नता पूर्वक शीघ्र बन्द करके हम सब को परम आनन्दित करें। देखिये कि उक्त गाय आदि पशुओं के मारने और मर वाने से दूध घी और किसानों की कितनी हानि होकर राजा और प्रजा की बड़ी हानि होगई और नित्य प्रति अधिक २ होती जाती है। पक्षपात छोड़ के जो कोई देखता है तो वह परोपकार ही को धर्म और पर हानि ही को अधर्म निश्चित जानता है। क्या विद्या का यह फल और सिद्धान्त नहीं है कि जिस २ से अधिक उपकार हो उसका पालन वर्द्धन करना और नाश कभी न करना॥

परम दयालु न्यायकारी सर्वान्तर्यामी सर्वशक्तिमान् परमात्मा इस समस्त जगदुपकारक काम करने में ऐकमत्य करे॥

(२) (हस्ताक्षर)

विज्ञापन पत्र मिदम्

सब आर्य्य पुरुषों को विदित किया जाता है कि जिस पत्र के ऊपर (ओ३म्) और नीचे (हस्ताक्षर) ऐसा चिन्ह लिखा है वह सही करने का पत्र है। उसपर सही इस प्रकार करनी होगी कि जिस के स्वरक्षक मेलमें ब्राह्मणादिक मनुष्यों की जितनी संख्या हो उतनी संख्या लिख के अर्थात् इतने १०० सौ १,००० हज़ार १,००,००० लाख वा १,००,००,००० करोड़ मनुष्यों की ओरसे मैं अमुक नामा पुरुष सही करता हूं। इस प्रकार एक श्रीयुत महाशय प्रधान पुरुष की सही में सर्व साधारण आर्य पुरुषों की सही आजायगी। परन्तु जितने मनुष्यों की ओर से एक मुख्य पुरुष सही करे वह उनसे सही लेकर अपने पास ज़रूर रक्खे और और जो मुसल्मान वा ईसाई लोग इस महोपकारक विषय में दृढ़ निश्चय हैं कि आप परमोदार महात्माओं के पुरुषार्थ उत्साह और प्रीति से यह सर्वोपकारक महा पुण्य कीर्त्ति प्रदायक कार्य यथावत् सिद्ध होजायगा॥

अलमति विस्तरेण विपश्चिद्वर शिरोमणिषु॥ (दयानंदसरस्वती)

इस प्रकार के उपदेश युक्त ऊपर लिखे दोनों पत्र श्रीमान्ने एक दमसे सर्वत्र हस्ताक्षर हो जाने अर्थ अखीर मार्च सन ८२ में भेजदिये थे और देशीराज्यों में भी उद्योग चला दिया था॥

देखिये पाठक गण श्रीमान् यति वर्य्य का सोच विचार — कहां तक परिश्रम इस विषय में उठाया और क्या २ दर्शाया व कर दिखाया है यही कारण है कि अब सर्वत्र जिधर देखो उधर स्वदेशीयों के मुख गोरक्षा २ ही सुनाई देती है उत्तरोत्तर इसमें वृद्धि होने वाली है।

इसी प्रकार हमारे श्रीमान् मातृभाषा अर्थात् नागरी के प्रचार में भी परम दत्तचित्त हो रहे थे इसका अनुभव अब की शिक्षा कमीशन के आरंभ से समाप्ती तक के समय में भलीभांति आ चुका है वह सब इन्हीं कृपा निकेतन महा महोदय का कृत्य था जो चहुंओर से नागरी प्रचारार्थ कमीशन के अधिपति हंटर साहब के सन्मुख ठौर २ पोट के पोट मिमोरियलों के खुलते रहे हैं!

भला किसका सामर्थ्य है जो इन परम कारुणिक पुण्यश्लोक शिखामणि महाशय की सत्कीर्ति का यथावत् वर्णन कर सके — निश्चय जानिये इन्हों का किया वेद वेदांगादि सच्छास्त्रों का भाषानुवाद सदैव भरत खण्ड को जाग्रत रक्खेगा

हिन्दू समाज प्रयाग भाषा वर्द्धिनी और नागरी प्रचारिणी आदि सभाओं की प्रवृत्ति श्रीमान् के आशयों का यत्किंचित् अनुकरण और जोधपुरादि राज्यों में नागरी दफ्तरों का हो जाना आदि कार्य श्रीमान् के परिश्रम जन्य भावी प्रतिफलों का एक भारी शुभ चिन्ह है॥

इस प्रकार आप श्रीमान सकल गुण निधान ने अनेक प्रकार के नित्य नये जो उपकार हम लोगों पर किये उनका

तो कभी किंचित् मात्र भी वे अपने चित्त में हर्ष न लाये परन्तु जो हम तुच्छों में से किसी ने कहीं तनक भी कुछ कर दिखाया तो फिर उन के उस हर्ष का किसी ने पारा वार ही न पाया (६) अतः इस स्थल पर भर्तृहरि जी महाराज का वाक्य अति स्मरणीय और आदरणीय है " पर गुण परमाणून् पर्वती कृत्य नित्यं निज हृदि विकसंतः संति संतः कि यन्तः ॥ वे कहते हैं कि दूसरों के गुण बाहुल्य को देख भस्म होने

(नोट ६) श्रीमत्परमगुरुभ्यो नमो नमः (नं॰ ३५)

भगवन् - आप की सेवा में गोरक्षा होने के अर्थ इस पत्र के साथ एक प्रार्थना पत्र ७२ सहस्र मनुष्यों की ओर से अपने हस्ताक्षर कर के परम विनय पूर्वक भेजता हूं यदि दो मास का विलंब होय तो सूचित किया जाऊं - एक लक्ष संख्या पूर्त्ति हो सकती है और यह संख्या नगर फर्रुखाबाद और फतहगढ़ से जुदी है - ऐसा जानिये क्योंकि उन दोनों नगरों की संख्या समाज से आवेगी ॥ १३ - ८ - ८२ ई॰ (ह॰ गोपा॰)

(उत्तर) ओ३म् श्रीयुत पण्डित गोपालराव जी आनंदित रहो विदित हो कि गोरक्षार्थ हस्ताक्षर पत्र के सहित आप का कुशल पत्र पहुंचा पत्रस्थ समाचार के अवलोकन करने से अत्यन्त हर्ष हुआ यह आपने सर्वोपकारक धन्यवादार्ह पुरुषार्थ किया परमात्मा दिन प्रति ऐसे ही कर्मों के सिद्ध करने में उत्साही करे आशा है कि आर्य भाषा के प्रचारार्थ भी आप स्व पुरुषार्थ की प्रकटता करेंगे - हम उदयपुर पहुंचकर नौलखा बाग के राज महलों में ठहरे हैं एक वार श्रीयुत आर्य कुल दिवाकर श्री महाराणा सा॰ हब पधारे परस्पर प्रेम प्रीति के साथ समागम हुआ जैसा उनका नाम है वैसे ही गुण भी देखे इत्यादि द्वितीय श्रावण १२ शनि संवत् १९३९

(दयानन्द सरस्वती)

वालों से तो यह जगत लबालब हो रहा है परंतु नहीं निरा ऐसाही नहीं है किन्तु कितनेही सच्चे सत्पुरुष इसमें ऐसे भी देखमिलते हैं कि जो वे किसी में कोई परमाणु समभी सद्गुण देखलेते हैं तो फूले अंग नहीं समाते ॥

इतिश्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य्य वर्य्य श्री मद्दयानन्द दिग्विजयार्कीय तृतीयांके गोरक्षादि विचार विवर्णनं नाम द्वितीयो मयूखः ॥ २ ॥

ओ३म्

अथतृतीयोमयूखः

(२) थ्योसोफिस्ट

यह एक नवीनमत इस देश में आठ वर्ष की अवधि से प्रवृत्त हुआ है- इसके प्रथमाचार्य करनेल ओलकाट साहब (इनके साथ में इमब्ल वेस्त की नाम से एक रूसी स्त्री है) हैं ये महाशय यहां माह मई सन् १८७८ ई० में अमेरिका मुल्क के न्यूयार्क नामक शहर से आए हैं— सब लोग इन को एक अपूर्व चतुर मनुष्य समझें क्योंकि बहुत से भोले और कुछेक अंग्रेज़ी पढ़े हमारे बंधुवर्गों को इन्हों ने अच्छा बना लिया और बना रहे हैं इस घोरांधकार के निवारणार्थ श्रीमान् स्वामी जी महाराज ने कृपाकर के स्थान बंबई में जो कुछ अपना अनुभव प्रकाशित किया वह और जैसा कुछ कि यहां से लन्दन तक प्रसिद्ध है वह सब ज्यों का त्यों इस मयूख में प्रकाशित करता हूं॥

आशा है कि जिनको अपने कल्याण की अपेक्षा होगी वे उस्पर अच्छे प्रकार विचार करके अपना ध्यान जमावेंगे॥

यहां पर इतना लिख जताना और अवश्य है कि जिन महाशयों को उक्ताचार्य का यहां आने से प्रथम का वृत्तान्त यदि जानना अवश्य हो तो मद्रचित पाखंड तिमिर नाशक की पुस्तक मंगाकर देखें उसमें उक्ताचार्य महाशय के उन सर्व अंग्रेज़ी पत्रों का नागरी अनुवाद है जो उन्हों ने स्वामी जी महाराज

के नाम लिख भेजे हैं- करनेल साहिब ने अपने उन पत्रों में श्री जीमहाराज को अत्यन्त विनय के साथ स्पष्ट सविस्तर लिखा है कि गुरुजी महाराज हमने अपनी सुसयटी का आप को अधिपति और सुसयटी को आप के समाज की शाखा बनाया है हम सब सहस्रों मनुष्य आप के उपदेशों पर चलने को दिल से सन्नद्ध हैं और पढ़ने के लिये आप के चरणों की शरण में वहां आते हैं आशा है कि आप यह सब स्वीकार करेंगे इत्यादि ॥

(१) (थिओसोफिस्टों की गोलमालपोलपाल)

श्री स्वामी जी ने और आर्य समाजस्थ लोगों ने इन के पूर्व पत्र और व्यवहारों से यह अनुमान किया था कि इन से आर्यावर्त देश का कुछ उपकार होगा परन्तु वह अनुमान व्यर्थ हो गया। १। क्योंकि जो२ इन्हों ने प्रथम अपनी चिट्ठियों में प्रसिद्ध लिखा था कि हमारी थियोसोफिकल सुसायटी आर्य समाज की शाखा हुई उससे येलोग अब बदल गये। २। इन्होंने कहा था कि वेदोक्त सनातन धर्म के ग्रहण और संस्कृत विद्या पढ़ने को विद्यार्थी होने के लिये आते हैं वह तो न किया. किन्तु अब किसी धर्म को नहीं मानते और न कुछ किसी धर्म की जिज्ञासा की न आजतक संस्कृत विद्या पढ़ने का आरंभ किया और न करने की आशा है (३) इन्होंने लिखा था कि जो इस सुसाइटी के सभासदों से फीस आवेगी वह आर्य समाज के लिये होगी और बहुत सी पुस्तकें भेंट की जायंगी. वह तो कुछ भी न किया प्रत्युत जो हरिश्चन्द्र चिन्तामणि के पास ६०० रुपये भेजे थे वह भी निगल के बैठ रहे. पुस्तकों का अर्पण करना तो दूर रहा.

किन्तु जिन बाबू छेदी लाल और बाबू शिव नारायण आर्यसमा-
ज मेरठ के सभासदों ने इनके सत्कार में स्थान मान सवरी और
खानपान आदी में सैकड़ों रुपये खर्च किये इतने पर भी एच. पी.
मैंडम ब्लवेस्त की और एच. एस. कर्नेल आल्कार साहिब ने जो
एक पुस्तक उनको दिया था उसके १० रुपये झट लेलिये और धर्म-
न्दे भी न हुए. इसके सिवाय सहारनपुर. अमृतसर और लाहौर
आदि के आर्य समाजों में बहुत सा सत्कार किया वह भी उन्होंने
नहीं समझा और स्वामी जीने भी जहांतक बना उनका उपकार किया
उसको न मान के व्यर्थ लिखते हैं कि हमने स्वामी जीका बहुत
सहाय किया परन्तु स्वामी जी कहते हैं ~~कहते हैं~~ कि कुछ भी नहीं
किया और जो किया हो तो प्रसिद्ध क्यों नहीं करते हैं सो कुछ भी
नहीं प्रगट करते फिर कौन मान सकता है (४) प्रथम इन्होंने
अपने पत्रों में और यहां आय के स्वामी जी और सब के सामने
ईश्वर को स्वीकार किया फिर उसके विरुद्ध मेरठ में स्वामी जी
और अनेक भद्र पुरुषों के सामने दोनों ने कहा कि हम दोनों ई-
श्वर को नहीं मानते. क्या यह पूर्वापार विरुद्ध नहीं है. तब स्वामी
जी ने कहा कि तुम ईश्वर के मानने का खंडन करो और हम मंडन करें
जो सच्च हो उसको मान लीजिये तब उन्होंने इस बात का भी स्वी-
कार नहीं किया। ५। जब वे आर्यावर्त देश में आने लगे तब
एक समाचार इन्डियन स्पेक्टेटर. पत्र में ता० १४ जुलाई सन् १८७९
में छपवाया था कि न हम बुद्धिष्ट न हम क्रिश्चीन और न हम ब्राह्म-
णों अर्थात् पुराण मत को मानवाले हैं किन्तु हम आर्य समाजी हैं
अब इससे विरुद्ध स्पष्ट छपवाया कि हम बहुत वर्षों से बुद्धिष्ट

ये और अब भी हैं क्या यह कपट और छल की बात नहीं है और
~~छल की बात नहीं है और~~ जनवरी सन् १८८० के चिट्ठी से सिद्ध हो-
ता है कि वे ईश्वर को मानते थे और आठ महीने के पश्चात् उसी सन्
के अक्टोबर महीने में मेरठ में कहा कि हम दोनों ईश्वर को नहीं
मानते यह उनका छल नहीं तो क्या है । ६। यहां आके आर्य स-
माज की शाखा थियो सोफिकल सुसायटी प्रथम स्वीकार करके
पश्चात् कहा कि मुख्य सुसायटी न आर्य समाज की शाखा
और न आर्य समाज मुख्य सुसायटी की शाखा है किन्तु जो एक
दूसरी वैदिक की शाखा दोनों के साझे की है। इससे विरुद्ध अब
आप के ज़ाहिर किया कि हमारी सुसायटी कभी आर्य समाज
की शाखा नहीं हुई थी और हम आर्य समाज से बाहिर हैं
क्या यह भी इनकी विपरीत लीला नहीं है? कि जब उन्होंने ब-
म्बई में सुसायटी बनाई थी उसमें स्वामी जी के कहे सुने और
लिखे बिना उनका नाम अपने मन से सभासदों में लिख लिया
था जब ये प्रथम मेरठ में मूलजी के साथ मिले थे तब स्वामी
जी ने कहा था कि बिना हमारे कहे सुने तुमने सुसायटी में मेरा
नाम क्यों लिखा जहां लिखा हो वहां से काट दो तब करनेल
ओलकाट ने कहा कि इस के आगे हम ऐसा काम कभी न करें
गे जहां लिखा है वहां से निकाल भी देंगे फिर जब काशी में
मिले तब तक इन्होंने सुसायटी में से स्वामी जी का नाम न-
हीं निकाला तब स्वामी जी ने कहा पत्र लिखा कि जहां हमारा
नाम लिखा हो वहां से शीघ्र निकाल दो जब उन्होंने तार भे-
जा कि अब हम क्या लिखें तब स्वामी जी ने तार में जवाब

दिया कि जैसा हमने प्रथम वैदिक धर्मोपदेशक लिखा था वैसा लिखो। न मैं तुम्हारी व अन्य किसी सभा का सभासद हूं. किन्तु एक वेद मार्ग को छोड़ के किसी का संगी मैं नहीं हूं इसपर भी जब वे शिमले में थे तब कर्नल अल्काट्ट की ने ऐसी असभ्यता की चिट्ठी लिखी कि जिसको कोई सभ्य स्वीकार नहीं कर सके. क्या यह उन को योग्य था कि स्वामी जी ने कभी उनको न लिखा था और न कहा था उसपर भी उन्होंने स्वयं स्वामी जी का नाम लिख लिया था. क्या यह लज्जा की बात नहीं है ॥ ८ ॥ जो उन्होंने मेरठ में प्रतिज्ञा की थी कि हम आज पीछे आर्य समाज के सभासदों को अपनी सुसायटी के सभासद होने को कभी न कहेंगे उसी के दो दिन पीछे जब बाबू छेदी लालजी अम्बाले तक उनके साथ गये तब मार्ग में बहुत समझाते गये कि आप हमारी सुसायटी के सभासद हूजिये और पत्र शिमले से बाबू जीके पास भेजा कि आप सुसायटी के सभासद हूजिये. ऐसी २ छल कपट की बातें देखकर स्वामीजीने आर्य समाज मेरठ के वार्षिक उत्सव में व्याख्यान दिया था कि इनकी सुसायटी में किसी वैदिक को सभासद होने की कुछ अवश्यकता नहीं क्योंकि जैसे नियम आर्य समाज के हैं वैसे उनकी सुसायटी के नहीं उसपर शिमले से मेडम ब्लेवेट्स्की ने असभ्यता और झूठ से भरी हुई चिट्ठी लिखी तो स्वामीजी नेभी उसका उत्तर यथा योग्य दिया उसके पश्चात् स्वामी जीने विचारा था कि जब हम मुम्बई में जायेंगे तब इनसे सब बातों का खुलासा कर लेंगे ऐसाही आर्य समाज मुम्बई चाहता था. जब स्वामीजी मुम्बई में पहुंचे तब

बहुत सभासद और कर्नल ओल्काट साहब भी स्टेशन पर आये थे. जब स्वामी जी स्थान पर आ पहुंचे पश्चात् उनसे स्वामी जी की बहुत सी बातें हुई और स्वामी जीने यह भी विदित कर दिया कि आप से और भी बहुत से विषयों में बातें करनी हैं तब उक्त साहब ने स्पष्ट उत्तर न दिया जब कूक साहब के विषय में बात चीत करने के लिये स्वामी जी के पास आये तब भी कहा कि आप का और हमारा विचार हो जाना चाहिये तब कर्नल ओल्काट साहब ने कहा कि हां करेंगे उसपर भी स्वामी जीने पानाचंद आनंद जी और राव बहादुर पंडित गोपालराव हरी देशमुख द्वारा कहलाया कि आप लोग मुझ से बात चीत करने को आवें नहीं तो हम को प्रसिद्ध भाषण देना होगा तब पानाचन्द आनंदजी ने उन्हों से पूछ के स्वामी जी से कहा कि सन् १८८२ ई० तारीख १७ मार्च को कर्नल ओल्काट साहब बात चीत करने को आवेंगे. फिर भी न आये और मुम्बई से जयपूर में पहुंच कर पत्र लिखा कि मैं नहीं आ सका परंतु मेडम ब्लवेत्स्की आप से बात चीत कर लेंगी. वह भी नहीं आई तब स्वामी जीका भाषण आर्य समाज और थियोसोफिकल सुसायटी के पूर्वा पर विरुद्ध अर्थात् ~~इनकी थियोसोफिकल सुसायटी के पूर्वा पर विरुद्ध आर्याभ~~ इनकी थियोसोफिकल सुसायटी का पूर्व क्या संबंध था अब क्या है इस विषय पर व्याख्यान कराने के अर्थ आर्य समाज मुम्बई ने एक दिन पूर्व छपवाकर प्रसिद्ध करदिया. तो भी मेडम ब्लवेत्स्की ने स्वामी जी के पास आके बात चीत न की तो स्वामी

जी ने व्याख्यान दिया। इसपर आपने थियोसोफिष्ट पत्र में लिखते हैं कि स से बिना कहे सुने स्वामी जी ने व्याख्यान दिया क्या यह बात उन की मूल नहीं है ? उसमें उनकी चिट्ठियां पढ़पढ़ कर सुनाईं कि जिसमें इनका पूर्वापर विरुद्ध व्यवहार का प्रकाश किया और यह भी कहा कि ये लोग कहते हैं कुछ और करते हैं कुछ ऐसा कहते हैं कि हम आर्यावर्त देश की उन्नति करने के लिये आये हैं परंतु उन्नति के बदले इनके काम अवनति कारक विदित होते हैं। देखो स्वामी जीने अनेक बार इसबाद करने से रोका कि तुम थियोसोफिष्ट समाचार में भूत- प्रेत- पिशाच आदि का होना विद्या से असम्भव है और जो बातें विद्या से विरुद्ध हैं उनको मत लिखो क्योंकि यह समाचार इस देश और यूरोप में भी जाता है सब लोग जानेंगे कि आर्यावर्त देश में ऐसी ही व्यर्थ बातों के मानने हारे हैं इस बात को अबतक नहीं माना और पूर्व पत्रों में लिखा था कि जो आप उपदेश करेंगे सो हम मानेंगे क्या इस बात को भी कोई सच कर सका है। ६। जो पत्र कूक साहब को लिखा था वह कर्नेल ओल्काट साहब ने अपने हाथ से लिखा था और स्वामी जी ने लिखवाया। उसमें (मोष्ट डिवायन) अर्थात् कौनसा धर्म अधिक संबंध ईश्वर से रखता है यह स्वामी जी के अभि. प्राय से विरुद्ध लिखा था जब वे गये पश्चात् स्वामी जी ने उस पत्र की नकल बचवाके सुनी तो अशुद्ध विदित हुआ फिर उसी स्वामी जी के पास कर्नेल ओल्काट साहब आये तब वह शब्द कटवा दिया अर्थात् उसके स्थान में ऐसा लिखवाया था

कि जब आप और गुरु से संवाद होगा तब विदित हो जायगा कि कौन सा धर्म ईश्वर प्रणीत है और कौनसा नहीं॰ इतने पर भी उन्हों ने वैसाही अशुद्ध छपवाया क्या ऐसी बात उनको कर्त्तव्य थी। देखिये इन की सुसायटी के नियमों में थियो सो फिष्ट अर्थात् ईश्वर के मानने वाले॰ इस सुसायटी में फ़ीस नहीं लीजाती इस धर्म से कोई धर्म उत्तम न कहना न जानना और सदा कृश्चीन धर्म के विरुद्ध रहना चाहिये जो अजन्मा किसी का बनाया नहीं॰ जिसने यह सब बनाया है उस ईश्वर को मानना। अब सब बातें इन से विरुद्ध अर्थात् ईश्वर को न मानना दश २ रुपये फ़ीस लेना और जिस धर्म का व्याख्यान देते हैं उसी को सब से उत्तम कहने लगजाते हैं क्या यह खुशामदी और भाडों की लीला से कम है। अब विशेष लिखना बुद्धिमानों के सामने आवश्यक नहीं इतने नमूने ही से सब कोई समझ लेंगे परन्तु इस पत्र के लिखने का यही प्रयोजन है कि इनकी सुसायटी और इनके साथ संबंध रखने से आर्यावर्त्त देश की और आर्य समाजों की सिवाय हानि के कुछ भी लाभ नहीं क्योंकि इन लोगों का आन्तर्य्य अभिप्राय क्या है इसको वेही जानते होंगे जो इन्हों का अन्तर्यामी निष्कपटी होता तो ऐसा पूर्वापर विरुद्ध व्यवहार क्यों करते। जब ये भयङ्कर॰ नास्तिक॰ वाक्चल और स्वार्थी मनुष्य हैं ~~जो आर्यावर्त्त देश और स्वार्थी मनुष्य हैं~~ तो आर्यावर्त्त देश और आर्य्य समाज आदि आर्य्यों को उचित है कि इनसे संबंध वा देशोन्नति की आशा न रक्खें देखो अन्य भी थोड़ा सा इनके प्रपञ्च का नमूना प्रथम स्वामीजी का नाम लेते थे

जब स्वामी जी उनके जाल में न फ़से तो अब कुटुम्बी लाल का नाम लेते हैं कि जिसको न किसी ने देखा और न पूर्व सुना था. जो कभी उसके नाम से स्वार्थ सिद्धि न होगी तो गोत्र कुटुम्बीसिंह का नाम धा-र लेंगे। अब कहते हैं कि वह हमारे पास आता बातें करता और चमत्कार दिखलाता है देखो उनका यह फ़ोटो ग्राफ़ है चिट्ठियां औ-र पुष्प ऊपर से गिरते हैं खोई हुई चीज़ निकलती है इत्यादि सब बातें उनकी सच्ची नहीं क्योंकि दूसरे को तो जाने दो परंतु जब प्रथ-म कर्नेल ओल्काट साहब मेडम ब्लवेत्स्की मुम्बई में आये थे तब कुछ वस्त्रादि की चोरी हुई थी उसके लिये बहुतसा प्रयत्न पुलीस आदी से कराया था उन को क्यों नहीं मंगवा लिया आज-ब अपने पदार्थ न मंगवा सके तो शिमले की बात को सच्ची कौन विद्वान् मानेगा जब स्वामी जी और मेडम से मेरठ में योग विष-य में बात हुई थी तब योग शास्त्र और सांख्य की रीति से मैं यो-ग करती हूं कहा तब स्वामी जी ने उस २ शास्त्रोक्त योग की रीत पूछी तब कुछ भी ज़बान न दे सकी अर्थात् जैसे कि मिस्मिरेजम् जैसे बाज़ीकर तमाशे करते हैं उसी प्रकार की इनकी भी बातें हैं. जो योग का थोड़ा भी अभ्यास करता है वह भीतर और बाह-र से सत्यता से भरा हुआ एकसा व्यवहार करता है फ़रफरेब नहीं सो वैसा व्यवहार इनका नहीं है। जो योग विद्या को कुछ भी जानते तो ईश्वर को न मानकर भयङ्कर नास्तिक क्यों बनजा-ते इन के योग विद्या के न जानने में ईश्वर का न मानना ही प्र-माण है इसलिये यही निश्चय है कि इस सुसायटी और इनकी पूर्वापर विरुद्ध बातें विश्वास के योग्य नहीं हैं इसवास्ते इन से

पृथक् रहनाही अत्युत्तम है॥

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वास्तुवन्तु लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्॥ अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा न्यायात्पथः प्रविचलंति पदं न धीराः॥१॥

(मुंबई ओरियंटल प्रेस)

(थ्योसोफिस्टों की लीला)

जो गत लाहोर के शिक्षा सभा होल में हुई इसके मुखिया राय विशुनराय महाशय थे जिन्हों ने प्रथमही से नगर निवासियोंको कुटुम्बी लाल सिंह के चेले की करामात करने का विज्ञापन देदिया था. करामात का नाम सुनतेही इतने मनुष्य एकत्र हुए कि बैठने वा खड़े होने को भी स्थान नहीं था परन्तु लोगों को यही आश्चर्य था कि कर्नेल अल्काट साहब और मेडम ब्लेवट्स्की ने तो कभी कहने पर भी कोई करामात नहीं दिखाई थी. किन्तु यह गुरुमार चेले कहां से उठ खड़े हुए जो आज करामात दिखावेंगे. सुतरांजन राय साहब बहुत कुछ थ्योसोफिस्ट की महिमा कह चुके तब चेले साहब करामात करने को उठे. और राय साहब ने. चेले की उंगली आगे कर कहा कि इसको कोई काटे- यह कदापि न कटेगी. सब उस समय बैठे हुए मनुष्यों में से निर्दयालुता का कार्य जान कोई उसकी उंगली काटने को उद्यत न हुआ जब राय साहब अधिक डींग मारने लगे तब गवर्नमेन्ट कालिजके ठाकुरसिंह विद्यार्थी ने उंगली काटने के दोष का बेदावा लिख

कर तुरंत उसकी उंगली काट डाली अब तो राय साहब आदि थ्योसोफिस्ट बड़े ही लज्जित हुए - बिचारि ये कि ये लोग कैसे करामाती हैं। सारांश कि ये लोग योग विद्या और सिद्धी आदि के बहाने से बड़ा ही अंधकार इस देश निवासियों पर फैला रहे हैं इनके अनुचित और निंदित कामों को देख पंडित उमराव सिंह जी रुड़की निवासी ने बहुत ही उत्तम अंगरेजी में एक लेख प्रकाशित किया है और यूरुप निवासियों ने भी अपनी बिलायत से इनका जैसा कुछ छल, कपट, पकड़कर प्रकाशित किया है उसका कुछ वृत्तान्त नीचे लिखा है उसको देख बुद्धिमान् मनुष्य अच्छे प्रकार सावधान हो सकते हैं॥

(२ लंदन नगर में थियोसोफिस्टों की पोलपाल)

आजकल लंदन में इस मंडली के मुख्य सर्दारों में बड़ा झगड़ा फैल रहा है। मिस्टर सीसी मैसी साहिब ने लंदन की थियोसोफिकल सोसायटी से इस्तीफा देदिया - इसका यह कारण हुआ कि थियोसोफिस्टों के गुरु कुटुम्बी लाल ने (जिनको वे उन महात्माओं में से जानते हैं जो कि अपने सूक्ष्म आकाश शरीर से सदा आकाश में भ्रमण करते रहते हैं और बिना तार या डांक के अपने शिष्यों से बातचीत और पत्र व्यवहार कर सकते हैं) थोड़े दिन हुए कि एक संदेशा भेजा था जिसमें उसने दर्शनशास्त्र का एक बड़ा भारी विषय प्रकाशित किया था उसके साथ अफलातूं हकीम का भी दृष्टान्त था - इसमें एक बड़े

आश्चर्य की बात है कि उक्त संदेशे में ऐसे २ कठिन शब्द थे कि जिनको कोई बड़ा भारी पंडित ही समझ सके. इसके देखने से मनुष्यों को करामात का प्राचीन समय पुनः आता हुआ ज्ञात होता था. परन्तु पश्चात् यह प्रकट हुआ कि कुटुम्ही लाल का यह संदेशा जिसके भेजने में कुछ व्यय न हुआ था. केवल मिस्टर केडल साहिब की उस बिगड़ी हुई स्पीच (व्याख्यान) की प्रति थी कि जो उन्होंने न्यूयॉर्क में दी थी. कुटुम्हीलाल ने तिब्बत से उन बातों के भेजने का व्यर्थ परिश्रम उठाया जो कि अमेरिका के समाचार पत्रों में प्रथम ही मुद्रित हो चुकी थीं. इस विषय में उक्त महात्मा से जो अधिक पूछा गया तो उत्तर गोलमाल और मिथ्या मिले और अल्कोबेले जी को किसी प्रकार से समझा न सके. इसपर मैसी साहब इस मंडली में प्रवेश होने से लज्जित हो बड़े मन मलीन हुए और थियोसोफिस्टों से जिनका आंतरिक अभिप्राय बौध मत के फैलाने का है, पृथक् होगये॥

(ए॰ ओ॰ ह्यूम साहब थ्योसोफिस्ट का)

भ्रम निवारण

॥श्रीयुत देशहितैषी सम्पादक समीपेषु (महाशय) भारतमित्र संवत् १९४९॥

आषाढ़ सुदी ८ गुरुवार के छपे हुए पत्र में किसी ने वेद पर आक्षेप पत्र छपवाया है उस लेख का अभिप्राय यही विदित होता है कि वेद ईश्वर की वाणी और अभ्रान्त नहीं हैं। परन्तु इस प्रश्न

के करने वाले ने प्रश्नमात्र ही किया है अपनी प्रतिज्ञा को सत्य करने के लिये कोई विशेष हेतु नहीं लिखा जो किसी वेद वचन पर भ्रान्तपन दिखलाता तो उसका उत्तर उसी समय दिया जाता जैसे कोई कहे कि यह एक हजार रुपयों की थैली सच्ची नहीं दूसरे ने उससे पूंछा क्या मैं तुम्हारे कहने मात्र ही से थैली को झूंठी मान सकता हूं जबतक तुम झूंठा रुपया इसमें से २ भी निकाल के सिद्ध नहीं कर देते तब तक थैली को झूठ नहीं मानूंगा वैसाही मिस्टर ए० ओ० ह्यूम साहिब और जिसने थ्य के पत्र में छपाया है इन दोनों महाशयों का लेख है यहां उनको योग्य था और है कि किसी एक वा अनेक मंत्रो को अपने अभिप्राय के अर्थ सहित वेद-अध्याय-मन्त्र संख्या पूर्वक लिखकर पश्चात् कहते कि वेद ईश्वर की वाणी और अभ्रान्त नहीं है तो प्रत्युत्तर के योग्य प्रश्न होता. अब भी यदि उत्तर जानने की इच्छा हो तो इसी प्रकार करें नहीं तो कुछ भी नहीं है किन्तु इसमें इतनी बात तो समाधान देने के किसी प्रकार योग्य है सो यह कि वेदों में मत भेद क्यों है अब देखिये यह भी इन की पोल झाल बात है क्योंकि वेदों में किस ठिकाने और किन मन्त्रों में किस प्रकार के मत भेद हैं. हां. विद्याभेद से कथन का भेद होना तो उचित ही है. जो व्याकरण निरुक्त-छन्द-ज्योतिष वैद्यक- राजविद्या गान-शिल्प और पृथ्वी से लेके परमेश्वर पर्यन्त की अनेक विद्याओं की मूल विद्या वेदों में है इनके संकेत शब्दार्थ और सम्बंध भिन्न २ हैं जैसे व्याकरण विद्या से ज्योतिष विद्यादि के संकेत

पी भाषा और पदार्थ विज्ञान पृथक् २ होते हैं वैसे इन सब
विद्याओं के बाचक अर्थात प्रकाश मन्त्र भी पृथक् २ अर्थ
के प्रति पादक हैं यदि इन्ही को मत भेद कहते हैं तो प्रश्न
कर्त्ता का कथन असंगत है और जो दूसरे प्रकार के मत
भेद मानते हैं तो उनका कथन सर्वथा अशुद्ध है. इसलिये
प्रश्न कर्त्ताओं को उचित है कि पूर्वोक्त प्रकार से चारों वेदों
में से जो कोई एक मन्त्र भी भ्रान्त प्रतीत होवे वह आप के
वह आप के पत्र में मिस्टर ए० ओ० ह्यूम साहब छपवावें उन
का उत्तर भी आपही के पत्र में उचित समय में छपवा दिया जायगा
और उनको वेद के निर्भ्रान्त होने के जानने की पक्की जिज्ञासा
हो तो मेरी बनाई ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका को देख लेवें यदि
उनके पास न हो तो वैदिक यंत्रालय प्रयाग से मंगाकर देखें
और जो उनको आर्य्य भाषा पूरा ज्ञान न हो तो किसी सत्य वक्ता
दुभाषिये पुरुष से सुने इसपर जो उनको शंका रहजाय तो मुझ
से समक्ष मिल के जितनी शङ्का हों उन सब का यथावत् समा
धान करालेवें क्योंकि पत्रों से शङ्का समाधान होने में विलम्ब होता
और अधिक अवकाश की भी अपेक्षा है और मुझको वेद
भाष्य के बनाने के काम से अवकाश न मिलने के कारण
विशेष प्रश्नोत्तर करने का समय नहीं है और जो उन्हों ने
यह लिखा कि स्वामी जी ईश्वर वा ईश्वर की प्रेरणा युक्त हों
तो उनका भाष्य निर्भ्रम हो सके० मैं ईश्वर नहीं किन्तु ईश्वर
का उपासक हूं परन्तु वेद मनुष्यों के हितार्थ परमात्मा ने प्र
काशित किये हैं इस अभिप्राय से कि यहां तक मनुष्यों की

विद्या और बुद्धि पहुंच सकेगी और इतने तक कार्य मनुष्य कर सकेंगे इसलिये यावत् मेरी बुद्धि और विद्या है तावत् निष्पक्षपात होकर वेदों का अर्थ प्रकाशित करता हूं और वह अर्थ सब सज्जनों के दृष्टिगोचर हुआ है, होता है और होगा भी. यदि कहीं भ्रान्त हो तो उक्त साहब प्रकाशित करें. बड़े शोक की बात है कि आज पर्यन्त एक भी दोष वेदभाष्य में से कोई भी नहीं निकाल सकता है फिर भी इसका भ्रम दूर नहीं हुआ ऐसी निर्मूल शङ्का कोई भी किया करे इस से कुछ भी हानि नहीं हो सकती और सत्यार्थ होने ही से वेदों का निर्भ्रान्तत्व यथावत् सिद्ध है. यदि इस मेरे बनाये भाष्य में मिस्टर ए० ओ० ह्यूम साहब को भ्रम हो तो इसमें भ्रान्तमत्व किसी मन्त्र के भाष्य द्वारा आप के पत्र में छपा देवें मैं उत्तर भी आ-पही के पत्र द्वारा दूंगा और जो थियोसोफिस्ट के अध्यक्ष ऐसी बातें करें इसमें क्या आश्चर्य है क्योंकि अनीश्वर वादी बौद्ध मतावलम्बी होकर भूत प्रेत और चुटकलों के माननेवाले हैं. बड़े शोक की बात है कि सर्वथा विद्या सिद्ध परमात्मा को न मानकर भूत प्रेत मत ॥——— कोरी कं से-कर और भोले मनुष्यों को फंसा अपने को सुधारक वाले मानना यह कितनी बड़ी अनुचित बात है इनको नास्तिक मत जो कि ईश्वर को न मानना है वही प्रिय लगता है परंतु इसमें इतनी ही न्यूनता है कि भूत प्रेतों ने इन को घेर लिया सच है. जो सत्य ईश्वर को छोड़ेंगे वे मिथ्या भ्रम जाल भूत प्रेतों और बंध्या पुत्र वत् कुहुकी लाल आदि में न फसेंगे

बहुत से समाचारों में छपवाते हैं कि इतने सौ इतने हजार मनुष्यों को मिस्टर एच० ए० कर्नेल आल्काट साहब ने रोग रहित किया यदि यह बात होती मुझको क्यों नहीं दिखलाते और मनवाते और मेरे सामने कि जिस को मैं कहूं उस एक को भी निरोग करदें तो मैं थियोसाफिस्टों के अध्यक्ष को धन्यवाद देऊं० इसमें मुझको निश्चय है कि जैसे एक थियोसाफिस्ट दम्भ के मारे लाहौर में अंगुली कटवाके अङ्गभङ्ग होगया कहीं ऐसी गति मेरे सामने इनकी न होजावे और करामात कुछ भी काम न आवेगी मैं प्रसिद्धी से कहता हूं कि यदि उनमें कुछ भी अलौकिक शक्ति वा योगविद्या हो तो मुझको दिखलावें॥ मैंने जहां तक इनकी लीला सिद्धि और योग विषय देखी है वह मानने के योग्य नहीं थी अब क्या नई विद्या कहीं से सीख आये? मुझको तो यह विषय निकम्मा आडम्बर रूप दीखता है०

अलमति विस्तरेण बुद्धिमद्वर्य्येषु॥ मिती श्रावणवदी ४ संवत् १९४० वि० स्थान जोधपुर (दयानंदसरस्वती)

भिन्न गाणों

यह लीला इन थ्योसोफिस्टों की है जिसपर हमारे भाई भ्रम रहे हैं क्या यह थोड़ी हानि की बात है? तो बस ऐसों ही के सुखी होने के अर्थ ऊपर लिखे अनुसार श्रीमान् परम कारुणिक श्री स्वामी जी महाराज ने यह सब परिश्रम किया और उस दिन से बराबर सर्वत्र सब को अपने व्याख्यानों

में भी अच्छे प्रकार सुचेत करते रहें। पाठक जन थोड़े दिनों की बात है तब कर्नेल ओल्कार साहब की यह प्रशंसा सुन कि वे बड़े बड़े हर प्रकार के दीर्घ रोगियों को क्षण मात्र में छू छू करकरा के चट चंगा कर देते हैं श्रीमान् मृत काश्मीराधि पतिने उन को अपने यहां बड़े सन्मान से बुलाकर रक्खा परन्तु वहां कोई एक भी मंत्र साहब बहादुर का काम न आया हार कर बहुत दिन बाद यह कहकर कि महाराज का विश्वास ठीक नहीं छुपकर भाग गए इतने पर भी वे और उनके अनुयायिगण यदि लज्जित न हों तो क्या हो- कुछ हो- विद्वानों को ऐसी दशा में जो कुछ कि करना अवश्य होता है वह हमारे श्रीमान्ने किया अग्रे हरेच्छा बलीयसी॥

इति श्रीमत्परम हंस परिव्राजकाचार्य्य वर्य्य श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती दिग्विजयार्कीय तृतीय खंडे थ्यो सो फिस्ट संसर्ग विमोचनं नाम तृतीयो मयूखः॥

जातिर्यातु रसातलं गुणगणस्तस्याप्यधो गच्छतां
शीलं शैलतटात्पतत्वभिजनः संदह्यतां वन्हिना
शौर्ये वैरिणि वज्रमाशु पततामर्थोऽस्तु नः केवलं
येनैकेन विना गुणास्तृणलवप्रायाः समस्ता इमे १

मुन्शी जीने आगे लिखे अपने विज्ञापन आदि लेखों में श्री जी के पूर्वोक्त वक्तृत्व आदि का आशय ले२कर उत्तर प्रकाशित किया है इसलिये यहां वक्तृत्व का संग्रह व्यर्थ समझ छोड़ दिया है जिसको उसका देखना अवश्य हो वह अजमेर आर्य समाज का देश हितैषी नामक मासिक पत्र अंक ७ मास कार्त्तिक संवत् १९३९ में देख लेवे इसी प्रकार मुन्शी जी की भी एक आगे नाम लिखी पुस्तक भी छपी है ॥

मुन्शी इन्द्रमणि जीका दिया
छपा विज्ञापन

प्रगट हो कि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी की सम्मति से जगन्नाथ दास की प्रश्नोत्तरी के खंडन में एक व्याख्यान सर्वथा मिथ्या देश हितैषी नामक मासिक पत्र अजमेर में एक उचित वक्ता के नाम से मुद्रित छपा है और उसमें प्रायः मेरा नाम भी निन्दा के साथ लिखा है उसका उत्तर भी शीघ्र ही मासिक पत्र के द्वारा जो कि हम धर्माधर्म के निर्णय में प्रचरित करना चाहते हैं मुद्रित होकर सज्जनों के अवलोकनार्थ प्रकाशित किया

जायगा वरन उक्त व्याख्यान के अंत में जो यह लिखा है कि जगन्नाथ दास और इन्द्रमणि की प्रतिज्ञा से विरुद्ध करना आदि अन्यथा व्यवहारों को जो कोई सज्जन पुरुष जानना चाहे वो आर्य्य समाज मेरठ के लाला राम शरणदास आदि भद्र पुरुषों से पूंछ देखे कि अन्य मार्गियों के विवाद विषय की शान्ति कारक व्यवहार प्रसंग में इन्होंने कैसा २ विपरीत व्यवहार किया है मैंने अद्य पर्यन्त उस विषय को स्वामी जी की अति निन्दा का कारण जान कर मुद्रित नहीं कराया परन्तु जब कि वे उलटा चोर कोतवाल को डांडे इस दृष्टान्त के सदृश अब मेरी मिथ्या निन्दा लोगों से करने और छपवाने लगे तब उस विषय का प्रकाशित कर देना अत्यावश्य जाना विदित हो कि जिस समय मुरुपर मुसल्मानों के झगड़े में ५००) रु० दंड हुआ तो स्वामीजी ने समाजों को पत्र लिखे कि मुन्शी इन्द्रमणि की सहायता के लिये चंदा करके हमारे (८) तथा लाला राम शरण दास सभासद आर्य्य समाज मेरठ के पास भेजो यहां से एकत्र करके मुन्शीजी के पास भेजा जायगा जिससे कि वह उक्त दंड क्षमा होने के लिये अपना मुकद्दमा लड़ावें स्वामी जी के लेखानुसार लाहौर अमृतसर रुड़की फर्रुखाबाद फीरोज़पुर शाहजहांपुर औरंगाबाद दार्जिलिंग गुरदासपुर जेहलम मुल्तान बटाला

(८ नोट) समाज फर्रुखाबाद के नाम आये हुए इस विषयक पत्र में ऐसा लेख नहीं था किन्तु यह था कि रुपया मेरठ भेजो वहां से उसकी उचित व्यवस्था मुंशी जी के कार्य में होगी यदि कुछ धन बचेगा तो दूसरे कोई इसी प्रकार के काम में लगाया जावेगा और न्यूनता होगी तो ऋण लेकर पूरा करेंगे

आदि के सज्जनों ने यथोचित द्रव्य इकट्ठा कर के स्वामी जी तथा लाला रामशरण दास जी के पास भेजना प्रारंभ किया जब कि उक्त मुकद्दमे का अपील जजी मुरादाबाद ही में दायर या तो मुझको ६००) मिस्टर हिल साहब बैरिस्टर हाई कोर्ट के पास भेजने की आवश्यकता हुई तब मैं ने आप मेरठ जाकर लाला रामशरण दास से कहा कि ६००) रु० बैरिस्टर साहब के पास भेजने हैं जिसमें ४००) रु० तो मेरे पास हैं २००) चंदे के रुपये में से जो तुम्हारे पास जमा हुआ है दे दीजिये लाला साहब ने उत्तर दिया कि यहां से तो अभी तुमको रु० न मिलेगा वहीं से कुछ यतन कर के भेज दो फिर मैंने उन से प्रश्न किया कि अब तक आप के पास कितना रुपया जमा हुआ है तो उत्तर दिया कि समाज से बतलाने की आज्ञा नहीं है धन्य है जिसकी सहायता के लिये सज्जनों ने धन भेजा उसको देना क्या यह भी न बतलाया जाय कि इतना द्रव्य है निदान मैं वहां से अपने स्थान को चला आया और एक सज्जन की सहायता से बैरिस्टर साहब को ६००) रु० भेज दिये फिर जब जजी मुरादाबाद से ५००) जुर्माने में से ४००) रु० जमा होकर १००) रु० शेष रहे तब लाला रामशरण दास जी मुरादाबाद आये थे मैंने उन से कहा कि अब हाई कोर्ट में अपील करना है रुपया भेजिये तब लाला साहब ने वही उत्तर दिया कि वहां से तो रुपया न मिलेगा यहीं से यत्न करके हाई कोर्ट का अपील कर दीजिये फिर लाला राम शरण दास जी अपने स्थान को चले गये और मैंने रुपये के लिये कईबार स्वामी जी को तथा लाला

राम शरण दास जी को लिखा मुझे दोनों जगह से कुछ उत्तर न मिला तब मैंने भारतमित्र कलकत्ते में यह छपवाया कि जिन सज्जनों को मेरे मुकद्दमे में सहायता करनी हो वह जो देना चाहैं वह मेरे ही पास भेजें अन्य जगह का भेजा हुआ हुआ मुझ को नहीं मिलता फिर स्वामी जी को लिखा कि मुकद्दमे के लिये आप के तथा राम शरण दास के पास धन जमा हुआ और हम को नहीं मिलता यदि आप का विचार ऐसा ही है तो अब लिख दीजिये हम हाई कोर्ट का अपील न करें इस लिखा पढ़ी के उपरान्त स्वामी जीने ६००) रु० राम शरणदास जीही के पास रहा (६) हां जिन महाशयों ने मेरे

(नोट ६) यहां यह प्रश्न होता है कि लाला राम शरण दास जी खान्दानी लक्षाधीश रईस मेरठ जो सर्वत्र प्रसिद्ध थे सो क्या मिथ्या है और वे दो चार हजार रुपया वाम हस्त से फेंक देने की लियाकत रखते थे वा नहीं यदि मुन्शी जी इसको मिथ्या कहें तो उनकी प्रतिष्ठा मेरठ आदि नगर और यावत समाजों में अधिक तर रही और उनकी मृत्यु पर क्यों इतना शोक लोगों ने किया तथैव सर्कार ने उनका इल्म का क्या समझ कोर्ट किया है — इसी प्रकार द्वितीय प्रश्न यह भी होता है कि श्री स्वामी महाराज "समलोष्ठाश्म कांचन" थे वा नहीं यदि नहीं थे तो उनके किन गुणों पर यह समस्त विश्व अबतक रुदन कर रहा है और क्या समझ यथा नाम तथा गुण श्री १०८ महाराणा सज्जन सिंह ऐसे महाराजाधिराजों ने उनको सन्मान पत्र दिये इस भ्रम के मिटाने को प्रत्येक पुरुष को आज अधिकार है कि वह उदय पुरस्थ श्री युत पंड्या मोहन लाल जी आदि सत्पुरुषों से ज्ञात कर लेवे कि प्रशंसित महाराणा जी अपने यहां के एक लिंग जी का आधिपत्य जहां लाखों ही का संचित और हजारों की जागीर है स्वामी जी को देने की बड़ी आरजू रखते थे उस पर एक दिन उनको उनका अनौखा उत्तर सहन करना पड़ा है वा नहीं — इसी प्रकार तीन हजार का जो अभियोग लिखने पर संवत १८९ कि करनी में श्रीमान ने इस ग्रंथ कार का मुंह सफेद कर दिया था न अब मालूम लोग थोड़े ही दिन पीछे मुंशी जी के परम घृणित चंदे में अन्य हो जाय सत्य कर जान भय है परन्तु महात्मा का कथन है कि स्वार्थी दोषं न पश्यति अथ वा विनाश काले विपरीत बुद्धि ॥

पास धन भेजा वह मेरे पास पहुंचा और उन्हीं के सहाय से इस मुक़द्दमे का काम चला— यहां यह विषय संक्षेप से निवेदन किया गया विस्तार पूर्वक फिर प्रकट किया जायगा अब बुद्धिमान् न्याय करें कि जो धन सज्जनों ने मेरी सहायता के निमित्त स्वामी जी तथा रामशरणदास जी के पास भेजा और उन्हों ने वह संपूर्ण मुझ को न दिया किन्तु आप उस के स्वामी बन बैठे तो अन्य आर्यों के विवाद विषय की शान्ति कारक व्यवहार प्रसंग में स्वामी जी और राम शरण दास जी ने विपरीत व्यवहार किया है वा मैंने॥

इन्द्रमणि मुरादाबाद॥

श्रीयुत देशहितैषीसम्पादकसमीपेषु

मान्यवर नमस्ते— विदित होय कि एक पत्र मुन्शी इंद्रमणि जी के विज्ञापन रूप मेरे पास आया इसका उत्तर बहुत लम्बा है परन्तु इस समय इस पत्र के थोड़े से उत्तर को आप अपने पत्र में स्थान देके मुझको कृतार्थ कीजिये। यदि मुंशी इन्द्रमणि जी अपने लेखानुसार सच्चे हों तो उस व्यवहार में अन्यत्र से जितना आय व्यय हुआ हो आपके पत्र (दे० हि०) में छपवा के प्रसिद्ध करें और इसी प्रकार लाला राम शरण दास जी भी करें। जिसके देखने में सज्जन लोगों को स्वयं सत्यासत्य का विचार होजायगा। अर्थात् समझ लेंगे। और उस हिसाब के नीचे यह भी लिखा हो कि जिस २ भद्र आर्यजन ने मुन्शी जी और मुसल्मान मुरादाबाद के झगड़े में जितने २ रुपये जिस २ के पास भेजे होंय

और जिस २ की रसीद भी उनके पास हो नाम लेख पूर्वक वह २ देश हितैषी पत्र सम्पादक के पास भेजें और उस २ के पत्र को आप अपने पत्र में छापकर प्रसिद्ध कर दिया करें जिससे सत्य और असत्य सब साम्हने प्रकाशित होजाय इसमें सत्य तो यह है कि मुन्शी जी जो कूंठा अपराध स्वामी दयानन्द सरस्वती जी और लाला राम शरण दास रईस मेरठ के ऊपर आरोपित करते हैं वह सब अपराध मुन्शीजीही का है क्योंकि जब मुन्शीजीपर मेजिस्ट्रेट मुरादाबाद ने ५०० रु० दंड किये थे उसके पश्चात् मुन्शी जी मेरठ में आये (जहां उस समय स्वामी जी भी उपस्थित थे) और कहा कि यह विवाद सब वेद मतानुयाइयों के ऊपर समझना चाहिये न केवल मुझपर इसपर स्वामी जी और अन्य सब सज्जनों ने कहा कि यह ठीक है क्योंकि मुन्शी जी ने वेद मत की रक्षा के लिये इतना बड़ा परिश्रम किया है इस लिये इस समय इस मामले में सब वैदिकों को सहाय करना उचित है इसपर सब की यही सम्मति हुई कि इस बात के लिये एक सभा नियत हो और चंदा इकट्ठा करें जिससे उसके आय व्यय का हिसाब वह सभा रक्खे और मुन्शी जी को उसमें से इतना धन दिया जाय कि जितना खर्च उचित होना होय अन्त को यह सभा मेरठ में नियत हुई और मुन्शी जी से कहा कि जो कोई आप के पास रुपये भेजे उसको आप भी इस सभा के कोषाध्यक्ष लाला राम शरण दास जी के पास भेज दिया करें और उसके आय व्यय की परताल (जांच) यह सभा किया करे और हिसाब भी लेवे इन सब बातों को मुन्शीजीने भी स्वीकार

स्वामी जी आदि के सन्मुख किया थ और वह भी उसी समय निश्चय हुआ था कि सिवाय उस सभा के सभासदों के दूसरे से उस धन का आय व्यय व संख्या प्रसिद्ध तब तक न करनी चाहिये कि जबतक यह कार्य पूरा न होजाय- यदि चंदे का धन कम आवे और खर्च अधिक करना होय तो किसी योग्य धनाढ्य पुरुष से सभा उधार लेकर कार्य्य करे इसी लिये लाला रामशरण दास जीने जमा हुए धन की संख्या मुन्शीजी को नहीं बतलाई थी! क्योंकि सभा की आज्ञा बतलाने की नहीं थी इस गुण को मुंशी जीने दोष समझा! धन्य है मुन्शी जी की बुद्धिमत्ता को! इससे सब सज्जन लोग समझ सक्ते हैं कि यह मुंशी जी को संख्या न बतलाने में लाला रामशरण दास जी का दोष है? वा इसपर क्रोधित होकर यथा तथा कुवाच्य कहने लिखने में मुन्शी इन्द्रमणि जी का- इस विपरीत व्यवहार का कारण यह विदित होता है कि जब इधर उधर से बहुत धन मुन्शी जी के पास आने लगा तब लोभ के वश में होकर जो पूर्व कृत नियमानुसार अर्थात् जितना धन मुंशी जी के पास आवे वह मेरठ सभा के कोषाध्यक्ष लाला रामशरण दास जी के पास तो भेजना दूर रहा किन्तु जब लाला रामशरण दास जीने कई वार पत्र भेजकर हिसाब मांगा तो मुंशी जीने मौन साध के हिसाब नहीं दिया- तब लाला रामशरण दास जीको निश्चय हुआ कि मुन्शी जी के मन में कुछ अन्य आशय है इस बात के निश्चयार्थ लाला श्याम सुन्दर रईस मुरादाबाद के पास लाला राम शरण दास जी ने पत्र भेजा कि मुन्शी जी

से हिसाब पूंछकर मेरे पास भेजो उनको भी मुंशी जी ने हिसाब नहीं दिया किन्तु इस सर्व वैदिक मत के परमार्थ धन को अपना निज धन ही समझ लिया। तब से लाला रामशरण दास जी ने मुन्शी जी को धन देना बंद किया और स्वामी जी को पत्र द्वारा विदित किया तब स्वामी जीने उत्तर दिया कि इस समय इस बात के होने से कार्य में विघ्न होगा कार्य होने दीजिये और ६०० रु० जो मांगते हैं दे दीजिये तब उन्हों ने देदिये और इतने अधिक धन मुंशी जी को कितना दिया और कितना लाला रामशरण दास जी के पास जमा रहा यह बात हिसाब छपने से सब को प्रसिद्ध हो जाय गी और स्वामी जीने उक्त लाला श्याम सुन्दर कोठी वाले रईस मुरादाबाद के पास पत्र भेजा कि मुन्शी जी से हिसाब लेकर लाला रामशरण दास जी के पास भिजवा दीजिये उन्हों ने उत्तर दिया कि मुंशी जी हिसाब नहीं बताते (१०) धन्यरे! धन! तेरे में बड़ी आकर्षण शक्ति है तू बड़ों २ को भी धर्म से डिगाकर नीचे गिरा देता है। फिर जब देहरादून से आते समय मेरठ के स्टेशन पर लाला रामशरण दासादि से मेल हुआ तब मुन्शी जी के विषय की बात सुन बड़ा आश्चर्य मान के उन से (स्वामी जी ने) कहा कि मैं कोयल इसी लिये ठहर के वहां मुंशी जी को बुलाकर समझा दूंगा

(नोट १०) क्यों ये मुरादाबाद के परम सुप्रसिद्ध रईस जी भी मुंशी जी के साथी न होसके इसका सत्सुतथ विचार करेंगे तो यही सिद्ध होगा कि धार्मिक पुरुष धर्मात्मा के ही साथी हुआ करते हैं बल्कि थोड़े दिन पहिले ये इनके पक्षके प्रकार से साथी रहे और वहां के आर्य्य समाज के भारी भार वाहक हैं॥

स्वामी जीने कोयल में आकर मुन्शी जी को बुलाने के लिये तार दिया उसके उत्तर में मुंशी जी ने तार में खबर दी कि मैं बीमार हूं नारायणदास प्रयाग को गया है अर्थात् मैं नहीं आसक्ता! पश्चात् स्वामी जी ने आगरे में आकर मुन्शी जी के पास पत्र भेजा कि यदि यह बात सत्य है तो इसमें आपकी बड़ी निन्दा होगी आप यहां शीघ्र आइये॥ मुन्शी जी ने बहुत क्रोधित होकर असभ्यता की बातें जोकि उनके लिखने योग्य न थीं लाला रामशरणदास जी की निंदा पूर्वक बहुतसी लिखीं और यह भी उस पत्र में लिखा कि आप लाला रामशरणदास जीसे हिसाब मंगवाइये तब स्वामी जीने लाला रामशरणदास जी को लिखा कि आप हिसाब लिखकर मेरे पास यहां भेज दीजिये जब मैं आप के हिसाब को मुंशी जी को दिखा दूंगा तब वे भी अपना हिसाब देंगे इसके थोड़े ही दिनों के पश्चात् मुंशी जी तथा लाला जगन्नाथ दास जी आदि मथुरा होते हुए आगरे में स्वामी जी के पास आये जब स्वामी जी ने उनसे कहा कि हिसाब लाये हो या नहीं तब मुंशी जी ने कहा कि हां लाये हैं परंतु पहिले लाला रामशरणदास जी का हिसाब मंगवा लो तब हम भी दिखा देंगे तब स्वामी जी ने कहा कि जब आप के पास हिसाब है तो क्यों नहीं दिखलाते तब पुनः मुंशी जी और लाला जगन्नाथदास जीने कहा कि उनका हिसाब आने दीजिये तब दिखलावेंगे- पाठकगणो! परमेश्वर की कृपा और लाला रामशरणदास जी की सच्चाई से दूसरेही दिन

मेरठ से हिसाब आगया स्वामी जीने मुंशी जी तथा लाला ज
गन्नाथ दास को दिखलादिया पश्चात् स्वामी जीने कहा कि
अब तो तुम दिखलाओ. तब मुंशी जी के कहने से लाला
जगन्नाथ दास जीने बेग को हाथ लगाया इधर उधर हाथ
फेरफार कर कहा कि मुंशी जी वह हिसाब का कागज़ तो
मैं मुरादाबादही में भूल आया! सभ्य गणों! देखो! क्या
मिली हुई गुरु चेले की भक्ति है तब स्वामी जीने कहा किजि
तनाही कंठ से लिखवाइये तब मुंशी जी लिखवाने लगे अनु
मान है कि २०००) दो हजार तक का हिसाब तो लि[illegible]
और कहने लगे कि अब मुझे याद नहीं है हम मुरादाबा
द पहुंच कर शीघ्र हिसाब भेज देंगे सो आजतक नहीं
भेजा. अब आप लोग इन बातों से बिचार लेंय कि मुंशी
जी सच्चे हैं वा लाला राम शरण दास जी!!! फिर मुंशीजीओ
र लाला जगन्नाथ जी व्यर्थ वितंडा वाद करने लगे और क-
हा कि २५०) लाला वल्लभदास जी ने भेजे थे सो इस हिसाब
में जमा क्यों नहीं तब स्वामी जीने कहा कि वे रुपये तो गुर
दासपुर से मेरे नाम आये थे मैंने लाला रामशरण दास
जीको दिये थे न जाने उन्हों ने जमा क्यों नहीं किये इसका
समाचार मैं लिखकर मंगवा दूंगा– स्वामी जीने उसीदिन
लाला रामशरणदास जी को पत्र लिख उत्तर मगवाया तब
उन्हों ने लिखा कि यह मेरे मुंशी की भूल से लाहौर के रुप
यों के साथ गुरदासपुर के भी २५०) जमा लिखे गये हैं अ-
र्थात् जिसदिन २५०) लाहौर समाज से आये थे उसीदिन २५०)

के नोट आपने भी दिये थे भूल से ४०० लाहौर समाज के नाम जमा किये हैं अब मुंशी जी इसका निश्चय करें वा करावें अर्थात् इन २५०) रु. के सिवाय किसी ने स्वामी जी के पास रुपया नहीं भेजा यदि भेजा हो तो जिसके पास स्वामी जी के हस्ताक्षरी रसीद होगी भलेही प्रसिद्ध से छपवा देवै किन्तु स्वामी जी की कुछ इस में विपरीत बात हो तो स्वामी जी प्रतिज्ञा पूर्वक कहते हैं कि सिवाय २५०) के मेरे पास एक कौड़ी भी किसी की नहीं आई क्योंकि जो कोई स्वामी जी से पूछता वा पत्र भेजता था तो स्वामी जी यही उत्तर देते थे कि जो भेजना हो सो लाला रामशरण दास जी के पास मेरठ सभा को भेजो क्योंकि उसी सभा के आधीन यह सब प्रबंध है - इस उत्तम प्रबंध को तोड़ने वाले मुंशी जी हैं कि जिन्हों ने भारत मित्रादि समाचारों में अपना मतलब सिद्ध करने के लिये अंड बंड छपवा कर स्वप्रयोजन सिद्ध किया और अपनी प्रशंसा करबट्टा लगाया शोक है यह धन बुरी बला है जो बड़े२ चतुरों को भी फंसा लेती है उसी दिन स्वामी जी ने मुंशी जी से कहा कि हिसाब ठीक २ मेरठ सभा में भेज दीजिये जो एक नियम हुआ है उसका तोड़ना अच्छा नहीं आप पूर्वकृत नियमानुसार बर्त्तिये जिससे प्रीति पूर्वक सब सहायक रहें इसी में अच्छा है विरोध होना अच्छा नहीं तब तो मुंशी जी और लाला जगन्नाथ दास जी दोनों क्रोधाविष्ट होकर कहने लगे कि हम से हिसाब लेने वाला कौन है इसके मालिक हम हैं हमारे पर यह सब मामला चला है हमारे

नाम चंदा जो आता है हमाराही है और लाला जगन्नाथदास जी बोले कि यदि आप से कोई वैदिक यंत्रालय का हिसाब पूंछे क्या आप देंगे! स्वामी जी बोले कि कल्ह लेते हो वह आजही लो यहां कोई बात गुप्त नहीं किन्तु जब कोई आर्य समाज का प्रतिष्ठित सभासद हिसाब लेना चाहे उसको कोई अटकाव नहीं फिर स्वामी जीने मुंशी जी को एकान्त में लेजाके समझाया कि ऐसीबात करना आप को उचित नहीं है एक तो वह बात जो मेरठमें आपने कही थी कि यह सब वैदिक धर्म वालों का मामला है मेरा अकेले का नहीं और इससे विरुद्ध आज की बात है कि मेरेही अकेले का मामला आदि है॥ सुनिये मुंशी जी यदि मैं आपको पहिले से ऐसा जानता तो आप के साथ एक क्षण मात्र भी न ठहरता और आप का कुछभी सामर्थ्य नहीं था कि अकेले इस प्रकार सहाय प्राप्त कर सकते। परन्तु मैं तो उसी बात को समझा हूं कि यह सब वैदिक मतानुयाइयों के साथ की बात है। तबतो मुंशी जी कुछ शान्त हुए- पीछे स्वामी जीने कहा कि अस्तु अब शेष कार्य आप सिद्ध कीजिये और प्रयाग में दो पुरुषों का नाम लिखवाया कि उनकी सम्मति से सब काम कीजियेगा और मुरादाबाद पडंच के हिसाब मेरठ में शीघ्र भेज दीजियेगा मुंशी जीने कहा कि जातेही भेज दूंगा सोभी न किया और न हिसाब भेजा करते और भेजते तो तबजब उनके मन में शुद्ध भाव होता

प्रयाग में भी गुप्त व्यय कर कराके (जैसा कि मुरादाबाद जजी में व्यय व्यवस्था हुई थी) अपनी नियत का फल पाकर घर चले आये फिर भी न जाने किस २ सज्जन पुरुष के पुरुषार्थ से श्रीमान् गवर्नर जनरल साहब बहादुर से प्रार्थना करके १०० रु० का दंड भी माफ कराया गया. यदि अब भी मुंशी जी अपनी बात को सच्चा करना चाहें तो मुसलमानों के साथ के मामले में जहां २ से जितना २ धन जिस २ ने भेजा हो उन सब का धन नाम ठिकाना आदि लिखें और जितना २ जिस कार्य में व्यय हुआ है वह प्रसिद्ध सब समाचारों में छपवा दें और जितना धन उस मामले के विषय में व्यय से शेष रहा हो उसको मेरठ सभा में भेज देवें क्योंकि जो मेरठ सभा का वह विचार निश्चित हुआ था कि यदि मुंशी जी के मामले से चंदे का धन बचे तो उसका क्या किया जाय इस पर सब की यही सम्मति हुई थी कि उस धन को ।।) आने ब्याज में किसी धनाढ्य के पास रक्खा जाय और जब अन्य मतावलम्बियों के साथ वैदिक आर्य्यों का बिबाद राज न्याय घर में चले तब उसी में से इसका व्यय किया जाय अन्यत्र नहीं क्योंकि यह धन इसी बात के लिये इकट्ठा किया जाता है और जैसा आज मुंशी जी पर कष्ट पड़ा है सम्भव है कि अन्य पर भी कभी न कभी आ पड़े इसलिये इस धन की स्थिरता और उन्नति सदा करते जाना चाहिये — परंतु पाठकगणों ! इस महोपकारक आर्य्य को मुंशी जी के लोभ ने बढ़ने न दिया अब बुद्धिमान लोग विचार लेवें कि इसमें स्वामी जी और लाला राम

षणदास जीका अन्यथा व्यवहार है वा मुन्शी इन्द्रमणिजीका अधि
क लिखना बुद्धिमानों के सामने आवश्यक नहीं क्योंकि सज्जन
थोड़ेही लेख से बहुत समझ लेते हैं अलमिति विस्तरेण बुद्धि
मद्वर्य्येषु ॥ निधि रामाङ्क चन्द्रे ऽब्दे पौष मासे सिते दले प्रति पत्सौम्य
वारेह्नि पत्र मेतद लेखिषम् ॥१॥ सम्वत् १९३९ पौष शुक्ले १ बुध
वासरे (वही आप का परम मित्र उचित वक्ता)
दे० हि० हमने अपने नियमानुसार दोनों महाशयों के पत्र यथाव
त् प्रकाश कर दिये अब हम इतना और कह सक्ते हैं कि जिस प्र
कार से हमारे पत्र प्रेरक "उचित वक्ता" ने जो मुन्शी जीके प्रति
लिखा है कि "अपनी बात को सच्ची करने के लिये इस मामले
में जहां २ से जितना २ रुपया जिस २ ने भेजा हो उनका नाम धन
ठिकानादि सहित लिखें और जितना जिस २ कार्य्य में खर्च हुआ
हो प्रसिद्ध सब समाचारों में छपवा दें इत्यादि" वास्तव्य में
यह बहुत उत्तम बात है और ऐसा करने से मुन्शी जी को क
भी लेश मात्र भी कलंक नहीं लग सक्ता और वैसे मुन्शी जी इ
स से विरुद्ध अपना अमूल्य समय वृथा खोय बादानुबाद स
माचारों के कालम काले भलेही किया करो कभी इस कलंक से
नहीं बच सक्ते और यह हम सत्य कहते हैं कि जो सच्चा होता
है उसको टाल मटोल करने से क्या प्रयोजन। यदि मुन्शी इन्द्रम
णि जी सच्चे हैं तो अपना हिसाब समाचार पत्रों द्वारा प्रकाशित
कर अपनी सत्यता का परिचय दिखावें अन्यथा व्यवहार करने
से मुन्शी जी के लिये अच्छा फल नहीं निकलते दीखता दूसरे
अब हम श्री स्वामी दयानंद सरस्वती जी महाराज और लाला

राम ध॰ ...दास जी से भी सविनय प्रार्थना करते हैं कि यदि हमारे पत्र प्रेरक उचित वक्ता का यह कथन सत्य २ है तो आप महाश- योंको भी उचित है कि जितना २ रुपया मुन्शी इन्द्रमणिजी के मुकद्दमे के विषय का आप लोगों के पास ...आया है उसको किसी समाचार पत्र द्वारा प्रकाशित कर इस विषय का ...निर्णय करना योग्य है और जब यह निश्चय होजाय कि इतना रुप- या मुन्शी जी की सहायता में आया और (इ- तना खर्च होकर इतना बचा उस बचे हुए धनको उसी निय मानुसार (जो मुन्शी जी आदि ने मेरठ समाज में स्वीकार किया था) किसी महाजन की कोठी में ॥) के सूदपर दे दिया जाय और जब जब अन्य मतवालों से वैदिक मतावलम्बियों का झगड़ा पड़े तो इसी रुपये से सहायता ली जाया करे ॥

(सम्पादक देश हितैषी)

(विज्ञापन)

दिया हुआ मेरठ समाज का

विदित हो कि जो विक्रम सम्वत् १९३७ तदनुसार सन् १८८० में मुंशी इन्द्रमणि जी रईस मुरादाबाद का मुसल्मानों से विवाद होकर मुंशी जी पर ५०७ रु॰ मजिस्ट्रेट मुरादाबाद ने जुर्माना किया तब उसपर आर्य जनों ने उस मामले को अपना समझ सहाय की थी वह मामला तमाम हो चुका था परन्तु मेरठ में उस समय इसके लिये यह नियम नियत किया गया था कि मुन्शी जी के मुकद्दमे में जितना धन बचे वह ...के प्रति-

स्थित साहूकार के यहां ।।) ब्याज पर रक्खा जाय जब कभी ऐसाही किसी अन्य वैदिक धर्मावलंबी आर्य्य का अन्यमत वादियों से धर्मविषय का विवाद होके कचहरी में मुकद्दमा जाय तब उसकी सहायता इस धन से हो और मुंशी जीने भी स्वामी दयानंद सरस्वती जी आदि के सन्मुख मेरठ में स्वीकार कर लिया था परन्तु शोक का विषय है कि उक्त मुन्शी जीने ऐसे उत्तम नियम को तोड़ा अब हिसाब नहीं देते और उलटा चोर कोतवाल को डांडे इसके सदृश लाला राम शरण दास रईस मेरठ और स्वामी दयानंद सरस्वती जी पर मिथ्या दोषारोपण करते हैं इस कारण मेरठ आर्य्य समाज को आय व्यय का हिसाब प्रकाश करना पड़ा जिससे मिथ्या भ्रम जैसा मुन्शीजी को हुआ वैसा किसी अन्य आर्य्य पुरुष को न हो और मुन्शी इन्द्रमणिजी का सत्यासत्य यह हिसाब और मुन्शीजी के विज्ञापन को देख कर सब पर प्रगट हो जायगा. मुन्शी जी लिखते हैं कि बहुत आर्य्य जनों ने मेरे मुकद्दमे की सहाय में मेरठ समाज और स्वामी दयानंद सरस्वती जी के पास धन भेजा था उसमें केवल ६००) रु० मेरे पास पहुंचे बाकी उनके पास रहे परंतु इस मेरठ के मितीवार क्रमानुसार हिसाब देखने से निश्चय होता है कि मुन्शी जीके पास उन्हींके मामले में ६६३।।।=)।।। मेरठ समाज से पहुंचे हैं न जाने मुन्शी जीने केवल ६००) रु० पाना क्यों अपने विज्ञापन द्वारा प्रकाश किये इस बात से तो मुन्शी जी की अति असत्यता प्रगट होती है. यदि मुन्शीजीका कथन सत्य है तो इन रुपयों के सिवाय लाला राम शरण दास वा स्वामी जी के पास किसी ने और रुपये भेजे होयं और उनके पास उनकी हस्ताक्षरी ~~[illegible]~~ रसीद होय शीघ्र प्रकाश करें

अथवा करवालें क्योंकि सांच को आंच कहां और जो मुन्शीजीने हिसाब के छपवाने में ऊंच पंच की वा और ही कुछ राग गानेलगे तो यह उन के लिये पूरा कलंक है इसके निवारणार्थ उनको अवश्य चाहिये कि जब जब जितना २ खर्च हुआ है यथावत मिती वार छपवा देवें और शेष धन आर्य समाज मेरठ में मोहर्रिप कार्य्य भेज दें पूर्व स्वीकृत नियम को भी सत्य करें तो बहुत अच्छी बात है नहीं तो रुपये गये हुए आभी जाते हैं परंतु धर्म्म युक्त कीर्त्ति गईहुई कभी नहीं आती। (संभावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते) सत्पुरुष को मरण से अपकीर्ति बहुत बुरी समझनी चाहिये: यदि हमारे आर्य जनों विशेष कर उपदेशकों का आरम्भ से मृत्यु तक एकसा सत्याचरण रहे तो देश की बड़ीही उन्नति होवे। सर्व शक्तिमान परमात्मा आर्य्यावर्त देश पर कृपा करे जिस से हमारे आर्य्यावर्तीय उपदेशक अपने किये हुए उत्तम उपदेश को लोभादि दोषों से कलंकित न करके आद्यो पान्त पर्यन्त शुभाचरण से देशकी सुदशा बढ़ाया करें। अलमति विस्तरेण बुद्धि मद्वर्येषु। इति जीवंतआनन्दः ॥ विक्रमी संवत् १६३७ तदनुसार सन् १८८० ई॰

नकल हिसाब जोकि मेरठ के समाज और मुंशीइंद्रमणीजीके विषयका है

जमा चन्दा कुल ---------- रुपया १५१६)	
३०) आर्य समाज मुलतान	१०५) मेम्बरान व्यासा
११५) आर्य समाज लाहौर	१००) आर्य समाज रुड़की
५०) आर्य समाज अमृतसर	२३३।।≡) आर्य समाज फ़ीरोजपुर
१००) आर्य समाज फ़र्रुख़ाबाद	१५०।।-) आर्य समाज गुरदासपुर
१००) आर्य समाज जेहलम	११) लाला केवल कृष्ण

१३८।।) लाला रुक्नराय व. लाला मुरली धर औरंगाबाद से
१३६।।।) पांडे रामदीन सेकिन मास्टर दार्जिलिंग
२४५।।) आर्य समाज मेरठ इस रक़म में मेरठ शहर के और मेरठ के ज़िला के तीन चार महा पुरुषों का जो समाज के मेम्बर नहीं हैं चन्दा शामिल है

ख़र्चे क़ुल रुपया ६६३।।।≡)।।।

७।। रजस्टरी मुन्शी इन्द्रमणि जी के पास भेजी ता० ७ अगस्त सन ८० ई०
३००) दिये मुन्शी इन्द्रमणि जी को मा० ला० ला श्याम सुन्दर लाल रईस मुरादाबाद के तारीख़ ७ अगस्त सन् १८८० ईस्वी
११।) किराया रेलगाड़ी मेरठ से मुरादाबाद तक चार आदमियों का ता० १४ अगस्त सन् १८८० ई०।। ६) किराया रेलगाड़ी कावेली से मेरठ और बोली से मुरादाबाद तक ।। ।=) लाला शादीराम के ख़त का महसूल जो इलाहाबाद से आया ।।
।।) किराया गाड़ी जोइन्ट साहब के रिष्टर के पास मेरठ में जाते समय दिया गया ता० १४–८–८० ई०
२३) मुक़द्दमें पहिले में ख़र्च हुआ मुक़ाम मुरादाबाद इसका हाल मुन्शी जी को मालूम है ।। १७३)। ख़र्च ख़ानगी मेरठ से इलाहाबाद तक ता० ६ सितंबर सन् १८८० ई०।। ३००) वज़रिये नोट के मुन्शी जी के पास भेजे गये।। ।=) रजस्टरी ख़त का महसूल ३००) वज़रिये हुंडी के मुन्शी जी के पास भेजे गये ।।
१।।) हुंडीवन दिया गया २०।१०।८० ई०
३।।) किराया रेल गंडू नोकर मेरठ से अलीगढ़ तक मये वापिस ख़ुराक के ।। ⌐) मुं० इन्द्रमणि जी के ख़त का महसूल

५५८७) बाकी रहा यह रुपया त्रैराशिक के हिसाब से ऊपर लिखे
चंदा देनेवालों को मेरठ समाज ने उनकी इच्छानुसार फेर दिये ॥

ग्रंथकार— यह लेख देश हितैषी में का है और इसी प्रकार हिसाब इन का भारत मित्र में भी मुद्रित हुआ उन्हीं दिनों देखा गया है परंतु इनकी प्रेरणा पर भी मुन्शी जी महाशय ने अपने वसूल हुए चन्दे का हिसाब किसी तरह पर भी प्रकाशित कर न दिखाया हां निःसन्देह आगे लिखे नाम की एक किताब उन्होंने स्वयं मुद्रित कर अवश्य मेव सर्वत्र भेज दी है उचित था कि जैसा सब लोग चाहते थे वैसा हिसाब उसी में दर्ज कर उज्वल होते सो तो कुछ एक न किया किंतु आंय बांय शांय बहुत कुछ लिख मारा है क्या कहूं गुरु को उनकी वह लीला देख कुछ कहते ही नहीं बनती स्पष्ट जान पड़ता है कि सभ्य जनों का हिसाब का मांगना उनको केवल विष वर्द्धनम् होगया है उन्होंने इस प्रकार श्रीजी महाराज और लाला रामशरण दास जी आदि कितनों ही आर्यों को लिख सुनाई हैं कि जिसका लिखना इस लेखनी की शक्ति से बाहर है—

श्री जी महाराज तो वह सब सुन खबर भी नहीं हुए और न उन में से कोई बोला जिन पर उन्होंने यथेच्छ पुष्प वर्षाये हैं परन्तु तिहायतों ने अच्छे प्रकार मुन्शी जी का मन भर दिया है उन में के दो लेख आगे उपस्थित कर दिये हैं कृपा करके उन को भी अवलोकन कर लीजिये तब ही उनका चतुर्थ मयूख की समाप्ती है ॥

नीचे लिखा मुन्शी इन्द्र मणि जी की पुस्तक का नाम

मुन्शी इन्द्र मणि का दुर्गतिनाश। स्वामी दयानंद सरस्वती का कच्चा हाल। [illegible] श्री पंडित जगन्नाथ दास। छपाव एहतमाम मुन्शी नारायण दास।

पुस्तकोत्तर
सद्सद् भर्थ का प्रकाश
पच्चीसी।

ज्यों देखो श्री जगदीश विलास। जिसकी जड़ है केवल भूख प्यास। धन्य धन्य है श्री स्वामी जी का सन्यास। जिस्से है सब सभ्यों को पूर्ण विश्वास। जिन के कृत्यों का सर्वत्र हो रहा है भास्कर वत् पूर्ण प्रकाश। शोक कि इस पर भी स्पृह्य में खल कौशिक पाते हैं अति त्रास ॥ ३॥ ग्रन्थ नव देखा गया कभी एक नूतन इन्द्र मणि दुर्गतिनाश। जिस पर हो रहा है जगत में सर्वत्र भर्त्सन उपहास ॥ ४॥ देखा था न देखोगे कभी ऐसा है यह विलक्षण दुर्गतिनाश। पहना है जिसने नख से सिख तक खूब ही लोभ निवास ॥ ५॥ मानों गुहल से कर रहे थे मुंशी साहब सह कुटुम्ब उपवास। [illegible] चन्दे को जानते हैं [illegible] स ॥ ६॥ [illegible] को चाहो जितना विस्तारो तुम वाग्विलास। परंतु नहीं हो सके कभी [illegible] स्वामी जी का राम शरण दास ॥ ७॥ [illegible] अति धन्य [illegible] पर लाला राम शरण दास। जिनकी अकाल मृत्यु सुन कौन ऐसा नर न हुआ होगा असीम उदास ॥ ८॥ [illegible] धन्य [illegible] हैं माथुर वंशावतंसी जय कृष्ण दास। जिनकी

इमदाद पाकर जग में प्रगटा. प्रथम सत्यार्थ प्रकाश।९।
इन महाशयों ने आरम्भ ही में कह दिया था. कुटिलों की कुटिलता का.
कीया इनि ह्रास। परंतु श्री जीका सिद्धान्त. कि कभी किसी के किये नहीं हो
सकता. दागी आकाश॥१०॥ प्यारे आर्यो जो करेगा फ़ारिस भाषा में
पूर्ण अभ्यास। उसको अवश्य ही होगा बीच सत्य. मिथ्या का आभास
॥११॥ प्रत्यक्ष ठग डाँकू अरु नास्तिकों का. किया है जिसने पास। फिर
कौन कहेगा. कि उसकी बुद्धि को हो नहीं गया है. ह्रास॥१२॥ जिनका
है ऐसा यह चित्र विचित्र और अपवित्र इतिहास करते थे वे बहुत
पसन्द. किसी दिन कटुओं का. आवास॥१३॥ होय फल जिसका ऐसा
जैसा कि नारायण वा जगन्नाथ दास। तो क्योंकर न होगा उस पेड़ का इक
दम से सत्यानाश॥१४॥ धन्य है वह सत्पुत्र नारायण दास। जिसने जी
वत पिता बना दिये अग्गास॥१५॥ धन्य कहूं वा कुछ अन्य. तुमसे
भाई जगन्नाथ दास। जिसने कर दिखाया सरासर. गुरु बुद्धि विनाश१६
सुशील वैश्य मानते हैं अपने तई विप्र वर्णों का दास। कहाते हैं वह
बुरे जो बन बैठते हैं पंडित खास॥१७॥ जिस चंदे की मालिक थी
सभा अरु सभापति मेरठ निवासी राम शरण दास। उस पर किया चाह
ते थे मलकियत. गुरु चेला खासुल खास॥१८॥ जब न देखी हाथ
आती किसी विध. वह पूरी दौलत की रास। तब कर सलाह तीनों
ने भर भांगी वह खाक स्याह इल्तिमास॥१९॥ न जाने कितना स
मझी से. इस विधि नाहक किया प्रयास। थोड़े न बहुत यों ही रंगते
रंगते रगड़ डाले सफ़ा पचास॥२०॥ ज्यों कभी कोई ग्वालिनी नहीं
पाती है अज्ञान की बूबास। उसी तरह ध्वार्य होती है सदा सब.
दुराचारियों कि आस॥२१॥ बड़े साहसी और धर्म धुरंधर देखियत

मुन्शी दुर्गा चरण और प्रेम करण दास। जिन्हों ने समाज मुरादाबाद से गुरू चेला, यों निकाले ज्यों तोड़ें फेंकयत तिनुका घास ॥२२॥ यारो यह सब भुतदृष्ट जगत् है काल को ग्रास। उचित होय सो करलो प्यारो, जौलों घट में स्वांस ॥२३॥ और बने तहांलों बज़ोर पुकार २ कर कहो, धन्य दयासागर, तुम सन्यास। तथा हो सके वहां लों जल्द दौड़कर करो, उनके चरणों का सहवास ॥२४॥ फिर सत्य जानो ठीक मानो उन्के उन उपदेशों को, जिन्हें वे सर्वत्र करते फिरते हैं यथावकाश। बस भाई आर्यो इसे लिखना था सो सब लिख चुका, बन पड़े तो लो कृपा कर विनय नमस्ते ठाकुरदास ॥२५॥

(फलस्तुति)

भाई आर्यो सुनो सुनाओ सदा, सब को यह अनुशास पच्चीसी। जिससे होय बंद सदा को, सब नव विरोधियों की बतीसी ॥१॥ इति अनुशास पच्चीसी

(समाप्ता)

इसी मूल लेख के अनुसार दूसरा विस्तार पूर्वक उत्तर मुन्शी जी के इल्तिमास नामे पर बाबू चंदन गोपाल जी ने स्थान गोंडा मुल्क अवध से दिया है — मानों वह इसकी व्याख्या है अतः उसकी भी नक़ल देश हितैषी पत्र से लेकर आगे लिख दी है ॥

इल्तिमास नामे का दूसरा उत्तर

बाबू चंदनगोपाल मदन

श्रीयुत देशहितैषी सम्पादक समीपेषु— आर्य भाइयों पर विदित होगा कि एक पुस्तक पं० जगन्नाथ दास ने प्रकाशित की है जिसका नाम मुन्शी इन्द्रमणि का इल्तमास स्वामी दयानन्द सरस्वती का सन्यास रक्खा है- इस पुस्तक से उक्त मुंशी जी और पंडित जी की बुद्धि की तीव्रता। सत्य व्यवहार धर्म चर्य्या और देशोन्नति में प्रयत्न का परिचय भली भांति प्रतीत होता है अब कुछ उनके उदाहरण आगे लिखे जाते हैं।

(१) यह तो बहुत से देश वासियों और राज्याधिकारियों पर मेजिस्ट्रेट से लेकर श्रीयुत वैसराय भारत खंड तक विदित है कि आर्य समाज की ओर से मुन्शी जी के मुकद्दमें में कितना प्रयत्न हुआ अर्थात परितोषिक चंदा एकत्र कर मुंशी जी को हाई कोर्ट तक अपील करने के लिये सहायता देना अनेक पत्र द्वारा मेजिस्ट्रेट के न्याय को अन्यथा सिद्ध कर उत्तम सम्मति से राज्याधिकारियों को सूचित करना एवम् प्रार्थना पत्र श्रीयुत वैसराय भारतखंड की सेवा में भेजना। पौराणिक भाइयों पर दोषारोपण होने को अपने पर दोषारोपण समझना आर्य समाज के सिवाय और किसका काम था। क्या मुन्शी जी बिना आर्य समाज की सहायता के केवल पौराणिक भाइयों को साथ ले अपना कार्य्य सिद्ध कर सकते थे। यदि कहा जाय कि हां। तो

इस ह्वां के सिद्ध करने के लिये अनेक उदाहरण पौराणिक भाइयों की ऐक्यता के सामान्य विषयों में दिखाते होंगे। क्या मुंशी जी उक्त सहायता पाने को युक्ति पूर्वक अस्वीकार कर सकते हैं। जब यह सिद्ध हुआ कि आर्य समाजों से उक्त सहायता पहुंची। तो अब बिचारना चाहिये कि समाज किस वृक्ष की शाखा है और किस मूल से उत्पन्न हुई हैं क्या कोई बुद्धिमान् पुरुष शाखाओं के लाभ को मान मूल के लाभ से पृथक् हो सकता है। नहीं। किन्तु वह सब लाभ जो शाखाओं से मिलता है मूल से ही उत्पन्न हुआ मानता है जो पुरुष अन्यथा माने तो क्या वह कृतघ्नता दोष से बच सकता है। परन्तु शोक है कि वर्तमान समय में विपरीत लक्षण देखने में आते हैं अर्थात् मुंशी जी ऐसे कठिन समय में आर्य समाज की सहायता से ही यवना रोपित दोष से उद्धार हो अब समाज रूपी शाखाओं के गुणों को भूल उलटा उन शाखाओं के मूल। सहायता के कारण श्री शुत स्वामी जी महाराज को दूषित किया चाहते हैं। क्यों नहीं सहायता देने का यही तो फल है। मुन्शी जी भी क्या करें बेचारे लोभ के जाल में ग्रसित होने से पर वश हो समाज रूपी शाखाओं पर आकाश वेल डाल उसको शोषित कर उसकी जगह फूट की लता को स्थापित करना उन्हों ने चाहा परंतु यह न समझा कि मूल उस वृक्ष की कैसी दृढ़ है कि एक क्या सहस्रों आकाश बेल से भी सोषित नहीं हो सक्ती। प्रमाण इसका जगद्विख्यात है कि वर्तमान से अधिक कितने धावे दुराचारियों ने किये परन्तु (सत्य मेव जयति नान्रतम्) कोई भी उनका बाल बींका

न कर सका अब समाज की रोहित होता और आपने फल ऐक्यता को प्रत्यक्ष करता देख उस के मूल रूपी दिवाकर से अपने नैमित्तिक प्रकाश को तुच्छ हुआ जान उस दिवाकर की हानि में तत्पर हुए जो सर्वथा असंभव है और इस निर्मूल आशा के सिद्ध करने के अर्थ पंडित जगन्नाथ दास ने ऐसा बीड़ा उठाया जैसे रावण के सेनापति आदि ने श्री राम चन्द्र जी के नाश करने को उठाया था। बाहरी बुद्धि की तीव्रता और सत्याचार ऐसे २ कर्म करते हुए अपने आप को देशोन्नति में तत्पर कहते हैं- हां देश अवनति में तत्पर कहें तो सत्य है। यदि ऐसे २ कर्म्म से देशोन्नति होती तो इस समय तक जितने वर्ष मुन्शी जी को मुसल्मानो के साथ लड़ते हुए तो क्या कुछ देशोन्नति प्रत्यक्ष न होती? देखिये श्रीयुत स्वामीजी महाराज ने इतने अल्प समय में कितनी उन्नति की यदि कोई आर्य्यावर्त्त वासी इस गुण को न माने तो वह कृतघ्नता दोष से बच सकता है?

(२) मुंशी जी के कोपित होने का कारण यह हुआ कि आर्य समाज मेरठ ने मुन्शी जी को उनकी तृष्णा पूर्णार्थ सब रुपया न दिया किन्तु केवल ६०७ रु० दिये और मुंशी जी से हिसाब मांगा। मुंशी जी को उन के लेखानुसार नहीं किन्तु ६६३।।।=।।। दिये गये कि जिसकी रसीदें तक आर्य समाज मेरठ के लेखानुसार उपस्थित हैं परंतु यह मुंशी जी को ही सुशोभित है कि केवल ६०७ स्वीकार करें। तो आश्चर्य ही क्या है जिसने इतने महान परोपकार को त्याग किया उसको ६६३।।।=।।।

को अस्वीकार करना कौन बड़ी बात है इसमें मुंशी जी कहते हैं कि ऐसे भारी काम में क्या केवल ६०७ रु० ही व्यय हुआ। इसका उत्तर यह है कि क्या मेरठ समाज यह न जानती थी कि बहुत सी समाजों और अन्योन्य सज्जन पुरुषों से सीधा मुन्शी जी के पास पारितोषिक पहुंचा है और यदि पहुं चा तो मुंशी जी का उक्त प्रश्न सर्वथा निर्मूल हुआ॥

और यदि मुंशी जी अपने व्यवहार में सच्चे थे तो मेरठ समाज को आय और व्यय का हिसाब देकर रुपया क्यों न मांगा। परंतु मांगे क्यों वह तो सम्पूर्ण आर्यों के धन को अपने पुरुषों का धन समझे हुए हैं भला अब तो किसी से एक छदाम मांग लें. मुंशी जी का प्रथम तो यह कहना है कि ऐसे २ मुकद्दमों में अनेक प्रकार के व्यय होते हैं जिनका पत्रादिक में प्रकाशित करना उचित नहीं। इसका उत्तर यह है कि क्या मेरठ समाज ने प्रथम ही से प्रकाशित करना चाहा था। नहीं किन्तु केवल समाज ने हिसाब जानना चाहा था। द्वतीय मुन्शी जी यह कहते हैं कि पारितोषिक हमारे लिये एकत्र हुआ था हम क्यों हिसाब दें। स्वामी जी अथवा मेरठ समाज को पारितोषिक धन पर इस के अतिरिक्त कि उक्त धन को हमें अर्पण करलें और क्या अधिकार था। क्योंकि समाज इस विषय में केवल साधन मात्र थी. इसका उत्तर यह है कि विशेष कर के आर्य समाजों और आर्य पुरुषों से ही मेरठ समाज में पारितोषिक एकत्र हुआ था और उन समाजों वा पुरुषों

का अभिप्राय यह था कि पारितोषिक केवल मुकद्दमें में व्यय होना कि मुंशी जीके निज संबंधी कार्य्यों में। अब यह क्योंकर सिद्ध हो सकता है कि संपूर्ण पारितोषिक (चंदा) जो मुंशी जी के पास पहुंचा उससे अधिक व्यय हुआ यावत् मुन्शीजी हिसाब न दें। क्योंकि उदाहरण प्रसिद्ध है कि एक ब्राह्मण एक कुमारी कन्या को साथ ले देश विदेश जाकर विवाह के नाम से अनेक राजा व सज्जन पुरुषों से धन इतना एकत्र कर लेता है कि एक क्या यदि दश कन्याओं के विवाह किया चाहे तो करले. परंतु तृष्णा के कारण अंत को यही कहता है कि कलियुग है कोई देता भी है लड़की के हाथ पीले करने हैं सो दो चार धर्मात्माओं के उद्योग से इतना भी हो गया नहीं तो वर्तमान काल में किसी को इतनी भी आशा नहीं थी- ठीक यही उदाहरण हमारे मुंशी जी पर घटता है. और यह जो कहा कि समाज को इस धन में क्या अधिकार था उसका उत्तर यह है कि शाखा मूलवत् श्रीयुत स्वामी जी महाराज सब समाजों के अधिपति हैं और और आर्य पुरुष भी जो समाज से पृथक् हैं स्वामी जी को ऐसा ही मानते हैं फिर जो धन समाजों तथा आर्य पुरुषों से एकत्र हुआ वह स्वामी जी वा किसी एक विशेष समाज के अधिकार में क्यों न हो। क्योंकि उस धन को भी स्वामी जी वा विशेष समाज की सम्मति से व्यय होने में पारितोषिक दाता और सामाजिक पुरुष सब संतुष्ट हैं। यदि इसके प्रमाण की आवश्यकता हो तो उन समाजों वा पुरुषों से जिन्हों ने कि पारितोषिक उक्त महाशयों की सेवा में भेजा है पत्र द्वारा पूछ लिया जावे. और जो मुंशी जी ने यह कहा

कि यदि उन समाजों वा पुरुषों का अभिप्राय यह होता तो हम को यह क्यों लिखते कि इतना रुपया हमने तुम्हारे मुकद्दमें की सहायता में मेरठ समाज को भेजा है सो आप के पास पहुंचेगा। सो उक्त समाजें वा पुरुष ऐसा लिखने में सत्य हैं क्योंकि उन को क्या मालूम है कि कितना रुपया मुंशी जी के पास एकत्र हो चुका है आवश्यकता से अधिक वा न्यून. इस अवस्था में मेरठ समाज ने मुंशी जी को जो एकत्र हुए पारितोषिक का प्रमाण न बतलाया सो अनुचित नहीं किया क्योंकि मुंशी जी ने तो इसको अपने घर का रुपया समझ लिया यदि ऐसा न समझे होते तो इतना कोपित न होते। और जब कि मुंशी जी उस रुपये के लोभ में इतना ग्रसित हैं तो उसका प्रमाण जान उनका हृदय और भी कोपित और शोकातुर होकर वे और कुछ अधिक फल न दिखावें. ऐसा विचार कर उन्होंने जो एकत्र धन की संख्या को न बतलाया सोभी उत्तम ही किया क्योंकि बहुत से धनवान् वैश्यों का समाचार श्रवण गोचर हुआ है कि धन के लेन देन में प्राणों के लेने देने पड़ जाते हैं. और नहीं तो ज्वरातिसार नगर की सैर तो अवश्य ही करनी पड़ती है। इस से उक्त पारितोषिक पर समाज का अधिकार होने से मुन्शी जी क्यों कोपित होते हैं यदि पारितोषिक दाता कोपित हों तो उचित है क्यों कि उन का धन है। सो वह तो यह समझ कर कि जिस प्रकार समाज व्यय करे उचित है संतुष्ट रहें. परंतु मुंशी जी को संतोष न दिया। इस से सिद्ध हुआ कि मेरठ समाज उस रुपये को उचित रीति से व्यय करने वा पारितोषिक दाताओं को रुपया फेर देने

में कदापि दूषित नहीं हो सक्ती किंतु मुन्शीजी यावत् पारितो
षिक के आय और व्यय का लेखा न दें तावत् इस कलंक से उ
द्धार नहीं पा सक्ते (२) मुंशीजीने उक्त पुस्तक में पं० जगन्नाथ द्वा
रा अपना अभिमान विदित किया है कि वर्तमान विषय के नि
श्चय होने पर हम एक मासिक पुस्तक निकाला करेंगे जिसमें
स्वामी दयानंद सरस्वती कृत वेद की श्रुतियों का विरुद्धार्थ
खंडन किया जायगा और ईश्वर को धन्य बाद देते हैं कि यह
सुअवसर स्वामी जी कृत वेद भाष्य के खंडन करने को मिला।
यद्यपि यह एक ऐसा जगद्विख्यात असंभव अभिमान है कि
जिसपर व्याख्या वा खंडन करने की कुछ आवश्यक्ता नहीं
क्योंकि बुद्धिमान् पुरुष इस लेख कोही देख तत्काल मुंशी जी
वा पंडित जी की विद्या का अनुमान कर उनके अभिमानकी
सत्यता वा मिथ्यात्व अवश्य जान लेंगे, परंतु केवल इस कार
ण कि इस व्याख्या में उक्त महाशयों का गुणानुवाद है उनके
इस अभिमान युक्त लेख का भी उत्तर देना उचित समझा। आ
श्चर्य की बार्ता है कि स्वामीजी अनुमान दस वर्ष से वेदार्थ
पर शास्त्रार्थ कर रहे हैं और छः वर्ष से वेदभाष्य भी प्रकाशि
त होता है उस समय से अद्यपर्य्यन्त अनेक पुरुष वेद भा
ष्य के खंडन में तत्पर हुए और सत्य रूपी सूर्य से छिन्नभिन्न
होगये परंतु मुंशी जीका हृदय उन बेचारों की सहायता में
दयालु न हुआ और न मुंशी जीने आप के वेद भाष्य के खंड
न का बीड़ा उठाया इसमें चार कारण प्रतीत होते हैं॥ प्र
थम॰ किञ्चिदपि इस समय तक स्वामी जी पर कृपा दृष्टि

होने से देश हानि में तत्पर रहे. अब स्वामी जी पर कोपित होने से देश हानि की सुधि आई. एतदर्थ वेद भाष्य का खंडन देशवासियों पर सूचित करना चाहा अच्छा जब सुषुप्ति अवस्था से विगत हुए तभी सही. प्रातः काल का भूला यदि सायंकाल तक घर आजावे तो भूला नहीं कहाता ॥

द्वितीय यावत् स्वामी जी के साथ भक्ति भाव था तावत् मुंशी जी को इतनी विद्या न थी अब शत्रु भाव होते ही मुंशी जी का हृदय वेद शास्त्र से परिपूर्ण होकर उन के सत्यार्थ भाष्य खंडन पर तत्पर हुआ। अत्यन्त आश्चर्य है कि क्रोधातुर होने से तमश्छा जाता है, परन्तु मुंशी जी की जैसी और सब बातें विपरीत प्रतीत होती हैं वैसी एक यह भी है अर्थात् अंधकार के स्थान में ज्ञानोदय का प्रकाश हुआ ऐसी बुद्धि की प्रशंसा कहां तक की जावे। पाठक गणों प्रशंसा क्या यदि अभ्यासी ऐसी बुद्धि की तीव्रता का वर्णन किया चाहें तो असंभव ही प्रतीत होता है ॥

तृतीय = इस समय तक मुंशी जी को कोई सहाय कारी न मिला था अब पं॰ जगन्नाथ दास बाल्यावस्था से उद्धार हो युवा अवस्था में प्रवेश कर मुंशी जी के सहाय कारी हुए। खैर बुढ़ापे में ... चाहिये भी थे। हिन्दी कहावत प्रसिद्ध है कि जरठ आयु होने से मनुष्य का ज्ञान नष्ट हो जाता है मुंशी जी को इतनी विद्या न थी परन्तु चाहते थे कि किसी रीति से वेद भाष्य खंडन हो। सो अब जब पं॰ जी की विद्या ने प्रकाश किया तो मुंशी जी के हृदय ने एक अनुपम

शस्त्र पाकर वेद भाष्य के खंडन में तत्पर होना स्वीकार किया॥ चतुर्थ= यदि मुंशी जी को सम्पूर्ण रुपया दे दिया जाता तो यह सुअवसर मुन्शी जी को न मिलता क्योंकि इस के पूर्व कभी ऐसा प्रण किया ही न था। ऐसा करना कैसा बरन आर्य्य समाज मुरादाबाद के सभापति के पद को ग्रहण किया और इस पदवी के ग्रहण करने से जो उपयोग मुन्शी जी ने विचारा था उससे अधिक तर प्राप्त किया। परंतु काम क्रोध मोह लोभादि जो महान् भयंकर शत्रु हैं इन में से एक ने इन को आग्रसा और वह इन की प्रतिष्ठा को ले डूबा। करें क्या बेचारे निर्बल होने के कारण इस का निवारण न कर सके. देखिये तो ऐसे महा पुरुषार्थी पुरुष भला काहे को वारम्वार जन्म धारण करते हैं. मुन्शी जी ने अब वेद भाष्य का खंडन करना स्वीकार किया है। वाह रे आर्यो धन्य है आप को जो आपने ५५२) रु० न देकर ही मुन्शी जी को उद्यत किया कि सर्व साधारण मनुष्यों के लिये ऐसा महान् परोपकारी कार्य करें अर्थात् वेद भाष्य का खंडन। धन्य है शत शः धन्य है॥

(४) उक्त पुस्तक में लिखा है कि स्वामी जी को प्रथम प्रकृति और जीव का नित्यत्व विदित न था किन्तु ईश्वर से उत्पन्न मानते थे तदनन्तर जब मुन्शी जी से वार्तालाप हुआ।

तब मुन्शी जी ने उक्त पदार्थों का नित्यत्व बताया। क्यों न हो स्वामी जी ने संपूर्ण वैदिक मत के सिद्धान्त और ऋषि मुनि कृत ग्रंथों के इतिहासादि भी तो पं० जगन्नाथ दास कृत पोप लीला से ही (जो सत्यार्थ प्रकाश भूमिका आदि

से कितनेही वर्ष पीछे रची गई है) सीखे हैं। जब अभिमान और लोभ द्रोह बुद्धि का आवरण कर लेते हैं तब यही प्रतीत होता है कि सूर्य्य ने दीपक से प्रकाश पाया है। यदि मुन्शीजी कुछ भी वेद को जानते होते तो मुसल्मानों के साथ युद्ध में इतना समय न लगता। किन्तु क्षण भर में विजय होजाता क्योंकि वैदिक मत के सामने किरानी, कुरानी, पुरानी और जैनी एक मुहूर्त्त मात्र भी नहीं ठहर सकते॥

(५) उक्त पुस्तक में मुन्शी जीने कर्नल आल्कट साहब और मुन्शी बखतावर सिंह का उदाहरण लिखा है अर्थात् स्वामी जीने उक्त महाशयों के साथ जैसा व्यवहार किया उससे स्वामी जी की सत्यता भले प्रकार विदित होती है। क्यों नहीं समान गुण वाले पुरुषही तो मित्र भाव वर्त्तते हैं कहावत भी है कि (कुनद हम जिन्स बा हम जिन्स पर वाज़। कबूतर बा कबूतर बाज़ बा बाज़) चोर के साथी गठकटे, करनैल और सिंह जी के गुणों का इस सम्बन्ध में वर्णन करना कुछ आवश्यक नहीं क्योंकि जगद्विख्यात हैं। क्या बुद्धिमान् पुरुषों के सामने उक्त महाशय विश्वास घात के दोष से बचे हुए हैं और इसलिये उनके साथी उनकी प्रशंसा करने वाले और अपने आप को उनके समान समझने वाले भी उक्त दोष से उद्धार कैसे पा सक्ते हैं!

उक्त महापुरुषों का गुणानुवाद एक पृथक् विषय है इसलिये उस सम्बन्ध में विशेष कुछ न लिखा जायगा।

अब यह समझ के कि बुद्धिमान् पुरुष इस थोड़ी व्याख्या

वे ही मुंशीजी और पंडित जी के गुणों का अनुमान कर उनके बातों को सत्यता वा मिथ्यात्व अवस्था निश्चय करलेंगे इस विषय को समाप्त करता हूं ॥

गोंडा	ह: चन्दन गोपाल (पूर्व मंत्री)
ता: २ जून सन् १८८३ ई०	आर्य्यसमाज लखनऊ

परिणाम

महाशय नमस्ते- विदित होकि श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज और आर्य समाज के नियमों से विरुद्ध आचरण करने के कारण मुन्शी इन्द्रमणि जी. प्रधान और लाला जगन्नाथ दास जी पुस्तकाध्यक्ष अपने २ पद और सभासदी इस आर्य्य समाज से २६ मई सन् १८८३ ई० को अलग किये गये और मुन्शी दुर्गा चरण जी प्रधान नियत हुए आगे को खत बनाम मुन्शी क्षेम करण दास मंत्री के नाम. ठिकाना- मकान साहू श्याम सुन्दर जी रईस मंडी बांस मुरादाबाद भेजे जावें ॥ ता: ३० मई सन् १८८३ ई० ॥ ह० क्षेमकरण दास मंत्री आर्य्य समाज मुरादाबाद। हा- इस विज्ञापन को देख किसको शोक न हुआ होगा और ग्रंथकार के शोक की तो सीमाही नहीं क्योंकि वह इन को अपने द्वितीय खण्ड के बीच प्रशंसाओं में आसन दे चुका था उसी की आ वह दशा हो परंतु (यथा कृतिस्तथा फलम्) इस परमेश्वरीय व्यवस्था के सन्मुख सब का परतंत्र है अस्तु अलमतिविस्तरेण ॥

इति श्रीमत् परमहंस परीब्राजकाचार्य्य श्रीमान् स्वामी दयानंद सरस्वती दिग्विजयार्कीय तृतीय खण्डे कृतघ्नोत्पादित मिथ्यापवाद सम्मार्जनन्नाम चतुर्थो मयूखः॥४॥

अथ पंचमो मयूख:

(५)

श्रीमान् का उदयपुर की ओर प्रस्थान

बंधुगण- इस प्रकार ऊपर लिखे मुख्य कार्यों से निश्चिन्त होकर श्रीमान् करुणा निधान स्वामी जी महाराज बम्बई के निकट वर्ती कतिपय नगरों में तत्रस्थ भक्तजनों की इच्छा और उत्साह के अनुसार सदुपदेशार्थ थोड़े दिनों को हो आए थे इससे वहां के लोग बहुतही कृत मन्य हुए (११) पश्चात् इसके श्रीमान् श्रावण मास में बम्बई नगर से प्रस्थान कर के स्थान खंडुआ में पधारे- तहां कुछ दिन ठहर कर तत्रस्थों को अपने अनेक सदुपदेशों से संतुष्ट कर राजधानी उदयपुर की ओर बढ़े- बीच में कुछ दिन जावड़ा नगर में निवास रहा- इस यात्रा में श्रीयुत आत्मानन्द जी का समागम हो गया था उनके सह वर्तमान श्रीमान् कूंच मुकाम करते हुए अधिक श्रावण कृष्ण १३ सम्वत् ३९ विक्रमी तदनुसार ११ अगस्त सन् ८२ ई० दिन गुरुवार को उक्त राजधानी में दाखिल होकर

(नोट ११) इस समय यह बम्बई प्रान्त श्री जी महाराज के सुयश से खूबही आच्छादित होगया था यावत् सत्पुरुषों के मुंह और प्रसिद्ध समाचार पत्रों में श्रीजी के लिये धन्यबाद लिखा सुनाई पड़ता था कितनेही नवीन ग्रंथ गुजराती और महाराष्ट्री भाषा में श्रीमान् के सद्गुण प्रपूरित बनगये हैं उनका कुछ वृत्तान्त आगे किसी प्रसंगांतर में देखमिलेगा -

नौलखा बाग के राजमहल में (जहां कि प्रथम सेही सब प्रबंध होचुका था) पधारे– देर नहीं लगी कि समस्त शहर में इस शुभागमन की वार्ता फैलगई कितने ही सज्जन सरदार और राज पुरुषों को बड़ाही हर्ष हुआ वे उसी दिन से श्रीमान् की सेवा में उपस्थित होने लगे– प्रजागण की भीड़ का भी कुछ ठीक न हीं था परन्तु पोप वृन्द में खलवली पड़गई ॥

थोड़ेही दिन पीछे चिर प्रतापी मेदपाट देशाधीश श्री १०८ महाराणा जी महोदय सद्गुरु महाराज के दर्शनार्थ सोभाग्यन पधारे और परस्पर परम प्रीति पूर्वक वार्तालाप होकर बड़ाही आमोद रहा ॥

इस प्रकार कतिपय समागम और श्री जी महाराज के परमोप कारक सदुपदेश तथा व्याख्यानों को श्रवण कर श्री दर्बार ने अपने बड़न से सभ्य सरदारों सहित श्रीजी महाराज के समीप पढ़ने का आरम्भ करदिया– प्रत्यह सायंकाल को उनके स्थान पर उपस्थित होते थे– वस्तुतः काल दो घण्टे का नियत था परंतु किसी २ दिन उससे भी अधिक समय होजाता था यहांतक कि ती- न चार- और पांच घण्टे तक अध्ययन करते होजाय पर श्रीम हाराज न अघायं। अत एव सात मास से न्यूनही काल में श्री दर्बार ने इतना समीचीन तथा हृदगत् कर लिया जित ना कि इतर कोई साधारण दो, तीन वर्ष में भी न पढ़ पाता ॥

पाठक पढ़ना और पढ़ाना इसका नाम है। व्यवस्था इसकी श्री जी महाराज के लेख और समाचार पत्रों की पेल से भलीभांत प्रकाशित होचुकी है कि श्रीजी अधीश ने उस शुभावसर में

षट् दर्शनों का सार कुछ विदुर प्रजागर और मनुस्मृत्यन्तर्गत राजनीति सम्बंधी सात आठ और नौ अध्यायों में पूर्ण योग्यता प्राप्त करली थी- बीच में श्री दर्बार की प्रकृति अस्वस्थ भी हो गई थी तो भी उन्हों ने आलस्य इस काम में नहीं किया- उस दशा में श्री मान् सद्गुरु महाराज स्वयं राज यानाधिरूढ़ होकर राज भवन में ठीक नियत समय पर पधारते रहे परन्तु इन्हों के इस परिश्रम का श्री दर्बार के चित्त में बड़ा ही संतोष होता था और वे आरम्भ से अन्त तक अपने परम गुरु की अत्यंत मर्यादा (अदब) भी करते रहे और अपने चित्त में उनका बहुत भय भी रखते थे। नृत्यादि का देखना साफ़ छोड़ दिया था॥ इस व्यतिरिक्त श्री जी अधीश ने राज महल में श्री स्वामी जी महाराज की आज्ञानुकूल एक होम कुण्ड बन गया था जिसमें प्रत्यह वैदिक विधि से हवन होता था और एक महान् यज्ञ भी बाहर किसी उद्यान में कराया था तथैव उन्हीं दिनों एक विद्यालय राजधानी में स्थापित कर दिया था उसमें व्याकरणादि संस्कृत के सद्ग्रंथ पढ़ाये जाते थे श्री दर्बार में व्याख्यान भी बड़ी धूम धाम के साथ हुए जिन में श्री जी महाराज बराबर पुरानी जैनी- कुरानी और किरानी आदि लोगों के मतों का यथेच्छ खण्डन करते रहे और प्रसिद्ध कर दिया था कि जिन को मत कथन में कुछ भी शंका हो वे समक्ष आकर शास्त्रार्थ करलें परन्तु वह कौन था जो उस तेज पुञ्ज के सन्मुख होता. हां। एक यवनाचार्य्य ने कुछ चित. चलाया था सो अच्छे प्रकार समझ गए आए।

यहां पर श्रीमान् ने तीन पुरुषों अर्थात् जिनका नाम अब आत्मानंद जी, सहजानंद जी प्रसिद्ध हैं उनको सन्यास देकर आज्ञा दी कि अपनी विद्या पूर्ण करते हुए सदाचरणों के साथ जगत का अच्छे प्रकार से उपकार करो इस प्रकार हमारे श्रीमान् प्रतापभानु उस परम पुण्य शालिनी नगरी में सात मास तक प्रकाशमान् रहकर वहांसे नगरान्तर की यात्रा करने को जब समुद्यत हुए तब उन्हों ने कुछ दिन प्रथम से वहां एक अपना उत्तराधिकार दर्शक पत्र तैयार किया और उसके परीपालनार्थ एक परोपकारिणी नाम से सभा नियत कर उसका आधिपत्य परम प्रशंस्य सकल गुण रत्नाकर श्री महाराणा जी धीर, वीर, चिर प्रतापी को दिया तथैव उनकी आधीनी में एक वैदिक निधि भी स्थापन किया इस कृत्य का विस्तार और चमत्कार आगे लिखी महद्राज सभा की सुव्यवस्था से भली भांति प्रकाशित है इस प्रशंसित महद्राज सभा होने की तिथि का निश्चय कितने ही दिन पूर्व से स्वयं श्री दर्बार ने कर दिया था तदनुसार समस्त सरदार और सभासद गण उस दर्बार में नियत समय पर बड़े आनन्द और उत्सव के साथ उपस्थित हुए उनके सन्मुख प्रशंसित पत्र पढ़ा गया और दोनों ओर से स्वीकृत हुआ पश्चात् उसके श्रीमान् यावदार्य कुलदिवाकर ने श्री स्वामी जी महाराज के अलौकिक गुणग्राम की बहुत प्रशंसा की और उनका पूर्ण अनुग्रह अपने पर मान उनको द्वादश शत कलदार रौप्य मुद्रा और महार्ह वस्त्र सहित एक सन्मान पत्र समर्पण कर ... आदर पुरःसर स्थिति स्थान पर पहुंचाया था - इस ...

एकशत मुद्रा और एक दुशाला स्वामीजीके छात्र रामानंद को और फिरोज़पुर के अनाथ आश्रमस्थ लड़कों को पंचशत मुद्रा और लड़कियों को द्विशत मुद्रा उसी समय दिया सो पृथक् ॥

(१)

श्रीरामजी

परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रीमद्दयानंद सरस्वतीस्वामिकृत स्वीकार पत्र की प्रति

राजकीयमुद्रा

आज्ञा (राज्ये श्री महद्राज सभा) संख्या २९०

आज यह स्वीकार पत्र श्रीमान् श्री १०८ श्रीजी धीर वीर चिर प्रतापी विराजमान राज्ये श्री महद्राज सभा के सन्मुख स्वामीजी श्री दयानंद सरस्वतीजीने सर्वरीत्या अङ्गीकार किया अत एव :–

आज्ञा हुई

कि प्रथम प्रति तो इस स्वीकार पत्र की स्वामीजी श्री दयानन्दसरस्वतीजीको राज्ये श्री महद्राज सभा के हस्ताक्षरी और मुद्रांकित दी जावे और दूसरी प्रति उक्त सभा के पत्रालय में रहे और एक २ प्रति इसकी राज यन्त्रालय में मुद्रित होकर इस स्वीकार पत्र में लिखे सब सभासदों के पास उनके ज्ञातार्थ और इसके नियमानुसार बरतने के लिये भेजी जावे संवत् १९३९ फाल्गुन कृष्ण ५ मंगलवार तदनुसार ता० २७ फरवरी सन् १८८३ ई० ॥

हस्ताक्षर महाराणा सज्जनसिंहस्य

(श्रीमेदपाटेश्वर और राज्ये श्री महद्राज सभापति)

(राज्ये श्री महद्राज सभा के सभासदों के हस्ताक्षर)

(१) राव तखतसिंह बेदले (२) राव रत्नसिंह पारसोली (३) द: महाराज गजसिंह का (४) द: महाराज रायसिंह का (५) ह० मामा बखतावर सिंहस्य (६) द: राणावत उदयसिंह (७) ह० ठाकुर मनोहरसिंह (८) ह० कविराजा श्यामल दासस्य (९) ह० सहीवाला अर्जुनसिंह का (१०) द० रा० पन्नालाल (११) ह० पुरोहित पद्मनाथस्य (१२) जा० मुकुन्दलाल (१३) ह० मोहनलाल पण्ड्या

स्वीकार पत्र

मैं स्वामी दयानन्द सरस्वती निम्न लिखित नियमानुसार त्रयोविंशति सज्जन आर्य्य पुरुषों की सभा को वस्त्र पुस्तक धन और यंत्रालय आदि अपने सर्वस्व का अधिकार देता हूं और उसको परोपकार स्वकार्य में लगाने के लिये अधिष्ठाता करके यह पत्र लिखे देता हूं कि समय पर कार्य कारी हो। जो यह एक सभा कि जिसका नाम परोपकारिणी सभा है उसके निम्न लिखित त्रयो विंशति सज्जन पुरुष सभासद हैं उनमें से इस सभा के सभापति :-

(१) श्रीमन्महाराजाधिराज महि महेन्द्र यावदार्य्यकुलदिवाकर महाराणा जी श्री १०८ श्री सज्जन सिंह जी वर्म्मा धीर वीर जी० सी० ऐस० आई० उदयपुराधीश उदयपुर राज मेवाड़ ॥

(२) उप सभापति लाला मूलराज एम० ए० एक्सट्रा एसिस्टेंट कमिश्नर प्रधान आर्य समाज लाहौर जन्मस्थान लुधियाना।

(३) मंत्री श्री युत कविराज श्यामलदास जी उदयपुर राज मेवाड़।

(४) मंत्री लाला रामशरण दास रईस उप प्रधान आर्य समाज मेरठ ॥ (५) उप मंत्री पाण्ड्या मोहन लाल विष्णु लाल जी निवास उदयपुर जन्म भूमि मथुरा । और सभासद ॥

(१) श्रीमन्महाराजाधिराज श्री नाहर सिंह जी वर्म्मा शाहपुरा राज मेवाड़ (२) श्रीमत् राव तखत सिंह जी वर्म्मा वेदला राज मेवाड़ (३) श्रीमत् राज्य राणा श्री फतह सिंह जी वर्म्मा देल वाड़ा राज मेवाड़ (४) श्रीमत् रावत अर्जुन सिंह जी वर्म्मा आसींद राज मेवाड़ (५) श्रीमत् महाराज श्री गजसिंह जी वर्म्मा उदयपुर मेवाड़ (६) श्रीमत् राव श्री वहादुर सिंह जी वर्म्मा मसूदा ज़िले अजमेर (७) राव वहादुर पंडित सुन्दर लाल सुपराटेंडट वर्कशोप और प्रेस अलीगढ़ आगरा (८) राजा जय कृष्ण दास सी० एस० आई डिप्टी कलेक्टर विजनौर मुरादाबाद (९) बाबू दुर्गा प्रसाद कोशाध्यक्ष आर्य्य समाज फर्रुखाबाद (१०) लाला जगन्नाथ प्रसाद फर्रुखाबाद (११) सेठ निर्भयराम प्रधान आर्य्य समाज फर्रुखाबाद बिसाऊ राजपूताना (१२) लाला काली चरण मंत्री आर्य्य समाज फर्रुखाबाद ॥ (१३) बाबू छेदीलाल गुमाश्ते कमसरियट छावनी मुरार कानपुर (१४) लाला साईं दास मंत्री आर्य्य समाज लाहौर (१५) बाबू माधवदास मंत्री आर्य्य समाज दानापुर (१६) राव बहादुर रा० रा० पण्डित गोपालराव हरि देशमुख मेम्बर कौंसिल गवर्नर बम्बई और प्रधान आर्य्य समाज बम्बई पूना (१७) राव बहादुर रा० रा० महादेव गोविन्द रानडे जज्ज पूना (१८) पण्डित श्याम जी कृष्ण वर्म्मा प्रोफेसर संस्कृत यूनीवर्सिटी आक्सफोर्ड लंदन बम्बई हैं ॥

नियम

(१) उक्त सभा जैसे कि वर्तमान काल वा आयत काल में नियमानुसार मेरी और मेरे समस्त पदार्थों की रक्षा कर के सर्व हितकारी कार्य में लगाती है वैसे मेरे पश्चात् अर्थात् मेरे मृत्यु के पीछे भी लगाया करे॥ प्रथम- वेद और वेदाङ्गादि शास्त्रों के प्रचार अर्थात् उनकी व्याख्या करने कराने- पढ़ने- पढ़ाने- सुनने- सुनाने छापने छपवाने आदि में- द्वितीय- वेदोक्त धर्म के उपदेश और शिक्षा अर्थात् उपदेशक मंडली नियत कर के देश देशान्तर और द्वीप द्वीपान्तर में भेजकर सत्य के ग्रहण और असत्य के त्याग कराने आदि में- तृतीय- आर्य्यावर्तीय अनाथ और दीन मनुष्यों के संरक्षण पोषण और सुशिक्षा में व्यय करे और करावे॥

(२) जैसे मेरी विद्यमानता में यह सभा सब प्रबंध करती है वैसे मेरे पश्चात् भी तीसरे या छठे महीने किसी सभासद को वैदिक यंत्रालय का हिसाब किताब समझने और पड़तालने के लिये भेजा करे और वह सभासद जाकर समस्त आय व्यय और संचय आदि की जांच पड़ताल करे और उनके तले अपने हस्ताक्षर लिखदे और उस विषय का एक २ पत्र प्रति सभासद के पास भेजे और उसके प्रबंध में कुछ हानि लाभ देखे उसकी सूचना अपने भी परामर्श सहित प्रत्येक सभासद के पास लिख भेजे पश्चात् प्रत्येक सभासद को उचित है कि अपनी २ संमति सभापति के पास लिखकर भेज दे और कोई सभासद इस विषय में आलस्य अथवा अन्यथा व्यवहार न करे॥

(३) इस सभा को उचित है किंतु अत्यावश्यक है कि जैसा यह परम धर्म और परमार्थ का कार्य है उसको वैसा ही उत्साह पुरुषार्थ गंभीरता और उदारता से करे॥

(४) मेरे पीछे उक्त त्रयोविंशति आर्य जनों की सभा सर्वथा मेरे स्थानापन्न समझी जाय अर्थात् जो अधिकार मुझे अपने सर्वस्व का है वही अधिकार सभा को है और रहे. यदि उक्त सभासदों में से कोई इन नियमों से विरुद्ध स्वार्थ के वश होकर वा कोई अन्यजन अपना अधिकार जतावे तो वह सर्वथा मिथ्या समझा जाय॥

(५) जैसे इस सभा को अपने सामर्थ्य के अनुसार वर्तमान समय में मेरी और मेरे समस्त पदार्थों की रक्षा और उन्नति करने का अधिकार है वैसे ही मेरे मृतक शरीर के संस्कार करने कराने का भी अधिकार है अर्थात् जब मेरा देह छुटे तो न उसको गाड़ने न जल में वहाने न जंगल में फेंकने दें. केवल चन्दन की चिता बनावें और जो यह संभव न हो तो दो मन चंदन चार मन घी पांच सेर कपूर ढाई सेर अगर तगर और दश मन काष्ठ लेकर वेदानुकूल जैसे कि संस्कार विधि में लिखा है वेदी बनाकर तदुक्त वेद मंत्रों से होम करके भस्म करें इस से भिन्न कुछ भी वेद विरुद्ध क्रिया न करें और जो सभाजन उपस्थित न हों तो जो कोई समय पर उपस्थित हो वही पूर्वोक्त क्रिया करदे और जितना धन उसमें लगे उतना सभा से लेले और सभा उसको देदे॥

(६) अपनी विद्यमानता में मैं और मेरे पश्चात् यह सभा चाहे जिस सभासद को पृथक् कर के उसका प्रतिनिधि किसी

अन्य योग्य सामाजिक आर्य पुरुष को नियत कर सक्ती है परंतु कोई सभासद सभा से तब तक पृथक् न किया जाय जब तक उसके कार्य में अन्यथा व्यवहार न पाया जाय॥

(७) मेरे सदृश यह सभा सदैव स्वीकार पत्र की व्याख्या वा उस के नियम और प्रतिज्ञाओं के पालन वा किसी सभासद के पृथक् और उसके स्थान में अन्य सभासद के नियत करने वा मेरे विपत और आपत् काल के निवारण करने के उपाय और यत्न में बहु उद्योग करे जो समस्त सभासदों की संमति से निश्चय और निर्णय पाया वा पावें और जो सम्मति में परस्पर विरोध हो तो बहु पक्षानुसार प्रबंध करे और सभापति की संमति को सदैव द्विगुण जाने॥

(८) किसी समय भी यह सभा तीन से अधिक सभासदों को अपराध की परीक्षा कर पृथक् न कर सके जब तक पहले तीन के प्रतिनिधि नियत न करले॥

(९) यदि सभा में से कोई पुरुष मर जाय वा पूर्वोक्त नियमों और वेदोक्त धर्मों को त्याग कर विरुद्ध चलने लगे तो इस सभा के सभापति को उचित है कि सब सभासदों की संमति से पृथक् करके उसके स्थान में किसी अन्य योग्य वेदोक्त आर्य पुरुष को नियत कर दे परंतु जब तक नित्य कार्य के अनंतर नवीन कार्य का आरंभ न हो॥

(१०) इस सभा को सर्वथा प्रबंध करने और नवीन युक्ति निकालने का अधिकार है पर पूरा २ निश्चय और विश्वास न हो तो पत्र द्वारा समय नियत करके संपूर्ण आर्य समाजों से सम्मति ले के और बहु पक्षानुसार उचित प्रबंध करे॥

(११) प्रबंध न्यूनाधिक करना वा स्वीकार वा अस्वीकार करना वा कि-
सी सभासद को पृथक् वा नियत करना वा आयव्यय और संचय
की जांच परताल करना आदि लाभ हानि सब सभासदों को वा-
र्षिक वा षाण्मासिक पत्र द्वारा सभापति छपवाकर विदित करे
(१२) इस स्वीकार पत्र संबंधी कोई झगड़ा टंटा सामयिक राज्या-
धिकारियों की कचहरी में निवेदन न किया जाय यह सभा अपने
आप न्याय व्यवस्था करले परंतु जो अपनी सामर्थ्य से बाहर
हो तो राज्यगृह में निवेदन करके अपना कार्य सिद्ध करले॥
(१३) यदि मैं अपने जीते जी किसी योग्य आर्य जन को पारितो-
षिक अर्थात् पिंशान देना चाहूं और उसकी लिखत पढ़त कराके
रजिष्टरी करा दूं तो सभा को उचित है कि उसको मानें और दे॥
(१४) किसी विशेष लाभ उन्नति परोपकार और सर्व हितका-
री कार्य के वश मुझे और मेरे पीछे सभा को पूर्वोक्त नियमों
के न्यूनाधिक करने का सर्वथा सदैव अधिकार है॥

(ह० दयानन्द सरस्वती)

कहिये पाठकजन कितना सर्वोत्तम और सर्वोपकारक यह
कृत्य श्रीजी महाराज ने किया और अपने मृत्यु से आठ मास
दस दिवस प्रथम से मृत्यु दिवस तक का कृत्य अच्छी चंगी
हालत में करने को लिख प्रसिद्ध कर देना उनकी कितनी दूर
दर्शिता थी- इसको सब लोग सदैव सूक्ष्म दृष्टि से विचार
ते रहें॥

सन्मान पत्र की प्रति

श्रीमदेकलिङ्गो जयति

स्वस्ति श्री सर्वोपकारार्थ कारुणिक परमहंस परिव्राजकाचार्य वर्य श्री ५ श्री मद्दयानन्द सरस्वती यति वर्येषु— इतः महाराणा सज्जन सिंहस्य नतिततयः समुल्लसंतु उदन्तस्तु। आपका अठै सात मास का निवास सूं चित्त अत्यंत आनन्द में रह्यो क्योंकि आप की शिक्षा को प्रकार श्रेय और उन्नति दायक है और आप का संयोग सूं केही न्याय धर्मादि शारीरक कार्यों में निस्संदेह लाभ प्राप्त होवा की म्हां का सभ्य जनां सहित दृढाशा हुई कारण कि शिक्षा और उपदेश वाँ श्रेष्ठ पुरुषाँ का दृढ़ होवै है ज्यो स्वकीय आचरण भी प्रतिकूल नहीं राखे सो यो आप में यथार्थ मिल्यो अब म्हे आप का वियोग को संयोग तो नहीं चावां हां परन्तु आप को शरीर अनेक मनुष्यां के उपकारक है जी सूं अवरोध करणों अनुचित है तथापि पुनरागमन सूं आप भी म्हां का चित्त नें शीघ्र अनुमोदित करोगा इत्यलम्। संवत् १९३९ फाल्गुण कृ० ५ भौमे

(हस्ताक्षर महाराणा सज्जन सिंहस्य)

आर्यगण— इस प्रकार महाराजाधिराज श्रीमान् अन्वर्थाभिधान यावदार्य कुल दिवाकर महाराणा जी ने अपने परम गुरु श्री स्वामी जी महाराज को महद्राज सभा के बीच यह सन्मान पत्र और उपायनादि बहु सत्कार विनय और प्रणाम के सहित समर्पण करी महत्कृच्छ्र से विदा किया उस समय जितने विद्वान् सभासद पूर

सामन्त अमीर सर्दार अमात्य प्रधान मुन्शी मौलवी और जितने प्रतिष्ठित पुरुष उस दर्बार में विद्यमान थे उन सबों ने बड़ा धन्यवाद पुरःसर श्रीजी महाराज को प्रणाम करके पुनरागमनार्थ प्रार्थना की— उन सब का श्रीजी महाराज ने सन्मान के साथ समाधान किया और उपाय नस्थ मुद्रा वैदिक निधि में स्थापित कर के निज निवास स्थान पर आये ॥

ता० २८ फरवरी बुधवार सन् ८३ ई०

के दिन श्री दर्बार से स्वामीजी के लिये सर्व श्री कर्य्य अर्थात् यान और भत्यादि का प्रबंध हुआ और बहुत से प्रतिष्ठित सत्पुरुष श्री जी महाराज के मिलने को नोलखा बाग़ में आये पश्चात् इनके यात्रा की तय्यारी होती रही— ता० १ मार्च्च गुरुवार के दिन जगद्गुरु महाराज उदयपुर को छोड़ शाहपुरा की ओर से प्रस्थित हुए ॥

इति श्रीमत् परमहंस परिव्राजकाचार्य्य वर्य्य श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती दिग्विजयार्कीय तृतीय खण्डे श्रीमदुदयपुराधीश समागम संभूतानन्द वारिदाभिवर्षणो नाम पञ्चमो मयूखः

अथ षष्ठो मयूखः

श्रीजी महाराज का शाहपुरा को प्रस्थान

भ्रातृगण — जिन दिनों श्रीमान् जगद्गुरु स्वामीजी महाराज राजधानी उदयपुर में विराजमान थे उन्हीं दिनों की बात है कि महाराजा शाहपुराधीशजी उनका बराबर निमंत्रण अपनी राजधानी में आगमनार्थ करते रहे — उत्तर में श्रीमान् सत्य प्रतिज्ञ स्वामी जी महाराज ने कह · लिख दिया था कि यहां से निश्चिंत हुए पीछे आप का समागम करेंगे परंतु बीच में जबकि महाराजा जोधपुराधीश भी ऐसी ही लालसा जताने लग गये तब तो श्रीमान् शाहपुराधीशजी कुछ शंकित और विकल से रहने लग गये कि देखिये अब क्या होता है॥

इन दिनों जिस समय इनके समीप यह शुभ पत्र पहुंचा कि श्रीजी महाराज अमुक तिथि को उदयपुर छोड़कर आपकी तरफ़ आने के लिये चित्तौड़ में तीसरे दिन पहुंचेंगे और वहां से आप की राजधानी में अमुक तिथि और समय पर पहुंचना चाहते हैं इसलिये आप स्थान चित्तौड़ पर उनके आगमनार्थ यानादि का अच्छे प्रकार प्रबंध कर दीजियेगा जिससे वे सुखपूर्वक नियत समय पर राजधानी में पहुंच जाय तो फूले अंग नहीं समाते थे — तुरंत आज्ञानुकूल सब सिद्ध रहेगा — ऐसा उत्तर लिख यथोचित सब प्रबंध के साथ राज पुरुषों को चित्तौड़ भेज दिया और स्वयं उस दिन की प्रतीक्षा करते हुए श्रीजी महाराज के लिये स्थिति स्थानादि की तय्यारी कराते रहे॥

इधर भी राजधानी उदयपुर से चलकर तीसरे दिन निम्हाड़े के स्टेशन पर

पहुंचकर रेल द्वारा तारीख ३ मार्च सन् ८३ ई० शनिवारको चित्तौड़ जा उतरे जहांपर उदयपुर राज्यकेलेखसेस्थानादिकासब समीचीन प्रबंध तत्रस्थ अधिकारीने प्रथमहीसे सिद्ध कर रक्खा था - यह स्थान और यहां का वायुजल तथा पर्वत स्थली और आरण्यादि बहुत ही रमणीय और सुहावना है कुछ मार्ग जन्य श्रम विचारभी था इसलिये श्रीजी महाराज ने इस पूर्वोषित परम रमणीय स्थलपर त्रिरात्र निवास करने का प्रबंध कर रक्खा था - तदनुसार ही सब किया - उस अवसर में कुछ दिनों का काम जोकि करना अवशिष्ट रह गयाथा वह सब निपटाया अर्थात् बहुत से तार पत्रादि का उत्तर यहां से जहां तहां को भिजवाया ॥

बन्धुगण — अभी तक श्रीजी महाराज का शाहपुरा में पहुंचना शेष है परन्तु सब ठौर से पत्रादि उक्त राजधानी में पहुंचने लग गये कारण कि समाचार पत्रों के द्वारा प्रथम से ही सर्वत्र उधर यात्रा होने की खबर फैल गई थी और जब कि यह खबर लोगों को लगी कि श्रीजी महाराज की यात्रा के समय श्रीमान् धीर वीर चिर प्रतापी उदयपुराधीश ने इस प्रकार महोत्साह के साथ दर्बार किया और उसमें उनको बड़े चाव और सत्कार के साथ इस आशय का मान पत्रादि समर्पण कर विदा किया है - तो समस्त आर्य समाजों में इस विषयक बड़ा ही उत्सव माना गया - इतना ही नहीं किन्तु उन सब लोगों ने अपने यहां से प्रशंसित महि महेन्द्र की सेवा में धन्यवाद पत्र भेजना भी आरंभ कर दिया था - जिनको अवलोकन कर श्रीमहाराणा जी भी अति प्रमुदित हुए और उसके उत्तर में प्रत्येक समाज को श्रीमान् कृपानिकेतन ने अति आनन्द के साथ अपनी

महद्राज सभा से वैसेही प्रेम पूरित कृपा पत्र भी भिजवाये॥

ये दोनों पत्र देखने दिखाने के योग्य हैं अतः यहां प्रथम उनकी प्रतिलिपि आगे चलेंगे॥

ओ३म्

आर्य समाज समर्पित धन्यवाद पत्र

श्री मन्महाराजाधिराज महिमहेन्द्र यावदार्यकुलदिवाकर महाराणा श्री श्री १०८ श्री सज्जन सिंह जी वर्म्मा धीर वीर चिर प्रतापी जी० सी० एस० आई मेदपाटाधीश चरणेषु।

महामान्यवर महाशय

श्रीमान्। इस आर्य समाज का सविनय निवेदन यह है कि हमारे आर्यावर्त देश की यावत् भूत, भावी और वर्तमान् आर्य समाजों के सर्वस्व रूप परम पूजनीय परमहंस परिव्राजकाचार्य श्री १०८ श्रीमद्दयानन्द सरस्वती स्वामीजी महाराज का सर्वत्र उपदेश करते करते इस वर्ष यावदार्य कुल दिवाकर के प्राचीन और प्रशस्त राज्य मेवाड़ में भी पधारना होकर सात मास के लग भग निवास हुआ और जब तक उक्त स्वामीजी महाराज का तत्र निवास हुआ तब तक श्रीमान् ने अपनी परम प्रसिद्ध योग्यता के अनुसार स्वामी जी महाराज का आतिथ्य और आदर सन्मान बहुतही अच्छी तरह रक्खा कि जिसके सविस्तर समाचार हम लोगों के जानने में आकर यह

उत्कंठा हुई कि हम सब लोग हमारे उस सनातन यावदार्यकुल दिवाकर को इस निवेदन पत्र द्वारा अन्तःकरण से धन्यवाद अर्पण करें कि जिनके शूरवीर पुरुषा हमारे प्रजापति उस समय से लेकर इस समय तक निरन्तर रहे हैं कि जिस समय की आर्य-विद्या-धर्म और राजनीति का उपदेश और प्रतिपादन उक्त स्वामी जी महाराज वर्तमान काल में करते हैं ॥

श्री मन् महाराज राजन्। जैसे इस वर्ष स्वामी जी महाराज का अकस्मात् पधारना मेदपाट देश में होने से आर्यावर्त की सनातन आर्य विद्या-धर्म और राजनीति के उपदेश श्रवण करने का अवसर श्री मान् को अपने सभ्य सुभट गण सहित प्रथम ही प्राप्त हुआ है वैसे ही सब आर्य समाजों को भी आज श्री मान् को अपने सनातन यावदार्य कुल दिवाकर जानने और सविनय धन्यवाद देने का अवसर प्रथम ही हस्तगत हुआ है निदान श्री श्री जगदीश्वर से यही प्रार्थना है कि श्री मानों को चिरस्थाई रक्खे ॥

श्री मान् आपने जो एक अपना निज हस्ताक्षरी पत्र स्वामी जी महाराज को अर्पण किया है उसकी प्रति अवलोकन करने से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि जैसी हम लोग श्री मान् की योग्यता इतने दूरस्थ प्रदेशों में बैठे २ सुनते थे वह आज सर्व रीत्या निश्चित हुई और उसमें भी विशेषता यह है कि जो कुछ श्री मानों ने उक्त पत्र में लिखा है वह छः मास महीनों तक निरंतर स्वामी जी महाराज की परीक्षा करके लिखा है। और इसके अतिरिक्त यह भी आप को अनेक धन्यवाद देने योग्य विषय

है कि श्रीमानों ने उक्त स्वामीजी महाराज कृत स्वीकारपत्र और उसमें नियत की हुई व्यवस्थापक सभा के सभापति का पद अपने कतिपय सभ्य सुभटों सहित अंगीकार किया कि जिस से यह दृढ़ाशा हुई कि श्रीमान् हम सब आर्यों पर अब से वही सनातन पुत्रवत् कृपा दृष्टि रक्खेंगे ॥ अन्त में सब आर्यों की यही सर्व शक्तिमान् जगदीश्वर से प्रार्थना है कि श्रीमानों को धनवान् पुत्रवान् और आयुष्मान् पूर्ण प्रतापयुक्त करे ॥ मिति संवत् १९४० विक्रमी

श्रीमदीय चरणसेवक समस्त आर्य समाज के प्रधानसभासदों की ओर से ॥

हस्ताक्षर ———— सभापति

हस्ताक्षर ———— उपसभापति

हस्ताक्षर ———— मंत्री

हस्ताक्षर ———— कोषाध्यक्ष

हस्ताक्षर ———— पुस्तकाध्यक्ष

श्रीमान्

उदयपुराधीश के आज्ञा पत्र की प्रति

श्री रामजी

श्री एकलिङ्गजी
नम्बर
१५९

श्री
श्री सज्जनमहीमान्य श्रयेक
लिङ्गरतेरियम्॥ स्वतंत्र सद् सो
मुद्रा मुद्रिता हि दयानिधेः
॥१॥

सिद्धि श्री श्री आर्य समाज अमुक योग्य लिखी राज्येस्थान उदयपुर से राजेश्री महद्राज सभा — अपरंच राज में जो एक आर्य समाज अमुक का धन्यवाद पत्र लिखा मिती आश्विन कृष्णा २ संवत् १९४० का श्री मन्महाराजाधिराज महिमहेन्द्र यावदार्य कुलदिवाकर महाराणा जी श्री १०८ श्री सज्जनसिंह जी वर्म्मा धीर वीर प्रतापी की सेवा में उक्त समाज की ओर से सविनय निवेदन करने को राज के पत्र लिखे मिती आश्विन कृष्णा २ सं० ४० के साथ भेजा वह आज श्रीमान् यावदार्य कुलदिवाकर की सेवा में यथा विधि निवेदन होकर उसके प्रत्युत्तर में श्री मदीय आज्ञानुसार लिखने में आता है कि उक्त धन्यवाद पत्र को श्रीमानों ने प्रसंनता पूर्वक स्वीकार किया

और उक्त सभा के सभासदों ने जो अपने शुद्ध अन्तःकरण से अपनी रूची और विचार इस प्रकाशन राज्य के प्रति उक्त धन्यवाद पत्र में प्रकाशित किये हैं उनको ज्ञात करके भी श्रीमान् अति प्रसन्न हुए और सर्वशक्तिमान् परमेश्वर से आशा रखते हैं कि सर्व आर्यों के ऐसे ही श्रेष्ठ विचार सदैव रहकर सदा परमेश्वर के आराधन और पालन के भागी होंगे और प्रतिदिन आर्यावर्त देश की सनातन आर्य विद्या धर्म- उच्च नीति- और रीति- मर्यादादि को संप्रति काल के साथ से संरक्षित करके यथास्थित पालन करेंगे कि माधवान् संवत् १९४० आश्विन कृष्णा १४ तदनुसार तारीख २६ सितम्बर सन् १८८३ ई॰

हस्ताक्षर मोहनलाल विष्णुलाल पण्ड्या मंत्री
राजे श्री महद्राजसभा श्री दर्बार देश मेवाड़

सुहृद्गण— देखा आपने श्रीमान् पोप आर्यकुलदिवाकर महाराणा जी का औदार्य और प्रजावात्सल्य- कहां तक उन्होंने प्रेम नीति और धर्मोत्सुक्यादि दर्शाया है— हम लोग कहां के कौन किस पर इतने बड़े महाराजाधिराज इस प्रकार कृपामृत बर्साकर समस्त जगत् का उत्साह बढ़ावें क्या यह श्रीमानों का अलौकिक कृत्य नहीं है— भला उनकी इस विलक्षण गुणग्राहकता की प्रशंसा करने में किसकी लेखनी समर्थ हो सकती है— देखिये तो सही उन्हों के इस परम दर्शनीय परम प्रशंस्य पत्रस्थ पदों का लालित्य-माधुर्य्य और गांभीर्य्य- कैसा हमारे चित्त को आकर्षण करता है और कैसी हमको कर्तव्यता जताता है इतनाही नहीं किन्तु उसका सदा सम

उन म हाराणाके चित्तोदधि में जैसे २ जो २ गुण रत्न भरे हैं उनको भी अच्छे प्रकार झलका रहा है। सिद्धान्त यह कि इस अवनि पर अन्वर्थाभिधान इस काल में यही एक नृप श्रेष्ठ हुए जान पड़े॥

अब रहा यह विवेक कि इस समय के यावत् राजगणों में यही ऐसे अनुपम और विलक्षण सच्चरित्र कैसे होगये- तो सोचते२ इसका मूल कारण उन्हों का प्राक्तन तपोबल और सांप्रतिक सद्गुरु समागम ही कहने में आवेगा- सो सब प्रत्यक्ष है- अतः इसकी विशेष व्याख्या करना कुछ अवश्य नहीं हां यह प्रार्थना करना परमात्मा से परमावश्य है कि वह अपना ऐसाही अनुग्रह हमारे भारत वर्षीय इतर राजगणों पर भी करे अर्थात् उनको हमारे महाराणा जी महोदय के उदाहरण पर चलता करदे- एवमेवास्तु॥

इसी प्रकार जिस समय फ़ीरोज़पूर के अनाथालय में श्रीमान् महाराणा जी प्रदत्त सात सौ रोप्य मुद्रा अनाथ बालक और बालिकाओं के लिये पारितोषिक पहुंचा उस समय उन्होंने भी एक धन्यवाद पत्र प्रशंसित महिमहेन्द्र की सेवा में भेजा उसको अवलोकन कर श्रीमानों ने अति प्रमुदित होकर अपनी महद्राज सभा से उसीक्षण प्रसन्नता पत्र भिजवाया- उसमें का यह वाक्य हम लोगों को कभी विस्मरण न होगा कि "हे बालको तुम लोग अब से कभी अपने को अनाथ न समझो और जिस प्रकार तुम लोग श्रेष्ठ विद्या और सद्गुणादि ग्रहण करने में परिश्रम करोगे उसी प्रकार श्रीमान् मेदपाटेश्वराधीश को प्रिय होगे॥

कहिये बंधुजन अब कौन हम दीन प्रजा के अनाथ बच्चों का इस रीति प्रतिपालन करेगा- अस्तु हरि रिच्छा बलीयसी॥

पुनरत्र देव प्रकृतम्

ता० ७ मार्च सन् १८८४ ई० को श्रीमान् सर्व विद्यानिधान स्वामी जी महाराज राजधानी शाहपुरा में दाखिल हुए- उस समय के अमितानन्द की प्रशंसा हो नहीं सकती- मानों उमड़ करके महार्णव आमिले- मंगल प्रचुर शुभ चरणांबुज समागम सुन महाराजा नाहरसिंह जी वर्म्मा बड़ी ही तैयारी और धूम धाम के साथ पेशवाई कर लाये और स्वस्थान पर पधाराये- बारंबार नमस्ते पर नमस्ते करते धन्यवाद देते अपना और अपनी राजधानी का सुख सौभाग्य सराहते थे- फिर इसी एक दिन को यह बात न थी किन्तु प्रतिदिन प्रति घड़ी और प्रतिक्षण उनकी भक्ति इसी प्रकार श्रीचरणों में शुक्लेन्दुवत् वृद्धिंगत रही- उनका चित्त चकोर सदैव उसी अपूर्व सुधाकर के ही ध्यान धारणा में रहा करता था- इस राजधानी में व्याख्यानों की भी बड़ी धूम धाम रही यथा राजा तथा प्रजा भी होगई श्रीमान् के समीप इन्होंने भी यावत् उनकी स्थिति बहुत कुछ न्याय नीति आदि उपयोगी शास्त्र पढ़ा और ऐसा प्रेम बढ़ाया कि यहां पर स्वामी जी महाराज को जाता हुआ काल जानही न पड़े- परंतु यह केवल इन्हीं महाराजा के प्रेम प्रमोद का चिन्ह और उत्कर्ष समझिये- बाकी जो सदैव जाग्रत और जगत् का जगाने वाला हो वह कब ऐसा अचेत हो सकता है- निस्सन्देह प्रशंसित नृपरत्न को यही विदित होता था इस स्थल पर सद्गुरु महाराज राजधानी उदय

पुर में कुछ अधिक ही निवास करेंगे परन्तु देर न लगी - चलने की तय्यारी होगई।

कथा इसकी यह है कि अकस्मात् श्रीमान् जोधपुराधीश की सभा के अतिप्रिय कार्यदक्ष सन्नद्ध सर्दार अपने महाराजाधिराज प्रतापसिंह जी का एक विनयपत्र श्रीजी महाराज के नाम लेकर शाहपुरा में आ पहुंचे - तदाशय उस पत्र का यह था कि भगवन् बहुत दिन होगये अब कृपा कर के अपने इस पर आतुर पूर्ण भक्त की लगी लालसा को भी अति सत्वर पूर्ण कीजिये - आप के लिये रेल और रथ गजादि यानादिक का यथावत् प्रबंध कर के इन सेवकों को श्री सेवा में भेजा है इत्यादि॥

इस प्रकार के पत्र और सर्दारों के मुख यह समाचार कि महाराज श्री हमारे श्रीजी हजूर को अत्यन्त उत्कंठा हो रही है अहर्निश इन्हीं चरणारविन्दों के ध्यान में रहते हैं प्रतिक्षण दर्बार में आप ही की चर्चा रहती है - तैयारी कीजिये सुन श्री जी महाराज ने प्रसन्न होकर कहा कि यदि ऐसा है तो प्रातः काल ही चलेंगे आज सब प्रस्तुत होजाय - तदनुसार सब तय्यारी होगई और उसी दिन शाहपुराधीश ने घोषणा भी कर दी कि आज के परमोत्सव में राज्य के सब छोटे बड़े दर्बारी उपस्थित हों श्रीमान् सद्गुरु महाराज को सन्मानपत्र समर्पण होगा - ठीक समय पर सब लोग आगये और बहुत प्रकार से आगे लिखा सन्मानपत्र और एक दुशाला तथा पंच शतमुद्रा उपहार श्रीमान् परम भक्त शाहपुराधीश जी ने भक्तवत्सल के चरणों में अति विनय और नम्रता पूर्वक निवेदन किया

वृत्तान्त उनका समस्त समाचार पत्रों के द्वारा प्रथित हैं॥ जिस प्रकार और जिस रीति आदर सत्कार और उत्साह के साथ सन्मान पत्रादिक का देना श्रीमान् उदयपुराधीश जी महाराज का पूर्व में वर्णन हो आया है उसी प्रकार इसकी भी शोभा वर्णनीय है उसको स्वीकार कर के श्रीमान् यतिवर्य जी महाराज अपने भक्त शिरोमणि महाराजा शाहपुराधीश का सांत्वन कर के जोधपुर की ओर सुप्रस्थित हुए॥

सन्मानपत्र की प्रति

स्वस्ति श्री सर्वोपकारार्थ कारुणिक परमहंस परिव्राजकाचार्य श्री मद्दयानन्द सरस्वती जी महाराज के चरणारविन्दों में महाराज राजाधिराज शाहपुराधीश की वारंवार नमस्ते ऽस्तु- वैदिक धर्म उपदेशक मंडली में मेरी ओर से एक उपदेशक रहें जिसके व्यय के वास्ते एक १) मुद्रा नित्य प्रति अर्थात् मासिक ३०) तीस यहां से निरंतर आज की तिथि से प्राप्त होते रहेंगे- सो वैदिक धर्म की महिमा सुनाकर पाखंडादि खंडन करते रहें

अपरंच यहां आप का विराजना सार्द्ध द्वय मास पर्यंत हुआ तथापि आप के सत्य धर्मोपदेश के श्रवण से मेरी आत्मा तृप्त न हुई आशा थी कि आप ग्रीष्मांत अत्रास्थित होते परंतु जोधपुराधीशों की ओर से दर्शनों की और वेदोक्त धर्म उपदेश ग्रहण की पुनः सत्याचरण- असत्य का त्याग आप के मुखारविन्द से श्रवण करने की अभिलाषा देख के आपने

वहां प्रधारना स्वीकार किया और अब शरीर भी क्षीण है मनुष्यों के उपकारार्थ प्रकट हुआ है यह समझ के मेरी भी सम्मति यही हुई कि आप का पधारनाही उत्तम है यही समझ के यहां विराजने की प्रार्थना नहीं की आशा है कि कृत कृत्य करने के निमित्त पुनरागमन करेंगे - संवत् १९४० मिती ज्येष्ठ कृष्णा ४

(हस्ताक्षर महाराजा श्री नाहर सिंहस्य)

प्रियसुहृद्वरा — यद्यपि श्रीमान् स्वामी जी महाराज के समागम में बहुत से राज पुरुष और राज स्थानादिक थे तथापि इस यात्रा में प्रथम दिन से ही उन्हों को बहुत कुछ क्लेश सहना पड़ा - प्रथम तो राजपूताना देश का ऐसा नष्ट मार्ग कि जहां खड़े होने को कोसों वृक्ष की छाया नहीं तिस्पर ग्रीष्म ऋतु और आंधी पानी का घेरा - ज्यों त्यों ता० २७ मई को अजमेर पहुंचे - वहां एक दिन निवास करके अत्रस्थ अपने समस्त भक्तों से मिले वहां से दूसरे दिन रेलपर सवार होकर पाली नामक स्टेशन पर उतरे - तहांपर श्री महाराजा जोधपुर की ओर से हाथी रथ पालकी आदि वाहन और भृत्य आदिजन अर्थात् सब प्रकार का सुख प्रद राजसीय सामान समुपस्थित था - तत्सहित प्रशंसित राजधानी में पहुंचे और भाई फैजुल्ला खां की परम दिव्य कोठी पर (जो प्रथम सेही इन्हों के ठहराने के लिये सुसज्जित की गई थी) उतारे गये इन्हों के पधारने के समाचार सुनतेही श्री १०८ महाराजाधिराज श्रीयुत प्रतापसिंह जी अपने समस्त बंधु बांधव और सर्दार मराइलों को साथ ले श्री

मान् सर्व विद्या निधान जगद्गुरु महाराज के दर्शनार्थ समुपस्थित हुए- समीप पहुंचते ही १ सो वर्ण और २५ रौप्य मुद्रा भेंट और बहु विनय पुरःसर प्रणाम करके नीचे बैठ गये परन्तु श्री जी महाराज ने उसी क्षण उन को बहु प्रीति पूर्वक अपने दोनों हस्त कमलों से उठाकर अपने समीप उच्चासन पर बिठाल लिया- पश्चात् इस्के परस्पर बहुत कुछ कुशल प्रश्नादि वार्ता परमादर पूर्वक कर के विदा हुए॥

उस दिन से निरंतर यावत् स्थिति परम गुरु महाराज तत्रस्थ राजा प्रजा को अनेक सदुप देश करते रहे और व्याख्यानों की भी यथा पूर्व धूम धाम और खंडन मंडनादि होता रहा उसमें निरंतर सब लोगों अर्थात् राजा प्रजा को जैसा कुछ करना और सदाचरण से रहना उचित होता है वह सब बराबर वे धड़क समझाकर उन को सुचेत और प्रमुदित करते रहे- उसी प्रकार उन लोगों की भी सत्य ह श्री चरणों में प्रीति बढ़ती गई अर्थात् राज्य के समस्त अमीर, सर्दार, प्रधान विद्वान्- बांधव जन तथैव स्वयं महाराजाधिराज यथावकाश श्री जी महाराज के आश्रम पर आते जाते रहे सारांश वे सब लोग इस अपूर्व समागम को पाकर अपने को बहु मानी मानते और श्रीमान् सद्गुरु महाराज को अंतःकरण से अपरमित धन्यवाद देते थे- इस प्रकार श्रीमान् जोधपुराधीशों को प्रबल प्रीति उत्साह और लालसा देख उन के कल्याण की अपेक्षा से उस राजधानी में श्री जी महाराज चार मास तक बहुत आनंद पूर्वक रहकर अपना नित्य नैमित्तिक

कृत्य करते रहे परन्तु पंचमकाल यहां पर उनको अच्छा नहीं गया उसकी संपूर्ण व्यवस्था सातवें मयूख के द्वारा प्रकाशित होगी ।।

इति श्रीमत् परमहंस परिव्राजकाचार्य वर्य श्रीमान् स्वामी दयानंद सरस्वती दिग्विजयार्कीय तृतीय खण्डे श्री मच्छाहपुर जोधपुराधीश संमिलनं नाम षष्ठो मयूखः ।।

ओ३म्

अथ सप्तमो मयूखः

(१)

सुमुखगण — अबतक आपको जिसरीति अनेक प्रकारकी इष्ट कथा सुनाई उसी प्रकार अब परम निष्ट वार्ता का सुनाना भी अत्यावश्यक है — परन्तु क्या कीजिये दैवी सिद्धान्त यही है ॐ कि जिस भांति दिन के पीछे रात्रि हो जाती है उसीभांति जगत् में तुरंत सुख के पीछे दुःख भी आ पहुंचता है इसके अनेक उदाहरण इतिहासों में वर्तमान हैं जैसे सर्व कला निधान श्रीमान् रामचन्द्रजी महाराज का विजय और राज्याभिषेक हुए पीछे तुरन्त वनका आगमनादि हमको सुनना पड़ता है — ठीक उसी प्रकार यहां का प्रसंग है — अर्थात् राजधानी जोधपुर में पंचम मास श्रीमान् जगद्गुरु स्वामी जी महाराज को बहुत ही खेद के साथ व्यतीत हुआ। विस्तार उसका यह है कि संवत् १९४० आश्विन कृष्णा एकादशी गुरुवार के दिन प्रथम कुछ श्लेष्मा अर्थात् जुकाम श्री जी महाराज को हुआ उसके चौथे दिन अर्थात् चतुर्दशी की रात्रि को धूड़मिश्र पाचक ध्यास से (जोकि शाहपुरे का रहनेवाला था) दूध पीकर सोये पीछे स्वामी जी महाराज को रात्रि भर में तीन वमन हुए परंतु उन्होंने उस समय किसी को नहीं जगाया स्वयं जल से कुल्ली कर रके सोते रहे इनका सदैव यह नियम रहा कि प्रतिदिन प्रातःकाल उठकर वनमें शुद्ध वायु के ग्रहणार्थ जाते थे परंतु इस मावस को बहुत दिन चढे उठे और उठते ही फिर उन को एक वमन हुआ — इसपर संदेह

ॐ सुखस्यानंतरं दुःखं दुःखस्यानंतरं सुखम् – द्वे एते हि जंतूनामोल्लंघ्यं स्यात दिन रात्रिवत्

हुआ कि यह क्या बात है- तब दो तीन वमन उन्हों ने खुद आप जल पीपीकर कर डाले और शीघ्र अग्निकुंड में धूप डलवाकर कोठी से दुर्गंधि निकाली की पश्चात् जब उदर में शूल उत्पन्न हुआ देखा तब डाक्टर सूरजमल जी को बुलाया उन्हों ने आकर वमन बन्द करने की औषधि दी और पूंछा कि अब आप का दिल कैसा है स्वामीजी ने कहा कि अब पेट में शूल हो रहा है और प्यास बंद होने की औषधि दी और कहा कि महाराज जी बड़े शोक का कारण यह है कि इस निर्जल परम भयंकर मारवाड़ देश में आप ऐसे महात्मा का निवास हुआ नहीं तो इस महाशूल का मूल काहे को जमता- इतने में वह शूल बढ़कर त्रिशूल होगया शरीर के सब अवयवों में प्रविष्ट हो स्वामी जी को बहुत सताने लगा और श्वास के साथ बड़े वेग से वह चलता था परन्तु धन्य है स्वामी जी को कि ऐसे महत् कष्ट में भी ईश्वर के ध्यान के सिवाय कभी आह नहीं की ॥

ता० ३० सितम्बर सन् १८८३ ई० के चार बजे श्री महाराजा प्रताप सिंह जी के नौकर भारत और अमर दान जी ने बड़े डाक्टर अली मर्दां खां साहब को बुलाया उन्हों ने आकर एक पट्टी पेट पर बंधाई और पूर्वोक्त डाक्टर साहब भी वहां उपस्थित थे फिर उसी दिन आठ बजे संध्या को श्री युत रूपराव और राजा तेज सिंह जी आये- उसी समय उनके मुंशी नित्या भार ने अमर दान जी और दामोदर दास जी को बुलाया तत्पश्चात् फर्रुखाबाद निवासी कप्तान साहब आदि बहुत से योग्य पुरुष भी आये- सब महाशय नमस्ते करके बैठे और कहा कि श्री महाराज हमने तो आप के उदर में साधारण शूल जाना था अब देखा तो अत्यन्त दुःख हुआ- अली मर्दां खां

जी स्वामी जी के गिलास लगा दो परन्तु अब तो रात्रि होगई है कल अवश्य लगा देना यों एक घंटा तक वार्तालाप कर करा कर वे तब चले गये और सेवक जन परम सेव्य की सेवा करते रहे॥

ता० १ — अक्तूबर को छ: बजे डाक्टर साहब आये और ग्लास लगाये उन से सांस के साथ जो दर्द होता था वह तो बन्द होगया परन्तु बाक़ी पीड़ा वैसी ही बनी रही।

ता० २ — अक्तूबर को प्रातः काल के सात बजे स्वामी जी ने डाक्टर अली मर्दाखां से कहा कि बहुत अच्छा परन्तु प्रथम वनगाम फूले पश्चात् दस्त आवें तो अति उत्तम है — स्वामी जी ने कहा कि जिससे रोग निवृत्ति हो वह कीजिये — तब डाक्टर साहब ने घर पर जा गोलियां बनाकर भेज दीं और जिस प्रकार उन्होंने कहा था उसी प्रकार खाईं।

दूसरे दिन अर्थात् ३ — अक्तूबर को जुलाब दिया जिससे ६ बजे तक कोई दस्त नहीं आया तब डाक्टर साहब ने कहा कि महाराज हल्का जुलाब है जब फुज़ला पेट में गर्मी करेगा तब खूब दस्त होंगे ऐसा कहकर चले गये।

१० बजे से दस्तों का आरंभ हुआ रात्रि भर में तीस से अधिक दस्त पतले पानी से हुए प्रातः काल अर्थात् ४ — अक्तूबर को पुनः डाक्टर लोग आये तब स्वामी जी ने कहा कि तुम तो कहते थे कि छः सात दस्त होंगे सो तीस से भी अधिक हुए अब हमारा जीव बहुत घबड़ाता है — इस दिन भी अधिक दस्त हुए और सायंकाल को जो दस्त हुआ उसके पश्चात् स्वामी जी को मूर्छा होगई फिर तो यह हाल होगया कि प्रति दस्त के साथ मूर्छा होजाती थी॥

६ अक्तूबर को स्वामी जीने कहा कि भाई अब दस्त बन्द होने चाहिये क्योंकि मुझको विना मूर्छा आये एक भी दस्त नहीं होता और मेरा जी भी बहुत घबड़ाता है शरीर में अग्नि लगरही है-तब डाकटर साहबने कहा कि महाराज दस्त बन्द होनेसे रोग की वृद्धि का भय है यदि आप से आप बन्द हो जावें तो अच्छा है ऐसा कह चले गये तत् पश्चात् डाक्टर सूरजमल आये और कहा कि इस जुलाब के देने में मेरी तो कदापि सम्मति न थी परंतु क्या किया जावे बड़े तो बड़े ही होते हैं परिणाम में उदर से लेकर हृदय, कंठ तालू और मुख पर्य्यन्त बहुत छाले पड़गये तथा शीर्ष हस्त और पदों पर भी फोड़े होआये जिनकी पीड़ा से बोल नहीं सकते थे इसके उपरांत दस्तों के साथ हिचकी भी उत्पन्न होगई परन्तु धन्य श्री स्वामी जी महाराज का साहस कि जिन्हों ने फिर भी कभी आह न की और जब २ हिचकियों ने अधिक सताया तब-तब उसके निवारणार्थ दो २ घन्टे अपने प्राण चढ़ाकर सुखी रहते थे ॥

भ्रातृगणो यह विचारने का स्थान है न जाने यह किस प्रकार का जुलाब और औषधि थी इसपर बहुधा मनुष्य कई प्रकार की शंका करते थे स्वयं श्रीमान् स्वामी जीने भी कई पुरुषों और महाराज प्रताप सिंह जी से इस विषय में स्पष्ट कह दिया था।

परंतु अब क्या हो सकता था हमको तो इस स्थल पर इतना ही शोक है कि इनके रोग की इतनी प्रबलता होनेपर भी इन्हों ने किसी आर्य समाज को सूचित न किया यदि यह वृत्तान्त उसी समय जाना जाता तो कभी यह रोग इतनी प्रबलता

न पाता यहां पर (अवश्य भावि भावानां प्रतीकारो न विद्यते) इस वाक्य को भी सत्य जानना चाहिये॥

देखिये-१२ अक्टूबर की बात है कि आर्य समाज अजमेर को उसके किसी सभासद ने स्वामी जी के इस वृत्तान्त की खबर दी तो उसपर प्रथम उस समाज ने यह बात सोचकर कि यह खबर किसी शत्रु ने मिथ्या उड़ाई होगी अपना कुछ ध्यान ही नहीं दिया क्योंकि इससे प्रथम एक बार अजमेर में यह मिथ्या खबर उड़ चुकी थी कि जोधपुर में स्वामी जी से फौजदारी होगई है जब इस विषय में स्वामी जी से पूंछा गया तो उन्हों ने उत्तर दिया कि तुम लोग किंचित् मात्र भी अपनी बुद्धि को काम में नहीं लाते यदि ऐसा होता तो अबतक कितने ही तार दौड़ गये होते-परन्तु बंधुगण मन भी एक विचित्र वस्तु है उन्हों ने उसको कई प्रकार से समझाया परन्तु उसने न माना और जब अधिक होअधिक संदेह बढ़ा तब समाज ने अपने एक सभासद जेठमल सोढा को स्वामी जी के समीप भेजा उसने स्वामी जी की यह दशा देख प्रार्थना की कि श्री जी महाराज यह क्या हुआ और अधिक तर शोक का विषय यह है कि आप ने किसी समाज को भी सूचित न किया-तब दयालु महाराज ने यह उत्तर दिया कि भाई बीमारी की दशा को क्या लिखते यह तो शरीर का धर्म ही है कुछ अन्य वार्ता होती तो अवश्य सब को लिखते इसके लिखने में तुम लोगों को भी बहुत क्लेश होता इसलिये नहीं लिखा गया॥

भ्रातृगण-जब इस सभासद ने आकर अपने समाज को सुचेत किया तब उसने उसी समय बंबई, फर्रुखाबाद, मेरठ, लाहौर आदि बहुत से समाजों को तार दिये फिर तो सर्वत्र कोलाहल

मच गया और चहुंओर से शतशः तार-पत्र और समाजीय सभ्य श्रीमान् के समाचारार्थ दौड़े सो यह तारों का तार और पत्रों पर पत्र तथा मनुष्यों पर मनुष्य आबू व अजमेर में चले आने का प्रचार और इन सब से अधिक काल तक ऐसा लगातार रहा कि जिसका विस्तार जानना आधीन केवल उसी एक कर्तार के रहा है ॥

इधर जब जोधपुर में रोग निवृत्ति के चिन्ह दृष्टि न पड़े तब एक दिन रात्रि को पं॰ देवदत्त लेखक और लाला पन्नालाल जी मुदर्रिस जोधपुर ने स्वामी जी से कहा कि महाराज यह नगर शीघ्र छोड़ने के योग्य है - तदनुसार स्वामी जी ने उसके प्रातःकाल ही श्री १०८ महाराज जोधपुराधीश को पत्र लिखा कि हम आबू जायेंगे - श्रीमान् ने उत्तर दिया कि ऐसी दशा में मेरे राज्य से जाना मेरी भारी अपकीर्त्ति है परन्तु जब स्वामी जी का विचार ठहरने का न देखा तब १६ अक्टूबर को आबू जाना नियत हुआ उसी दिवस संध्या के समय श्रीमान् जोधपुराधीश अपने सब बंधु और अमीर उमरावों सहित स्वामी जी के पास आये और विनय किया कि महाराज जी आप ऐसी दशा से मेरे राज्य से पधारते हैं यह बात कुछ छिपी न रहेगी इसमें मेरी बड़ी अपकीर्ति है परन्तु आप की यह दशा देख कुछ कह नहीं सकता हूं ॥

पश्चात् २००७ मुद्रा और दुशाले स्वामी जी को भेट किये और उनको गर्मी की व्याकुलता देख अपना खस का डेरा और खस का पंखा साथ दिया और स्वामी जी को पीनस में सवार कराकर नगर के द्वार तक प्रशंसित श्रीमान् अपने भाई बंधु और अमीर उमरावों के सह वर्त्तमान स्वामी जी महाराज की पीनस के

उक्त प्रसूत (जोधे कहने का) विद्या समस्त भूखंड में एक मास से

साथ २ पैदल आये पश्चात् पीनस ठहराकर स्वामीजी से बहुत कुछ विनय की और कहा कि महाराज आपने श्रीमान् महाराना साहब को तो पढ़ाया ही है परंतु मुझ को भी उन से किसी प्रकार कम अपना सेवक न समझिये और मैंने यहां से आबू में समाचार पहुंचा दिये हैं वहां आप अपनी खास कोठी पर ही ठहरिये जहां सब प्रकार के सुख सौकर्य के साथ राजपुरुष आप की बराबर सेवा करेंगे और जब आप आबू पर रोग से निवृत्त हों तो मुझ को अवश्य तार द्वारा सूचित कीजिये मैं पुनः वहां आप के लेने के अर्थ आऊंगा और पीनस के कहारों से कहा कि यदि तुम लोग स्वामीजी महाराज को अति प्रसन्नता पूर्वक पहुंचाकर उनकी चिट्ठी लाओगे तो तुमको राज्य से पारितोषिक मिलेगा ऐसा कह बहुत दुखी और अश्रुपाती हो ज्यों त्यों निजभवन को सिधारे ॥

बंधुगण निःसंदेह महाराजा जोधपुराधीश जी का श्रीचरणों में बड़ा ही अकृत्रिम प्रेम था आज उनके वियोग से जो कुछ कि उनके अंतरात्मा में असह्य खेद हुआ उसका वर्णन कौन कर सक्ता है इन्हों ने प्रकाशित कर दिया था कि जो कोई सद्वैद्य श्री जी महाराज को चंगा कर देगा उसको दो सहस्र मुद्रा का पारितोषिक इस राज्य से मिलेगा— इस समय उन्हों ने बहुत सा राह खर्च देकर अपने दो मुसाहब आबू पर श्री जी की सेवार्थ उनके साथ भेजे इस व्यतिरिक्त रेल तक आराम से पहुंचाने को ४ रथ २ सेज गाड़ी ४ पालकी गाड़ी ६ सवार ६ ऊंट ३२ कहार आदि बहुत से परिचारक तथा डाक्टर सूरजमल्ल जी को बड़े प्रेम पुरःसर साथ कर दिया था इधर मार्ग में स्वामीजी महाराज को दस्त और हिचकी बराबर

आती रहीं और एक दो वमन भी हुए - यों भांति क्लेशों से २१ अक्तूबर के सायंकाल को आबू पर पहुंचे संयोग वश एक आर्य डाक्टर पंडित लक्ष्मण दास जी (जो कि अजमेर जाने को पहाड़ उतर रहे थे) मार्ग में मिल गये- उन्होंने स्वामी जी को जब इस प्रकार रोग ग्रस्त देखा तो तुरंत उन के साथ लौट पड़े और आबू पर पहुंचकर औषधि दी उससे श्री जी महाराज के दस्त और कुछ की थम गयीं और विश्वास हुआ कि अब अच्छे हो जावेंगे - उक्त डाक्टर साहब ने बहुतेरा चाहा कि हम आबू पर ठहर कर अच्छे प्रकार स्वामी जी की औषधि करें परंतु उनके साहब ने उनको न ठहरने दिया जब देखा कि यह साहब इस्तीफा तक स्वीकार नहीं करता तब वह पर वश हो चले गये परन्तु उन्होंने चार दिन की औषधि बनाकर धर दी थी और सेवकों से कह गये थे कि इसको नित्य देते रहना और जो तुम लोग स्वामी जी को अजमेर ले आओगे तो मैं बड़ी सावधानी से औषधि करूंगा॥

उसी दिन उन के गये पीछे बहुत जगह के समाजीय सभ्य श्री जी महाराज की सेवा में २३ अक्तूबर को मध्यान्ह के समय उपस्थित हुए उन्होंने उनकी परिचर्या के व्यतिरिक्त बड़ा भारी काम यह किया कि जितने तार और पत्र वहां पर श्री जी महाराज के नाम आ पड़े थे वा आते जाते थे उन सब का उसी क्षण उत्तर श्री जी की इच्छानुसार भेजकर समाज मात्र की घबराहट मिटाई निःसंदेह उन दिनों श्री जी महाराज की प्रकृति वहां कुछ अच्छी हो गयी थी अतः वे लोग उनको समझा कर उक्त डाक्टर साहब के समीप ता० २६ अक्तूबर को स्थान अजमेर में ले गये॥

तहां उक्त डाक्टर साहब की औषधि-बंबई-फर्रुखाबाद-मेरठ लाहौर और कानपुर आदि के सभासदों की सम्मति से (जोकि वहां श्रीजी महाराज के साथ आकर एकत्र थे) होने लगी और उस से दो तीन दिन में बहुत कुछ श्रीजी महाराज को गुण जान पड़ा तब २८ अक्टूबर को उक्त समाजों से आये हुए समस्त सभ्यों को श्रीजी महाराज ने स्वस्थानों पर जाने की आज्ञा दी-तथा वे भी निश्चिंत होकर चले गये तदनंतर और कितने ही आर्य वहां नवीन आते रहे और कितने ही समागम में थे वे सब तथा अजमेर समाज परम हित चित्त से अहर्निश श्रीजी महाराज की सेवा और सम्हाल बराबर करते रहे और प्रत्यह बाहर से जो तार और पत्रादि आते थे उनका उत्तर भी उसी दिन ये लोग बराबर सर्वत्र सब को भेजते रहे॥

आशा थी कि यदि इसी प्रकार प्रकृति सधी चली गयी तो अवश्य श्रीजी महाराज थोड़े ही दिनों में बहुत अच्छे होजावेंगे क्योंकि डाक्टर लक्ष्मणदास जी ने भी निश्चयात्मक कह दिया था कि अब श्रीमान् स्वामी जी महाराज को कुछ सन्देह युक्त रोग नहीं है जो कुछ प्रथम भयानक दशा थी वह सब चली गई अब केवल साधारण रोग रह गया है वह भी गया जानो बाबत इसके हम तुम को तमस्सुक लिख देने सक्ते हैं कि अब स्वामी जी का कुछ भी बिगाड़ न होगा और तीन ही दिन में दिखा देवेंगे कि स्वामी महाराज अपने पैरों चलते हैं-परन्तु शोक कि हमारी यह आशा पूरी न हुई-पूरी तो तब होती जब कि हम भारत वासियों का अभीष्ट होता अस्तु अतः पर का वृत्तान्त सर्व महाशय ८ वें मयूख में अवलोकन करें

इति श्रीमत् परमहंस परिव्राजकाचार्य वर्य्य श्रीमद्दयानन्दीय दिग्विजयार्कीय तृतीय खंडे ज्ञानिष्ठोत्थानं नाम सप्तमो मयूख: ॥७॥

अथाष्टमो मयूखः

(८)

बंधुगण- तारीख २३ से लेकर ता० २९ अक्तूबर सन् १८८३ ई० तक ७ दिवस चहुंओर नगर नगरांतरों में बराबर तार पत्र और लौटकर आये हुए मनुष्यों के द्वारा यही खबर पहुंचती रही कि श्रीमान् स्वामी जी महाराज ने खेद तो अतिशय पाया परंतु जब से आबू और अजमेर पहुंचे क्रमशः अच्छे होते जाते हैं- आशा है कि शीघ्र चंगे होकर यथानुक्रम अपना काम करेंगे- इसबार की बीमारी से उठना उनका पुनर्जन्म होना है- इत्यादि प्राप्त समाचारों से वह कोलाहल और घबराहट (जो श्री जी महाराज को रोगग्रस्त सुनकर भरत खण्ड भर में मच गया था) शांति पर आते कुछ भी विलंब नहीं हुआ था कि इतने में एक दम से हवा पलट गई अर्थात् ३० अक्तूबर को प्रातः काल होने के पूर्व अजमेर समाज से जहां तहां के समाजों में तूचल मैं चल के तारों की ऐसी कतार बंध गई कि जिससे फिर समस्त भरत खण्ड में हिल चल पड़ गई॥

विस्तार इसका इस प्रकार है कि ता० २९ को अर्द्ध रात्रि के समय रोग ऐसा प्रबल हो गया कि जिसको देख डाक्टर लक्ष्मण प्रसाद के छक्के छुट गये और कहने लगे कि इसे बुलाओ उसे बुलाओ यह करो वह करो परंतु परम प्रशंसनीय काम कहना चाहिये अजमेर समाज के उन सभापति भद्र पुरुषों का जिन्हों ने इस दुरवस्था में भी अपने चित्त को भली भांति व्यवस्थित रक्खा- उन्हों

ने उसी क्षण से खूब दौड़ की तुरंत वहां के बड़े डाक्टर न्यूमन साहब को बुलाकर दिखाया तथा आगरे के सुप्रसिद्ध डाक्टर बाबू मुकुन्द लाल जी को जवाबी तार दिया और घड़ी २ के समाचार-तार और पत्र द्वारा राजधानियों को और जल्दतर दौड़ आने के लिये ताकीदी तार इतर नगरस्थ समाजों को भेजकर जो कुछ कि वहांपर कर्त्तव्य था वह सब बराबर और यथा स्थित किया- जिस समय ता० ३० को डाक्टर न्यूमन साहब ने स्वामी जी को आकर नीचे से ऊपर तक देखा तो प्रथम अत्यन्त विस्मित होकर रह गये फिर बोलेकि धन्य है इस सत्पुरुष को- हमने आजतक ऐसा दिल का मज़बूत कोई दूसरा मनुष्य नहीं देखा कि जिसको इस प्रकार नख से शिख तक अपार पीड़ा हो वह तनक भी आह वा ऊह तक न करे-परिणाम में जो कुछ उपाय उचित जाना वह बताय अपनी दक्षिणा के सोलह रुपये लेकर चले गये-डाक्टर मुकन्दलाल जीने भी आने का तार दिया था परन्तु आवश्यकता न रहने के कारण वे रोक दिये गये- और जो कुछ जिसने कहा वह सब बराबर किया- परंतु किसी का कोई भी यत्न काम न आया-बस इसी तारिख ३० अक्तूबर सन् १८८३ ई० अर्थात् कार्त्तिक कृष्ण ३० मंगल बार संवत् १९४० वि० के दिन ठीक सूर्य्यास्त होने के समय इस अपर भानु का भी क्षणमात्र में अस्त होकर समस्त भूमण्डल न जाने किस काल तक के लिये तिमिरावृत होगया॥

हा शोक हा शोक हा शोक

बंधुगण - इस जगत में बहुधा लोग विपत्ति, समुद्र और संसारादि कतिपय वस्तु को अपार कहते हैं - परन्तु जब कि शोध लगाने वाले विज्ञानियों को उन सब का पार मिल सक्ता है तो कभी वे अपार नहीं कही जा सक्तीं तो भी बहुत लोग प्रसंग वश उनको वैसाही कहे जाते हैं सो इसका मुख्य मूल केवल यही है कि सुनने वाले उसको अपार अर्थात परम असह्य वा दुर्गम समझें - उसी प्रकार नहीं किन्तु उससे कहीं बढ़कर श्री मान् जगद्गुरु स्वामी जी महाराज के वियोगज निज शोकार्णव का अपार विस्तार इस आर्यावर्त्त भर में विस्तृत होगया जानिये और ज्यों २ काल अधिक होगा त्यों २ यह शोक सागर अधिकतर फैलेगा क्योंकि संप्रति स्वदेशीय प्रजा जैसी मुग्ध दशा में है वैसी कभी भविष्यत काल में न रहेगी - उस समय के लोग इस समय के वर्त्तमान अपने पितृ पितामहादि पुरुषों की बुद्धि और स्थिति पर भी अपार शोक करेंगे - बस वही समय इस देश वालों के लिये पूर्ण सौभाग्य प्रद होगा और उसी काल के अत्रस्थ मनुष्यों का जन्म भी सफल कहावेगा तथैव उन्हीं की संस्था पुनः इस भूमण्डल भर में उदाहरणीय व सराहनीय होगी - यदि इस अवस्था में भरतखण्ड आज होता तो ऐसा इस समय शोक करने की आवश्यकता न होती अस्तु हरे रिच्छा बली यही कहने के सिवाय और कोई समाधान हमारा नहीं आशा है कि वह सर्व नियंता किसी रूपांतर द्वारा भारत का सुधार करेगा ॥

बंधुगण - अब लिख जताना इस बात का परमावश्यक है कि श्री मान् स्वामीजी महाराज की चरमावस्था इस अंतिम दिवस

किस विधि रही और किस रीति से उन्हों ने अपना पांच भौतिक श-
रीर छोड़ा- देखिये कई दिन से उनको बोलने तक की शक्ति न थी
और न विना चार छः मनुष्यों की सहायता के करवट तक लेसक्ते
थे- उसमें भी गत अर्द्ध रात्र से ऊर्द्ध श्वास अति वेग से चल उठा
था परन्तु वे अपने योग बल से उसपर बराबर विजयी बने रहे
यह अवस्था उन की चार प्रहर वर्द्धमान रही अर्थात अंतस्थ
वायु के बल को श्री मान् बराबर परास्त करते रहे और परिणाम
में मध्यान्ह के समय एक दम से अच्छे प्रकार चंगे बन बोलने
लगे- उसी समय उठ चल कर शरीर शुद्धि से निश्चिंत हो पलंग
पर आये पीछे कुछ देर बड़ी सावधानी से बैठे रहे पश्चात् लेट
गये श्वास अति वेग से चल रहा था तो उनकी चेष्टा से स्पष्ट जान पड़ता
था कि श्री मान् उसको बिलात अब रुद्ध करि जगदीश्वर के ध्यान में
वारंवार अपने आत्मा को लगाये रहते थे नेत्र खोलने के समय जब २
लोग पूंछते थे कि श्री महाराज आप की प्रकृति कैसी है तब स्पष्ट उत्तर
यही मिलता था कि बहुत अच्छी और परमानन्द है एकवार के उत्तर
में यह भी कहा कि एक मास के पश्चात् आज का दिवस बड़ा ही आराम
और आनंद का है- इसी प्रकार दो दिन पूर्व (जिस समय श्री जी महाराज
ने समुद्र ले चलने के लिये ताकीद की थी और लोगों ने उसके उत्तर में
यह कहा था कि महाराज आप को आराम हुए पीछे ले चलेंगे) तो आप
बोले थे कि हां ठीक है दो दिन पीछे हमको अच्छे प्रकार आराम हो
जायगा अस्तु इस अवस्था में एक प्रहर व्यतीत करके चार बजे
के समय श्री मान् ने आत्मानंद सरस्वती और काशी निवासी गोपाल
गिरि जी को सन्मुख बुलाकर कहा कि बोलो तुम्हारी क्या इच्छा है

और क्या चाहते हो-जो कुछ इच्छा हो वह कहो और पूंछो इतना सुनतेही उन दोनों के नेत्रों में जल भर आया और उन्होंने तुरन्त सिर झुकाकर नमस्कार किया तब उनके सिर पर श्री मान् स्वामी जी महाराज कर कमल रखकर कहा कि आनंदित रहो फिर उन्होंने श्री स्वामी जी महाराज से कहा कि श्री महाराज हम ईश्वर से यही चाहते हैं कि आप का शरीर अच्छा होजाय-इसपर उत्तर दिया कि भाई शरीर का क्या अच्छा होना है बनना बिगड़ना उसका धर्मही है इस व्यतिरिक्त जो अच्छा है वह अच्छाही बना रहता है-इतने में और भी बहुत से भक्तजन वहां आगये-उन्होंने भी झुककर नमस्कार किया उन सबकी ओर बहुकाल तक प्रेम भरी दृष्टि से निहार कर बोले कि अच्छा सब लोग आनंदित रहो और किसी प्रकार का मद्विषयक शोक मत करो इसपर सब लोगों ने पूंछा कि भगवन् आप का चित्त कैसा है तो आनन्द २ कहकर सब से कहा कि अब तुम लोग मेरे सन्मुख से हट जाओ और फिर किसी को सन्मुख मत आने दो और कोठी के सब द्वार खोल दो-इस अवसर पर श्रीयुत मोहन लाल विष्णु लाल जी पंड्या भी श्री मान् उदयपुराधीश की आज्ञानुसार आ पहुंचे उन से कुशल प्रश्नादि हुए पीछे आप ने पूंछा कि आज की तिथि पक्ष और वार क्या है किसी ने उत्तर दिया कि कृष्ण पक्ष का अंतिम दिवस अमावस मंगल वार है यह सुन सब को अपने सिरहाने की ओर कर के स्वयं कोठी के भीतरी बाहरी प्रदेशों की ओर अवलोकन करने लगे इस समय साढ़े पांच बज चुके थे इस प्रकार किंचित् काल कोठी की चहुंओर से छवि निहार प्रथम कुछ वेद मंत्रों को पढ पश्चात्

संस्कृत और भाषा में जगदीश्वर का कुछ गुणानुवाद अति प्रसन्नतापूर्वक करके कुछ काल समाधिस्थ रहकर नेत्र खोल उच्च स्वर से बोले कि हे दीन दयालु सर्व शक्तिमन् परमेश्वर तेरी यही इच्छा है तो अति उत्तम. ऐसा कह गायत्री मंत्रोच्चारण के सहित ओं शांतिः शांतिः शांतिः कहते हुए तीसरी शांति के उच्चारण के साथ ही परमधाम को पधार गए॥

रात्रिभर सारे नगर अजमेर में हाहाकार पड़ा रहा और इसी एक रात्रि ही में यह खबर भारतखंड के समस्त नगरों में फैल गई और प्रातः काल होते ही समस्त आर्यावर्त्त शोकाक्रान्त होगया- इसी रात्रि में पं० सुन्दरलाल जी भी अजमेर पहुंच गये. ज्यों त्यों अजमेर वालों की वह रात्रि कटी और प्रातः काल होते ही विमान रचना की तय्यारी की गई उसके पश्चात् स्वामी जी के मृतक शरीर को अच्छे प्रकार से स्नान कराय चन्दनादि सुगंधित द्रव्यों से चर्चित कर पुष्प माला और वस्त्र पहनाय विमान में अच्छे प्रकार से पधरादिया उस समय श्रीमान् का परम दिव्य मुखारविन्द अवलोकन करने के लिये सैकड़ों मनुष्य चहुं ओर से रूपटे परन्तु उनके तेजः प्रचुर चेहरे को देख बेचारे अति विस्मित और हर्ष शोक समाकुल होरहे. इस प्रकार रेशमी वस्त्र पुष्प तोरण माला और कदली स्तंभादि से मंडित विमान विराजित मृत मूर्त्ति के समंतात् खड़ी सुयोग्य मनुष्य मंडली ने प्रथम बहुकाल पर्यंत उच्चस्वर से वेद मंत्रों का पाठ किया तदनन्तर दस बजे के समय विमान उठाया गया और बराबर सब लोग पुष्प वृष्टि करते हुए गाजे बाजे के साथ चल दिये॥

उस समय सब से आगे स्वामी जी के शिष्य रामानन्द ब्रह्मचारी देव दत्त जी, गोपाल गिरि और पण्डित बुद्धि चंद्र आदि पण्डितजन विमान के आगे २ वेद मंत्रों का पाठ उच्चस्वर से करते जाते थे उस के चहुं ओर आर्य्य पुरुषों के यूथ के यूथ उमड़ चले थे. श्रीयुत पण्डित भागराम जी जज अजमेर व राय बहादुर और पं० सुन्दर लाल जी अधिपति वर्कशाप अलीगढ़ आदि बड़े २ प्रतिष्ठित और भद्र पुरुष मार्ग में यथोचित बड़ी सावधानी से प्रबंध करते जाते थे इस रीति से आगरा दर्वाज़े से निकल कर बड़ा बाज़ार चौक, धान की मण्डी और दरगाबाज़ार आदि में होकर दौर २ करते वेद ध्वनि करते मलूसर सरोवर के श्मशान में स्वामी जी का विमान जा उतारा।

(यह स्थान अजमेर शहर के दक्षिण कोण में एक पहाड़ी के नीचे है और यही आज्ञा स्वामी जी की थी कि नगर के दक्षिण भाग में हमारा शरीर दग्ध किया जाय) जब वहां सब लोग स्वामी जी का विमान रख बैठे और संस्कार विधि में लिखे अनुसार वेदी बनाने का आरंभ हुआ तो उस परम कठिन अवसर में श्रीयुत पं० भागराम जी जज ने शोक समुद्र में डूबे हुए मनुष्यों को धीरज बंधाने के अर्थ श्रीमानखिल विद्या निधान स्वामी जी महाराज की विद्या, परोपकार, देश हितैषिता आदि अनुपम और अद्भुत गुणों की प्रशंसा में एक परमोत्तम व्याख्यान सुनाकर वहां पर एकत्रित हुए सहस्त्रों मनुष्यों को भीत लिखित सा कर दिया॥

वास्तव्य में इन महाशयों का बड़ा सद्योग साहस वीर्यादि

पात्म परम अशांस्य है क्योंकि ऐसे समय पर जब कि बात कहना भी कठिन होतो फिर व्याख्यान देना कैसा— कहते हैं कि उस समय पत्थर सम हृदय भी दाड़िम वत् विदीर्ण होगये थे और फूट २ कर रुदन करते थे तहांपर पूरा व्याख्यान करना मूर्खों ही का काम है॥ हा शोक— हा शोक— हा शोक

इसके अनन्तर पंडित सुन्दर लाल जीने भी अपना हृदय कठोर करके कुछ व्याख्यान करना चाहा और आरंभ भी किया परन्तु नहीं कहते बना लाचार हियाहार चुप हो बैठे इतने में वेदी तैयार होगई और समस्त सत्पुरुष उसके चहुंओर घुमड़ आये उन सबोंने मिलकर स्वामी जी के स्वीकार पत्रानुसार २ मन चन्दन १० मन आम्रादि काष्ठ ४ मन घी ५ सेर कपूर २॥ सेर बालछड़ आधसेर केसर २ तोला कस्तूरी आदि संचित किये पदार्थ लगाकर तैयार की हुई चिता को रामानंद द्वारा प्रज्वलित कराय संस्कार विधि लिखित वैदिक रीति से अंत्येष्ठी की. उस समय चिता जन्य सुगंधि से वह समस्त प्रदेश और समुपस्थितों का मस्तिष्क सुवासित होगया था॥

इस प्रकार इस विधान को समाप्त कर के चितापर चौकीपहरा बिठलाकर सब लोग उक्त सरोवर पर स्नानादि कर अति शोकाक्रांत सायंकाल को निज निजावास स्थानों पर गये॥ हा शोक हा शोक— हा शोक॥

दूसरे दिन अजमेर समाज ने स्वामी जी का हिसाब किताब वस्त्र पुस्तकादि पदार्थ और जो कुछ कि वेद भाष्य छपने के लिये तैयार हो चुका था वह सब श्रीयुत पंड्या मोहनलाल

विष्णुलाल जी को एक सूचीपत्र के अनुसार (जो स्वामीजी की पुस्तकों में मिला था) सम्हला दिया और जो सभासद जहां कहीं के उस समय उपस्थित थे उन्हों ने उस सूचीपत्र पर अपने २ हस्ताक्षर करदिये — इस अवसर पर यह भी लिख देना परमावश्य है कि श्री १०८ महाराणा उदयपुराधीश जी ने प्रशंसित पंड्या जी को श्री मान् स्वामी जी की सेवा में भेजने के समय कह दिया था कि यदि जगद्गुरु महाराज का शरीर छुट जाय तो किसी प्रकार से वह चार पांच दिवस तक रक्खा जाय तो अतीव अच्छा होगा. जिससे कि हमको भी उनका अंतिम दर्शन होजाय परंतु समयोपस्थित सभ्यों ने यह बात इसलिये स्वीकार नहीं की कि डांक्टर से चीरफार करानी पड़ेगी सो यह बात अच्छी नहीं अतः यह दाहादि सब कर्म इसी स्थान पर समस्त भक्त जनों ने श्री जी महाराज की आज्ञानुसार यथा विधि समाप्त किया अतः परमेश्वर द्वारा देश देशांतरस्थों का आक्रंदन वर्णन अवश्य है॥

इति श्री मत् परमहंस परिव्राजकाचार्य वर्य्य श्री मान् स्वामी दयानन्द सरस्वती दिग्विजयार्कीय तृतीय खण्डे परम प्रशस्य यति वर्य्याणां महाप्रस्थान और परम पदावगाहन कथा विवरणे नाम अष्टमो मयूखः॥

अथ नवमोमयूखः

(९)

बन्धुगण- ऐसा लिखा देखा गया है कि परम पद निवासी श्रीमान् स्वामी जी महाराज ने अपने महा प्रस्थान के दिवस जब कि मध्यान्ह काल से अच्छी तरह सावधान हो बैठे थे किसी के इस प्रश्न के उत्तर में कि श्री महाराज आज आप का क्या हाल है- प्रथम अच्छा कहा फिर कहा कि प्रकाश और अंधकार का भाव है- इसका तात्पर्य्य समयोपस्थित मनुष्यों में से कोई कुछ न समझा और न फिर इस विषय में किसी ने उन से कुछ पूंछा- अतः बुद्धिमानों के समीप विचारणीय है कि वास्तव्य में इस कथन से श्रीमान् पवित्र कीर्त्ति ने क्या बोधित किया ॥:

॥: मदल्प बुद्धि को तो यह भासित होता है कि हम लोगों के लिये यह उनकी अंतिम वसीयत थी अर्थात् उस समय श्रीमान् कृपा निकेतन स्वामी जी महाराज को जो कुछ कि अपना हर्ष और शोकादि हमसे अति विस्तार पूर्वक कहना था वह सब निःशेष उन्हों ने यथावसर अपने इस अति अनुष्टुप् कथन में धर कर स्पष्ट कह दिया- आगे जितनी जिसकी समझ और बुद्धि- उतनाही उस पर उसका विचारादि हो सक्ता है- बहुत न हीं तो इतना तो भी हम लोगों को परमावश्य समझ लेना उचित है कि इस कथन से प्रथम श्रीमान् ने परम हर्ष के साथ अपना ठीक मृत्युकालसमय आगामि सायंकाल दर्साया क्योंकि उसी समय प्रकाश और अंधकार का भाव होता है - मानों साफ कहा कि हाल हमारा बहुत अच्छा क्योंकि+

अस्तु अब यहां मुख्य प्रकृत प्रश्न तो यह है कि श्रीमान् पुण्य श्लोक शिखामणि श्रीस्वामीजी महाराज महाप्रस्थान कर गये पीछे यह समाचार नगर नगरान्तरों में कब पहुंचा और तदनन्तर तत्रस्थों की क्या दशा हुई?

विदित हो कि इस महाप्रस्थान का समाचार अजमेर समाज ने तो उसी ३० तारीख की रात्रि को जिसके कि अस्तमान के समय श्रीमान जगद्गुरु महाराज ने लोकान्तर को गमन किया तार द्वारा जहां तहां भेज दिया था परंतु वास्तव्य में यह तार दूसरे दिन ता० ३१ अक्तूबर के प्रातःकाल को मिला इस विलंब का कारण स्पष्ट यह है कि प्रथम तो स्वयं उक्त समाज ही बहु रात्रि तक उस परम दारुण शोक में डूबकर जाने से

* आज एक मास से पीछे पड़े हुए परम दारुण रोग से मुक्त होकर जाते हैं-फिर साथ ही उसके मानों अपना अत्यन्त शोक यह प्रकाशित किया कि भाई हम हठात् जिस भारत को अंधेरे से प्रकाश में लाकर छोड़ जाने वाले थे-हा!!! वह अधविच ही रहा और हम चले - हा!!! कि ऐसी पूरी पूंजी (ब्रह्मचर्य संवर्द्धित शरीर) हमने हाथ कर ली थी कि जिससे वैसा कर ही छोड़ते परंतु क्या करें उसे व्यर्थ विश्वास घातकों ने लूट लिया जिससे परतंत्र होगया हूं तो भी तुम को सुचेत करे जाता हूं कि हे प्यारो अब तुम ऐसे ठौर पर बिछुरते हो कि यदि तनिक भी पीछे हटे तो वहां उसी महान् अंधकार का भाव है - और आगे बढ़े चले आओगे तो पूर्ण प्रकाश के भाव में पहुंचकर अनंत काल मौजें करोगे इसलिये खूब खबर्दार होकर वह काम करना जिससे मेरा यह परम असह्य शोक अति शीघ्र मिटजाय॥

बाहर रहा पश्चात् जब वह ज्यों त्यों सावधान होकर लिखे- तो फिर यही तार- तार घरों के लेने देनेवाले बाबू लोगों का होता रहा अर्थात् जो सुनता था वही मानो धक्का खाकर पृथ्वी पर मूर्छित होगिरता था अब यह सावधान हो डिउटी करता है तो खबर लेने २ लेनेवाला ही मानो नदारद है- फिर देखो तो दोनोंही चुप- इस प्रकार लगातार- यह तार- डूबता उछलता यदि प्रातः काल होते २ भी दूसरे दिन आगया तो भी वह अतीव सत्वर आया जानो ॥

हा। इसको तार कहूं कि (कोई) विषधर उन्हार- आर्योंके प्राणों का हार कहूं- पहुंचा जहं तहं यह तार- तो होगया वहं सब तार तार- हो जिसका अतीव अपार विस्तार- तो क्योंकर लिखूं उसे अब बिना आधार- पर है वह कथा बहुतही विचित्र अरु प्राभार- अतः देखिये तनक बहु. उसके कुछेक अखबार ॥

स्पष्ट वृत्तान्त तो यह है कि श्रीजी परित्यक्त शरीर की दाह क्रिया अजमेर में होनेसे पूर्व समस्त भरतखण्ड में एक दम से हाहाकार पड़गया और इसके थोडेही काल पीछे द्वीप द्वीपान्तरों में यह महाशोक सागर ऐसा फैला कि जिसका ठीक २ वर्णन करना परम कठिन है ॥

बंधुगण जबकि श्रीमान् के लिये बहुत से जहां तहां के सरदार अंगरेज़ और मुसल्मान आदि अनेक अन्य जातीय मनुष्यों के चित्त में इस शोक का पूरा असर होगया और वे उस दिन ताहि २ की आवाज़ भरने लगे तो आर्यों का असीम शोका

कुल होकर आक्रोश और आक्रंदन करना कोई आश्चर्य की बात नहीं अब इस कथन की विशेष पुष्टि करना सांप्रतकाल के लिये अपेक्षित नहीं क्योंकि प्रत्यक्ष सब को अनुभव है तथा कहा भी है कि "प्रत्यक्षस्य किं प्रमाणम्" परन्तु आगामि काल के लिये अवश्य ऐसा उदाहरण अपेक्षित रहता है-इस दृष्टि से यहां आगे कुछ प्रमाण संक्षिप्तकर रक्खे हैं जिनके अवलोकन से सार्वकाल प्रतीत रहेगा कि उस समय इस देश में यह एक ऐसे विद्वान और देशानुरागी मनुष्य होगये हैं कि जिन की पवित्र कीर्ति से यह भूमण्डल यावच्चन्द्र दिवाकर अलंकृत रहेगा ॥

प्रसिद्ध है

कि समाचार पत्रों के संपादक लोग समस्त देशों में सर्वसाधारणों के शुभचिंतक और प्रतिनिधि स्वरूप कहे जाते हैं अतः उन में से कुछ पत्रों के अंतर्गत लिखा शोक वृत्तान्त यहां उद्धृत कर दिया जाता है-जानना चाहिये कि इसी प्रकार ६ मास तक छेड़ छाड़ इस देश के हर प्रकार के अखबारों में होती रही है वास्तव्य में यह केवल शोक संवाद नहीं किन्तु उन जगत् पूज्य श्रीमान् के परम पवित्र गुणों का पूरा अनुवाद है अत एव सर्वत्र सबने इसके लिखने का परिश्रम उठाया-इच्छा उन की यह कि हमारे देश निवासी सज्जन पुरुष आगे इनका अनुकरण स्वीकार करें- वही मनोरथ इस ग्रंथकार का भी है ॥

(१)

हिन्दी प्रदीप प्रयाग

स्वामी दयानन्द सरस्वती का शोक वृत्तान्त

यह भी हम इस हिन्दुस्तान हतक के अभागही कहेंगे कि इसके ऐसे हितैषी परलोक यात्रा के लिये दत्तचित्त हो झटपट सिधार गये। सिवा कतिपय मतारक धूर्त ब्राह्मण और कोरे पंडितों के जो इन की गुप्त नीति के मर्म समझने को सर्वथा असमर्थ हैं और कोई प्रसन्न न हुआ होगा: आर्य समाज की बांह टूट गई. सरस्वती का भांडार लुट गया. यहां के बिगड़ी समाज के संशोधन का फ़ाटक ढै गया: यह इन्हीं महात्मा का पुरुषार्थ है कि भारत वर्ष के धर्म तत्व का सर्वस्व वेद जिसे बड़े बड़े विद्वान् ब्राह्मण भी केवल पाठ मात्र पढ़ लेने के अर्थ ज्ञान की ओर से निपट मूर्ख थे। और कुछ भी न जानते थे कि इसमें क्या चील बिलार भरा है. सिवा मक्षिका स्थाने मक्षिका के सो भी केवल पाठमात्र में अर्थ से क्या सरोकार उसे सब जाति और चारों वर्णों के लोग समझने लगे. और अब बहुतों के मन में लगी है कि इस वेद रूपी अगाध महोदधि में गहरी डुबकी मार इसकी थाह लेना चाहिये कि इसमें क्या २ रत्न भरे हैं। अतिरिक्त वेद के उद्धार के. हिन्दू समाज की सैकड़ों बिगड़ी बातों के सुधार ने में भी कोई कल बल इन्हों ने न छोड़ रक्खा। कुहम रस्म बाद मरदुम सरस्वती महाशय के न रहने पर अब इन की कदर लोगों को होगी कच्चे जौहरी जिन्हों ने हीरा को कांच समझ

रक्खा था. चाहें जो कहें पर हम तो अंग्रेज़ी "माटो" सिद्धान्त पर दृढ़ रह दयानन्द की सर्वतोभाव से सराहना ही करेंगे।

—:०:—

(२)

प्रेरक हिन्दी प्रदीप प्रयाग

हा आज भारतोन्नति कमलिनी का सूर्य अस्त हो गया; हा वेद का खेद मिटाने वाला सद्वैद्य गुप्त होगया. हा दयानंद सरस्वती आर्यों की सरस्वती जहाज़ की पतवारी बिना दूसरे को सौंपे तुम क्यों अन्तर्ध्यान होगये: हा सच्ची दया के समुद्र: हा सच्चे आनन्द के वारिद: अपनी विद्या मधा लहरी और हितोपदेश रूपी धारा से परितप्त भारत भूमि को आर्द्र कर कहां चले गये: हा चार दिन के चतुरानन इस असभ्यता प्रिय मंडली में आपने अपनी विलक्षण चतुराई को क्यों इस प्रकार सरल भाव से फैलाया: क्या आप नहीं जानते थे कि काल कराल ने भारत को असाध्य आरत बनाने के निमित्त ब्राह्मणों से तप: स्वाध्याय विद्या छीन विषय लंपट और शिश्नोदर परायण बना दिया: क्षत्रियों को ऐसा चौपट और लत मर्द कर डाला कि वे बेचारे किसी काम ही के न रहे: वह धनुर्वेद, वह शस्त्र शास्त्र विद्या, वह पूरता वीरता, वह अमर्ष जो अग्नि की उष्णता समान उनका स्वाभाविक धर्म था सो अब कहीं देखने सुनने को भी न रहा जिनके पूर्व पुरुषों की संगति से जंगल के रीछ

और बन्दर भी सुधर कर बड़े सद्वीर और योद्धाओं की पदवी को प्राप्त हुए और देवताओं की कोटि में मिल गये. अब उन्हीं की सोहबत. संगति में वह विकार हो गया है कि बड़े २ स्वाभाविक वा प्रकृतियों को स्त्रैण किंवा क्लीब भाव सहज में प्राप्त हो जाता है. जहां वसिष्ठादि महर्षियों की शिक्षा और नीतिविद्या का विचार होता था तहां दाढ़ी वाल्ओं की कथा से कालक्षेप होता है. सो ऐसे कौतुकी काल ज्वाल को तुच्छ जान आपने मुनियों की वृत्ति निधड़क हो ग्रहण कर लिया- यह न समझा कि वह निठुर निर्दयी काल आप की प्रतिज्ञा और सत्य संकल्प को पूरा होने देगा या नहीं. हा अब वे परोक्ष बल दर्शक शृगाल गण जो तुम्हारे सिंह नाद की भय से छिपते फिरते थे आज ऊंचे टीले पर बैठ पूंछ फटकारेंगे और वे उच्छिष्ट भोजी पेटार्थू कौवे जो अपने पेट के कारण तुम्हें वैरी जानते और कांव २ करते डोलते फिरते थे सो सब कैसे आज मन मगन हो आनन्द बधाई बजायेंगे. इसमें कुछ संदेह नहीं कि इस अभागे भारत की भलाई और कल्याण के प्रयत्न में आप ने अपने जीवन पर्यंत एक क्षण का भी अंतर नहीं डाला. क्या महंत और मठाधीशों के समान आप भी सुखाश्रय और देहाराम नहीं हो सकते थे, बैकुंठ पहुंचाने का बीमा और स्वर्गीय भोग विलास की हुंडी का ब्यौरा फैलाते तो हजारों लाखों चेले चेलियों के तन, मन धन को बात की बात में आप आत्मसात् और समर्पण क्या नहीं करा सकते थे. हा निर्लेप निःस्वार्थी शिक्षा प्रदायक

हा बन्धु वात्सल्य कुल कुमुद सुधाकर- इस नीच और खोटे भाव भरे भारत देश में भटकते २ आप कहां से आगये- हा स्वामी दया नंद आप का यह पवित्र विग्रह यूरुप खंड के किसी देश में इस गुरुभाव के साथ प्रगट हुआ होता तो जिस उन्नति शैल के शिखर तक पहुंचाने की सीढ़ी आप बना रहे थे उसको अवश्य पूरा कर देते और देश का देश आप का सहकारी और सहायक बन जाता. वे केवल आप के पवित्र नाम और सत्कीर्त्ति ही के संस्थापन का उद्योग न करते बरन अपने कर्त्तव्य कर्म को उत्तरोत्तर ऐसा चमकाते कि एक दयानन्द रूपी मूल प्रकांड से सहस्रों दयानंद रूपी शाखा प्रशाखा प्रगट होजाती और भारत श्री विघातक काक शृगालों का क्षणिक प्रमोद जो आप के अन्तर्धान होने का संवाद सुनकर उत्पन्न हुआ है उसका अंकुर ही न जमता. आप वह वेदार्थ क्षेत्र और अपूर्व सदाव्रत जो आपने ब्राह्मणों की सोहाग पेटारी से निकाल आर्य मात्र के लिये सुगम कर दिया है कभी न बन्द होने पाता. हम को क्योंकर आशा हो कि आप के उस भारी बोझ उठाने और असिधारा पथ पर चलने का फिर भी कोई साहस बांधेगा. हम खूब जानते हैं कि आप उस निर्विवेकी विधाता के मुख में कालिख पोतने गये हैं जिसने इस पवित्र भारत भूमि को सृजकर उसके योग्य सत्पुरुष न पैदा किया. हा भारत भारती वनराज केसरी इस उजाड़ बिजाड़ विपिन को सनाथ किये बिना क्यों इस वेग से ऊपर को उठ धाये. क्या कोई पाखंड मत सुर लोक में भी फैला है जिसके निर्दलन के लिये आप झटपट

वहां को सिधारे: सच २ आप की पवित्र आत्मा देवताओं के समुदाय पति होने के योग्य थी. इसमें कुछ संदेह नहीं कि आप सरीखे देश हितैषी महात्माओं का पवित्र विग्रह इस असार संसार में चिर काल तक नहीं रहता. इस बात की प्रत्यक्ष साक्षी के लिये बहुत से ग्रंथ विद्यमान हैं. जिस प्रकार मंदाग्नि और क्षुधा रहित रोगियों के जठरानल धधकाने को सद्वैद्य लोग कटु तिक्त अम्ल रसों का व्यवहार करते हैं ऐसेही सद्धर्म विमुख और तत्व भ्रंशित जनों के मुरझाये चित्त की प्रफुल्लता के लिये मूर्त्ति पूजा खंडन प्रभृत्ति युक्ति को आपकाम में लाये. आप के इस भाव को- या तो प्राचीन महर्षि गण जानते होंगे जिनके हार्दिक अभिप्राय के मूल पर आपने इस कष्ट साध्य व्यवसाय को उठाया था. या वे देश हितैषीउन्नत हृदय जानते होंगे. जिनके मानसिक सरोरुह पर देशोन्नति किरण धारी भगवान् भास्कर का प्रकाश पहुंच गया है. अब इस प्रसंग के समाप्त करनेके पूर्व यह अल्पज्ञ अपना अभीष्ट खोल के कहता है कि जिस पुरुष के अनुताप से यत्किंचित् यह निवेदन किया गया उसकी मेरी जान पहिचान केवल एक बार हुई थी जिसको तेरह १३ वर्ष से अधिक बीते कि यहां वासु केश्वर पर थोड़ी देर तक संस्कृत में बात चीत हुई थी तब से स्वामी जी कई बार यहां पधारे पर इसने अपने को उनकी शिक्षा जनित कर्त्तव्य के अयोग्य बंधनासक्त समझ फिर उन से न मिला अब उनके शान्त होने का समाचार सुन उन बातों को कह सुनाया जो आर्य पद धारियों को हृद्गत

करनी चाहिये: अब सब सज्जनों से उचितानुचित की क्षमा माग ईश्वर से प्रार्थना करता हूं कि भारत की जड़तान्धकारा पहारी दयानन्द सा दूसरा सूर्य जल्द प्रगट कर दे: हमको उस सत्पुरुष के शुद्ध भाव और सत्य सन्धानता पर विश्वास होता है कि उक्त सत् पुरुष के आरंभित कार्यों में कभी विघ्न न होगा किन्तु जिन सज्जनों के भरोसे यह कार्य स्वामी जी छोड़ गये हैं वे लोग इस समर्पित कार्य को बड़ी उत्तमता और उज्वलता के साथ चमकायेंगे. यह कुछ नई बात नहीं है सदैव से अच्छे २ लोग अपने प्रियतमों को अपना कर्त्तव्य कार सौंपते ही आये हैं. देखिये संध्या समय भगवान भास्कर जगदन्धकार नाशन कार्य अग्नि देव को सौंप कर आप अस्ताचल को सिधारते हैं और सबेरे अग्नि देव सूर्य के भरोसे विश्राम करते हैं इन दोनों की परस्पर मैत्री और सहायता का कभी विश्लेष नहीं होने पाता: यह कौन नहीं जानता कि स्वामीजी को सत् शास्त्र और सद्विद्या का प्रचार और भारत बर्ष की मूर्खतान्धकार निवारण तन मन से अंगीकार था. जिसको वे अपने अंग अंग और रोम २ से समय प्रति समय प्रकाशित कर चुके हैं इस अवस्था में उन विद्वानों को जो संकेत मात्र से आशय मात्र के भाव को बूझ सकते हैं बैकुंठ वासी स्वामीजी के मुख कमल निःसृत आशयों के मूल पर उनके अभिलाषित भाव का समुत्थान कठिन नहीं है. किन्तु जहां ऐसे अविरल विद्वान् विद्यमान हैं कि यदि इस बड़े कार्य की पूर्ति के लिये वे नियुक्त किये जायें तो निस्संदेह अपनी विद्या

नयी धारा से सींच उस वृक्ष में फल लगा सकते हैं जिसको उक्त सत्पुरुष प्रफुल्लित और हरा भरा छोड़ गया है कुछ अचरज नहीं है जिस कार्य समर्पित मंडली के सभाशिरोमणि यावदार्य कुल कमल प्रभाकर श्री महाराणा उदयपुर प्रभुवर हैं वह कार्य अवश्य निर्विघ्न और उत्तमता के साथ उन्नति शैल की चोटी तक पहुंचेगा और सदा सर्वदा सुरक्षित रहेगा ॥

(२)

भारतबंधु अलीगढ़

हमको यह सुनकर बड़ा पश्चात्ताप हुआ कि ३० अक्टूबर सन् १८८३ ई० कार्तिक बदी ३० संवत् १९४० को श्रीमान् दयानन्द सरस्वती जी महाराज बैकुंठ को पधारे क्योंकि ऐसे २ विद्वानों के इस भूतल पर न रहने से इस भारतखंड का अभाग्योदय दिनपर दिन वृद्धि को प्राप्त होता हुआ बढ़ने की संभावना का विषय होता है श्री बाल शास्त्री जीके मरण से जो दुःख हम भारत वासियों को हुआ था उसी से हम सब लोग अत्यन्त व्याकुल थे उसके कुछ दिन पीछे ही "क्षतलवण न्याय से यह दुःख हम भारत वासियों को उपस्थित हुआ अब कोई ऐसा प्रबल साहसी- सभा चतुर वावदूक- सर्व शास्त्र कुशल इस भारत वर्ष में दृष्ट नहीं आता जो स्वामी जी में निम्नलिखित गुण थे तिन गुणों का आधार हो ॥ एक स्वामी जी महाराज की यह प्रशंसा

दर्शनीय थी कि उन्हों ने मुसल्मानों को यह निश्चय करा दिया कि आर्यमत यवन मत की अपेक्षा सनातनिक और श्रेष्ठ तर है बहुधा देखा गया कि बड़े २ मोलवी जो फ़ारसी और अरबी के यथार्थ ज्ञाता थे वे स्वामी जी की वक्तृता के सन्मुख मूक हो जाते थे और ऐसी उन की बुद्धि की स्फूर्ति थी कि जहां किसी ने प्रश्न किया और उन्हों ने उसी समय स प्रमाण और युक्ति सहित उत्तर दिया और ऐसा कोई एक पंडित भी उनके सन्मुख न आया जो उनके समान वावदूक और सभा चतुर हो ॥

इसी प्रकार अंग्रेज़ों को भी यह उन्हों ने दिखा दिया था कि तुम्हारे मत से भी आर्य मत श्रेष्ठ है यह भी बहुत बार पादरियों के संग उत्तर प्रत्युत्तरों से निश्चित हो चुका था॥

इनकी विद्वत्ता की विलायत आदि इतर देशों में ऐसी प्रशंसा हुई कि आजतक ऐसी किसी विद्वान् की नहीं हुई और वेदों का टीका भी आधुनिक किसी पंडित ने नहीं किया - यद्यपि वह कहीं २ हमारे पूर्वाचार्यों के बनाये हुए टीकाओं के प्रतिकूल है तथापि जिसकी हम प्रशंसा करते हैं उनकी उस विद्वत्ता का प्रदर्शक तो अवश्य है ॥ इससे हम भारत वासियों को भारत भूमि का भूषण ही स्वामी जी को समझना चाहिये परंतु काल बड़ा बलवान् है जो ऐसे २ महात्माओं को भी ग्रसकर डकार नहीं लेता ॥

(४)

शुभचिन्तक शाहजहांपुर

ओ३म् + छन्दशिखरीशोभ्रहोअनरथअइगो-भारतहितैषी चलिबसो। प्रभाकारी जग को - श्रुति पथ उधारक छिप गयो। सकल नर नग चलिगो - सतयुग प्रचारक उठि गयो। अहो हा हा हा हा स्वामी हमारो चलिगयो ॥१॥ महायोगी ध्यानी - ज्ञानी व खानी हरि गयो। पताका भारत को - सुंदर मुकुट मणिगिरि पर्यो॥ सकल जग हितकारी। सुरपुर विहारी ह्वैगयो। अरे स्वामी हमारो बुधगण विमल बर चलिगयो ॥ २॥ जगत् उन्नतिकारी - पूरण ऋषीश्वर बुढिगयो। हमारे हियतम को रवि हाय- अन्तर हित भयो ॥ महारात्री जड़ता - जल निधि उतारक डूबिगयो। अरे हा हां हा हा - स्वामी हमारो उड़िगयो॥ ३॥ सकल प्राणी जग के तन बसन सब धारण किये। धुवे टूटे फाटे - यक दिन गिरे संशय नहीं॥ समय पे जो फाटे - कोइ तेहि न सोचै दुखभरे। भरी वय में स्वामी - निजकांत परित्यज्य भगि गो ॥ ४॥ जुगोधपुर में जाकर - श्रुति मत कथा बहु विधि कही। पढ़ाया भूपति को उत्तम प्रथा राज पद की ॥ छिपे सारे पोप - उडुगण- यथा. चन्द्र लखि कें। सुनामी श्रीस्वामी अमर पुर धामी उड़ि गयो॥५॥ सुनी ऐसी वार्ता - अहितन तिन को विष दियो। कुलीतिन की जड़ता - कलित प्रथा दर्श होय गो॥ नार्वा जिविका जानी दुर्मति अधर्मी करिगयो दियो विष हा हा हा-

स्वामी हमारो चलिबसो ॥ ६ ॥ व्यथित भो जब स्वामी - आबू पहाड़
हि चढ़ि गयो । न देखी जब स्वास्थी - पुनि आय अजमेरहिं छुश्रो
गरल दुस्सह पीड़ा - दग्धो शरीरा सब विधी । दिवालीकी संध्या
थिकसित सु स्वामी तन तज्यो ॥ ७ ॥ शून्यश्रुति ग्रह इन्द्र - बिक्र
मि सुमंगल दिन रह्यो । तथा ३० अक्तूबर - सन् गुण अंग अष्ट
शशि में ॥ सजें मंगल आरति - सब नगर फेरें मन मरे । मनावें
ईश्वर को - स्वामी किसी विधि नहिं रह्यो ॥ ८ ॥ न पूरयो श्रुति
गर्व - यो दुख न मेंस्यो मन चह्यो । रही कांक्षा चित में - जगजन
क तिन को हरि लियो ॥ तजत तन निज कार्या - पूरण अरबंई हि
है गयो । पुरे मनसा तेरी - यह कहि सु स्वामी दुरिगयो ॥ ६ ॥
लगाये जे वृक्ष - सींचो सुधा प्रेम रस सों । बढ़ें फूलें फलें - शुचि
धरें जगभल करें । दृढ़ व्रत ह्वौं श्रुति से - कांक्षा मेरी वो बन्न
रही । करिय पूरण देवा - मोक्षाहिं दयानन्द मुल हैं ॥ १० ॥

(५)

मध्य प्रदेश विलासपूर समाचार

तीस अक्तूबर अठारह सौ तिरासी सन् । कार्त्तिक अमावस
कृष्ण भौम वर्त्त मान भो । उन्नीस सौ चालीस के संवत में
अस्त समय देस देस चारऊदिसि दीप दीप्य मान भो । ईश्वर
को ध्यान संध्या सुन्दर समय विचार ताही समय सन्मुख
संतिष्ठ सुर विमान भो । जहां वामदेव व्यास आदि गये
ज्ञानी तहां स्वामी दयानन्द सरस्वती को पयान जो ॥ १ ॥

को न विधि ऐसे व्याख्यान श्रवण होंगे अब वैदिक सत्यार्थ सहित वाणी कौन कथैगो। शास्त्र वेद सिंधु मध्य मेधा निज मन्दिर में कौन है प्रतापी जो निर्भय ह्वै मथैगो। कैसे श्रुति सार को होय सत्य युक्त जालिम मत वादिन को कैसे मत नथैगो। कैसे वेद के प्रकाश की हो आस हमैं स्वामी सारस विद्या को विभाकर ह्वै अथैगो॥ २॥ राम प्रकाश मि० पु०

सोरठा

धन्य ब्रह्मऋषि राय स्वामी दयानंद सरस्वती
तोहि समान सुनपाय मोहि समान रहे जगत को
गयो मोहि बिलगाय बोगि बहुरि आवहु कसन
दीन हीन निरुपाय देखहु भारत कर दसा॥

चौपाई

आर्य वर्त कर लगहु गुहारा॥ हे जग दीश शरण दुख भारा॥
यहि ते बड़ दुख को जग अहई॥ कहत सुनत पाषाणहु द्रवई॥
बरस सहस द्वै तुम्हरी देवा॥ सहि दुख कठिन कीन्ह मैं सेवा॥
दया लागि दीन्हेउ दुख नासी॥ पूत सपूत एक गुण रासी॥
स्वामी दयानन्द सरस्वति सोई॥ तन मन धन परस्वारथ जोई॥
निसि वासर तजि कर मम कल्याना॥ सपनेहु कीन न कारज आना॥
रहा एक कुल भूषण मोरा॥ भक्ति सिरोमणि पुनि प्रभु तोरा
सोउ हरि लीन्हेउ लाय न वारा॥ मोहि सम है को फूट कपारा॥
अहो देव मैं काह बिगारा॥ दुख पर दुख मोहि देहु अपारा॥
एक रहा मैं आपु हि भारा॥ राम कृष्ण शंकर दुख भारा॥
दयानंद दुख फाटत छाती॥ अब किमि धीर धरों दिन राती

पाय दयानन्द मंगल मूला ॥ राम कृष्ण शंकर दुख भूला।
धन्य धन्य सुत धन्य प्रभावा ॥ धन्य प्रताप चहूं दिशि छावा।
धन्य घरी सुत तव अवतारा ॥ धन्य धाम गुजरात उदारा ॥
विरजानन्द धन्य गुरु सोई ॥ धन्य स्वामि महिमा नहि गोई
लुप्त वेद सह भाष्य उधारे ॥ किये लोक बिनु शोक सुखारे
रही चहूं दिसि छाय समाजा ॥ आर्य समाज सु मंगल साजा।
कठिन समय पुनि अस कर तूती ॥ धन्य तोर यश केर विभूती
सबहि भांति कीन्हेउ हित मोरा ॥ सुफल जन्म जग भा सुत तोरा
सब विधि कीन्हेउ मम कल्याणा ॥ तजि अकेल मोहि कीन्ह पयाना
को अस आर्य आज जग माहीं ॥ सुत तुव गवन नयन जल नाहीं
महाशोक मोहि दीन्हेउ ताता ॥ को सक टारि जो भाषि विधाता
शीघ्र प्रभू लीजे सुधि मोरी ॥ मैं पुनि विनय करौं कर जोरी ॥
मोर लाज अब तुम्हरे हाथा ॥ मोहि अनाथ कहं करहु सनाथा
तजि तुम्ह प्राणा जावकत स्वामी ॥ त्राहि त्राहि प्रभु तोहि नमामी

सोरठा

सब मिलि आर्य सुजान। करहु ईस यह बीनती
दीनबंधु भगवान्। भारत कर पति राखिये।
भारत अति अकुलानि वेगि सुनिय आरत विनय
तुम सम जग को आन जाय शरण जेहि जांचिये

(६)

महद्राजसभा उदयपुर

दोहा

नभ चव ग्रह शशि दीपदिन दयानंद महसत्व
वय त्रेसठ वत्सर विच भयो तन पंचत्व १

मनहरन छन्द

जाके जीहू जोर ते प्रपंच फिलासिन को अस्त सो समस्त आर्य माण्डल ते मान्यो मैं। वेद के विरुद्धी बुद्धी सत्य के निरुद्धी सदा मंद भद्र आदिन पै सिंह अनुमान्यो मैं। ज्ञाता षट शास्त्रन को वेद को प्रणेता जेता आर्य विद्या अर्क गत अस्ताचल जान्यो मैं। स्वामी दयानन्द जू के विष्णु पद प्राप्त हू ते पारिजात को सो आज पतन पर मान्यो मैं॥ २॥ यह काव्य साक्षात् श्रीमान् महाराणा साहब विरचित है॥

योग को अगार गिरधार हू आसन को शिक्षक पयोहन को त्रिदिवस सिधायगो। कुटिल कुराहिन को वाम मत चाहिन को हाय पशु हायन को हूप दिन आइगो। कहें जय करण चार वर्ण के विवरणन को धर्म निधि दयानन्द परम गति पायगो। तीन वेद शासन को सुमति प्रकाशन ओ आज सत्य भाषण वासन विलाइगो॥ ३॥

क्षीर नीर आरस अनारस मिलान भये पूरन परीक्षा धार कून भिन्न करतो विधि से विवेकी बुध संशय विषय के बीच धार धन्य उत्तर हिय में सार भरतो। चार वाक हिंसक चवाय चुम चुम चुगल में दयानंद द्वन्द फन्द कबहूं न परतो

रहते धरे न मोती मंत्र वेदवारिध के राज हंस मण्डल न तरतो ॥४॥ कविराज श्यामल दास जी ॥

सार षट्शास्त्रन को निगम अधार नित्य पार परलोक है असार जग करि गयो। पसुनन को पाही और कुटिल कुराही दाही सत्य को सदाही साही नाक नेह धरि गयो। कहें कृष्ण दयानन्द सुमति सुधामी नामी नाम वामीकूर कामीन को कालरूप टरि गयो। हाय हित आर्यन को बहि के प्रवाह बीच आज वेद वारिध को सेतु सो बिखरि गयो ॥५॥

( )

सम्पादक बनारस प्रेस कविकेदारशर्म्मा

सोरठा

हाय! हाय!! हा!!! काल तोसे बस कछु ना चले। बड़विक्रम दस भालु ताहू कंह तुम भक्षिगो ॥ १॥ महां धनुर्धर धीर अस्त्र कला महं कोउ न भे। जस अर्जुन वरवीर ताहू कहं तुम भक्षिगो ॥ २॥ करण द्रोण कुरुराज भोज परीक्षित विक्रम॥ रघु नृप पांडु दराज ताहू कहं तुम भक्षिगो॥ ३॥ ऐसे समय मकार ।हु गुल वीर प्रगटत भये ॥ सर जंग सर सालार ताहू कहं तुम भक्षिगो ॥ ४॥ दाया केर निधान दाया नंद सरस्वती ॥ वक्ता वेद प्रधान ताहू कहं तुम भक्षिगो ॥ ५॥

दोहा

दयानंद सरस्वती गुर्जर कुल अवतंस। अबही थोड़ी उमर महं क्यों तन कियो बिधंस ॥ १॥ कै प्रतिमा पूजनहि ते सुरपुर होत बिचार ॥ ता खंडन करिवे हित गये शक्र दरबार॥ २॥ कै नर पुर सब जीति के सुरपुर जीतन हेत। कै चुल्ह स्वतन त्यागि के भागेउ कृपा निकेत॥ ३॥ कै कुछ मन शंका हुई वेद अर्थ के माहि। सो पूछन हित चलि गये सत्वर ब्रह्मा पाहि ॥ ४॥ दाया नंद सरस्वती देशोन्नति हित आप। जितो परिश्रम करि गये तितो तुम्हारो ताप ॥ ५॥ अब तो पंडित अस अहहिं लिखतव्य वस्था कूट। धर्म धर्म गुने नहिं मत्थ चाहत हैं नूढ़ ॥ ६॥ तुम तो चंदा करि कि ते विद्यालय थित कीन्ह। सज्जन सिंह महेन्द्र कहं सभाध्यक्ष करि दीन्ह ७

गुन ग्राहक उपदेश बड़ जस कीन्हेउ सन्मान। खान पान द्रव्यादि ने॥ कोऊ नृप नाहिं जहान॥८॥ स्वामीजू भ्रमो थित रहे भारत भूमि मझार॥ सिंह सरिस गर्जत रहे: शंकित शशक अपार॥९॥ मूरख मुख भंजन किये. जग बकता बड़ नाम॥ कितने सन्मुख भे नहीं. समुझि सारदाधाम ॥१०॥ सज्जन मन रंजन करत. भंजन मत पाखंड। दिन कि कीरत गावहुँ हैं भल जन भारत खंड॥११॥

कवित्त

चारिहू दिशान नगरान मह जाय २ पंडितन हेरि बाद करि के पचारे हैं। पंडित विवाद माहिं होयंगे परास्त जेते तेते मन मोहें करि सोहंन निहारे हैं। बगरो अपार जस सारे नगरान माहिं विजय वैजंती फहरात हिन्द भारे हैं। विद्या चोदह निधान बकता महान् वेद स्वामी दयानंद सम नाहिं होन वारे हैं॥१॥

(८)

देशोपकारक लाहोर॥

जब कि श्रीमान् स्वामीजी महाराज की इस जहान फ़ानी से रहलत फरमाने की ख़बर वहशत असर मुवर्रखे ३० अक्तूबर सन् ८३ बज़रिये तार आर्य समाज मुल्तान में पहुंची तो फ़ौरन मानिमी नोटिस बगरज़ इज़हार रंजो अलम जारी की गयी मुताबिक उसके एक बड़ा मजमा समाज के मकान में जमा हुआ जिसमें अलावा मेम्बरान् समाज के बाशिन्दगान शहर अहल हिनूद व अहल इस्लाम ब कसरत शामिल थे

उस वक़्त सब से पहले एक दूकान दार ने बा वजूद न होने मे म्बर समाज निहायत सोज़ व गुदाज़ से स्वामी जी महाराज के निहायत रंज निस्बत वफ़ात उनके ज़ाहिर किया बादज़ां लाला चन्दाराम सिकर्टरी व काशी प्रसाद वाइस प्रेजीडेंट वग़ैरह चन्द साहबान ने अपनी ऐसी पुर सोज़ तक़रीरें सुनाईं कि जिन से तमाम हाज़िरीन् जलसा फूट २ कर रो उठे और समाज निहायत आह व ज़ारी से बरख़ास्त हुआ— इस तौर पर कई तारिखों में यह मातिम वहां होता रहा और उस में हिन्दू व मुसल्मान बराबर जमा होकर ग़मगीन होते रहे बतौर निमूना यहां पर हम मुन्शी वाज़िद अली साहब सिक्रटरी अंजुमन इस्लामिया का एक मज़मून जो उन्हों ने लिखा हुआ सुनाया था बजिन्सही हवाले क़लम सबाने रक़म करते हैं ॥

ऐ आर्यवर्त तेरी बद क़िस्मती पर मुझे रोना आता है ऐ आर्यवर्त तेरी यतीमी पर मेरा दिल ख़ून होता है- ऐ आर्यावर्त तेरी बेकसी पर मुझे ग़ैरत आती है- ऐ आर्यावर्त तेरी बेपरो बाली पर मेरा दिल कुम्हलाया जाता है कैसी जल्दी तेरे प्यारे के सर चश्मे को बन्द कर दिया गया ऐ ख़ुदा क्या तुझे यह मंजूर न था कि हम पीर रबार पर वरिश पाएं- ऐ ख़ुदा क्या तुझे यह मंज़ूर न था कि हम दुनिया के रफ़्तार के साथ उड़ना सीखें- ऐ ख़ुदा क्या तुझे यह मंज़ूर न था कि हम इन वाही और तबाही फन्दों से निकलें ऐ ख़ुदा क्या तुझे यह मंज़ूर न था कि हम बेज़ा बेवजह बे ज़रूरत और बेसूद क़यूद से

रिहाई पावें — ऐ खुदा क्या तुझे यह मंज़ूर न था कि हम उन वाहियात रसमियात की बंदों से निजात पायें — ऐ खुदा क्या तुझे यह मंज़ूर न था कि हम आपस के निफ़ाक़ को दूर करें — ऐ खुदा क्या तुझे यह मंज़ूर न था कि हम अपनी रअय्यत को अपना भाई समझ कर उन से मुहब्बत करना सीखें — ऐ खुदा क्या तुझे यह मंज़ूर न था कि हम उलूम अन्नविया की तहसील करें — ऐ खुदा क्या तुझे यह मंज़ूर न था कि हम सत् धर्म को फिर सीखें — ऐ खुदा क्या तुझे यह मंज़ूर न था कि हम अपना खोया हुआ नाम फिर हासिल करें — ऐ खुदा क्या तुझे यह मंज़ूर न था कि हम उस सत् धर्म को सीख कर तेरी उन आला न्यामात की कैफ़ियत उठायें जो तूने अपने बन्दों के वास्ते मख़सूस की हैं — नहीं २ यह सब कुछ तेरी मर्ज़ी के मुताबिक़ और तेरी मंशा के मुआफ़िक़ हो रहा था — फिर क्यों ऐ खुदा तूने हम को यकलख़्त इस तरह बे सरो सामान और बे मान कर दिया — यानी हमारे सच्चे हादी और हादी श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज को जो हमें यह सब कुछ सिखाते थे ३० तारीख अक्तूबर के छः बजे शाम को बुला लिया — दिवाली की रात गो मसनूई चिरागों से रोज़ रोशन है लेकिन हक़ीक़ी आफ़ताब आलम ताब ग़रूब हुआ — हम बिलकुल नादान थे वह हमें हरएक चीज़ शनाख़्त कराता था — हम कम ताक़ती से उठ नहीं सकते थे वह हमें उठा सकता था — हम बेमाइगी इल्म से बात नहीं कर सकते थे वह हमें बोलना सिखाता था, हम एक दलदल अज़ीम में फंसे हुए थे वह हमें उसमें से निकालता था और खुश्क ज़मीन पर लाता था — हम रसूमात की बेड़ियां पैरों में और तअस्सुब की हत कड़ियां हाथों में दिये हुए

वह हमको उनसे निजात देता था हम अपने भाइयों से हिकारत क
रते थे वह हमको रिफ़ाक़त सिखाता था - हम अपनी आंखों पर
परदे और दिलों पर मुहरें रखते थे वह उनको उठाता था - हम बड़ाई
हमा कुछ अपने तईं समझे हुए थे वह हमें बताता था कि सत्
धर्म के वास्ते ज़ाहिरी जहान फ़िज़ूल है - हम उस ग़लत इस्तिया
ज़ को सवाब जानते थे उसने उसको ऐब साबित कर दिया -
हमने अपना नंग वनामूस गंवादिया था वह हमें फिर
दिलवाना चाहता था - ऐ खुदा हम तुझको बहुत दूर होगए
थे वह हमको तुझ से मिलाना चाहता था - लेकिन ऐ खुदा
तूही जाने तेरे दिल में क्या आई कि तूने उसको हम से इतनी ज
ल्दी जुदा कर दिया तेरी बातें तूही जाने - अब भी रहम कर॥

(६)

विक्टोरिया पेपर स्यालकोट

और - अपने रोने के हमें लिखने हैं दफ़्तर सैकड़ों। ऐ सवातेया
र कर मौजों के दफ़्तर सैकड़ों॥ एशिया को चकमें मुख्तलिफ़
ज़लज़लों के आने और जावा के आतिश फिशां पहाड़ों के
फट जाने से स्वामी दयानन्द सरस्वती का इन्तिकाल कम अफ़
सोस की जगह नहीं है - क्योंकि ऐसे लायक शख्स का जीना जि
सका सानी इल्म संस्कृत में कोई न हो लाखों आदमियों की
ज़िन्दगी पर तरजीह रखता है और एक ऐसे शख्स का मरजाना
जो एक ऐसे मज़हब के उसूलों से कमाहक़ा आगाह हो

जो हिन्दोस्तान में ज़ियादा तर फैला हुआ है लाखों आदमी के मरने से ज़ियादा अफसोस नाक है जिन लोगों का यह ख्याल था कि जो सुर्खी सुबह और शाम के वक्त मशरक और जनूब की तरफ नज़र आती है कोई न कोई आफत ज़रूर दायगी उनका यह ख्याल सही निकला क्योंकि इस से बढ़कर हादिसा हिन्दू गिरोह पर और क्या होगा यह हिन्दुओं की कम नसीबी है कि स्वामी साहब जैसा शख्स उनकी नज़रों से जल्द गायब होगया - स्वामी साहब की यह आर्ज़ू कि हिन्दू या आर्य अपने मज़हबी असूलों से वाकिफ़ हों और उन्हें मालूम हो कि - वेद मुकद्दिस उन्हें क्या हिदायत देते हैं. और उन्हें अपना कैसा तरीक़ बनाना चाहिये एक ऐसी कोशिश थी जिससे हिन्दुओं के लिये निजात का दरवाज़ा जल्द खुलने वाला था और वे जल्द नारीकी के खियालात को छोड़कर अपने खियालात रोशन बनाने वाले थे- और उनके खाने दिल में वह दानिशमत के चिराग़ जलने वाले थे- अफसोस है कि यह हसरतें हमारे दिल की दिल ही में रहगई तो हाय हसरती।

शेर

निफ़ली कि शिर्य का यह खुला हाल वक्त मर्ग। आग़ाज़ ही में रोते थे अंजाम के लिये॥ कौन नहीं मरा और कौन नहीं मरेगा मगर॥ ऐसे शख्स का मरना जिसकी पैदाइश सिर्फ हिन्दुओं के रहनुमा दिखलाने के वास्ते हुई थी बेशक एक हादिसा जांकाह वाकह है और हिन्दू इस वाकह को सुनकर जिस क़दर मातम करें बजा है- शेर॥ अपने रोने की हक़ीक़त [illegible]

कागज़ अखबारी से लिखवाते हैं हम ॥ स्वामी दयानन्द नाम के सन्यासी नहीं थे बल्कि हक़ीक़त में सन्यासी थे. और उनको किसी किस्म का तमा नफ़सानी नहीं था तमा का न होना कोई छोटी सी तारीफ़ नहीं है. बल्कि ऐसी तारीफ़ है कि जो शाज़ व नादिर ही किसी खुश नसीब के हिस्से में आती है कहने को तो सब ही कानेअ और परहेज़गार होते हैं हाथी के दांत दिखाने के और होते हैं और खाने के और हम इस वैशाख अर्थात् अप्रैल के महीने में जब उदयपुर की सियाहत कर रहे थे तो वहां मोतबिर लोगों की ज़बानी सुना था कि स्वामी साहिब को जो उस ज़माने के करीब वहां तशरीफ़ लाये थे. दर्बार उदयपूर की तरफ़ से दो २ हज़ार रुपया पेश किया गया था मगर उन्हों ने उसमें से सिर्फ़ किराए का खर्च कबूल किया और बाक़ी तमाम रुपया उस सभा के अग़राज़ के पूरा करने वाले सरमाये में शामिल करवा दिया जो उनके इन्तिक़ाल के बाद हिज़ हाइनस महाराना साहब बहादुर वाली उदयपूर की सरपरस्ती में उनकी वसीयत के मुताबिक़ कारवाई करेगी. और इसका जहांतक हम को मालूमात का ज़खीरा हासिल हुआ है. यह मनशा होगा कि वह उनकी तसनीफ़ात को मुश्तहर करवा कर अवाम में फैलाएं. और वेदों के तर्जुमों को मुकम्मिल करवाने की सई करें कौन कह सक्ता है कि स्वामी साहब की इस कारवाई की पैरवी आसानी से हो सक्ती है यह नफ़स इनसान को दम नहीं लेने देता दम २ में उसके ख्यालात को बदलता रहता है. मगर जो शख्स इसतिकलाल के साथ एक नई

रविश पर कायम रहे. और खुसूस ऐसी रविश पर कि जिसपर कायम रहना खुदाय ताला हर एक इनसान को नसीब करे वह किस क़दर मुबारिक समझा जाता है. हम जानते हैं कि इस सभाके प्रेज़ीडेन्ट वह इल्म दोस्त मुल्कदार फ़रमांरवां हैं. जिनकी रियासत राजपूताने में अव्वल दरजा रखती है और खुदा के फ़ज़ल से वह बज़ात ख़ुद सभा के अग़राज़ की ताईद के लिये उसकी कारवाइयों में बहुत सा रुपैया खर्च कर सक्ते हैं. मगर ताहम ज़रूरत इस बात की है कि इस सभा की शाखें हर एक प्रेसी डेन्सीया हर एक सूबे के तमाम बड़े २ शहरों में कायम हों जो स्वामीसाहब के अग़राज़ के पूरा होने की कोशिश करते रहें।

इस सभा के मिमबरों की तादाद में निहायत कसरत हो बल्कि जो हिन्दू हो वह अगर दो आना माहवार इस सभा की अयानत करने की हिम्मत रखता हो तोभी वह इस सभा का मिम्बर बनाया जावे ताकि स्वामी साहिब के भी हिन्दू मज़हब के उसूलों और वेदों की मनशा. और अहकाम से अवाम को आगाह होने के सामान जमा होते रहें. और स्वामी साहब के ख्यालात और उनके मालूमात से हिन्दुओं को वाक़िफ़ होने का मौका मिले. हम ख्याल करते हैं कि हिन्दू साहिबान हमारी इस दरख़ास्त को क़बूल फ़रमावेंगे और ऐसी कोशिश अमल में लावेंगे जिससे यह साबित हो कि गो स्वामी साहिब नज़रों से ग़ायब हैं. मगर उनके क़ायम मुक़ाम इंडिया के हरएक हिस्से में मौजूद हैं और हिन्दू मज़हब या आर्य मज़हब की तरक्क़ी के सामान जा बजा मुहैया करते जाते हैं.
जो लोग ज़ाती तअस्सुब रखते हैं या जिनकी आंखोंपर खुदी

और गफलत का पर्दा पड़ा है वह स्वामी साहब की हयात में भी मुखालिफ़ रहे और अब भी उनको हमारी इस दरख्वास्त के मानने में तअम्मुल होगा मगर जो लोग हक़ीक़त हाल से आगाह हैं या समझते हैं कि स्वामी दयानन्द क्या थे या उनके ख्यालात हमारी भलाई का किस क़दर मुंबा हैं. या उनकी कोशिश हमारी तरक्की और बहबूदी के लिये कैसी थी या उनके जाबजा फिरकर वाज़ करने से क्या मुराद थी. या वह किस नियत और ख्याल के आदमी थे या उन्हें हिन्दुओं को किस आलम का दिखलाना मंज़ूर था वह हमारी इस दरख्वास्त से इत्तिफ़ाक़ करेंगे और उनकी जाबजा यादगारें क़ायम करने के ख्वाहां होंगे. और चश्मनम होकर कहेंगे कि या इलाही हमपर यह क्या ग़ज़ब नाज़िल हुआ कि स्वामी दयानन्द सरस्वती हमको आंखों के सामने नज़र नहीं आते या हमारेही बीनाई में कुछ क़सूर है. या तेरी क़ुदरत ही का यह ज़हूर है॥

स्वामी जी के स्वर्गवास होने की खबर सुन हमारे आंसू नहीं थमते कलेजे को धड़कन सी लगी है मगर करें तो क्या करें कोई चारा भी है. आखिर यह शेर पढ़ते हैं और हैरानी से पुस्त व दीवार का आलम है॥ बुज़ुर्ग पर वरिश फ़रमा पहले दाग़ देते हैं यह कह कि कौन घर खाली रहा मातिम से॥

(१०)

आर्यसमाचार मेरठ

मरना यह किसका जान से बेज़ार कर गया।
मातिम में मर रहे हैं कि यह कौन मर गया।

जिस वक़्त यह ख़बर वहशत असर बज़रिये तार बर्क़ी के इस समाज में आई कि उस फ़ाज़िल अजल और आलिम बे मिसल फख़र मुल्क और मुहिब क़ौम यानी स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने ३० अक्टूबर सन् ८३ ई० के शाम को ६ बजे इस जहान फ़ानी से रहिलत फ़रमाई ज़माना आंखों में स्याह होगया और सर्माया होश व हवास यक क़लम तबाह ॥

कौन सा अन्दोह व ग़म था जिसने मुंह न दिखलाया और कौन सा रंज व अलम था कि जो सामने न आया ख़बर के सुनते ही छक्के छूट गये लेने के देने पड़े फ़र्त इज़तिराब से कलेजा मुंह को आने लगा जिगर सोज़ी की क़ूत में पारा २ न हुआ मगर पारा २ होने से उसका रुतबा बढ़ गया सैल अश्क आंखों से जारी हुए और गशी की सी हालत यक ब यक जारी - गो ज़िन्दा थे मगर मुर्दों से बदतर हो गए जीते जागते थे लेकिन बिस्तर अदम पर पांव फैलाकर सोने वालों से बढ़कर ॥

(नज़्म)

अजब दर्दस्त अन्दर दिल अगर गोयम ज़बां सोज़द।
वगर दम दर कशाम तरसम कि मग़ज़े उस्तख़्वां सोज़द॥

कल यह सुनते थे कि वे बिस्तरसे उठ सक्ते नहीं। आज यह ताकत हुई जु दोनो जहां से उठगए॥

नौहा

हर लब पै आह नालओ शोरो बुका है आज। पीरो जवानो तिफ़्ल हरयक ग़म ज़दा है आज॥ आती है सदा हर तरफ़ से हाय २ की॥ हरयक मकां हिन्द का मातिम सरा है आज चश्मों से आंसुओं की नदी बहि रही है हाय। लब और दहां पै नालए वा हसरता है आज॥ छाती को पीटता है कोई दोनों हाथ से। दीवारो दर से सरको कोई मारता है आज॥ अखबारों और रिसालों के कालिम स्याह हैं। मज़मून कुल जहांका रिक्कत फ़िज़ा है आज॥ निकले थी भाफ़ रोज़ जहां अग्नि होत्र की। आहों का धुआं उस जगह से उठ रहा है आज॥ वेद ध्वनी का शोर जहां होता था बलन्द॥ गुल नालओं फ़िगां का वहां मच रहा है आज॥ स्वामी जी आज हाय ज़माने से उठगये क्योंकर न रोएं दर्मकि ग़मे जां गजा है आज॥ उलमाय का कमाल का सिर ताज मिट गया। हिन्दोस्तां का नामो निशां [illegible] ज मिट गया॥ अफ़सोस आज हिन्द की क़िस्मत उलट गई तक़दीर पलटा खाके फिर उलटी पलट गई॥

कुछ [illegible] ती ने पांव निकाले ही थे मगर। आगे न बढ़ने पाई कि पीछे को हट गई। क्या छाई थी तरक्की इक़बाल की घटा। लेकिन तर शुहा भी न हुई थी कि फट गई॥ जिस्म [illegible] री उमेदें थीं [illegible] अफ़सोस है कि आज वह बुनयाद कट गई॥ आनन्द

सुख ज़माने से मादूम हो गये। गंजी नए निशान की पूंजी निबट गई॥ वह हादिसा हुआ है ज़माने को आज हाय। मातिम में जिसके चर्ख़ की छाती भी फ़ट गई॥ जागे हैं सारी रात मगर जो नहीं पलक। इस रंजो ग़म में तारों की भी नींद उचट गई॥ किश्ती इल्मो फ़ज़लो फ़नूनो कमाल हिन्द। लगकर किनारे हाय फिर अन्दर रपट गई॥ अफ़सोस आज स्वामीजी हमसे बिछुर गये। हम हाय २ दुनियां में बसकर उजड़ गए। ग़म में तुम्हारे लब पै है जां हाय स्वामी जी। रोते हैं सारे पीरो जवां हाय स्वामीजी॥ हम किस तरह से ज़ब्त करें दूदेआह को। सीने में उठ रहा है धुआं हाय स्वामी जी॥ छोड़ो गे इस तरह से हमें बीच धार में॥ हरगिज़ न था यह हम को गुमां हाय स्वामी जी॥ तारीक है ज़माना हमारी निगाह में। सूना पड़ा है सारा जहां हाय स्वामी जी॥ हम भी किसी तरह वहां शायद पहुंच सकें। बतलाओ तो कि तुम हो कहां हाय स्वामी जी॥ हमको भी क्यों न अपने ही हमराह ले गए। अब हम रहैं बताओ कहां हाय स्वामी जी॥ रोते बिलखते किसपै हमें छोड़ जाओ हो। क्यों दीन और अनाथों से मुंह मोड़ जाओ हो॥ बिस्तर से रंजो ग़म के हमें कौन उठायेगा॥ सोतों हुओं को ख़्वाब से कौन अब जगायेगा। अब कौन हमको ज्ञान के विद्या पढ़ायेगा। अब कौन हमको मूर्ख से पन्डित बनायेगा॥ पौराणिकों के फन्दे से कौन अब छुड़ायेगा॥ पाखंडियों के जाल से कौन अब बचायेगा॥ अब कौन हमा

हिम्मत बढ़ायेगा। अब जोश कौन मुर्दा दिलों को दिलायेगा॥ देश उन्नती के कौन हमें गुरु बतायेगा। डूबे डूबों को कौन किनारे लगायेगा॥ धर्मार्थ. काम. मोक्ष.का मतलब बताये कौन। अब हम को हाय कर्षियों की मदद्दी दिखाये कौन॥

अब कौन गुरु मंत्र की दे दीक्षा हमें। अब कौन वेद विद्या की दे शीक्षा हमें॥ दिखलाय कौन मुक्ती का अब रास्ता हमें। सिखलाय कौन ज्ञान की अब वार्ता हमें॥ बतलाय कौन यज्ञका अब कायदा हमें। जतलाय कौन होम का अब फायदा हमें॥ अब कौन काफिरों से करे पारसा हमें॥ अब कौन हिन्दुओं से करे आरिया हमें॥ सो हम तत्ता का कौन चखाये मज़ा हमें। आज़ादगी की कौन पिलाए दवा हमें॥ समझाये कौन शास्त्रों का मुद्दआ हमें॥ बतलाय कौन श्रुतियों का तर्जुमा हमें॥ कौन अब सुनाय धर्म की सच्ची कथा हमें। कौन अब बताए सूत्रों की व्याख्या हमें॥ सिखलाए कौन योग की अब साधना हमें। बतलाए कौन ईश्वर आराधना हमें॥ आसान है कि राज भी कुल विश्व का मिले। लेकिन मुहाल है कि गुरु आप सा मिले॥ संकट हमारे कौन हरे आप की तरह। रक्षा हमारी कौन करे आप की तरह॥ अवसर पै हाथ फेर के और पीठ ठोंक के। धीरज हमारे कौन धरे आप की तरह। हंगाम अहूम कौन है अब सूर बीर जो। आकर मुखालिफों से की तरह। हर दम गवर्नमेन्ट से नो वध केवास्ते

अब कौन है कि बिगड़ी बनाई आप की तरह ॥ मुमकिन है यों भी हो कोई साहिबे कमाल । बद गोइयों से ओम डरे आप की तरह ॥ लेकिन मुहाल है कि बराए रिफाहे मुल्क । सब आफतों को सर पै धरे आप की तरह ॥ और यह भी हम ने माना कि ऐसा भी हो कोई । देशान्तर में घूमे फिरे आप की तरह ॥ [illegible] कुछ नहीं मगर नहीं मुमकिन कि कोई शख्स । वेदों का तर्जुमा भी करे आप की तरह ॥ सच है तो यह कि आप सा होना मुहाल है । सारे जहां को आप के ग़म में मलाल है ॥

ऐ भाइयो कहां तलक अब रोए जाओगे ॥ आंखों से अपने कब तलक आंसू बहाओगे ॥ सदमा यह वह नहीं है जिसे भूल जाओगे । रोना है सारी उम्र का कब तक निबाहोगे ॥ उलटी ही और भड़केगी सीने में ग़म की आग । जितना तुम आबे अश्क से इसको बुझाओगे ॥ [illegible] फ़ैज़ आम की हर दिल पै नक़श है । कैसे तुम उनकी याद को दिल से भुलाओगे ॥ स्वामी जी अब कहां हैं परम धाम को गए । दुनियां में उनको कितना ही ढूंढो न पाओगे ॥ यह सोच कर के मरना है सब को करे शिकेब । संगे गिरां ग़म को कहां तक उठाओगे ॥ उठ बैठो फ़र्शे ख़ाक से धो डालो हाथ मुंह । आख़िर तो कभी आपे में तुम अपने आओगे । वह काम अब करो कि रहे जिस से उनका नाम । कब तक करोगे रंज में सर पीटे जाओगे ॥ सब मिल के ईश्वर से यही प्रार्थना करो ॥ फिर उन सा कोई भक्त दे ऐसी दया करो ॥

(११)

बदायूं समाचार

आज क्या है जो ग़मो रंज से बेताब हैं सब। क्यों हर एक श
ख़्स यह कहता है हाय ग़ज़ब ॥ आर्यावर्त्त में क्यों आज है
शोरो शेवन। क्यों ज़माने में हर एक शख़्स को है रंजो महन ॥ रूस
से चीन तलक चीन से ले ता लंदन ॥ बल्कि अमरीका औ अफ़री
का औ मुल्के जरमन ॥ क्या सबब है कि जो हर फ़र्द बशर नालाँ
हैं। ज़र्द हर एक का चेहरा है ग़ज़ब में जाँ है ॥ क्यों हर एक
शख़्स के लब पर है सदाये मातम। क्यों ज़नो मर्द हैं तय्यार
बराये मातम ॥ आज तो रोज़ दिवाली है ख़ुशी का दिन है। पर
न मालूम कि यह रंजो महन् किस बिन है ॥ बस इसी फ़िक्र
में उठ घर से हुए सुए इस्टेशन। चल दिया ता कि बहल जाय
वहीं शायद मन ॥ मुझ को बाज़ार में जाते हुए इक यार मिले।
देख कर मुझको मेरे पास जो आए दौड़े ॥ करके अफ़सोस पक
ड़ हाथ वह बोले मुझ से ॥ कुछ सुना आप ने है आप किधर
को जाते ॥ तार में आई है अजमेर से [illegible] ख़बर ॥
कर गए आज महाराज ज़माने से सफ़र ॥ [illegible]
हीं दुनियां में भी स्वामी जी ॥ सारे भूगोल में मशहूर थी विद्या
जिनकी ॥ जिनके उपदेश से कुछ देश दशा [illegible]
बाइस हुई तौक़ीर उलमा [illegible]
दया और आनंद ॥ [illegible]
थे क़ुरानी व [illegible]

बद इरमत वाले ॥ रूबरू आप के क्या ताब कोई इनमें से। बेद मत में जो किसी बात पे कुछ तर्क करे ॥ चल दिये आज ज़माने से हमें छोड़ के वह। मुक्ति पद पागए बस दहर से मुंह मोड़ के वह ॥ सुन के यह बात दिलेज़ार ने मेरे नागाह। हैफ़ सद हैफ़ कहा और वहीं खींची आह ॥ खींचकर आह एक एक मैं गिरा बर सरे राह ॥ और यह बोला कि बस अब धर्म का मुश्किल है निबाह ॥ दिल को मेरे जो हुआ रंज थयां उस का अगर ॥ लाख से एक भी लिक्खूं तो बने इक दफ़्तर ॥ ता ब तन छोड़ गई और रिन्दर इक सर सर। जिस्म को छोड़ दे जों हाल हुआ वह अबतर ॥ क़िस्सः कोता मेरा हाल जो उस वक़्त हुआ। या ख़ुदा हो कभी ऐसा न किसी दुश्मन का ॥ [illegible] किसी तरह न इस रंज को मैं रोक सका ॥ चीर गरदूं से [illegible] जो किया यों शिकवा ॥ क्यों जफ़ा केश बिगाड़ा था [illegible] मैने क्या ॥ जिसके ज़िल्द में रक्खा तूने सितम कुश्तरवां ॥ क्यों हुआ देख के हालत को हमारी बेज़ार। क्यों तेरी आंख [illegible] एक बार ॥ ख़ुश नर क्यों न हमारी तुझे [illegible] ॥ [illegible] तुझे ख़ौफ़ ख़ुदा भी है अरे ओरे शिअार ॥ [illegible] इनके एवज़ तूने लिये। काम उलटे ही [illegible] हमने हमेशा देखे ॥ कुछ दिनों और अगर सब्र से देखा [illegible]। ऐ [illegible] तुही कह कि बिगड़ता तेरा क्या ॥ हा [illegible] न दिया [illegible] का पूरा होता। बस तेरे हक़ में यह मुंह [illegible] है हुआ ॥ सब्र कर सब्र कर अब ऐ [illegible] [illegible]। [illegible] कर इसको घड़ी साल महीना लिख [illegible] ॥

संवत् उन्नीस सौ चालीस में बंस विक्रम के। कार्तिक मासज मावस को दिवाकर छिपते॥ कर दिया कूंच ज़माने से श्री स्वामी ने। आखिरी लफ़्ज़ यही आप के मुंह से निकले॥ ईश्वर आप की इच्छाही सदा हो पूरन। बस यह कहते ही निकल जान गई छोड़ के तन॥

—·—•·—

(यहां से आगे अंग्रेज़ी के लेखों का आशय है)

(१२)

बंगाली कलकत्ता

स्वामी दयानन्द सरस्वती कोई साधारण कोटि के मनुष्यों में से न थे लोगों ने इनके निर्धारित धर्म मार्ग और तद्रूप पादित वेदार्थ को सन्मान नहीं दिया तो न दें परन्तु हम कहते हैं कि धर्मोपदेश करने में उनकी शक्ति और उत्साहादि गुण उनमें निःसंदेह अद्वितीय थे यद्यपि उन्होंने जन्म से इस असार संसार का परित्याग कर दिया था और वे पूरे योगी थे तथापि जैसा सर्वोत्तम ज्ञान उनमें देखने में आया वैसा कदाचित् ही कभी किसी अन्य में देखने में आवे- उनका परलोक होने से केवल उन के संस्थापित समाजों की ही अनिर्वाच्य हानि हुई हो ऐसा नहीं किन्तु विचार पूर्वक देखने से स्पष्ट प्रतीत होता है कि उनकी मृत्यु से भरत खण्ड मात्र को इस समय असीम जोखों पहुंची- उनकी अप्रतिम विद्वत्ता कभी किसी को भूल नहीं सकती बल्कि पूर्ण निश्चय है कि सदैव समझदार लोग उनको स्वदेश का भूषण कह २ कर अपने चित्त में उल्लसते रहेंगे॥

(१३)

ट्रिब्यून लाहौर

हमको दारुण शोक सागर में डुबोकर परमधाम में जा बिराजे स्वामी जी महाराज के उपदेशों का प्रकाश केवल आर्य समाजों पर ही पड़ा हो ऐसा नहीं किन्तु अन्य समस्त मत और सांप्रदायी लोगों के जी पर भी उनके उपदेश रूपी सांचे का नक़्शा अच्छे प्रकार ऐसा जम बैठा है कि जिससे उन सब का आंतरीय अभिप्राय साफ़ तबदील करने की कोशिश कर रहा है - उनका तमाम कथन व उपदेश हम सर पर धर लेते हैं ऐसा नहीं तो भी यह कहे बिन निर्वाह नहीं होता कि वास्तव्य में वे बड़े सुयोग्य पुरुष थे तथा उनकी बुद्धि अत्यंत विशाल थी जिस वसीले से उन्होंने वे समस्त मत उखाड़ फेंके जिन को कि उनके आचार्यों ने शास्त्रों का मूल बना बना कर चलते कर दिये थे - उनका निरंतर इस जगत् में नाम रहे इस दृष्टि से उनके भक्त जनों ने इस शहर लाहौर में एक एंग्लो वैदिक कालेज स्थापन करने का बिचार किया है * इसमें बहुत धन की अपेक्षा है परन्तु स्वामी जी से प्रीति रखने वाले भी मनुष्य असंख्य ही हैं वे उतना अवश्य समाचार छोड़ेंगे ऐसी हमको ख़ूब खातिरी है॥

---

* यह कालिज १ जून सन् ८६ ई० से जारी हो गया और बड़े ज़ोर पर है॥

(१४)

इंडियन एंपीयर कलकत्ता

आर्यसमाजों के सुप्रसिद्ध संस्थापक हाल काल के परम नामवर सुधारक श्री मान् दयानन्द जी महाराज लोकान्तर गमन कर जाने की दारुण दुखदायी वार्त्ता प्रसिद्ध करने का हमको बड़ा ही शोक और पश्चात्ताप होता है- उनकी अगाध विद्वत्ता खंडन मण्डनादि अनुपम कोटि क्रम और परम प्रशंसनीय स्वातंत्र्य प्रीति आदि अपूर्व गुण, कभी किसी को भूलने वाले नहीं हैं॥

(१५)

हिन्दू पेट्रियट कलकत्ता

स्वामी दयानन्द सरस्वती का परलोक सुनकर हमको परम शोक है वे बड़े उत्तम वेदान्ती थे तथा वे वेदों की ऋचाओं का नया ही अर्थ करते थे- जिस समय प्रशंसित महाशय संस्कृत बोलते थे तो उनके उस भाषण की मिठाई व सुघाई चित्त को अजीब आनंदित किया करती थी॥

(१६)

इंडियन क्रानिकल कलकत्ता

संस्कृत का पूरा मर्मज्ञ होना आर्यों के धर्म ग्रंथों की पारंगतता मनोहर वाक् चातुर्य उत्तम आदरातिथ्य इत्यादि जो जो दिव्य गुण उत्कृष्ट धर्मोपदेशकों में चाहिये वे सब

स्वामी दयानन्द जी में निवास पा रहे थे - धर्म का ठीक सुधार होने मात्र की ग़र्ज़ से जो उन्हों ने आर्य समाज जहां तहां स्थापित किये वे थोड़े ही दिन टिकैंगे ऐसा कोई भूलकर विचार में न लावे- आगे हिन्दुस्तान में किस प्रकार का धर्म चलता होगा इसका निर्णय करने के समय कभी कोई स्वामी जी को नहीं भूलेगा ॥ हिन्दू धर्म में फिरकर पूर्ववत् शुद्धता लाकर उसमें आधसे ऊपरी परमाधुनिक पाखंड मतों को निकाल बाहर कर देना मात्र केवल स्वामी जीके उद्योग का मुख्य हेतु था ॥

(१७)

हिन्दू भाव कर अरमंदास

संस्कृत के सच्चे और पूरे पंडित स्वामी दयानन्द सरस्वती अपने सच्चे उत्साह के साथ काम करने वाले एक मनुष्य थे- उनका परलोक होने से भरत खंड को बड़ा ज़बर दस्त सदमा बैठा- का यह थोड़ा शोक ॥

(१८)

टाईम्स पंजाब रावलपिंडी

स्वामी दयानन्द जी में अति प्रचुर परमोदार स्वदेशाभिमान होने के हेतु से उनकी याद उनके देश बांधव निरंतर करते रहें यह तो परम इष्ट हुई है लेकिन सत्य और निःसीम स्वदेशाभिमान के जोड़ में और २ उद्योग दर कार होते हैं

वे भी सब उनमें विराजमान थे- श्री मच्छंकराचार्य और तत्कालीन अन्य इतर विद्या महासागरों की पूर्ण तुलना के ये पंडित शिरोवतंस थे- हाल के अति निकट समय में परमोत्साह बुद्धिमत्ता उद्योग और दृढ़ता आदि प्रशंसनीय गुण कहीं किसी मनुष्य में खोजने से नहीं पाए जाते वे इन में मानों कूट २ कर परमात्मा ने भर दिये थे- उन्हीं का बताया हुआ धर्म और उनकी स्वीकार की हुई बातों को यदि कोई मान्य न करे तो मत करो परन्तु अबतक इस भरत खराड में जैसे अन्य और कितनेही परम सुप्रसिद्ध महा पुरुष होगये हैं उन्हीं की कोटि के इस समय यह एक दयानन्द जी हुए ऐसा न मानना बड़ीही बुज़दिली कहावेगी- श्रीजगदीश्वर इस कार्पण्य दोष से सबको बचावे॥

(१८)

गुजरात मित्र सूरत

हा परम प्राचीन रीति की भांति धर्म के सुधार करनेवालों में से आज एक भरत खंड का अनुपम चमकीला मुकुट मणि खोगया-

हा परम पवित्र सर्वाद्य वेद ग्रंथों का समीचीन विचार युक्त सभ्य मान्य अर्थ दिखाने वाला दयानन्दाभिधानी भास्कर का अस्त होगया-

हा इतिहासों में निर्मल कीर्त्ति ध्वजा के चमकाने वाले

परम पंडित वर का अवतार आज समाप्त होगया- इन्हों ने सिद्ध कर दिखाये वेदार्थ की सत्यता में यदि कोई संदेह माने तो मानो परन्तु इन का उपदेश करने में औत्सुक्य भाषा का माधुर्य वाक् चातुरी. सब को अपने सन्मुख प्रसन्नता पूर्वक बात की बात में चुप कर देने की अपूर्व शक्ति हृदयंगमता सद्भाव और हेतु की निर्मलता निश्चय किये हुए विषयों की दृढ़ता चित्त का सीधा और साधापन. चाल ढाल और वृत्ति की स्वतंत्रता. तथैव धर्म भ्रम. मूर्तिपूजा और निरर्थक दंभ आदि के प्रचारों से घोर संकष्ट सागर में डुबोये गये स्वदेश को फिर कर उन्नत शिखर पर धर देने की प्रबल उत्कंठा आदि सद्गुण अब कहीं दृष्टिगोचर नहीं होने के- ऐसा अनुभव इस देश के प्रत्येक मनुष्य को अब सदैव आता रहेगा- हा शोक ३॥

(२०)

खास पत्र बनाम ग्रंथकार

श्रीयुत मान्यवर शिरोमणि पं० गोपालराव हरि: जी नमस्ते-

आज अर्सा १५ रोज़ का हुआ कि इल्लाही बख्श रम्माल साकिन शहर कानपूर. दो कसबे साय. मीता रौनक़ अफ़रोज़ हुए थे - उन्हों ने जा बजा इश्तिहारात मुंदरजे मज़मून निसबत इल्मवहुनर कमालियत अपनी के चस्पां कर दिये थे- लिहाज़ा मैं भी बमूजिब इश्तहार सिर्फ़ बग़रज़ मुलाक़ात. रम्माल मौसूफ़ की खिदमत में हाज़िर हुआ- उस वक़्त सिवाय मेरे और भी चन्द साहिबान ब्राह्मण व मुसल्मान हिन्दी व फ़ारसी

विद्वान् वहां तशरीफ़ रखते थे- और इस्माल साहब रोबरू उनके बलंद आवाज़ से निहायत जोश व खरोश के साथ अफ़सोस श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती के वैकुंठ वासी होजाने का कर रहे थे- और उनकी आली हिम्मत- परोपकार- विद्या सत्याचार और देशोन्नति आदि गुणों की प्रशंसा लोगों को सुना रहे थे और उन मुसल्मान निशान ऐशमान को बराबर ला नत मलामत कर रहे थे जिन्होंने कि स्वामी जी के निस्बत कुछ एतराज़ किये थे- मैं इस अजब अजीब को देख सुन भैचक सा होरहगया और इस बात का ख़याल मुनशशर दिल हुआ कि मुसल्मानों की कौमों में भी सब एक से नहीं हैं यानी बाज़ २ सत्यवादी और न्यायी भी हैं मुझे उस वक्त ज़ियादा तर रंजो मलाल अपने देश के इन धर्म्मी की तरफ़ से हुआ॥ २-१२-८३ ई॰ द॰ श्यामलाल नायब मुदरिस मदर्स तहसील सापमीरा

---

(२०)

कवि ज्वालादत्त शर्म्मा वैदिक यंत्रालय

श्लोक संख्या ३१

क्षोणी भाहीन्दुभिरभियुते वैक्रमे वत्सरे यः प्रादुर्भूतो द्विजवर कुले दक्षिणे देशवर्य्ये। मूले नासौ जनन विषये शंकरेणा परेण ख्यातिं प्राप्तः प्रथम वयसि प्रीति दां सज्जना नाम्॥१॥ विद्याभ्यासे र्निखिल निगमा न्पाठ सत्य भिक्षु र्वेदांगानि प्रचुर विषया न्याशु पूर्वा श्रमेण। संसारे ऽस्मिन्निज सुज

नतां नीति शास्त्रानुकूला माविष्कर्त्तु सद्रूप कृतये वेदमार्गे तान्नूनम् ॥ २ ॥ देशान्देशान्बहुजनपदा न्पर्वतादि प्रदेशान् सारं सारं विविध गुणिनां गुणानां विचिन्वन्। सत्यासत्यं बहुमत जुषा मीक्षितुं पर्य्यगच्छत्तापन्नेषु श्रुतिपथ विरुद्धान नेकान्विवादान् ॥ ३ ॥ सोयं व्योमाम्बुधि निधि विधौ वैक्रमे वत्सरेऽस्मिन्प्राप्ते चन्द्रक्षय तिथि कुजे कार्त्तिके कृष्ण पक्षे सायं काले सकल जनता सौख्य मापूरयंतं देहं मोऽज्झत् श्रुति पद मयं ब्रह्म निर्वाण मापत् ॥ ४ ॥ यो ब्रह्मचर्यत इतः सदा हि वर्ण्य पुत्रैषणादि गृहकर्म निवृत्तचित्तः। संन्यास माप सकल श्रुति सिद्ध मेव प्राप्नोद्य निर्वृति पदं सविहाय देहम् ॥ ५ ॥ यः पाणिनेर्मुनि वरस्य कृतेर्विभागान्सद्य स्तदर्थ गतये खलु लोक वाचा व्याख्यात वांश्च घुमती समवीक्ष्य बाला न्प्राप्नोद्य ॥ ६ ॥ अन्येषु वेद विषयेष्वपि भूमिकाद्याः संतीह यस्य नितरां बहवो निबद्धाः। शास्त्रेषु लोक विषये ष्वपि सत्य मिश्रोः प्राप्नोद्य० ॥ ७ ॥ वादानुवाद भय भीत जनान यस्य स्थातुं समीप मशक न्नभि मान माप्ताः। नाना पयानु मतयो पतयोपि हन्त प्राप्नोद्य० ॥ ८ ॥ यद्वेद वाद मभिगम्य विदेश जोपि वेदस्य मार्ग मभि शंसति तद्विरुद्धः। हा! हन्त हन्त! विधिधर्म विधान वक्ता प्राप्नोद्य० ॥ ९ ॥ यस्यानुवाद शरणा निज वर्ण धर्मं त्यक्त्वा न जग्मु रपरे रप रोप देशैः। आकर्षितेन मनसापि परस्य धर्मं प्राप्नोद्य० ॥ १० ॥ संप्रेक्ष्य यः करुणया करुणा भयेन हा! हन्त भारत जनांश्चिर दुःखितान्नः। संमोषितो निधि निधिर्जगती स्वरेण प्राप्नोद्य० ॥ ११ ॥ हा! लोक

शोक तमसावृत्त भारतीया नुद्धारयिष्यति कथं तमसः परेशः वेदोपदेश तरणिः शरणं नृणां यः प्राप्नोद्य॰ ॥ १२॥ संसार दुःख दलनाय समाजमार्गः संस्थापितः श्रुति पथेन समुन्नतेन। येनोयुक्तिभिरसत्पथ खण्डने न प्राप्नोद्य॰ ॥ १३॥ यत्पौरुषं धनमथ स्मृति बुद्धि विद्या यस्यान्न्हि की कृतिर भूच्छ्रुति संमतानाम्। भाष्ये परोपकृतये परमार्थ सिद्ध्यै प्राप्नोद्य॰ ॥ १४॥ हा हंत हंत वसुधे चिरदुःखितापि प्राप्ना कथंचिदपि सौख्य मतीव कष्टात्। वीरेण वेदनिधिना बत मन्द भाग्ये प्राप्नोद्य॰ ॥ १५॥ किं दुष्कृतं कृत मति प्रसितं यतोच प्राप्नासि दुर्गतितरां वसुधे तथापि। दुर्दैव मेव तव दैव विकासितं य प्राप्नोद्य॰ ॥ १६॥ संन्यास धर्म विषयेपि परोप कृत्यै त्यक्ता दयान खलु येन सरस्वतीह। आनन्द युक् सनिपदं निज नामतोपि प्राप्नोद्य॰ ॥ १७॥ नित्यानंदी गणपति मतं नानकीयानुदासीन् नागा खाखी जिनमत सखी भाव सौगंध शाक्तान् दादू पन्थी गिरिपुरी भवान् भारतीयान्दि शैवान् योगी हंसः प्रभृति विविधान् दण्डि पाखण्डि वर्गान् ॥ १८॥ पल्टू दासी सुधर सधना माधवान् निर्मलान्वै कौलान्मौ नानक चरण दासी मतं साध बौद्धान्। बाबा लाली मत मलुक दासी मतं शून्य वादान् कूका काली मत मथ हरिश्चन्द्र वृन्दावनीयान् ॥ १९॥ वामी वामाचरण शिव नारायणी प्राणनाथान् मीरा बाई मत मथ नरवी सन्त नामी कणेन्॥ अन्या न्धर्म व्यतिकर मतान्नून मीसामसीयान्देशे देशे यवन्

जनजाग्रच्छ्रौतसिद्धान्तहीनान् ॥२०॥ संवीक्ष्येषां विविध
विबुधैस्तर्कभिस्तर्कवादैः श्रौतैः स्मार्त्तैर्निखिलनिग
मज्ञानदैः सद्वचोभिः। श्रौतं मार्गं सदुपकृतये प्रोक्तवा
न्यो नितान्तं मत्यो मार्गे रुदिति गतवान्सोयमाचार्यव
र्यः ॥२१॥ वेदोपदेशकरुणामृतसागरो यो दृष्टोपि दृ
ष्टिपथतो यम गोचरो भूत्। नानापथातप वितप्त विचेत
सोस्मान्सं चेतयिष्यति पुनर्निजसद्गुणैः कः ॥२२॥ संस्था
पितो निजसभासु नियस्य सर्वान्स्मानयं विधिनिधिर्यद
हो विधातः। तत्रापि धर्मविषयोस्ति कुतूहलं किं कोलाहलो
नवपथे रथसंप्रदायैः ॥२३॥ किं वा समीक्षणविधौ सुरु
तस्य लोके न्यनैव कुत्रचिदपि द्वयमुक्तमीश। हृद्ध्वान्त
णां हितकरः करुणामतीत्य नाद्दत्यनः श्रुतिनिधिः स
समीरितो यत् ॥२४॥ संसार सार विरतस्य परं गतस्य प्रादु
र्भवो भुवितवैष नृणां दयालो। संतारणाय दुरितोदधितः
श्रुतीनां संचारणाय चिरमन्दगतिं गतानाम् ॥२५॥ त्यक्त्वा
प्रतिश्रुतमपि श्रुतिभाष्यकर्म यन्नैत्यकं सदुपदेशमयो
विहाय। कालेन सार्द्धमगमस्त्वदिदं तवैव संपुज्यतेभि
बलवत्त्वमिति साहसेन ॥२६॥ विद्योतिता सदुपदेशमयी
विचिंत्य दीपावली निजगमक्षणमन्धकारम्। नैषाभवि
ष्यति भवद्द्युतिदा दयालो यद्दीपदीपनमहद्युतितां
नयाति ॥२७॥ हे श्रौतसारनिरत प्रसमीक्ष्य मन्देष्वस्मा
सुहृदः सह मतीन्य निवासमत्र। स्वस्य प्रयासमुपदेश
विधौ चिराय प्राप्तः परं पदमनन्तसुखाय ते। स्तु॥२८॥

नाना देश निवासिभिर्बुध जनै र्मानाप मानं मुहुः संप्राप्याखिल लोक सौख्य निरतो वेदं निवेद्याऽधुना । लोकेभ्यः सदसद्विवेक मतुलं विस्तार्य संधार्य च प्रेमास्पद्य मथोजनेषु नितरां प्राप्तः पदं शाश्वतम् ॥ २६ ॥ यया दत्त मन्त्यं पुरोऽह्नेन मध्यं सुबद्धं तदह्नेन नान्यः परोमित् । सोऽग्रे सरश्चाद्य सत्तार्थ रक्ता स्त्रियोक्तः कुतो नो नरेस्तं गतोसौ ॥ ३० ॥ अज्ञान जन्य तिमिर व्रजनाश कोयो वेदोप देश करह्वेन द्युति रस्त मापत् । तल्लोक मार्य गणकः कथितुं समर्थो धैर्यं विधेय मवलंब्य तदुक्ति युक्ती ॥ ३१ ॥

(२२)

कवि राम दास छबील दास वर्मा स्थान के ब्रज देशाधूरय

अहो नितान्तं हृदयं विदूयते निशम्य लोकान्तर मुन्नताशयम् । संप्रस्थितं वेदविदा मनुत्तमं श्री मद्दयानन्दसरस्वतीं मुनिम् ॥ दीप पंक्ति चित भूतलेसति व्योम्नि तारक गणैस्समुज्वले ॥ शोक जाल तिमिरा कुलेतु सत् यतस सज्जशरीर बन्धनम् ॥ २ ॥ निःशेष पीताखिल शास्त्र सारः पूतान्तरात्मा निगमाग्र जालैः ज्ञानोत्तमै वांजन लिप्त नेत्रो ब्रह्मैक निध्यान विशुद्ध चेतः ॥ ३ ॥ स्वकीय देशोन्नति मात्र लग्नः स्वप्नेऽपि न प्राप्त निजार्थ बुद्धिः । त्यक्त्वा समस्तं तु कथं नु कार्यं गंतुं द्युलोकं समनश्च कार ॥ ४ ॥ विज्ञाय तस्याद्भुत चारु वृत्तं दिवौकसो जात कुतूहलाः किम । तद्दर्शनायात्मनि केतनं त मजूहुवं दिव्यगुणैरुपेत्तम् ॥ ५ ॥

कृतयुगोचित एषजनः किल न चिर मर्हति वस्तु मसौ भुवि।
मनसि संकलितं कलिनेति किं सच हृतो खिल साधुमनोरथैः६
गुणानुपेक्षण निज प्रभुत्वं कालेन किं दर्शयितुं हृतः सः।
नृदेह भाक् प्राक्तन कर्म योगा त्पुनः प्रपन्नः प्रकृतिनिजांवा७
संदेह दोलामिति रूढ मेव मनो न निश्चेतुमलं मदीयम्।
चित्रं निगूढं चरितं विधातु र्वेत्तुं क्षमः को वद मानुषोत्ति।८।
दिव्यानि पूर्वं चिह्य शास्त्री दसंहृतास्मन्नयनो त्सवाय। स्मृतैः
स पंथान मितोऽधुना तत् कथं विधेः स्याद्भुमितं प्रमेयम्॥९॥
तात गेह वसति र्विमानिता संश्रित श्चरमे चाश्रमः। धर्म
तत्व परि बोधने रतस्तेन सोढमपि दुर्वचो नृणाम्॥१०॥
स्वं विहाय गुरु रुच्छ्रितं पदं वारिदः श्रयति वाहिनीतटम्
केवलं परहिते कृतश्रमा लाघवं न गणयंति सज्जनाः११
यः पाखण्डमतैक खण्डन रतो वेदाख्य शास्त्रैः शुभैः। शा
स्त्राणां बलवद्दलेन सततं संसेव्यमानो युधि। सत्पक्षः परि
पुच्छलेन विजयः स्तंभान्समारोपय द्विश्वन्यः पुरुषो हितेन
सदृशो लभ्येत कुत्राधुना॥१२॥ एक एव खलु पद्मिनीपति
रेक एव दिवि शीत दीधितिः। एक एव च सवेदविद्भुवि
द्विस्व मत्र न कदा श्रुतं मया॥१३॥ स्यात्पुन स्तरणिरक्षि
गोचरो दृश्यते नभसि चन्द्रमाः पुनः। यात एष तु सकलद
गुणी वो भवीत्ति विषयो न नेत्रयोः॥१४॥ इंद्रियार्थ दूर्व
शानं सर्वथा न ममात्मकम्। तच्च्युतः स महात्मातः
स्मृतावेव निधीयताम्॥१५॥ संस्कृता भारती येन र्वाहि
याया दृग्नात्मम्। तस्य नामाक्षरं चाम्या दिव्येतद्भवतीयताम्॥१६

ऋषयः कवयो नष्टा विद्वांसोपि तथैवच। साधूनां मरणा त्यक्त्वा दभिधानं तु जीवति ॥ १७॥ कोनाम श्रीदयानंदात्सा धीयान्दृश्यते जनः। उज्जीवितार्थ विद्या ये नास्माभिर्निरपे क्षिताः ॥ १८॥ सैवैषा नीयतां पुष्टिं स्वकीय हित वृद्धये। शास्त्र तत्वाव बोधेन यूनां संस्क्रियतां च धीः ॥ १९ ॥

अन्तरालापः

कः पद्मिनीनां वद तिग्मदीधिति र्धर्मःपरःकःकांत्रवाचि कः स्थितः। का कण्ठभूषा न यमाद्बिभेतिकः स्वामी दयानन्द सरस्वती यमी ॥ २० ॥

सुहृद्गण- इस प्रकार श्रीमान् स्वामी जी महाराज के वियोगार्णव में डूबा हुआ यह गुणलुब्ध समस्त भारतवर्ष हाहाकार के साथ महीनों विलाप करता रहा- कर रहा है और तावत् करेगा यावत् फिर कोई वैसा महापुरुष उस की करुणा करने वाला उत्पन्न न होगा - इसलिये हे बंधुवर्ग कोई तो भी तदनुरूप बनकर परमार्त्त भारत का बने उस प्रकार शीघ्र शमन करो- प्रथम देखना और विचारना चाहिये कि स्वामी जी क्या विशेषता थी- यों तो वे भी मनुष्य परन्तु उन के लिये इतना रुदन- इतना आक्रोश और आक्रंदन लोगों ने किमर्थ किया ॥

देखिये इस जगत में प्रत्यह कितने राजा महाराजा धनाढ्य विद्वान् सन्यस्त और संत महंतादि नहीं मरते परन्तु खबर भी तो नहीं पड़ती कि कौन था और किधर गया

बहुत हुआ तो इस कान सुनी उस कान निकाल दी यदि किसी को किसी से कुछ अधिक संबध हुआ वा उसमें कोई सा कंचित् गुण हुआ तो उसका मरण सुन इतना कह देना हद्द है कि वह अच्छा. बड़ा अच्छा वा बड़ाही अच्छा था बस हो चुका बाद कू कुछ नहीं- कदाचित् इससे भी कुछ अधिक संबंध हुआ तो एक दिन वा दो चार दिन विषे रो रुवाकर बैठ रहे- ऐसी रीति इस जगत् की है- उससे बिलकुल विरुद्ध स्वामी जी महाराज का मरण और शोक परम विलक्षण सब के अनुभव में ऐसा आ रहा है कि जिसका काल त्रय में मिटना अति गहन सा जान पड़ता है यदि कोई केवल इस विषय के लेखों को (जैसे कि कुछेक छोटे कर २ के अभी ऊपर धर दर्साये हैं) बटोर कर एकत्रित करने का यत्न करता तो अवश्य छोटा मोटा महा भारत ऐसा ग्रंथ बन जाता- कारण. उनकी इस प्रकार पवित्र कीर्ति के विस्तार का, यही सिद्ध होता है कि उनमें समस्त सद्गुण निवास करते थे-, उन सब का उपयोग प्राचीन महर्षियों के समान स्वदेश की भलाई में करते रहे. ऐसा उनका गाढ़ संकल्प था सो उन्होंने यावज्जीवन किया और उसके पीछे अनेक प्रकार के उन्होंने क्लेश अपमान और विघ्न भी सहे परंतु कभी पीछे नहीं हटे- इस से पुनः यही सिद्ध हुआ कि जो वैसा करेगा वह अवश्य मेव इसी प्रकार उनकी भांति इस जगत् में परमश्लाघ्य व पूज्य होगा अन्यथा ऐसा होना अति असंभव है चाहो वह कैसा ही विद्वान् क्यों न हो-

प्रत्यक्ष देखलो कि काशी निवासी बाल शास्त्री जी कैसे भारी विद्वान् थे उनका मरण स्वामी जी से केवल सद्भाव ही पूर्व हुआ था परंतु वे यावज्जीवन अपनी विद्या और गुण निरंतर स्वार्थ में ही खर्च करते रहने के कारण परिणाम में विज्ञों के समीप निंद्य ठहरे- उदाहरणार्थ हिंदीप्रदीप प्रयाग का लेख नीचे लिख दिखाया है उसको ऊपर प्रारंभ में दूसरे हिन्दी प्रदीप के लिखे नंबर १ व २ के लेखों से मिलावेंगे तो स्पष्ट विदित होजायगा कि यह जगत् ऐसा स्वच्छ आदर्श है

भारत मित्रादि कतिपय सभ्य संपादकों ने शास्त्री जी का मरण सुन स्वयं कुछ न कहकर यही नीचे लिखा लेख अपने पत्र में धर कर सब के सन्मुख कर दिया था- अतः मैं कहता हूं कि विद्यमान और भविष्यत् काल के विद्वज्जन सुचेत होने से ही भारत का परम अहो भाग्य कहावेगा अलमतिविस्तरेणेति ॥

नकल भारतमित्र २७ अगस्त सन ८२ ई०

पं० बाल शास्त्री जी की मृत्यु पर हमारे सत्य वक्ता मुहफट सहयोगी "हिन्दी प्रदीप" इस तरह शोक करते हैं कि अब हिगुण दुःख हमें इस बात का है कि ऐसे २ महान् पंडित भी इन प्रांतों में खास कर काशी में धनी राजा बाबुओं को उल्लू बनाय खूब रुपया ऐंठने के सिवा अपना नाम चिरस्मरणीय रहने की कोई बात नहीं छोड़ जाते. न संस्कृत ही को किसी तरह फायदा उनकी ज़ात से पहुंचता है. न लोकोपकार

महावृक्ष की जड़ सींचने की इच्छा से एक चुल्लू पानी अपने जीते जी उसपर कभी वे छोड़ते होंगे- पामर लोगों के समान ये लोग भी प्रजा को ठग, मन मानता खाया लुटाया और जहांतक धन संचय करते बन पड़ा किया- अंत को जैसे आये वैसे मुंह बाये चल खड़े हुए- बाल शास्त्री ने तो लोकोपकार एक ओर रहे विद्या के अजीरण में आय हाल में विधवोद्वाह खंडन पर कुछ लिखा था वाहरे आक़िल पढ़ा लिखा सब कुछ पर पुराने ख़्याला की गंदगी जी से दूर न हुई॥

कहिये- भ्रातृगण बाकसर रही और श्रीयुत संपादक हिन्दी प्रदीप का यथार्थ कह देना कत्थ कितना धन्यवादाई है- बस ऐसेही स्पष्ट लेखकों को भारतार्ति नाशक सहैद्य कहना चाहिये यावत् अत्रस्थ समस्त सम्पादक गण इन ऐसे अमोल्य गुण रत्नों से स्वयं अलंकृत न होंगे तावत् देश सुधार की आशा करना सर्वथा व्यर्थ है॥

इतिश्रीमत् परमहंस परिब्राजकाचार्य वर्य श्रीमान् स्वामी दयानन्द सरस्वती दिग्विजयार्कीय तृतीय खण्डे घोरा क्रंदनं नाम्नवमो मयूख:॥

ओ३म्

अथ दशमो मयूखः॥

(१०)

सुखद्गग्गा- अब इस मयूख के द्वारा आप महाशयोंके इस प्रश्न का उत्तर लिखना अत्यावश्यक है कि इस प्रकार श्रीमान् स्वामी जी महाराज के वियोगाग्नि से प्रज्वलित भारत की शांति किस रीति से हुई और प्रशंसित महानुभाव के संचित पदार्थों का रक्षण और आरंभित कार्यों का निर्वाह कैसा क्या हुआ॥

विदित होकि वास्तव्य में इस प्रचंडाग्नी की पूरी शांति तो सर्वसक्तिमान् सर्वेश्वर सर्वाधार करेगा तभी होगी परंतु हां संभव हो सको उस रीति दौड़ धूप कर करा कर लोगों ने वह अग्नि अपने विवेक रूपी जल से कमज़ोर तो बहुत जल्द करदी थी और तुरंत ही उन्होंने परस्पर समस्त विद्वानों व समाजों और श्रीमान् यावदार्य्य कुल कमल दिवाकर की सेवा में निरंतर पत्र व्यवहार प्रचारित करके अति सत्वर विचार पूर्वक प्रबंध होने की प्रार्थना की थी- यद्यपि उस समय परमोदार चेता श्रीमान् महाराणा जी को स्वयं बहुत कुछ चिंता थी परंतु इस महान् शोकानल से वेभी अतीव खिन्न थे तथापि प्रशंसित महामनाने अपने ज्ञान बल से उस खेद जल को अति शीघ्र हटाकर इस ग्रन्थ का विज्ञापन और निमंत्रण पत्र प्रचारित कराया कि श्रीमती परोपकारिणी के समस्त सभासद और यावत् आर्य

समाजों के प्रतिनिधिगण स्थान अजमेर में २७ दिसम्बर सन् १८८३ ई० तक अवश्य समुपस्थित होकर ता०२८ व २९ दिसम्बर को सभा में परमधामनिवासी श्रीमान् जगद्गुरु स्वामी जी महाराज के उत्तर कार्यों को एकचित्त होकर चलता करें ॥

इसके अनुसार समस्त भक्तजन उक्त स्थान में प्रायः ता०२६ को ही पहुंच गए और ता०२७ दि० को समस्त आए हुए आर्य प्रतिनिधि परस्पर एकस्थान में आकर मिले कुछ अपना विचार कर रहे थे कि उतने में श्री मंत्री परोप कारिणी के उपमंत्री जी वहां आकर सबसे परमानंद पूर्वक मिले और सबको सदुपदेश करके चले गए ॥

॥ ता०२८ दि० को श्रीमान् उदयपुराधीश की कोठी में नीचे लिखे ॥

॥ समस्त सभासदों के सन्मुख दिन के १२ बजे से इस सभा का प्रथमाधिवेशन हुआ ॥

(१) लाला श्री मूलराज एम० ए० उपप्रधान परन्तु इस अवसर पर प्रधान ॥ (२) कविराजा श्यामलदास जी मंत्री (३) पंडित मोहनलाल विष्णुलाल पण्ड्या उपमंत्री और सभासद (४) शाहपुरे से राजाधिराज श्री नाहर सिंह जी के प्रतिनिधि कविराज श्यामलदास जी (५) बेदले राव जी श्री तख्त सिंह जी के प्रतिनिधि देलवाड़े के राजराणा श्री फ़तह सिंह जी (७) आसींद रावत श्री अर्जुन सिंह जी के प्रतिनिधि कविराज श्यामलदास जी (८) शिवरति महाराज श्री गजसिंह जी के प्रतिनिधि राजराणा श्री फ़तह सिंह जी (९)

मसूदे राव जी श्री बहादुर सिंह जी के प्रति निधि उनके मंत्री पंडित छगन लाल जी (१०) राव बहादुर पंडित सुंदर लाल जी अलीगढ़ (११) बाबू दुर्गा प्रशाद जी फ़र्रुखाबाद (१२) लाला जगन्नाथ प्रसाद जी फ़र्रुखाबाद (१३) सेठ निर्भय राम जी फ़र्रुखाबाद के प्रति निधि उनके पुत्र लाला सेवाराम जी (१४) लाला कालीचरण जी फ़र्रुखाबाद (१५) लाला राम चरण जी फ़र्रुखाबाद (१६) मुरार निवासी लाला छेदी लाल जी के प्रतिनिधि उनके लघु भ्राता बाबू शिव नारायण जी (१७) लाला सांई दास जी लाहौर (१८) बाबू माधव लाल जी दाना पुर (१९) राव बहादुर परम मान्यवर पंडित गोपाल राव हरि जी देश मुख बम्बई (२०) राव बहादुर पंडित महादेव गोविंद जी रानडे एम० ए० एल० बी० पूना (२१) पंडित श्याम जी कृष्ण वर्म्मा बी० ए० आक्सफोर्ड लंडन, राजा जै कृष्ण दास जी सी० एस० आई० ने कहला भेजा कि हम घोड़े से गिर जाने के कारण उपस्थित नहीं हो सके - तथैव प्रकाशित हुआ कि (२२) लाला राम शरणदास जी मेरठ निवासी को परम धाम प्राप्त हुआ - और कविराज श्यामल दास जी ने प्रगट किया कि सभापति श्रीमन्महाराजाधिराज मेवाड़ाधिपति शारीरिक अस्वस्थता के कारण उपस्थित नहीं हो सके इस लिये श्री मानों ने राजराण फ़तह सिंह जी और मुझ को अपना प्रतिनिधि बना कर भेजा है ॥

(१) सब से प्रथम निमंत्रण पत्र सुनाकर नीचे लिखा प्रस्ताव पंडित मोहन लालजी उपमंत्री ने सभाको उच्चस्वर से कह सुनाया॥

(ओ३म्)

॥ परोपकाराय सतांविभूतयः॥

हे परोपकारिणी सभा के उपस्थित महाशयों॥

(१) आज मुझको आप सब महाशयों की सेवा में निवेदन करते शोक और हर्ष दोनों एक संगही प्राप्त होते हैं जिनमें से शोक तो श्रीमत् परमहंस परिव्राजकाचार्य श्री १०८ श्री मद्दयानन्द सरस्वती स्वामी जी महाराज के जरामय रहित शरीर का साठ वर्ष की अवस्था में ही संसार त्याग करने का है क्यों कि यह सभा उक्त स्वामी महाराज सेही सुशोभित होनी चाहिये थी और हर्ष इस बात का है कि अब आप सब परोपकारिणी सभा के सभासद श्री स्वामी जी के स्थानापन्न होकर उनके धन वस्त्र और पुस्तकादि पदार्थों की उत्तर व्यवस्था और वेद वेदांगादि के प्रचार का अच्छा प्रबंध स्वीकार पत्र के अनुसार करने को इस स्थान पर एकत्र हुए हैं॥

(२) हे महाशयो! आज हम लोग जिस कार्य के संपादन करने को यहां एकत्र हुए हैं उसके विषय में निवेदन करने के पहले, मैं आप सब को स्वामी जी के इतने शीघ्र परम पद प्राप्त होनेका शोक मेरे शुद्ध अंतः करण से कर सुनाता हूं इस में कुछ संदेह नहीं कि स्वामी जीका नाम मात्र स्मरण कराने और श्रवण करने से आप सब लोग और अन्य आर्य

सज्जन महाशयों का हृदय गद् गद् हो और सब एक मुख होक र यही कहेंगे कि स्वामी जी महाराज जैसे आप्त इस क. लिका ल में होने परम दुर्घट उनकी मृत्यु से हमारे भरतखंड को वह हानि पहुंची जो कही नहीं जा सकती जिस समय स्वामी जी की वेद और वेदांगादि शास्त्रों की पारंगतता सं स्कृत भाषा का मातृ भाषा वत् धारा प्रवाह भाषण करना प रम दृढ़ स्वदेश वत्सलता और जो दूसरे को उपदेश करना उसी प्रमाण आपभी आचरण करना आदि आप्तगुण और सम्पन्नता पर ध्यान जाता है उस समय हम सब लोगोंका हृदय अति शोकाक्रांत होकर इसके सिवाय और कुछ नहीं मुख से निकलता कि हाय ईश्वर की इच्छा सर्वोपरि बल वती है ॥(२)हे महाशयो! उक्त स्वामी जी महाराज को तो परमपद प्राप्त होगया और अब जो सर्व साधारण आर्य्यों का विचार जहां तक कि मैं अन्वेषण कर जान सकता हूं तो यही है कि स्वामी जी का वह एक देह तो अब सब के साक्षात् कार में नहीं है किन्तु उनके समस्त उद्देश सिद्ध हो नेकी आशा परोप कारिणी सभा से की जाती है और सब दे श देशान्तर और द्वीप द्वीपान्तर के विद्वानादि परोपकारि णी सभा के मुख की ओर देख कर यही प्रतीक्षा कर रहे हैं कि देखें उक्त सभा स्वामी जी के उद्देशों के पालनार्थ क्या व्यवस्था करती है निदान अब हम सब लोग जहां तक विचार कर निश्चय करेंगे कि उक्त स्वामी जी के उपस्थित और भावी धन वस्त्र और पुस्तक आदि की

क्या व्यवस्था करें तो यही सिद्ध होगा कि जो कुछ स्वीकार पत्र में लिखा है उसी का यथावत् पालन करें और आर्य समाजादि से करावें अब जो हम स्वीकार पत्र को अपने हाथ में लेकर देखते हैं और व्याख्या के साथ समझते हैं तो।—

१। प्रथम उद्देश हम सब को यह पांच कर्त्तव्य कर्म आज्ञा करता है (१) वैदिक पुस्तकालय स्थापन करना

(२)। वेद और वेदांगादि के प्रचार करने के लिये और जहां तक वेद भाष्यादि व्याख्या ग्रंथ स्वामी जी अपनी विद्यमानता में रच गये हैं उनको प्रकाश करना और जो शेष हैं उनकी व्याख्या स्वामी जी के सिद्धान्तानुसार उनके शिष्यादि अच्छे २ विद्वानों से कराने का प्रबन्ध करना (३)— वेद और वेदांगादि के पढ़ने पढ़ाने के लिये एक वैदिक पाठ शाला नियत करें (४)— वेद और वेदांगादि के सुनने सुनाने के लिये एक व्याख्यान देने का आलय बनावें (५)— वेद और वेदांगादि के छापने छपवाने के वास्ते स्वामी जी जो वैदिक यंत्रालय स्थापन कर गये हैं उसका अच्छा प्रबन्ध करके उसे बनाये रक्खें॥

(२) दूसरा उद्देश हमको यह विदित करना है कि स्वामी जी के शिष्य स्वामी आत्मानंद सरस्वती जी स्वामी सहजानंद सरस्वती जी स्वामी ईश्वरानंद सरस्वती जी ब्रह्मचारी रामानंद जी आदि जो स्वामी जी के समक्ष ही उनकी आज्ञानुसार सर्वत्र भ्रमण कर उपदेश करते थे उनको परोपकारिणी सभा अब भी वैसे ही स्वामी जी

के सिद्धान्तानुसार उपदेश करने को यथायोग्य सदैव सहायता देवें और वे स्वामी जी के यावत् सिद्धांतानुसार उपदेश करते हैं कि नहीं इस पर भी यह सभा सदैव दृष्टि रखकर उनको उपदेशक मंडली बढ़ाने को उद्युक्त करे ॥

३ : तीसरा उद्देश यह आदेश करता है कि आर्य्यावर्तीय अनाथ और दीन मनुष्य जो सब प्रकार के वित्तहीन होने से अनार्य हो जाते हैं इस लिये उनके संरक्षण पोषण और सुशिक्षा के लिये एक अनाथाश्रम निर्माण किया जावे ॥

(४) चौथा - इन तीनों उद्देशों को व्याख्या सहित विचार करने से ज्ञात होता है कि अब परोपकारिणी सभा अजमेर आदि किसी नगर में स्वामी जी के नाम से एक आश्रम ऐसा बनावे कि जिसमें उद्देशानुसार स्वदेशोपकारक इतनी शाला स्थापन हो सकें तब उक्त उद्देशों का पालन यथावत् हो और उसी आश्रम में श्रीमत्स्वामी जी महाराज का शौभ्र अस्थि भस्म जो अब तक अजमेर आर्य समाज में संरक्षित रक्खा है वह भी वहां सब योग्य समकें वैसे पधरा दिया जावे जिस से कि युक्त आश्रम में सब आर्यों को सर्व रीत्या प्रीति हो * ॥ १ - वैदिक पुस्तकालय जिस में स्वामी जी के नाम की निकली पुस्तकें तथा जो कोई आर्य आदि धर्मार्थ भेट करे अथवा जो वैदिक पुस्तकें यहां नहीं हैं

* यह कृत्य आक्षेप योग्य न होगा क्या।

वे परोपकारिणी सभा खरीद करे वे सब रक्खी जावें ॥ २-वेद और वेदांगादि शास्त्रों की व्याख्या करने का कार्यालय स्थापन हो कि जिसमें दो चार पंडित नोकर रहकर जो व्याख्या कि स्वामी जी कर गये हैं उनको शोध कर प्रकाश करें और जो शेष रहगये हैं उनको स्वामीजीकी परि पाटी और सिद्धान्तों के अनुसार पूर्ण करें॥३-वैदिक पाठ शाला स्थापन हो कि जिसमें वेद और वेदांगादि शास्त्र स्वामी जी की प्रकाश की हुई प्राचीन रीति से पढ़ाये जावें ॥ ४-वैदिक व्याख्यानालय बनाया जावे कि जिसमें देशोपकारक वैदिक व्याख्यान विद्वान लोग दिया करें ॥ ५-वैदिक यंत्रालय का स्थान बने कि वहां यंत्रालय प्रयाग से उठकर स्थापन हो जावे ॥६-उपदेशक मंडली और अनाथों के रहने के लिये स्थान बनवाये जावें उपदेशक मंडली और अनाथों के भोजनाच्छादनादि के लिये सत्र स्थापन हो कि जिसमें वे धर्मार्थ भोजन करके देशोपकार करें ॥ ८-इन स्थानों के अतिरिक्त उक्त आश्रम के हाथे में बाग तथा कूपादि भी बना दिये जावें ॥ ९-सर्व कार्य्या व्यक्ष नाम के पदवी का एक अध्यक्ष परोपकारिणी सभा की ओर से नियत होकर सभा की आज्ञा से आश्रम भरके सब कार्य का प्रबंध किया करें ॥

५-इसके अनन्तर यह वक्तव्य और विचारणीय है कि स्वीकार पत्र में लिखे तीनों उद्देशों कोव्या

रव्या सहित समझने से जो परोपकारिणी सभा का कर्त्तव्य कर्म सिद्ध हुआ है वह जब पूरा धन हो तब यथावत् पालन हो सकता है और धन की संख्या जो अब हम लोग देखते हैं तो जितनी आशा रखते थे उतना धन स्वामी जी के पास नहीं निकला अतएव मैं आप लोगों को इस विषय में विदित करता हूं कि धन सम्बन्धी जैसा विचार अब हम लोगों के मन में उत्पन्न होता है वैसा ही स्वामी जी के स्वीकार पत्र लिखने पर हुआ था और इसी लिये उन्हों ने राज मेवाड़ की सर्कारीय कोठी पर स्वामी दयानंद सरस्वती स्थापित वैदिक निधि नाम से एक फंड स्थापन कर दिया था और उसको आप सब महाशय और आर्य समाजादि से धन सम्बन्धी सहायता लेकर यहां तक बढ़ाने का दृढ़ विचार था कि उनके परम पद प्राप्त होने पर परोपकारिणी सभा को कुछ श्रम न पड़े और इस विषय का एक विज्ञापन भी उन्हों ने अपनी विद्यमानता में लिखकर वैदिक यंत्रालय में मुद्रित और प्रकाश करने को भेजा था वह और उसके संबंधी सब पत्रादि वहां से प्राप्त हो सके हैं इसके सिवाय उक्त वैदिक निधि में स्वामी जी ने अपने पास का जो कुछ द्रव्य भिन्न २ स्थानों में था वह एकत्र करके जमा कराना भी आरंभ कर दिया था उक्त निधि में आज ४३०० के अनुमान जमा होंगे परंतु स्वामी जी महाराज का अकस्मात् परम पद प्राप्त होना हो गया इससे वैदिक निधि की जैसी कि वृद्धि होनी चा

लिये थी वैसी नहीं हो सकी और यह बड़ा भार परोपका
रिणी सभा और आर्य समाजों पर आपड़ा है अब जहांतक
कि विचार किया जावे वहां तक इसके सिवाय और कुछ
ध्यान मे नहीं आता कि परोपकारिणी सभा सब आर्य
समाजों से इस विषय में एक मन होकर उक्त वैदिकनि
धि की पूर्ण वृद्धि करे क्योंकि जो स्वामी जी विद्यमान हो
ते तो उनको भी धनकी सहायता देने वाले इस सभा के स
भासद और सर्व आर्य समाजों के अतिरिक्त और कौन
था अतएव वैदिक निधि की वृद्धि के नीचे लिखे यत्नों
के सिवाय और कोई ध्यान में नहीं आते ॥

(१) प्रथम तो परोपकारिणी सभा के सभासद अपनी २
शक्ति के अनुसार विशेष से विशेष जितना चंदा दे सक्ते
हों वह प्रदान करें और हर एक सभासद अपने इष्टमि
त्रादि से भी प्रदान कराने का उपाय करें (२) समस्त आ
र्य समाज भी जहां तक उनसे बन पड़े चंदा करके सहा
यता करें और जो उनके फंडों में दूसरे किसी देशोपका
री कार्य के लिये कुछ धन जमा हो तो वह भी एक सम
ती करके स्वामी जी के स्थापित किये हुए निधि में प्र
दान करें और प्रत्येक आर्य समाज में कोई ऐसा नियम
विचार करके प्रचलित कर दें कि जिसके अनुसार कु
छ धन प्रत्येक समाज से प्रति वर्ष इस निधि में प्रदा
न हुआ करे (३) स्वामी आत्मानंद सरस्वती जी आदि
उपदेशकों को भी सूचना की जावे कि वेभी इस निधि

की वृद्धि में तन मन से तत्पर होकर स्वामी जी के उद्देशों की सफलता में भागी हों (४) यह वैदिक निधि, प्रदाता ओं के लिये सदा खुला रहे (५) परोपकारिणी सभा तथा आर्य समाज और उपदेशकों के सिवाय अन्य सब जाति के सज्जनों को भी द्रव्य प्रदान करने का अधिकार प्राप्त रहे ॥

इसके अनंतर यह भी विचारणीय है कि अब वैदिक निधि को उक्त प्रकार से वृद्धि करने पर जो द्रव्य एक त्र हो वह किस प्रकार व्यय किया जाय इसके उत्तर में केवल दोही बाते हैं ॥

(१) सिद्ध संख्या के चतुर्थांश के लग भग खर्च होकर वह आश्रम बनाया जावे कि जिसका वर्णन अभी ऊप र किया है (२) शेष तीनों भागों के गवर्नमेंट प्रोमेसरी नो ट खरीद कर दिये जावें कि उनके ब्याज से प्रत्येक ऊपर लिखा शाला का खर्च जो परोपकारिणी सभा नियत रे उसमें व्यय हो ॥

अंतमें आप सब महाशयों से यही प्रार्थना है कि मेरेवि चार में जो कुछ योग्य प्रतीत हुआ वह आपकी सेवा में निवेदन कर दिया अब इस विषय को विचार कर निश्चय करना आपके आधीन है किमधिकम् ॥

॥ इसके अनंतर सभा की आज्ञानुसार ॥

(२) श्रीयुत स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का स्वीकार पत्र पढ़ा गया और जिन सभासदों ने सम्मति स्वरूप अपने हस्ताक्षर उक्त स्वीकार पत्र पर आगे नहीं किये थे उन्हों ने इस समय यह कहके प्रगट किया कि उक्त स्वामीजी ने जो धर्म कार्य्य का भार हम लोगों पर रक्खा है उसे हम स्वीकार करते हैं पर जो सभासद विद्यमान् नहीं हैं उनके पास स्वीकार पत्र की प्रति प्रमाण करने को भेजी जायंगी ॥

(३) कवि राज श्यामलदास जीने प्रस्ताव किया और राज राणा श्री फतह सिंह जीने अनुमोदन किया कि मेरठ निवासी लाला रामशरणदास जीके मरने से जो सभासद पद खाली हुआ है उस पर जोधपुर के महाराज प्रतापसिंह जी सी० एस० आई० नियत किये जायं सब की सम्मति से प्रस्ताव स्वीकार हुआ ॥

(४) राव बहादुर पंडित सुंदरलाल ने प्रस्ताव किया और पंडित मोहन लाल विष्णुलाल पंड्या ने अनुमोदन किया कि स्वर्ग वासी लाला रामशरण दास जी के स्थान पर मान्यवर राव बहादुर पंडित गोपालराव हरि देशमुख परोपकारिणी सभा के मंत्री नियत किये जायं-सब की सम्मति से प्रस्ताव स्वीकार हुआ ॥

(५) एक पत्र इस विषय पर पढ़ा गया कि स्वर्ग वासी स्वामी जी ऋग् और यजुर्वेद भाष्य का कौन २ साभाग समाप्त और असमाप्त छोड़ गये हैं इस से प्रगट

हुआ कि समग्र यजुर्वेद का भाष्य तो स्वामी जी पूर्ण कर गये हैं परंतु एक भाग मात्र उसका अब तक मुद्रित हुआ है और ऋग्वेद का सप्तम मंडल तक भाष्य बना है ॥ सब की संम्मति से यह स्वीकृत हुआ कि पंडित भीम सेन तथा ज्वालादत्त भूष के शोधने और संस्कृत भाष्य का हिंदी में अनुवाद करने के कार्य्य पर नियत किये जायं और प्रति व्यक्ति को २५ पच्चीस मुद्रा मासिक वेतन मिले, वैदिक यंत्रालय जितना शीघ्र बन सके अजमेर में लाया जाय और वह इन सभासदों की सम्हाल मे रहे :- मसूदे के ठाकुर राव बहादुर सिंह जी, राव बहादुर पंडित सुंदर लाल जी, कविराज श्यामल दास जी, पंडित मोहन लाल विष्णु लाल पंड्या और आर्य समाज अजमेर के प्रधान ॥

(६) जो द्रव्य स्वामी जी छोड़ गये हैं उसकी याद पंडित मोहन लाल विष्णु लाल पंड्या ने पढ़ सुनाई इससे प्रगट हुआ कि ४३००) नक़द और ११०००) का शोध किये जाने के लायक लहना, रु० ४००) के मूल्य का यंत्रालय और विक्रयार्थ पुस्तकें ४००००) की हैं ॥

(७) सब की संम्मति से स्वीकार हुआ कि पंडित मोहन लाल विष्णुलाल पंड्या सब पुस्तकें कागज़ और हिसाब आदि को सम्हाल लें और शोध करे पीछे एक याद प्रस्तुत करें कि स्वामी जी का क्या लेना देना है। स्वामी जी के द्रव्य का जमा रखना तथा स्वी

कार पत्र लिखित कार्य्यों के निमित्त द्रव्य एकत्र करना निम्न लिखित सभासदों के आधीन रहै। राव जी श्री बहादुर सिंह जी मसूदा, राज राणा श्री फतह सिंह जी देल वाड़ा, कविराज श्यामल दास जी उदय पुर, पंडित मोहन लाल विष्णु लाल पंड्या उदय पुर लाला सांई दास जी लाहौर, राव बहादुर गोपाल राव हरि देश मुख बम्बई, राजा जैकृष्ण दास सी० एस० आई० बिजनौर बाबू दुर्गा प्रसाद जी फर्रुखा बाद॥

यह सभा विभाग, श्री मन्महाराधिराज मेवाड़ाधिपति तथा जोधपुर के महाराज प्रताप सिंह जी सी० एस० आई० के आज्ञा अनुसार काम करेगी॥

(८) राव बहादुर पंडित महादेव गोविंद रानडे ने प्रस्ताव किया और राव बहादुर पंडित सुंदर लाल ने अनुमोदन किया कि सर्व आर्य्य समाजों का परस्पर तथा परोपकारिणी सभा से भी व्यवहार बढ़ाने के हेतु आर्य्य समाजों के प्रतिनिधियों की एक सभा निर्माण करनी चाहिये जब तक यह सभा नहीं बनती तब तक आर्य्य समाजों के जो २ प्रतिनिधी परोपकारिणी सभा में सभासद हैं वेही आर्य्य समाजों के प्रतिनिधी माने जायंगे जब प्रतिनिधी सभा स्थापित हो जायगी तब परोपकारिणी सभा में जो २ सभासद पद खाली होंगे वह इस प्रतिनिधी सभा के योग्य सभा सदों से इस प्रकार पूर्ण किये जायंगे कि परोपकारिणी

सभा के सभासदों में आधे प्रतिनिधि सभा के लोग होंगे ॥
सब की सम्मति से प्रस्ताव स्वीकार हुआ ॥
(९) पंडित श्याम जी कृष्ण वर्मा बी० ए० (आक्सफोर्ड) ने प्रस्ताव किया और लाला सांईदास ने अनुमोदन किया कि सभा के इस वृतान्त की एक २ प्रति सब आर्य्य समाजों को भेजी जावे और उनसे प्रार्थना की जाय कि प्रतिनिधि सभा के लिये सभासद नियत करने से तथा और कोई नवीन कार्य्य हो उससे परोपकारिणी सभा को यथा शक्ति शीघ्र ज्ञात करावें ॥ ता० २९ दि० स० १८८३ ई० {हस्ताक्षर मूलराज परोपकारिणी सभा के उपसभापति संमत प्रधान}

पश्चात् यह समस्त आज का कृत्य आगे लिखे समस्त आर्य समाजों के प्रति निधियों को नीचे से बुलाकर परम सत्कार पूर्वक सुनाया पश्चात् सभा का विसर्जन हुआ ॥

तारीख २९ दिसम्बर सन् १८८३ ई० को फिर सभा हुई पूर्व दिनवत् सब सभासद उपस्थित और लाला मूलराज प्रधान के स्थान में सुशोभित थे केवल विशेष इतना ही था कि इस दिन मसूदे के राव जी बहादुर सिंह जी स्वयं विद्यमान थे ॥
(१) निम्न लिखित आर्य समाजों के पत्र पढ़े गये अर्थात् आर्य समाज मेरठ और जकोबाबाद इत्यादि -

(२) स्वामी जी के शिष्य तथा सन्यासियों के निवेदन-पत्र पढ़े गये और इस विषय में उनको सभा की ओर-से यह उत्तर देना स्थिर हुआ कि उनको उचित है-कि संस्कृत के अध्ययन में श्रम करें स्वामी जी के-कहे हुए नियमानुसार चलें और परोपकार में तत्पर रह के योग्यता लाभ करें तो सभा के नियमानुसार उनको दक्षिणा मिलेगी रामानंद ब्रह्मचारी के विषय में यह निश्चित हुआ कि उसे ५) रु० मासिक मिला करें और गिरानंद के विषय में यह स्थिर हुआ कि वह विद्यालय के स्थापित होने तक प्रतीक्षा करें शेष रहे प्रार्थना पत्रों का उत्तर उपमंत्री, सभा के अनुसार दें॥

(३) स्वामी जी के द्रव्य के विषय में यह स्थिर हुआ कि उपमंत्री स्वामी जी का लहना वसूल करने का उपाय करें॥

(४) राव बहादुर पंडित महादेव गोविन्द रानडे ने यह प्रस्ताव किया और कविराज श्यामल दास जी ने सम्मति प्रगट की कि दयानन्दाश्रम बनाया जाय और उसमें इतने स्थान हों अर्थात्:- पुस्तकालय, अंगरेजी वैदिक पाठशाला, विक्रयार्थ पुस्तकों का भंडार, अनाथाश्रम, अद्भुत वस्तु संग्रहालय, यन्त्रालय, और व्याख्यान गृह। यह निश्चय हुआ कि अभी इसके लिये स्थान नियत न किया जाय परन्तु द्रव्य एकत्र करने का उद्योग हो तदनुसार निधि प्रदान

पत्र अर्थात् चन्दे की फैरिस्त प्रस्तुत हुई और उसी स
मय उपस्थित सब लोगों ने मिलके २५०००) रु० के ल
ग भग देना स्वीकार किया ॥ ※

(५) लाला जगन्नाथ प्रसाद ने यह प्रस्ताव किया और
कविराज श्यामल दास जीने सम्मति प्रगट की कि स
भा की ओर से निवेदन पत्र श्री मन्मे वाड़ाधिपति के
द्वारा महाराज जयपुर तथा जोधपुर के पास भेजें कि
वह भी दयानन्दाश्रम के लिये द्रव्य की सहायता दें॥
सब की सम्मति से प्रस्ताव स्वीकृत हुआ ॥

(६) राव बहादुर पंडित सुन्दर लाल ने प्रस्ताव किया
और लाला जगन्नाथ प्रसाद ने सम्मति दी कि पुनश्च
परोपकारिणी सभा का एकत्र करना मान्यवर सभापति
के आज्ञाधीन रहे वह सब को सम्मत हुआ ॥

(७) राव बहादुर पंडित सुन्दर लाल ने प्रस्ताव किया
और राव बहादुर पंडित गोपाल राव हरि देश मुख ने
सम्मति दी कि व्यय सभापति के आज्ञानुसार हुआ
करे और यदि आवश्यक हो तो वे द्रव्य व्यवस्थापक
सभा से विचार लें॥ यह सबको सम्मत हुआ ॥

(८) लाला मूलराज ने प्रस्ताव किया और राव बहा
दुर पंडित सुन्दर लाल ने अनुमोदन दिया कि स्वामी
जी की सम्पत्ति सभापति के पास जमा रहे ॥ यह भी
सब को सम्मत हुआ ॥

(९) फिर लाला मूल राज ने प्रस्ताव किया और राव

※ थोड़े दिन पीछे प्रकाशित हुई चंदे की फहरिस्त में ४१५४७)

बहादुर पंडित सुंदर लाल ने सम्मति दी कि स्वामी जी की पु स्तकों का मूल्य और उनका नवीन संस्करण करना यं- त्रालय को सभा के आधीन रहै ॥ यह प्रस्ताव सबको सम्मत हुआ ॥

(१०) राव बहादुर पंडित गोपाल राव हरि देश मुख ने प्रस्ताव किया और राव बहादुर पंडित सुन्दर लाल ने सम्मति दी कि योग्यता से अपने पद का कार्य्य नि र्वाह करने के कारण सभा की ओर से सभापति को धन्यवाद दिया जाय ॥ यह भी प्रस्ताव सबको सम्मत हुआ ॥

(हस्ताक्षर मूलराज उपसभापति परोप कारिणी सभा, स मत प्रधान) इसके अनंतर नीचे लिखे समाजों के प्रति निधियों को यह समस्त कार्य यथा पूर्व सुना कर सभा का विसर्जन हुआ ॥

उन आर्य्य समाजों के प्रति निधियों के नाम जो इस समय पर उपस्थित थे भाई जवाहर सिंह व ला ला मंगूलाल—लाहोर—पं० महात्मा—सिकन्दराबा द पण्डित रामप्रकाश व काशीप्रसाद—मिर्जा पुर—मुन्शी समर्थदान व बाबू रामदयाल सिं ह—प्रयाग—लाला श्री नारायण वर्मा—कान पुर—पं० गोपाल राव हरि व पं० लक्ष्मीदत्त बाबू हरनारायण व लाला नारायण दास व लाला मन्नी लाला व लाला रघुनाथलाल व लाला ज्वालाप्रसाद

व पुरोहित मन्नीलाल व चौबे तोताराम — [९] फ़र्रुखा
बाद — लाला बन्दी दीन — भोलेपुर फ़तहगढ़ — पं०
केशवराम व बाबू गङ्गाधार — लखनऊ — बाबू माता
प्रसाद — शाहजहांपुर — बाबू तुलसीराम व देवी
प्रसाद — बरेली — बा० प्रेमनारायणदास [१२] — मुरादा
बाद — ठाकुर भूपालसिंह [१३] — अचलेश्वर — पं०
[१४] रामदुलारेलाल — आगरा — पं० रामनारायण —
मथुरा — ठा० महावीरसिंह व पं० गंगाप्रसाद व
जीयानंद व कन्हैयालाल गुप्त [१५] — वांदोक — मुं०
लक्ष्मण स्वरूप [१६] व पं० पालीराम व पं० जगन्नाथ
प्रसाद — मेरठ — बाबू राधाकृष्ण [१७] — रोहतक —
बाबू सुन्दरलाल — सहारनपुर [१८] — स्वामी कृपारा
म व वंशीलाल — डेरादून — पं० उमरावसिंह [२०] व
बाबू रंगीलाल व जमय्यतराय — रुड़की — बा०
पंचम सिंह — [२१] कैसोली — [२२] ला० विष्णु सहाय व
गोपाल सहाय [२३] — फ़ीरोज़पुर — बाबू गणेश प्र
साद [२४] — आदम बाहन — मास्टर दयाराम — गु
जरात [२५] — ठाकुर नन्दकिशोर व पं० गौरीशंकर
— जयपुर — रा० सेवकलाल [२६] कृष्णलाल व प्र
ह्लाद नारायणदास — [२७] बम्बई — बा० महारा
ज कृष्ण व सन्तसिंह — मुंगेर [२८] — ला० शिवना
रायण व मंगल [२९] दीन जी — रामगढ़ — पं० पर
मानन्द — शिमला — ब्रह्मचारी रामानन्द व पं०

भीमसेन व देवदत्त स्वामीजी के शिष्य — बा० पदमचन्द व क मल नयनादि — अजमेर ॥ बाकी रहे समाजों ने अपना अधि कार इन्हीं ऊपर लिखे सभासद वा समाजियों को लिख दिया था ॥

पश्चात् श्रीयुत कविराज श्यामलदास जीने खड़े होकर परस्पर ऐक्य और मित्रता के विषय में ऐसी उत्तम रीति से कथन किया कि मानो स्वयं ऐक्य इस सभा में उपस्थि त है तदनन्तर श्री स्वामी जी के वियोग और उनकी प्रशं सा में उन्होंने बहुत कुछ कहा जिससे ज्ञात होता था कि देशोन्नति का अंकुर आप के भी हृदय में भली भां ति समुत्पन्न है - इस पर पं० श्यामजी कृष्ण वर्मा ने कवि वर को धन्यवाद दे उनके कथन को पुष्ट किया - इसके पश्चात् श्रीयुत पंडित गोपाल राव हरि जी अधिपति पाठशाला ज़िला फ़र्रुखाबाद ने श्री स्वामी जी के वियो ग और वेद विषय में ऐसी वक्तृता की कि सब अश्रु पाती हो गये ॥

तत्पश्चात् श्रीयुत पं० लक्ष्मी दत्त जी ने परोपकारिणी सभा को धन्यवाद देकर परस्पर ऐक्य और मित्रता जल और दूध के समान रखने को कहा ॥

पश्चात् श्रीयुत राव बहादुर गोपाल राव हरि जी देश मुख ने कहा कि इस समय दूर स्थानों के आर्य गण उपस्थित हैं सब कोई जान लें कि स्वामी जी का यह सिद्धांत* था और जहां हो सके इसी के अनुसार सब

*स्वयं श्रीमान् दयासागर स्वामीजी महाराज अपने जो सिद्धांत लिख धर गए हैं उनकी ठीक नक़ल आगे २१ वें मयूख में लिखी-देखने योग्य है ॥

बर्ताव करें—मंत्र संहिता वेद हैं ब्राह्मण इत्यादि नहीं, वेदों में किसी जंतु के मारने की आज्ञा नहीं है, वेदों में सब सत्य विद्याओं का मूल है, पाषाणादि मूर्ति पूजन वेद विरुद्ध है, ईश्वर निराकार सर्वशक्तिमान सर्वज्ञ, सर्वव्यापक, अजर, अमर, नित्य, पवित्र, आदि लक्षण है उसी की उपासना करनी योग्य है। तथा जो बात नीति और बुद्धि से विरुद्ध हो वह अमाननीय है, वेदों का अधिकार सब वर्णों को समान ही है, कर्म और गुणों से वर्ण हैं वीर्य से नहीं, जहां तक हो सके बाल्य विवाह से बचकर ब्रह्मचर्य रखना, वायु की शुद्धी के कारण हवन की आवश्यकता है, मृतकों को भोजनाच्छादन कदापि नहीं पहुंचता, वेदों की आज्ञा है कि सब मनुष्य देश देशांतर और द्वीप द्वीपांतर में जावें, आर्यों को उचित है कि पाठशाला नियत करें और प्राचीन ग्रंथों का पठन पाठन रक्खें और स्वार्थ साधकों ने उनमें यत्र कुत्र जो कुछ मिला दिया हो उसको वेदों की कसौटी से परीक्षा करके दूर करदें। इत्यादि कह कर उपदेश किया कि प्रति वर्ष स्वामी जी महाराज की मृत्युतिथि का स्मरण रख समस्त आर्य जन यथा सामर्थ्य उत्सव किया करें और वह दिन पवित्र कर्म करते ही व्यतीत हो॥

इसके अनंतर उक्त पत्र पर इस ग्रंथकार के द्वारा

सब सभासदों के हस्ताक्षर कराये गये ॥※ पश्चात् सभा का विसर्जन हुआ ॥

तीसरे दिवस रविवार को प्रातःकाल होते ही फिर सब आर्य जन उदयपुराधीश की कोठी पर एकत्र हुए और उन्होंने परोपकारिणी सभा के समस्त सभासदों से अपना २ नाम ग्राम और समाज का अधिकार जता कर भेंट की पश्चात् आर्य समाजों के प्रति निधियों ने प्रतिनिधि सभा नियत करने का विचार किया इस पर पंडित उमरावसिंह जी रुड़की ने इस सभा का विषय जो एक दो परोपकारिणी के सभासदों की अनुमति से बना लाये थे पढ़कर सुनाया उसको कुछ न्यूनाधिक करके सब ने स्वीकार किया ॥

फिर दिन के ३ बजे पीछे सब आर्य समाजों के प्रतिनिधि और परोपकारिणी सभा के सभासद् अजमेर आर्य समाज के स्थान अर्थात् श्रीयुत राव बहादुर सिंह जी वर्मा मसूदाधीश की हवेली में एकत्र हुए तहां प्रथम सब का फोटो लिया गया पश्चात् श्रीयुत श्याम जी कृष्ण वर्मा ने एक अति उत्तम व्याख्यान दिया, प्रथम इस देश के प्राचीन सौभाग्य का वर्णन करके वर्तमान समय के अभाग्य को जताया और एतद्देश प्रसूतस्य इस मनुवाक्य के प्रमाण से कहा कि वह समय ऐसा था कि देश २ के मनुष्य इस देश में आकर विद्या ग्रहण करते थे आज वह समय है कि

※ उस समय हमारे एक मित्र उत्तरीय लघु आर्य समाज के बुद्धिमान अधिकारी ऐसे चौंके कि फिर किसी प्रकार ठिकाने न आये अतः स्मरणीय है यहां नाम इनका लकीर रहे ॥

मेरे ऐसे अभागी इस देश से अन्य देश में विद्याध्ययनार्थ जाते हैं, इस में कुछ संदेह नहीं कि संस्कृत विद्या सब विद्याओं की मुकुट मणि है। इसको प्रशंसा और आदर भाव जैसा कुछ इन दिनों यूरुप अमेरिका, जर्मन इत्यादि देशों में होता है उसका हमारे देश में लेश मात्र भी नहीं— आक्सफोर्ड नगर में सर्कार को छोड़ केवल रईस साहूकार लोग ४० लाख रुपया वार्षिक इसी विद्याध्ययन के निमित्त देते हैं अब कहो उस नगर की उपमा इस देश के कौन से नगर को देवें, इसके उपरांत संस्कृत विद्या का अत्यन्त प्रभाव तुम लोग यह देख लो कि यदि मुझ को संस्कृत न आती होती तो मैं ग्रीक लाटिन आदि भाषा ऐसी शीघ्र न सीख सकता ॥

लंडन नगर में मिस्टर ग्लेडस्टोन वज़ीर से मेरी भेंट हुई उस समय मैंने संस्कृत की योग्यता दिखलाई तब वे मुझ से कहने लगे कि मैं इस बात का बड़ा शोक करता हूं कि मेरी आयु अधिक हो गयी यदि मैं दश वर्ष भी कम होती तो संस्कृत का आरंभ कर देता ॥

हे आर्य भ्रातृगण देखो अन्य देशीय पुरुष संस्कृत का कैसा आदर भाव करते हैं एक हम हैं जो खत्री से क्षत्री नाऊ से ठाकुर, कुम्हार से प्रजापति इत्यादि पद आसी पर मरे मिटते हैं परंतु जो इन पदों

के कारण हैं जिन गुणों की प्रशंसा है उनको ग्रहण नहीं करते और न अपनी देश दशा की ओर कभी कोई भूलकर निहारते हैं ॥

हे भाइयो ! अब हमारा सोने का समय नहीं है हुआ सो हुआ अब भी देशोन्नति पर कटि बद्ध हो जाओ परोपकारिणी सभा ने जो हमारे लिये दयानन्द यूनीवर्सिटी स्थापित करने के लिये विचार किया है जिस में वैदिक कालिज भी होगा जिस से हमारे लिये संस्कृत विद्या का द्वार खुल जायगा—अति उद्योगी हे समय बार २ नहीं मिलता यदि इस समय भी तुम न चेते और भेड़िया धसान पर ही चलते रहे—अथवा नाऊ की बरात के भांति जने २ ठाकुर बन बैठे और घर २ दयानंद स्मारक चिन्ह बनने लगा तो सत्य कहता हूं कि फिर तुम्हारे करे कुछ भी न होगा और लोग जितना तुमको धिक्कारें अथवा हंसे उतना थोड़ा ही होगा परंतु मुझ को पूरा विश्वास है कि यह कार्य्य अवश्य पूरा होगा क्योंकि हमारे आर्य्य गण और परोपकारिणी सभा के समस्त सभासद ऐसे हैं कि इन में से केवल एकही पुरुष कहो सो कर सकता है ॥*

इसके अनंतर श्रीमान् परम सुजान राव बहादुर सिंह जी वर्मा मसूदाधीश जी ने एक अति सललित व्याख्यान सुनाया ॥

* क्यों सभासद महाशय कभी किसी ओर [illegible] इस [illegible] [illegible] आप देखेंगे

तत्पश्चात् भाई जवाहर सिंह जी आदि और कितनेही स
माजीय सभ्यों के एक से एक उत्तम व्याख्यान होकर –
समाज का विसर्जन हुआ और सब लोग अति प्रमुदित
पुलकित हो परस्पर मिल मिला कर एक दूसरे से आज्ञा
लेते लिवाते कोई आज कोई कल यों अपने२ ग्राम और
नगरों को चलते हुए – और राव बहादुर पंडित वर गो
पाल राव हरी जी देश मुख तथैव श्याम जी कृष्ण व
र्मा और लाला जगन्नाथ प्रसाद जी रईस नगर फर्रुखाबाद
अपनी इस सभा का धन्य वाद पत्र लेकर श्री महाराणा
सा० की सेवा में उपस्थित हुए – वहां परम प्रशंस्य श्री
महाराजाधिराज ने इन सब का बड़ा ही आतिथ्य सत्का
र किया प्रतिदिन महद्राज सभा में ये सब लोग पधा
रते रहे एक दिन श्रीयुत श्याम जी कृष्ण वर्मा का
वहां भी व्याख्यान हुआ – श्री दर्बार इन सब सभ्य
पुरुषों से बहुत ही प्रसन्न हुए बिदा होने के दिन स
ब को खिलत अर्थात् बहुमोल्य महार्ह वस्त्रादि और
मौक्तिक माला पारितोषिक समर्पण कर बड़ी प्रीति
और सन्मान के साथ बिदा किया ॥

इस प्रकार इस परोप कारिणी सभा के अधिवेशन में
श्री मान अवशिष्ट प्रसत्कीर्ति स्वामी जी महाराज कृत
७ मास प्रथम विरचित, स्वीकार पत्र के अनुसार हुआ
प्रबंध देख सुन उस समय भारत निवासियों का बहुत
कुछ समाधान हुआ तथा इस सभा में आए हुए सभ्य

गुओं का आगत स्वागत भी आरंभ से लेकर समाप्ती तक प्रशंसित सभा ने अति उत्तम रीति से किया प्रबंध इस का अजमेर समाज के हाथ था इस में जो कुछ व्यय हुआ वह सब महा महोदय उदयपुराधीश ने राज्य के आधीन रक्खा ॥

परंतु खाति इस में केवल यही रही कि एक बड़ी भारी शारीरिक स्वास्थ्य अच्छा न रहने के कारण परम प्रशंस्य प्रकृति श्रीमान् महाराणा जी स्वयं अजमेर न पधार सके श्रीमानों को इस का बड़ा ही उत्साह था उन्हों ने अपने यहां से भेजे हुए राज्याधिकारियों से बड़ी ताकीद इस कार्य को परमानंद पूर्वक कर आने की करदी थी तथैव इस का वृतांत घड़ी प्रति घड़ी तार और पत्रों के द्वारा अपने समीप मगाते रहे - सुनते हैं कि एतदर्थ खास डांक सवारों की विठला रक्खी थी - स्पष्ट तो यह है कि उन दिनों केवल कलेवर मात्र से श्रीमान् विराजमान राजधानी रहे हैं ॥

इस कार्य में आये हुए समस्त प्रतिनिधि और सभासद एक से एक अधिक विद्वान् बुद्धिवान् और विचारवान् थे उनकी कर्तव्यता और उत्सहादि उत्कृष्ट गुणों की प्रशंसा श्रवण कर श्री दर्बार को स्वसंयोग न होने का अधिकतर पश्चात्ताप रहा और उसी दिन से उन के चित्त में यह लालसा लग गई थी कि कुछ ही प्रय

की वर्ष हम अवश्य ही अपनी सभा सुधर्मा को समलंकृत करेंगे – यों ज्यों त्यों नो मास पूरे कर तीन मास शेष रहते ही सभा के द्वितीयाधिवेशन विषयक लिखा पढ़ी का आरंभ करादिया कि इस वर्ष का उत्सव सभासद सदाशय कहां होना चाहते हैं और उसमें क्या२ होना आवश्यक है इत्यादि पत्रों का उत्तर प्रत्युत्तर आते जाते दिसंबर मास भी आ गया इसी मास की ता०२८ व २९ को सभा का द्वितीयाधिवेशन होने वाला था परंतु परम दारुण शोक का विषय यह हुआ कि श्रीमान् सकल सद्गुण निधान श्री महाराणा साहब का यह उत्साह और मनोरथ सिद्ध न हुआ अर्थात् उन्हीं दिनों मानो कोई महोत्सव सुर पुर में उपस्थित होगया उसके निमंत्रण में श्रीमान् अन्वर्थाभिधान श्री सज्जन सिंह जी महाराज ४ दिन पूर्व ही उधर सिधार गये ॥ * हा हंत – हा हंत – हा हंत – हा बंधुगण – मनचीती ना होय – प्रभु चीती तत्काल,, की कथा हो गई, कहो यह सब भारत दुर्दैव का परमाद्भुत चरित्र नहीं तो और क्या है हा दया

* भाई सत्य तो यह है कि यह राजहंस तो मानो अपने सद्गुरु चरण सरोरुह का परम असह्य विक्षेप सुनते ही उड़ जाने वाला था परंतु न जाने अपने किन परमावश्यकीय कार्यों के पूर्त्यर्थ वह सवा वर्ष अधिक ठहरा रहा। यहां के राज गण के कर कमलों की शोभा बढ़ाने वाला इनका इतिहास तय्यार हो गया है इस समय इनकी आयु केवल २५ वर्ष से कुछही अधिक थी इतनेही अल्पकाल में इन्होंने अपने को अमर करलिया सत्य कहा है ॥ तेजसां नहि वयः समीक्ष्यते ॥ हा ॥॥ महाराणा जी अब इस अवनि तल पर कौन ऐसा राजा है जो आप के समान हमारे असाध्य वालों को भरपूर पारितोषिक देकर यह लिखेगा कि आज से तुम कभी अपने को असाध्य मत मानो इति ॥

क चोट सुनार की · एकहि धम्म लुहार की,, होकर धरती हिल गई इस प्रकार बार बार जिस्पर प्रहार हो वहकि स विध खड़ा हो सक्ता है हा-भारत पर, महाभारत कास वे दब चढ़ाव पर चढ़ाव हो रहा है तथापि हमलोगनि लज्यता के साथ,, शल्यो अर्थात पांडवान्,, की भांति इ-सकी उन्नति की आशा बढ़ा रहे हैं देखिये क्या होना है ॥

सत्य तो यह है कि इस महा नशानि प्रहार से भारत वासियों का वह हृदयं गत घाव पुनः विदीर्ण होकर शत गुणित हो गया। बस इतनेही से इधरकी रही सही सब व्यवस्था आप सर्व महाशय स्व बुद्धि विचार लेने सक्ते हैं-इस बात को ऊए आज अवधि सवा दो बर्ष से० अधिक होचुका, अद्यावधि उपकारिणी सभा का कोई अधिपति नियत नहीं ऊआ, सत्य है बिना सुकृत बल कौन उस पदवी कोस्वीकार कर सक्ता है- अस्तु, यह रहा ऊआ सभा काद्वितीयाधि वेशन फिर एक बर्ष बाद सन् ८५ के दिसंबर में, ऊआ न ऊए के बराबर ऊआ परंतु इस वर्ष वैसा भी न हो सका तथापि ॥ राम भरोसे जे रहें वे पर्वत पर हरयायं,, तथाच ‘‘ जीवत्यनाथोपि वने विसर्जितो,, के समान परम आम निवासी श्रीमान् योगिराज महाराज के तपो बल से उनका समारोपित उद्यान खब विकासित और सुवासितही देखा जा रहा है।

आशा है कि वह सर्वनियंता सर्वांतर्यामी अवश्य कि-
सी न किसी दिन हमारी परमप्रिया सभा को भी निष्क-
लंक कर दिखावेगा, अलमति विस्तरेण बुद्धिमद्वर्ये-
षु ॥

इति श्रीमत् परम हंस परिव्राजका-
चार्य वर्य श्रीमान् स्वामी दयान-
न्द सरस्वती दिग्विजयार्की-
य तृतीय खण्डे परोपका-
रिणी सभाधिवेशन क-
थाविवर्णनं नाम दश-
मो मयूखः ॥

(ओ३म्)

॥ अथैकादशोमयूखः ॥

(११)

बंधुगण- अब इस मयूख के द्वारा श्रीमान् सकलविद्यानिधान स्वामी जी महाराज के मुखकमल विनिःसृत उपदेश और उनके साक्षात् सिद्धांतों की ठीक २ प्रति आप समस्त महाशयों के सन्मुख धर कर प्रार्थना करता हूं कि किंचिच्चित्त लगाकर इनका आशय ध्यान में लाइये जिस से देश भलाई हो ॥

(प्रशंसित श्रीमान् लिखते हैं कि)

सर्व तंत्र सिद्धांत अर्थात साम्राज्य सार्वजनिक धर्म, जिसको सदा से सब मानते आये, मानते हैं और मानेंगेभी, इसी लिये उसको सनातन नित्य धर्म कहते हैं कि जिसका विरोधी कोई भी न होसके, यदि अविद्यायुक्त जन अथवा किसी मत वाले के भ्रमाये हुए जन, इसको अन्यथा जानें वा मानें तो उसका स्वीकार कोई भी बुद्धिमान् नहीं करते किन्तु जिसको आप्त अर्थात् सत्यमानी, सत्यवादी, सत्यकारी, परोपकारक, पक्षपात रहित विद्वान मानते हैं वही सबको मन्तव्य और जिसको नहीं मानते वह अमन्तव्य होने से प्रमाण के योग्य नहीं होता॥

अब जो वेदादि सत्य शास्त्र और ब्रह्मा से लेकर जैमि नि मुनि पर्यन्तों के माने हुए ईश्वरादि पदार्थ हैं जिन को मैंभी मानता हूं सब सज्जन महाशयों के सामने प्रकाशित करता हूं मैं अपना मन्तव्य उसी को जानता हूं कि जो तीन काल में सबको एकसा मानने योग्य है, मेरा कोई नवीन कल्पना वा मत मतान्तर चलाने का लेशमात्रभी अभिप्राय नहीं है किंतु जो सत्य है उसको मानना, मनवाना, और जो असत्य है उसको छोड़ना और छुड़वाना मुझको अभीष्ट है-यदि मैं पक्षपात करता तो आर्य्यावर्त्त में प्रचरित मतों में से किसी एक मत का आग्रही होता किन्तु जो आर्य्यावर्त्त वा अन्यदेशों में अधर्मयुक्त चाल चलन है उसका स्वीकार और जो धर्म युक्त बातें हैं उनका त्याग नहीं करता, न करना चाहता हूं क्योंकि ऐसा करना मनुष्य धर्म से बहिः है। मनुष्य उसीको कहना कि जो मनन शील होकर स्वात्मवत् अन्योंके सुख दुःख और हानि लाभको समझे अन्यायकारी बलवान् से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल सेभी डरता रहे इतनाही नहीं किंतु अपने सर्व सामर्थ्य से धर्मात्माओं की चाहे वे महाअनाथ निर्बल और गुणरहित क्यों न हों उनकी रक्षा, उन्नति प्रियाचरण और चाहें कोई चक्र वर्ती सनाथ महाबलवान् और गुणवान भी हो तथापि उसका नाश, अवनति और

अमियाचरण सदा किया करे अर्थात् जहां तक होसके वहां तक अन्याय कारियों के बलकी हानि और न्याय कारियों के बलकी उन्नति सर्वथा किया करे इस काम में चाहे उसको कितनाही दारुण दुःख प्राप्त हो चाहे प्राण भी भलेही जावें परन्तु इस मनुष्य पन रूप धर्म से पृथक् कभी न होवे ॥ * इसमें श्रीमान् महाराज भर्तृहरि जी आदि ने श्लोक कहे हैं उनका लिखना उपयुक्त समझकर लिखता हूं :—

निन्दन्तु नीति निपुणा, यदि वा स्तुवन्तु
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम् ।
अद्यैव वा मरण मस्तु युगान्तरे वा
न्याय्यात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः ॥१॥ भर्तृहरिः

न जातु कामान्न भयान्न लोभा
द्धर्मं त्यजेज्जीवित स्यापि हेतोः ।
धर्मो नित्यः सुखदुःखे त्वनित्ये
जीवो नित्यो हेतुरस्य त्वनित्यः ॥२॥ महाभारते
एक एव सुहृद्धर्मो निधनेप्यनुयाति यः
शरीरेण समं नाशं सर्वमन्यद्धि गच्छति ॥३॥ मनुः
सत्यमेव जयते नानृतं सत्येन पन्था विततो देवयानः
येनाऽऽक्रमन्त्यृषयो ह्याप्तकामा यत्र तत्सत्यस्य परमं ॥४॥ मुण्डक०
नहि सत्यात्परो धर्मो नानृतात्पातकं परम् ।
नहि सत्यात्परं ज्ञानं तस्मात् सत्यं समाचरेत ॥५॥ उप नि०

* धन्य महाराज धन्य, ऐसे तो हालकाल में आपही एक मनुष्य देखे गए जिन्होंने जैसा औरोंको उपदेश किया वैसाही आचरण स्वयं सदैव करके अपने प्राण ऐसी बातों में दे दिये इसको न मानना पूरी कृतघ्नता है ॥

इन्हीं महाशयों के श्लोकों के अभिप्राय के अनुकूल सब को निश्चय रखना योग्य है अब मैं जिन२ पदार्थों को जैसा२ मानता हूं उन२ का वर्णन संक्षेप से यहां करता हूं कि जिनका विशेष व्याख्यान मैंने सत्यार्थ प्रकाशादि ग्रन्थों में अपने२ प्रकरण में कर दिया है इसमें से]—

१— प्रथम "ईश्वर" कि जिसके ब्रह्म परमात्मादि नाम हैं जो सच्चिदानन्दादि लक्षण युक्त है जिसके गुण कर्म स्वभाव पवित्र हैं जो सर्वज्ञ निराकार सर्व व्यापक अजन्मा, अनन्त सर्वशक्तिमान्, दयालु, न्यायकारी, सर्व सृष्टि का कर्त्ता, धर्त्ता, हर्त्ता, सब जीवों को कर्मानुसार सत्यन्याय से फलदाता आदि लक्षण युक्त है उसी को परमेश्वर मानता हूं ॥

२— चारो "वेदों" (विद्या धर्म युक्त ईश्वर प्रणीत संहिता मंत्रभाग) को निर्भ्रान्त स्वतः प्रमाण मानता हूं, वे स्वयं प्रमाण रूप हैं कि जिनका प्रमाण होने में किसी अन्य ग्रन्थ की अपेक्षा नहीं जैसे सूर्य्य वा प्रदीप अपने स्वरूप के स्वतः प्रकाशक और पृथिव्यादि के भी प्रकाशक होते हैं वैसे चारो वेद हैं और चारो वेदों के ब्राह्मण, छः अंग छः उपांग, चार उपवेद और ११२७ (ग्यारह सौ सत्ताईस) वेदों की शाखा जो कि वेदों के व्याख्यान रूप ब्रह्मादि महर्षियों के बनाये ग्रन्थ हैं उनको परतः प्रमाण अर्थात् वेदों के

अनुकूल होने से प्रमाण और जो इनमें वेद विरुद्ध वचन हैं उनका अप्रमाण करता हूं ॥

३—जो पक्षपात रहित न्यायाचरण सत्यभाषणादि युक्त ईश्वराज्ञा वेदों से अविरुद्ध है उसको "धर्म" और जो पक्षपात सहित अन्यायाचरण मिथ्या भाषणादि ईश्वराज्ञा भंग वेद विरुद्ध है उसको "अधर्म" मानता हूं ॥

४—जो इच्छा, द्वेष सुख, दुःख और ज्ञानादि गुण युक्त अल्पज्ञ नित्य है उसीको "जीव" मानता हूं ॥

५—जीव और ईश्वर स्वरूप और वैधर्म्य से भिन्न व्याप्य व्यापक और साधर्म्य से अभिन्न हैं अर्थात् जैसे आकाश से मूर्त्तिमान् द्रव्य कभीभिन्न न था न है न होगा और न कभी एकथा न है न होगा इसी प्रकार परमेश्वर और जीव को व्याप्य व्यापक उपास्य उपासक और पिता पुत्र आदि सम्बन्ध युक्त मानता हूं ॥

६—"अनादि पदार्थ" तीन हैं एक ईश्वर, द्वितीय जीव, तीसरा प्रकृति अर्थात् जगत् का कारण इन्हीं को नित्य भी कहते हैं जो नित्य पदार्थ हैं उनके गुण कर्म स्वभाव भी नित्य हैं ॥

७—"प्रवाह से अनादि" जो संयोग से द्रव्य गुण कर्म उत्पन्न होते हैं वे वियोग के पश्चात नहीं

रहते जिससे प्रथम संयोग होता है वह सामर्थ्य उनमें अनादि है और उससे पुनरपि संयोग होगा, तथा वियोग भी, इन तीनों को प्रवाह से अनादि मानता हूं ॥

८—"सृष्टि" उसको कहते हैं जो पृथक् द्रव्यों का ज्ञान युक्ति पूर्वक मेल होकर नानारूप बनना ॥

९—"सृष्टि का प्रयोजन" यही है कि जिसमें ईश्वर के सृष्टि निमित्त गुण कर्म स्वभाव का साफल्य होना जैसे किसी ने किसी से पूछा कि नेत्र किस लिये हैं उसने कहा देखने के लिये वैसे ही सृष्टि करने के ईश्वर के सामर्थ्य की सफलता सृष्टि करने में है और जीवों के कर्मों का यथावत् भोग करना आदि भी ॥

१०—"सृष्टि सकर्तृक" है इसका कर्ता पूर्वोक्त ईश्वर है क्योंकि सृष्टि की रचना देखने और जड़ पदार्थ में अपने आप यथा योग्य बीजादि स्वरूप बनने का सामर्थ्य न होने से सृष्टि का कर्ता "अवश्य" ॥

११—"बन्ध" सनिमित्तक अर्थात् अविद्या निमित्त से है जो २ पाप कर्म ईश्वर भिन्नोपासना अज्ञानादि सब दुःख फल करने वाले हैं इसी लिये यह "बन्ध" है कि जिसकी इच्छा नहीं

और भोगना पड़ता है ॥

१२—"मुक्ति" अर्थात् सर्व दुःख से छूट कर बंधरहित सर्व व्यापक ईश्वर और उसकी सृष्टि में स्वेच्छा से विचरना नियत समय पर्यन्त मुक्ति के आनंद को भोग के पुनः संसार में आना ॥

१३—"मुक्ति के साधन" ईश्वरोपासना अर्थात् योगाभ्यास, धर्मानुष्ठान, ब्रह्मचर्य से विद्या प्राप्ति आप्तविद्वानों का संग, सत्यविद्या, सुविचार और पुरुषार्थ आदि हैं ॥

१४—"अर्थ" वह है कि जो धर्म ही से प्राप्त किया जाय और जो अधर्म से होता है उसको अनर्थ कहते हैं ॥

१५—"काम" वह है कि जो धर्म और अर्थ से प्राप्त किया जाय ॥

१६—"वर्णाश्रम" गुण कर्मों की योग्यता से मानता हूं ॥

१७—"राजा" उसी को कहते हैं जो शुभ गुण कर्म स्वभाव से प्रकाशमान पक्षपात रहित, न्याय धर्म का सेवी, प्रजाओं में पितृवत् बर्ते और उनको पुत्रवत् मानके उनकी उन्नति और सुख बढ़ाने में सदा यत्न कियाकरे ॥

१८—"प्रजा" उसको कहते हैं कि जो पवित्र गुण कर्म स्वभाव को धारण करके पक्षपात रहित न्या

य धर्म के सेवन से राजा और प्रजा की उन्नति चा
हती हुई राज विद्रोह रहित राजा के साथ पुत्रव
त् बर्ते ॥

१९-जो सदा विचार कर असत्य को छोड़ सत्य का
ग्रहण करे अन्यायकारियों को हटावे और न्याय-
कारियों को बढ़ावे अपने आत्मा के समान सबका
सुख चाहे सो "न्यायकारी" है उसको मैं भी ठीक
मानता हूं ॥

२०-"देव" विद्वानों को और अविद्वानों को "असु-
र" पापियों को "राक्षस" अनाचारियों को "
पिशाच" मानता हूं ॥

२१-उन्हीं विद्वानों, माता, पिता, आचार्य्य, अतिथि
न्यायकारी, राजा और धर्मात्मा जन, पतिव्रतास्त्री,
और स्त्रीव्रत पति का सत्कार करना "देवपूजा"
कहाती है इससे विपरीत अदेवपूजा इनको मू-
र्त्तियों को पूज्य और इतर पाषाणादि जड़ मूर्त्तियों
सर्वथा अपूज्य समझता हूं ॥

२२-"शिक्षा" जिससे विद्या, सभ्यता, धर्मात्मता, जि
तेन्द्रियतादि की बढ़ती हो और अविद्यादि दोष
छूटें उसको शिक्षा कहते हैं ॥

२३-"पुराण" जो ब्रह्मादि के बनाये ऐतरेयादि
ब्राह्मण पुस्तक हैं उन्हीं को पुराण, इतिहास, क-
ल्प, गाथा और नाराशंसी नाम से मानता हूं अन्य

भागवतादि को नहीं ॥
२४-" तीर्थ " जिस से दुःखसागर से पार उतरें कि जो सत्य भाषण विद्या, सत्संग, यमादि योगाभ्यास, पुरुषार्थ, विद्यादानादि शुभ कर्म हैं उसी को तीर्थ समझता हूं इतर जल स्थलादि को नहीं ॥
२५-" पुरुषार्थ प्रारब्ध से बड़ा " इसलिये है कि जिस से संचितस्थ प्रारब्ध बनते जिसके सुधरने से सब सुधरते और जिसके बिगड़ने से सब बिगड़ते हैं ॥
२६- मनुष्य को सबसे यथा योग्य स्वात्मवत् सुख दुःख हानि लाभ में वर्त्तना श्रेष्ठ अन्यथा वर्त्तना बुरा समझता हूं ॥
२७- " संस्कार " उसको कहते हैं कि जिससे शरीर मन और आत्मा उत्तम होवें वह निषेकादि श्मशानान्त सोलह प्रकार का है इसको कर्त्तव्य समझता हूं और दाह के पश्चात् मृतक के लिये कुछ भी न करना चाहिये ॥
२८-" यज्ञ " उसको कहते हैं कि जिसमें विद्वानों का सत्कार यथा योग्य शिल्प अर्थात् रसायन जोकि पदार्थ विद्या उससे उपयोग और विद्यादि शुभ गुणों का दान अग्नि होत्रादि जिनसे वायु वृष्टि जल औषधी की पवित्रता करके सब जीवों को सुख पहुंचाना है उसको उत्तम समझता हूं ॥

२९- जैसे "आर्य्य" श्रेष्ठ और "दस्यु" दुष्ट मनुष्यों को कहते हैं वैसेही मैं भी मानता हूं ॥

३०- "आर्य्यावर्त्त" देश इस भूमि का नाम इसलिये है कि इस में आदि सृष्टि से आर्य्य लोग निवास करते हैं परन्तु इसकी अवधि उत्तर में हिमालय दक्षिण में विन्ध्याचल पश्चिम में अटक और पूर्व में ब्रह्मपुत्र नदी है इन चारों के बीच में जितना देश है उसको "आर्य्यावर्त्त" कहते और जो इनमें सदा रहते हैं उनको भी आर्य्य कहते हैं ॥

३१- जो सांगोपांग वेद विद्याओं का अध्यापक सत्याचार का ग्रहण और मिथ्याचार का त्याग करावे वह "आचार्य्य" कहाता है ॥

३२- "शिष्य" उसको कहते हैं कि जो सत्यशिक्षा और विद्या को ग्रहण करने योग्य धर्मात्मा विद्या ग्रहण की इच्छा और आचार्य्य का प्रिय करने वाला है ॥

३३- "गुरु" माता, पिता और जो सत्य का ग्रहण करावे और असत्य को छुड़ावे वह भी "गुरु" कहाता है ॥

३४- "पुरोहित" जो यजमान का हितकारी सत्योपदेष्टा होवे ॥

३५- "उपाध्याय" जो वेदों का एकदेश वा

मनुष्यों को पढ़ाता हो॥

३६-"शिष्टाचार" जो धर्माचरण पूर्वक ब्रह्मचर्य्य से विद्या ग्रहण कर प्रत्यक्षादि प्रमाणों से सत्या सत्य का निर्णय करके सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग करना है वही शिष्टाचार और जो इसको करता है वह शिष्ट कहाता है॥

३७- प्रत्यक्षादि "आठ प्रमाणों" को भी मानता हूं॥

३८-"आप्त" यथार्थ वक्ता, धर्मात्मा, सबके सुख के लिये प्रयत्न करता है उसी को "आप्त" कहता हूं॥

३९-"परीक्षा" पांच प्रकार की है इसमें से प्रथम जो ईश्वर उसके गुण कर्म स्वभाव और वेद विद्या दूसरी प्रत्यक्षादि आठ प्रमाण तीसरी सृष्टिक्रम चौथी आप्तों का व्यवहार और पांचवीं अपने आत्मा की पवित्रतादि विद्या इन पांच परीक्षाओंसे सत्या सत्य का निर्णय करके सत्य का ग्रहण अ सत्य का परित्याग करना चाहिये॥

४०-"परोपकार" जिससे सब मनुष्यों के दुराचार दुःख छूटें श्रेष्ठाचार और सुख बढ़े उसके करने को परोपकार कहता हूं॥

४१-"स्वतंत्र" "परतंत्र" जीव अपने कामों में स्वतन्त्र और कर्म फल भोगने में ईश्वर की व्य

वस्था से परतन्त्र वैसेही ईश्वर अपने सत्याचार आदि काम करने में स्वतन्त्र है ॥

४२-"स्वर्ग" नाम सुख विशेष भोग और उसकी सामग्री की प्राप्ति का है ॥

४३-"नरक" जो दुःख विशेष भोग और उसकी सामग्री को प्राप्त होना है ॥

४४-"जन्म" जो शरीर धारण कर प्रगट होना सो पूर्व, पर और मध्य भेद से तीनों प्रकार का मानता हूं ॥

४५- शरीर के संयोग का नाम "जन्म" और वियोग मात्र को "मृत्यु कहते हैं ॥

४६-"विवाह" जो नियम पूर्वक प्रसिद्धि से अपनी इच्छा करके पाणि ग्रहण करना वह "विवाह" कहाता है ॥

४७-"नियोग" विवाह के पश्चात् पति के मर जाने आदि वियोग में अथवा नपुंसकत्वादि स्थिर रोगों में स्त्री वा पुरुष आपत्काल में स्ववर्ण वा अपने से उत्तम वर्णस्थ स्त्री वा पुरुष के साथ सन्तानोत्पत्ति करना ॥

४८-"स्तुति" गुणकीर्तन श्रवण और ज्ञानहोन इस का फल प्रीति आदि होते हैं ॥

४९-"प्रार्थना" अपने सामर्थ्य के उपरान्त ईश्वर के सम्बन्ध से जो विज्ञान आदि प्राप्त होते

हैं उनके लिये ईश्वर से याचना करना और इस का फल निरभिमान आदि होता है ॥

५०-" उपासना " जैसे ईश्वर के गुण कर्म स्वभाव पवित्र हैं वैसे अपने करना ईश्वर को सर्व व्यापक अपने को व्याप्य जानके ईश्वर के समीप हम और हमारे समीप ईश्वर है ऐसा निश्चय योगाभ्यास से साक्षात् करना उपासना कहाती है इसका फल ज्ञान की उन्नति आदि है ॥

५१-" सगुण निर्गुण स्तुति प्रार्थनोपासना " जो २ गुण परमेश्वर में हैं उनसे युक्त और जो २ गुण नहीं हैं उनसे पृथक् मानकर प्रशंसा करना सगुण निर्गुण स्तुति, शुभ गुणों के ग्रहण की ईश्वर से इच्छा और दोष छुड़ाने के लिये परमात्मा का सहाय चाहना सगुण निर्गुण प्रार्थना और सब गुणों से सहित सब दोषों से रहित परमेश्वर को मानकर अपने आत्मा को उसके और उसकी आज्ञा के अर्पण कर देना सगुण निर्गुणोपासना कहाती है- ॥

इति सर्व तंत्र सिद्धांताः ॥

यही मेरा सिद्धान्त है, मतों का झगड़ा मैं पसन्द नहीं करता क्योंकि इन्हीं मतवालों ने अपने २ मतों में मनुष्यों को फसाकर परस्पर शत्रु बनादिये हैं उसको काट सर्वत्र सत्य का प्रचार कर सबको

एक मत में करा हुए छुड़ा परस्पर में दृढ़ प्रीति युक्त कराके सब से सब को सुख लाभ होने के-लिये मेरा प्रयत्न है उसको सर्वशक्तिमान् आप्त पुरुषों के सहाय से सफल करें जिससे कामना चतुष्टय हस्तगत करना सब को सुलभ हो यहां तक सब लेख श्रीमान् स्वामी जी महाराज का ह्रुआ॥

कहिये बंधुगण - कितने समीचीन और सर्वोत्तम अमृत से भी अधिकतर स्वादु ये सर्व तंत्र सिद्धांत और आदेशात्मक उपदेश श्रीमान् दया सागर स्वामी जी महाराज हमारे लिये लिखकर धर गये हैं)

इनको न देखना न सुनना न समझना न मानना न लेना हमारी अतिशय मूर्खता और समझना स्वीकार करना आदि काम पूर्ण बुद्धिमत्ता का है यह बात केवल मैंही नहीं कहता किंतु भूमंडल मात्र के विद्वानों का यही सिद्धांत और कथन व मत है कि इस काल में परम धन्य जन्म श्रीमान् इन स्वामी जी महाराज का भरतखंड में हो गया है। इस विषय को विशेष पुष्ट करने की आवश्यकता नहीं, कि ऊपर नवम मयूख के द्वारा जिस को कि मयूख रत्न कहना चाहिये, भली भांति प्रतीत करा दिया गया है कि ये श्रीमान् इस प्रकार जगत्पूज्य चरित्र हुए हैं इसका कुछ दृष्टांत आ-

गे भी इस्वमिलेगा ॥
सत्य तो यह है कि इन महानुभाव ने भरतखंड की खोई हुई कीर्ति प्रतिष्ठा और धर्म बलात् लाकर स्थापन किया है रहगई सुख सौभाग्यादि संपत्ति - जिसकी कि चाह मनुष्य मात्र को अत्यंत रहती है- उसको भी रहगई न कहना चाहिये क्योंकि उसका मुख्य उपाय गुण ग्रहण और कर्त्तव्यता, सो वे भलीभांति सबको दर्सा गये, इतनाही नहीं किंतु विस्तार पूर्वक लिखकर भी धर गए हैं अतः उनके उन सत्यार्थ प्रकाशादि ग्रंथों को सादर देखना समझना और तदनुरूप चाल चलना केवल काम हमारा है हमको स्मरण रखना चाहिये कि संपत्ति इसी प्रकार सर्वत्र सदैव सबने पाई पावेंगे और पाते रहेंगे क्योंकि कहा है "गुण लुब्धाः स्वयमेव संपदः" कि दौलत गुणों पर आशक है अर्थात् वह गुणी पुरुष की दासी है कदापि उसका साथ वह नहीं छोड़ती इसका प्रत्यक्ष दृष्टांत इंगलिस्तान अमेरिका और हिंदुस्तान की हाल और पूर्व दशा है ॥
ऐसा निश्चय समझकर जो सत्पुरुष श्रीमान् के सिद्धांत और आदेशों पर दृढ़ चित्त होंगे वे अंत व इस जगत् में धन्यवाद पावेंगे विज्ञेषु किंबहु

नेतिशम् ॥

इति श्रीमत् परमहंस परिव्राजका

चार्य वर्य्य श्रीमान् स्वामी दयानंद

सरस्वती दिग्विजयार्कीय तृतीय

खण्डे श्रीमदुद्धारित सिद्धांताऽ

नुदर्शनं नाम एकादशो मयूखः॥

ॐ

अथ द्वादशो मयूखः

(१२)

अहहा।। बंधुगण - आज का दिवस बड़े ही आनंद का है जो मैं अशेष विघ्नों से बच कर इस ग्रंथ के अंतिम मयूख के लेखनार्थ प्रवृत्त हुआ अतः प्रथम - उस सर्वशक्तिमान् करुणावरुणालय का अपार धन्यवाद करता हूं जिसने यह सुअवसर मेरे हाथ देकर मुझे आप्त काम किया - बस यही एक मनोरथ अतिशय मेरे अंतःकरण में चुबा हुआ था कि यह ग्रंथ अवश्य समाप्त मेरे हाथ से होकर मेरे बुधवर्गों के अवलोकन करने में आवे सो पूर्ण हुआ - श्री जगदीश्वर इसी प्रकार उन समस्त सुहृदयों को भी आप्त काम करे जो सदा ऐसेही कामों में अपना ध्यान जमा रहे हों वा जमावें।।

द्वितीय - परम धन्यवाद करता हूं अपने उन समस्त सहायक जनों का जिन्हों ने थोड़ी वा बहुत तन वा मन वा धन अथवा दोनों वा तीनोंके द्वारा शुद्धांतः करण से मुझे इस काम में सहायता दी है हे जगदीश्वर इन सब को सार्वकाल

नुष्ठान हमारे भाई न करेंगे तावत् किसी को सुख का लेश भी न होगा और सदा पशुसम परतंत्रता में ही उनका और उनकी संतान का सारा जन्म हाय२ करतेही व्यतीत होता रहेगा, कहा भी है "सर्वं परवशं दुःखं - सर्वमात्मवशं - सुखम्॥ अतः हे बंधुगण इस वाक्य पर पूर्ण विचार करके हो सके उसरीति परतंत्रता से छुटने छुटाने का सब मिलकर पूर्ण यत्न करो यही मेरी मनो कामना है, एतदर्थे ही यह ग्रंथ बनाया गया है और एतदर्थ ही श्रीमान् ने यावज्जन्म अनेक प्रकार का उद्योग और उपदेश किया एतदर्थ ही उन्हों ने ग्रंथ रचे और सर्वत्र - घूमते फिरे, एतदर्थ ही अनेक समाज, समाचार पत्र और देशहितैषीजन स्वामी जीकी दसो दिशा में प्रशंसा कर रहे हैं, एतदर्थ ही लाखों समझदार लोगों ने स्वामी जीके लिये इतनी हाय२ की और कर रहे हैं अर्थात् इन समस्त कृत्यों का हेतु केवल देश सुधार करना है वह हो गए पीछे यहां के सब लोग श्रीमान् को महीनेरा धन्यवाद देते तृप्त न होंगे और उनका नाम तथा गुणानुवाद यावत् चंद्रदिवाकर इस भूमंडल पर स्थिर रहेगा॥

इस से जानना चाहिये कि स्वामी जी महाराज

मरे नहीं किंतु इस अवनितल पर अमर हो बैठे हैं, श्लोक "देहे पातिनिका रक्षा यशो रक्ष्यमपाति यत्—नरः पतितकायोपि यशः कायेन तिष्ठति" १॥ इसका स्पष्ट भाव यही है कि हे मनुष्यों- एक दिन अवश्य नाश हो जाने वाले शरीर की रक्षा छोड़ तुम सुयश रूपी शरीर को हाथ कर धरती पर अमर हो बैठो। इस प्रकार के जग उद्धारक वाक्यों पर ठीक२ चलने व चलाने वालों में इस समय ये यशोधन श्रीमान् हुए इस कारण कितने ही विचार शील पुरुषों ने इनकी सत्य२ प्रशंसा में अनेक प्रकार के अगणित काव्य यहां से लंदन तक प्रत्येक देश भाषा में बना छोड़े हैं जिनका निदर्शन इस ग्रंथ में यथा प्रसंग और यथावसर हो चुका ॥:::॥ व होनहार है- यह ग्रंथ रचना उनकी

(१) देखो द्वितीय खण्ड के ६ मयूख में प्रमाणाष्टक और इस खंड का ९ वां मयूख तथा पूना पंजाब राजपूताना गुजरात आदि देशों में बने लोक हितवादी आदि ग्रंथों के समस्त विभागों को कि कैसा२ तत्रस्थ सत्पुरुषों ने श्रीमान् स्वामी जी महाराज के गुण रत्नों का विमलगान गाया है। इस से अधिकतर आल्हादक बात यह है कि लन्दन के परम विज्ञ मेक्स मूलर और मोनियर विलियम ने स्वभाषा में श्री जी महाराज का जीवन चरित्र बनाया है यदि कोई कहे कि क्या उसमें उन्होंने कुछ इनके विरुद्ध नहीं लिखा तो यह विषय पृथक् और सकारण होने के कारण परित्याज्य है क्योंकि उन दोनों ने स्वबुद्धि के अनुसार हमारे वेदों का जो सतर्क भाष्य बनाया है उसकी इन्हों ने खूब धज्जियां उड़ाईं - उस समय श्री जी के सन्मुख न आ सके तो क्या पीछे से भी अपना जी ठंढा न करते ॥

विद्यमान दशा से ही सर्वत्र हो रही है और होती जाती है जिनमें ऐसे वाक्य आ रहे हैं "आगे तो हो- गए यहां बहुत से ऋषी मुनी। पर हाल में हैं यही एक दयानंद सरस्वती॥ जैसे व्यास गोतम भृगु वा बृहस्पती। वैसे विदित हैं जग में दयानंद सरस्वती॥ तथाच। एक एव खलु पद्मिनी पति रेक एव दिवि प्रीत दीधितिः। एक एवच सर्ववेदविद् भुवि द्वित्र म- न्न न कदा श्रुतं मया॥ स्यात्पुन स्तारका रासि गोच- रो दृश्यते नभसि चंद्रमा पुनः। यात एष तु सकृत् सद्गुणौर्वो भवीति विषयो न नेत्रयोः॥ स्वकीय दे- शोन्नति मात्रलग्नः स्वप्नेपि न साधु निजार्थ बुद्धिः। त्यक्त्वा समस्तं तु कथं तु कार्यं गंतु द्युलोकं सगन श्व- कार्॥ इत्यादि॥

बंधुगण- इन पुण्य श्लोक शिरोमणि श्रीमान् ऐ- से महानु भावों के कार्यों को देख यही कहने में आता है "क उत्तम श्लोक गुणानुवादात् पुमान् विरज्येत विना कृतघ्नात्" कि सिवाय पशुघ्नों वा कृतघ्नों के जगत् में कौन श्रीमान् जगद्गुरु की बड़ाई से अपना मुख वा मन मोड़ सक्ता है तथ्य तो यह है कि जगत् में जितने पातक वा उपपातक वा महापातक कहे हैं उन सबका सिरमौर कृतघ्नता दोष है उसके करने वाले कृतघ्न

कहाते हैं इनका घोर नरक में निपात हुए पीछे उद्धार होना अतीव कठिन हो जाता है बरंच(न कृतघ्नस्य निष्कृतिः) उद्धार होताही नहीं ऐसा आपके यहां का धर्म शास्त्र, घोषणा कर रहा है इस कारण इस महा भयंकर अपार दुखदाई महापातक से बचने और बचाने के लिये देश देशांतरों के अनेक दयालु पुरुष अपनी२ देश भाषा में जेसी कुछ चिताउनी कर रहे हैं वह सबको अवश्य श्राव्य और अतिशय विचारणीय है ॥

निःसंदेह श्रीमान् का श्रम, उद्योग और उपकार इस भारत वर्ष पर ऐसा हुआ है कि जिससे यह एक जन्म तो क्या अनेक जन्मों से भी उऋण नहीं हो सक्ता। ऐसी दशा में इसका सहज तरणोपाय केवल यही है कि जिनको विधाताने कुछभी बुद्धि दी हो वे उसे काम में लावें अर्थात् परम गुरु श्रीमान् के उपकारों को मान उनकी इच्छा और श्रमों को बने उस रीति सुफल करने में भागीरथ वत् प्रयत्न करके अधः पतित भारत को उन्नत करें ॥

हे !!! परमात्मन् तू भी कृपा करके हमारे समस्त बंधुगणों को सत्याशु सद्बुद्धि से समलंकृत कर- बिना तेरी पूर्ण सहायता के कभी भारत का भला न होगा। हे दीन दयालु, हे दीन बंधु, हे दीनानाथ, भारत अब अतीव आर्त है। हे अधमोद्धारण -

सर्वात्मन् देखतो सही इस वेदाभिमानी देश की कैसी दुर्दशा हो रही है - और कैसा घोर क्या २ अत्याचार इस पर लोग कर रहे हैं। हे कृपानिकेतन जगदंधकार विनाशक भगवन् इस भारत का नाक में दम आ रहा है - ठीक कण्ठावरोधन का समय है तोभी न जाने क्यों तुझे इसकी करुणा नहीं आती। हे सर्वशक्तिमन् न्यायकारिन् परमेश्वर "अति सर्वत्र वर्जयेत्" यह आप्त वाक्य यदि सत्य है तो अब भारत पर भी अति न होनी चाहिये देखतो सही कैसा कोलाहल मच रहा है जिधर देखो उधर हाहाकार और त्राहिमां २ के अतिरिक्त और कुछ श्रवण गोचर नहीं होता परंतु न कोई राजा सुनता है न महाराजा ॥※॥ इसलिये -

(२)※॥ एकबार के भारत मित्र में लिखा देखा गया कि - ष्टानहोप साहब ने लन्दन की पार्लियामेंट महा सभा में पुकार कर कहा था कि गए २० वर्ष में अर्थात् प्रथम सन् ६३ से लेकर ७२ तक (५२ लाख ५० हज़ार) फिर सन् ७२ से ८३ तक (६२ लाख ५० हज़ार) मनुष्य भारत वर्ष में कीट पतंग सम अन्न नसीब न होने के कारण मरे - और अब भी वहां अधिकांश मनुष्य आधा पेट रोटी खाकर दिन बिताते हैं॥ कहो कैसा यह शोक॥ इतने पर भी यदि किसी के नेत्र न खुलें तो क्या उपाय किया जाय॥ भला विशेष नहीं तो इतना तो भी सोचलीजिये कि जिस ठौर चोबीस वर्ष से लगातार औ० हि० से प्रति वर्ष पांचलाख चोहत्तर हज़ार पांच सौ से अधिक मनुष्य केवल आहार न पाने के कारण काल कवल होता हो और बांकी रहों का अधिकतर भाग आधे पेट रह कर अपनी उमर पूरी -

लाचार हिया हार हम लोग तेरी शरण में समुपस्थित हो अपना न्याय चाहते हैं — कृपा करके वेग

करता हो तो वह देश वह राज्य और उसकी सभा महासभा तथा राज्याधिकारी लोग कैसे क्या उत्तम और दयालु व विचारशील तथा प्रबंधक हैं। इसके पश्चात् भारत वर्ष में शेष रहे मनुष्य संख्या में कितने भिकमंगे कितने बदमाश अर्थात् ठग डाकू चोर लबार सेंड़ा लुच्चे गुण्डे ज्वारी उठाईगीरा लुटेरे गंजड़ी भंगड़ी अफ़ीमी शराबी चंडूबाज़ और कितने कारागार निवासी आदि हैं साथही उनके नेकमाशों में पुलिस कस्साब व कसबी आदि सब नीचजन और सब प्रकार के दल्लाल व मज़दूरों को रट पट गिनगिनाकर लद्दू पांशों में आजाइये और लिखिये कि इधर जाल साज़ रुगडाल बखेड़िये और इनके सन्तारक गवाही पेशा तथा रश्वती अफ़सर व अमला व प्यादा कितने क्या हैं पश्चात् रहों में से देखिये कि बड़े२ राजा बाबू ताअल्लुकेदार ज़मींदार तथा सेठ साहूकार आदि महाजनों में कितने वेश्या विलासी बवाल मैथुनी हैं अनंतर रहे ढंगों में से इनकेही समान सदाचरणी सन्त महंत आचारी पुजारी घटवई और हर प्रकार के रंगीले छबीले गोस्वामी तथा कथक्कड़ आदि सब पंडिताई पेशावालों को निकाल निश्चिन्त हो तनक विचारिये तो सही कि अब हममें ठीक सच्चरित्र मनुष्य कितने रहे जिनसे आशा देशभलाई की कीजाय और ऐसी दशा के जहां इतने अधिकांश मनुष्य हों उसदेश की दशा कैसी कही जाय और ऐसी दशा में सुखकी लालसा करना कैसी हंसी की बात है और वह कैसे हाथ आसक्ती है॥

भारत वासियों को उनका हित सोच लेने वाली विशद बुद्धि समर्पण कर जिससे कि वे आपके उस परमानुग्रह को अच्छे प्रकार से जाने जिसको कि आपने भारत भलाई के लिये स्वामी दयानंद जीको उत्पन्न करके उनपर किया व करना चाहा है और अब तक इस विषय में उनसे जो प्रमाद हुआ उस को आपसे क्षमा मांगे इतनाही नहीं किंतु झट पट कुमार्गों को छोड़ उस सुमार्ग पर चल हों जिस पर कि उनके प्राचीन पूर्वज चलकर एक से एक अधिक प्रताप शाली अनंत काल तक होते चले आये हैं ॥

॥ नालसाः प्राप्नुवं त्यर्थान् न शठा नच मानिनः ॥
॥ नचलोक रवाद्भीता नचैव प्रकृती शिराः ॥

इसका सार यह है कि आलसी, मूर्ख वा दुराचारी, व अभिमानी और ना समझों की बक २ व हँसी से डरने व बहकने वाले तथा अपनी असंस्कृत प्रकृति के पीछे चलदेने वाले अथवा स्त्रीजित वा तुनक व नाजुक मिजाज़ मनुष्य कभी उस सदर्थ अर्थात् परमात्माने मनुष्यों के लिये जो २ बढ़िया वैभव और उपभोग रचे हैं उनको नहीं पा सक्ते तो बस जान लो कि इन दिनों भारत में इसी प्रकार

के कपूत अधिकतर भर हुए हैं इसलिये उसकीय ह दुर्दशा है—अस्तु हुआ सो हुआ आगे को चेतो और बने उस रीति अपना स्वत्व राज भक्ति के साथ हाथ करो यह श्रीमान् प्रताप भानु श्री स्वामी जी महाराज के उपदेशों का ठीक२ प्रति फल है। इसे चाहो जिस रीति ठोक बजा लो अंतर न होगा। बड़ी कसर तो भाई यह है कि अपने में वह जौहर ही नहीं जिससे उनके उपदेश रूपी अमोल्य रत्नों को पहिचान सकें इसी लिये ठगाये जा रहे हैं। हमारे इस महान् दोष के निवृत्यर्थ भारत चिकित्सक श्री स्वामी जी महाराज अपने सिद्धान्तों में ३९ वां सिद्धांत लिख गए हैं उसको ११ वें मयूख में देख तदनुसार हमको परीक्षा करके प्रत्येक का कथन और वस्तु का संग्रह करते रहना चाहिये श्रीमान् ने इस परीक्षा में पांच कसौटी बनाई हैं और सर्वत्र सहस्त्रों मनुष्यों के बीच अपने व्याख्यान में पुकार२ कर कह देते थे कि हे महाशयो इनसे ठीक न बैठने वाली ब्रह्मा तक की कही सत्य नहीं हो सकी उसी प्रकार मेरे कथन कोभी मान्य वा अमान्य जानते रहना खबरदार कभी इसके विरुद्ध नहो कि स्वामी जी कहते थे सो सत्यही है॥

बंधुगण—यद्यपि अपनी२ विद्या बुद्धि और विद्या

के अनुसार अनेक सत्पुरुषों ने अनेक प्रकार से अनेक ही भाषा में इनका पवित्र चरित्र वर्णन किया और वह सब परम सत्य और अतीव मनोहर है तथापि इनके गुणों का वर्णन जैसा कि चाहिये वैसा पूरा किसी से भी नहीं हो सका और न हो सक्ता है कारण इसका यह है कि इस काम के लिये श्रीमान् से अधिक कोटी के मनुष्य की अपेक्षा थी सो यहां कहां — अच्छा वैसा कोई नहीं था तो उन सम वा किंचित् न्यून ही कोई होता — वैसा भी नहीं, तो फिर बिना तादृशज्ञान, उस महान् गुण गान को कौन पूर्ण कर सक्ता है। ऐसी दशा में जो कुछ किसी ने लिखा वा पढ़ा उसको यदि कोई अत्युक्ती कहे वा समझे तो उसके समान और कौन नादान होगा। कुछ हो सिद्धांत इस लेख का यही है कि प्रशंसकों का अभिप्राय क्या है यह सबको अच्छे प्रकार समझना चाहिये, वह यही होगा कि हम सब लोग स्वामी जीके कथना नुसार गुणवान् होकर देश भलाई करने लगजांय बस यही बात यहां भी प्रतिचरण क्रम समझाई गई है। विदित रहे कि इसखंडका सार नवम मयूख — उसका सार उसमें लिखा द्वितीय लंबरी लेख — उसका सार देशहितैषी होना और सर्वस्व सार मनुष्य जन्म सफल कर लेना है।

सो यह जिनसे करते बने वे करें। यह काम जैसा दूर से भयंकर दीखता वैसा पास हुए पीछे नहीं रहता केवल "स्वप्नेपि न प्राप्नोति जाथे बुद्धिः" हो जाना पड़ेगा॥ देखो तो सही श्रीमान ने यह कीर्ति और सुयश कितने सत्वर संप्राप्त कर लिया- कहने को वे पूरे ६० वर्ष इस पृथ्वी पर रहे परंतु देश भलाई में केवल उन्हों ने अपने अंतिम १६ ही वर्ष व्यतीत किये उसमें भी काम की भांति काम उन्हों ने ठीक १२ ही वर्ष किया वा कर पाया बस इतनेही में सर्वत्र स्वामीजी २ ही हो गए- इस से आगे वे कौन थे, कहां थे और क्या करते थे यह क्वचित् ही कहीं कोई महाशय जानते होंगे- अब उनकी समस्त आयु भर की बातें चाहो तहां पूछलो ऐसे सुप्रसिद्ध वे या बच्चंद्रार्क होगए॥

बंधुगण- परमात्मा ने जैसा इनको विद्यादि अनेक अनर्घ्य गुण रत्नों से अलंकृत किया था वैसा ही इनको सुंदर स्वरूप और विशाल शरीर भी दिया था अर्थात् वे अच्छे लंबे चौड़े परिपुष्ट दिव्य और भाव्य पुरुष थे, तथा बलवान् भी ऐसे थे कि अपने सन्मुख दस बीस तरुण मनुष्योंको कुछ चीज़ नहीं समझते थे, वे परमेश्वर के सिवाय और किसीका भय भी कालत्रय में नहीं मा

मते थे, हज़ारों हिन्दू मुसलमान् और अंगरेज़ व ईसाई मनुष्यों के बीच बैठकर सिंह के समान गर्जते हुए उनके ईसा मूसा और महम्मद की भूलें उन्हीं के धर्म ग्रंथों में से निकाल कर अपने वैदिक धर्म की महिमा सब के चित्त में ऐसी प्रकाशित कर देते थे कि फिर किसी को कभी उनका उत्तर नहीं देते बना। वे सदैव प्रसन्न मुख और प्रमुदित चित्त बने रहते थे, कैसा ही कोई प्रश्न करो-उसी क्षण उत्तर मो ऐसी उनकी स्फूर्ति थी, प्रत्येक अमीर व ग़रीब उनके समीप पहुंच कर यथेच्छ बात चीत कर सकता था, वे राजा से लेकर रङ्क तक समान प्रेम और दृष्टि रखते थे उनको किसी से किसी प्रकार की चाह भी न थी और थी तो इस बात की थी कि सब लोग वैदिक धर्म पर चलें और परस्पर निर्मल मेल मिलाप रख एक दूसरे का हित सोचें और करें तथा सब प्रकार के अधर्म कुसंस्कार-कुकर्म-और कुसंगों से बच सब प्रकार के सद्गुणों से विभूषित हो अपने देश की भलाई में लगजांय॥

तेज इनका ऐसा था कि कोई राजा महाराजा(*) तक उनके सन्मुख अपनी ऊंची आंख नहीं कर सकता था इनके सन्मुख आते२ बड़े२ वि-

(*) वे हज़ारों मनुष्यों के बीच बैठे हुए राजाओं को ललकार वेश्या नाच आदि बुरे चरित्रों को छोड़ने का उपदेश करते थे॥

हुान् शास्त्री और पंडित अपनी सब विद्या भूल बैं २ करने लगजाते थे ऐसे अनेक प्रसंग इस ग्रंथ-कार ने स्वनेत्रों से देखे तथा और भी बहुत से मनुष्य इस बात के साक्षी आज सर्वत्र विद्यमान हैं-कामी क्रूर लबार- स्वार्थी और पाखंडी आदि धर्मद्वेषियों के वे पूरे काल और राजा शिव प्रशाद ऐसे साक्षर वा निरक्षर कपटी घमंडी लोगों के पूरे दर्पविनाशक थे ॥ ३ ॥ परंतु छल वा कपट- मद- मत्सर-

(३) ॥ सब को सर्व काल विदित रहे कि यह काशी निवासी राजा शिव प्रशाद वही हैं जिनका कुछ चरित्र इस ग्रंथ के द्वितीय खंड के पृष्ठ ९ और १० में वर्णन हो आया है-विशेष जानने की इच्छा हो तो श्री जी रचित भ्रमोच्छेदन, अनुभ्रमोच्छेदन तथा मद्रचित तिमिर नाशक तृतीय खंड सार देखें-तात्पर्य यह है कि ये महाशय संस्कृत पढ़े न लिखे तो भी अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाने की बुद्धि से श्री जी से उलझ बैठे परिणाम में जो कुछ प्रतिष्ठा कमाई थी वह भी गमाई- महा मूर्ख कहाए तथा अपने साथ पंडित बालशास्त्री और स्वामी विशुद्धानंद जी की भी रही सही पत भंग करा बैठे। इसकी कुछ कैफ़ियत पहले खंड के ३६ से ४० तक के पृष्ठ में लिखी मिलेगी॥ ये महापुरुष ऐसे चालबाज़ हैं कि इन्हों ने अंगरेज़ों को भी खूब धोखे दिये और अपने देश वालों की बुराई के साथ उनकी खूब तारीफ़ लिख २ कर उनको खूबही ठगा तथा काशी नरेश को भी इन महाभाट ने अनेक प्रकरणांतरों में कलंकित [illegible] को स्वदेश के पूरे विद्रोही होने के कारण समस्त भरतखंड

और द्वेष उनसे भी नहीं रखते थे जो इनको अपनाद्वे-
षी समझ सदा इनके मारणे की ताक में रहते थे ।
आबालब्रह्मचारी - अपूर्व सदाचरणी - निपट निष्प्रप-

इनसे घृणा करने लगा और इनका नाम भेड़राज रख कर इसदेश
के समस्त संपादक गण अपने समाचार पत्र इनकी निंदा से रंगने ल-
गे और यथा प्रसंग रंगतेही जाते हैं सन १८८३ ईस्वी तो इनको ऐसा बु-
रा गुज़रा कि आजतक कहीं किसी हिन्दू वा मुसल्मान को कोई वर्ष तो
क्या दिनभी ख़राब गया नहीं सुना । हा ॥ बड़ी बुरी रीति से लोगों-
ने चहुंओर से एक साथ इनकी धूल उड़ाई इन्हीं सा हो सो जिये ।
और मुंह दिखाए । तभी कहा है कि महात्मा लोगों के साथ कभी को-
ई छल वा कपट की क्रिया न करे उसका अंत फल अत्यंत बुरा होता-
है - परमेश्वर इतनेहीं से कुशल करे सोभी बड़ी बात है । विस्तार-
यह है कि काशी, प्रयाग और शांति पुर आदि के लोगों ने कई दिवस
पूर्व से अपने यहां एक २ दिवस नियत करके दसेहरा के रावण - कुंभक-
रण - ऐसा एक २ इनके नाम का पुतला बना २ कर उसकी छाती पर-
हिन्दी व उर्दू व अंगरेज़ी के बड़े २ अक्षरों में (देश का बदख़्वाह भेड़ राजा
शिव प्रसाद) ऐसा लिख सारे नगर में घुमाय डुग्गी पीटते गाली गलो-
ज करते कराते घाट पर लाये तहां नाना प्रकार के नीचे लिखे अनुसार
व्याख्यान सुनाकर भंगियों के हाथ से झाड़ू और जूती लगवाय बुरी दशा के
साथ जलाकर अपना २ सत कृत्य सबने प्रसिद्ध किया ॥ क्या खूब सौदा न-
क़द है - इस हाथ दे उस हाथ ले ॥ **किसी शायर की कविता**
जमा जमघाट पर जमघट था सारा - किया लोगों से गंगा का किनारा ॥ म-

पाती निरभिमानी - जगत् प्रकाशक - वेदादि सच्छास्त्र

मर सब खुश थे कोई ग़म नहीं था - किसी के आंख से आंसू न टपका॥ न हिन्दू ने कहा मुंह से हरे राम - न मुसल्मां ने लिया अल्लाह का नाम॥ जनाज़ा आया मरघट पर जब उसका - यही बदख्वाह है सब ने पुकारा॥ लगे कहने जलाओ इसको झट पट - जहन्नुम में मिलाओ इसको चट पट॥ सदा फिटकार की बस आ रही थी - खुशी इक सब के मुंह पर छा रही थी॥ कि इतने में लगाई आग उसमें - लगा दसमी का रावन सा वो जलने॥ य जब लोगों ने देखा तालियां दीं - इवज़ मंतर के सबने गालियां दीं॥ नये अन्दाज़ से मुरदा य फूंका - कि तरपण की इवज़ लोगों ने थूका॥ पकड़ कर टांग उसको घसीटा - जहां तक हो सका लातों से पीटा॥ मिला जब खाक में पुतला वु सारा - तो खुश हो करके मेला घर सिधारा॥ जो अपने मुल्क का दुश्मन हो बदकार - वो पावेगा हमेशा योंही फिटकार॥ तारीख़ २६ अपरैल सन् १८८३ ई० का भारत मित्र॥

विज्ञापन - खबर दी जाती है कि शिवप्रसाद (भेड़राजा) पागल हो गये हैं जो कोई गो वैद्य वा हकीम वा पेटेण्ड दवाई वाला इनके रोगों को आराम कर सकेगा उसे १० हज़ार रुपये पुरस्कार के जोकि उनके २ करोड़ हमदर्दी देशी मित्रों ने चंदे में देना स्वीकार किये हैं मिलेंगे आवेदन पत्र, बनारस पागलखाने के सपरिटेंडेंट के पास भेजना चाहिये॥

देशहितैषी मास ज्येष्ठ संवत् ४० में

हाय २ हमारे भेड़राज शिवप्रसाद पागल हो गये चलो अच्छा हुआ विलायत में पागलों की ओर से एक समाचार पत्र निकलने वाला है उसकी संपादकी के लिये किसी की ढूंढ खोज न करनी पड़ेगी॥

समुद्धारक - वैदिक यंत्रालय - वैदिक निधि - वैदिक समाज वैदिकशाला - वैदिकसंस्कारादि धर्म कर्म के संस्थापक - दया के सागर आनंद के वारिद - अन्वर्थाभिधानी अति सत्वर गामी हमारे ये स्वामी परम धामी थे॥

बंधुगण - श्री महाराना उदय पुराधीश ने अपने अभिनंदन पत्र में इन सद्गुरु महाराज की बड़ी प्रशंसा यह लिखी है कि ये अपने अनुपम उपदेशों के अनुकूल स्वयं भी चलते है सो निःसंदेह ये ऐसेही थे - न्याय के विषय में "न्यायात् पथः प्रविचलंति पदं न धीराः॥ यह वाक्य जैसा सदैव उन्हों ने अपने मन और मुख में खचित कर रक्खा था वैसा ही सार्वकाल सबके अनुभव में भी आता रहा॥५॥ इसके विरुद्ध कभी किसी को उ-

(५)※॥ विदित होकि इसका निदर्शन अपार है उसमें से कुछ२ इस ग्रंथ में भी आचुका है अतः इस समय यहां - केवल स्मरण मात्र करा देना बहुत है - जैसे आत्मा रामादि जैनी मित्र विलासादि संपादक श्री गोपाल आदि पंडितों के अनेक असभ्य और मिथ्या लेख और श्रद्धाराम व चतुर्भुज आदि अज्ञ पुरुषों की मिथ्या और अवाच्य बक२ तथा दयानंद गज केशरी नाम का स्वकल्पित सोने का तमगा बनाकर अपने गले में लटकाना - पूना और काशी आदि के अनेक असभ्यमित्र पंडित मन्य मनुष्यों का पामर व्यवहार - प्रसिद्ध कृष्णी का स्वार्थ वश हो निर्मूल कलंक लगाना - थगरी आदि वैरागी वा गुसाईं लोगों का गाली गलोज करना व

न्हों ने सिफ़ारश - की न सुनी - तो भी कभी वे दयारहित नहीं देखे गये। वे अपनी बाल्यावस्था सेही सांसारिक यावत् सुखों से विरक्त हो ४५ वर्ष की आयु होने-

---

ईसाई कहना तथा कतिपय　स्थलों के कितनेही जाने हुए पुरुषों का लट्ठ बांध२ कर मारने को चढ़ आना व एक ठाकुर का नलवार निकालना कितनोंही को विषादि देकर मारण प्रयोगों का करना आदि कर्म श्रीमान् के बहुत से समर्थ और अधिकारी भक्त जनों को जहां तहां बहुतही असह्य हो२ कर उनका विचार वहां वहां नालिश करके अन्याय करने वालों को दंड दिलाने का निश्चयात्मक हो२ गया परंतु कभी श्रीमान् किसी के इन कामों से प्रसन्न नहीं हुए यद्यपि लोगों ने अनेक तर्क वितर्कों के साथ समझाया तथापि आप श्रीमान् उनसे अप्रसन्नही रहे और सब को शांति पूर्वक समझाया कि देखो मेरे विचार से तुम लोगों का विचार कितना विरुद्ध है मैं चाहता हूं कि सर्कारी सब कारागार जोकि हमारे देश निवासियों से जहां तहां लबालब भरे पड़े हैं खाली हो जायं तथा इस दरिद्र दशा में, जब कि पूरी पेट भरके रोटी तक नहीं मिलती। परस्पर लड़२ कर हमारे भाई अपना जो द्रव्य व्यर्थ दंड में ख़राब करते हैं उसको बचाके घर के बाल बच्चों को गुणवान् करने में लगावें जिससे दरिद्र घटे और देश सुधरे सो यह मेरा मनोरथ कभी तुम्हारी ऐसी सम्मति से सिद्ध नहीं हो सक्ता - वैसा होने से अनेक ऐसे दोष उत्पन्न होंगे कि जिनसे मेरा सब परिश्रम व्यर्थ हो जायगा इसलिये

तक निरंतर विद्या और योगाभ्यास में ही निरत रहे-उसमें पूर्ण परिपक्व हुए पश्चात् संवत्१८२५ विक्रमी

हे भाई आर्य पुरुषों सार्वकाल उत्तम और उचित रीतिसे अपना समस्त व्यवहार करना सीखो यदि किसी ने दंड पाकर मेरी बुराई करनी छोड़ भी दी तो क्या जैसा तुम चाहते हो वैसा हो जायगा कभी नहीं, वह न करेगा तो और उसके बहुत से भाई करने वाले हैं वे करेंगे-परिणाम में अपने आप तुमको चुप हो बैठना पड़ेगा- देखो न्यायभवनों को कि कब से चोरी आदि अपराध करने वालों को दंड देते चले आते हैं परंतु चोरी बंद नहीं होती और नहो। इस कारण उसका ठीक उपाय वह नहीं- यह है कि नाना प्रकार के युक्ति युक्त उपदेश करके सबका एक साथ अज्ञान अच्छी तरह छुड़ादिया जाय- क्योंकि वही मूल है जगत् की यावत् बुराईयों का उस महान् शत्रुका विनाश करना परम पुरुषार्थ है और वैसाही होने से मेरी भी कार्य सिद्धि हो सक्ती है अन्य था नहीं- अतएव रोकता और समझाता हूं कि मुझ पर द्वेष भाव रखने वालों पर आप लोग क्षमा करें जिससे उनको खूब अवकाश मिले मेरी बुराई पेट भर कर लेनेका अर्थात् काम उनका भी अधूरा न रह जाय॥ पश्चात् न्याय शील दोनों ओर के लेखों को तोल कर सत्यासत्य का विवेक स्वयं कर लेवेंगे-इसी के अर्थ मैं उनसे सर्वत्र शास्त्रार्थ करना चाहता था वह उन्होंने प्रतिष्ठा जाने के भय से स्वीकार न किया तो यही सही इति॥ ऐसी दशा में भी एक महाशय श्यामी गुसांई को कारागार कराही बैठे सो सुन आप हो गए और उसी क्षण उसको करुणा ई मानस ने उस दारुण दुःख से मुक्त कराया ऐसी श्रीमान् की अनेक कथा प्रसिद्ध हैं॥

से तीन चार वर्ष तक दिगंबरी अवस्था में रह कर हरि-द्वार से काशी पटना तक कई बार एकाकी पादचारी उपदेश करते फिरे-उस समय तक उनको पूर्ण लालसा-ब्राह्मण, विद्वान् और विज्ञवरों के सुधार की थी "विद्वानेवाहि जानाति विद्वज्जन परिश्रमम्" अर्थात् वे भली भांति भरोसा रखते थे कि मेरा श्रम मेरी बात मेरी चाह और शास्त्रीय सार जानने व मानने के अधिकारी इनके समान अन्य नहीं हो सक्ते इन लोगों का भ्रम मिटते ही मेरा यावत्कर्तव्य सिद्ध होना अति सुलभ-अन्यथा कठिन है-अतएव वे बहुकाल तक ऐसों ही की पूर्ण ढूंढ खोज में फिरते रहे और इसी लिये २० वर्ष तक बार२ काशी में भी जा अड़ते-थे और वहां वालों से आशा भी अधिकतर रखते थे कि-ये किसी प्रकार समझ जांय तो अति अच्छा हो-इसी दुराशा से वहां महीनों रहे और अधिकतर अपना रहना यहीं हो-इस इच्छा से उन्होंने वहां लक्ष्मीकुंड पर महाराजा विजयानगर वालों के एक भारी स्थान में अपना वैदिक यंत्रालय संवत् १९३६ वि० मिती माघ शुक्ल २ गुरुवार को नियत किया था तथा इसकी रजिष्टरी भी श्रीमान् ने अपने नाम-कराली थी-तत्पश्चात् इसी स्थान की लंबी चौड़ी छतों पर २० दिनों तक प्रत्यह सायंकाल से कभी२ कभी ३ घंटा श्रीमान् अति उत्साह के साथ व्याख्यान देते रहे (५) जिसके संयोग से वहां के-

---

(५) श्रीजी महाराज के व्याख्यान विषयक उन्हीं दिनों की एक गुप्तकथा

हज़ारों सर्व जातीय मनुष्य श्री जी महाराज के समस्त वि-
द्यादि अनुपम गुण रत्नों और उनके अंतःकरण का शुद्ध-
भाव तथा उनके चित्त चुबे देश वात्सल्य को यथावत् सम-

यहां पर प्रकाशित हो जाना परमावश्य है- सं० ३९ के पौष मास में-
श्रीमान् के दर्शनार्थ आए हुए करनेल ओलकाट साहब ने विज्ञापन
दिया कि अमुक दिन और समय टौन हाल में हम और स्वामी जी व्या-
ख्यान देवेंगे — इसको सुनते ही काशी के मत्सर ग्रस्तों को बड़ा ही
दुख हुआ अर्थात् वे सोचे कि यदि ऐसा हुआ तो स्वामी जी का व्या-
ख्यान सुनते २ सब के चित्त में उनका माहात्म्य ऐसा कुछ असर कर
जायगा कि फिर हमारी लीला एक नहीं चलेगी- इसलिये येन केन प्र-
कारेण उनका व्याख्यान बंद कराने के दृष्टि से उन्होंने समय के साह-
ब कल्क्टर को जा बहकाया कि यदि उसने व्याख्यान दिया तो काशी-
वाले अपने प्राणांत बलवा कर छोड़ेंगे "दु:संगी च्यवते,, की भां-
ति भोले साहब क० भी अविवेक कर बैठे- अस्तु उस दिन स्वामी जी
का व्याख्यान तो बंद रहा- परंतु परिणाम इसका इन साहब क०-
ब० के लिये अत्यंत क्लिष्ट हुआ अर्थात् सदर से तुरंत इस अनुचित-
व्यवहार करने का उनसे उत्तर लिया गया इन्होंने दिया वह भी अयो-
ग्य ठहरा और स्पष्ट यह ताकीद वहां से आई कि तुम अति सत्वर
स्वामी जी का क्षमापत्र लेकर भेजो और उनके व्याख्यान वहां स-
त्वर उनकी इच्छानुसार जितने दिन वे देने चाहें बराबर होने दो
उसमें तुम पूर्ण प्रबंध अपना रक्खो अन्यथा तुम निर्दोषी नहीं हो
सके- अंत को बे चारे सा० क० ब० को सब तदनुरूप ही करना पड़ा

रु कर जन्मभर को निःसंदेह हो गए तथा साफ़ २ ये सब लोग श्रीमान् स्वामी जी महाराज को अपने शुद्धांतःकरण से अनंत धन्यवाद दे २ कर उनकी और उनके व्याख्यानों की पूर्ण प्रशंसा के साथ अपने काशी नगर निवासी समस्त छोटे बड़े विद्वानों की दुर्गति और निंद्य बुद्धि पर असीम शोक प्रकाशित करते हुए प्रत्यह अपने घर पहुंचते थे उस समय भाग्यवशात् यह ग्रंथकार भी २५ दिन के लिये वहां पहुंच गया था अतः उसने यह सब चमत्कार वहां प्रत्यक्ष देखा व सुना ॥ ६ ॥ सब कुछ हुआ परंतु "

---

(६) * ॥ बंधुगण - इन व्याख्यानों में पंडित मन्यों को छोड़ बाकी और सब प्रकार के बहुत से काशी वालों की वह भीड़ वह प्रीति वह आनंद और उनके श्री चरणों में गाढ़ भक्ति देख - मैं अत्यंत विस्मित था कि हे परमात्मन् तेरी यह क्या अद्भुत लीला - इस परम कट्टर पोप नगर में तू दृष्टिगोचर करा रहा है अथवा स्वयं मैं यह प्रत्यह कोई स्वप्न देखता हूं - यहां तो स्वामीजी का व्याख्यान होना ही असंभव हो रहा था तहां यह प्रीति और घमसान तू प्रत्यक्ष करा रहा है - यद्यपि व्याख्यान में चित्रवत् समुपस्थित समस्त सत्पुरुषों के शिर और मुख की चेष्टा तथा तन्मुख विनिःसृत वाहवा आदि शब्दों से उनका आंतरीय भाव अच्छे प्रकार प्रकाशित था तथापि मैंने व्याख्यान से उठे मनुष्यों का कितने ही दिन पीछा एतदर्थ किया कि देखूं तो सही इनका उद्गार कैसा क्या निकलता है तो वह भी ठीक ही ठीक पाया ॥ कोई कहता था कि भाई ये ३ घंटा तो जाते खबर ही नहीं पड़ती - कोई कहता था कि ये तो साक्षात् बृहस्पति हैं - कोई उनके तर्क वितर्क और दृष्टांतों की - कोई उनके कथन

"सब से भले भीख के रोट,, इस सिद्धांत पर चलने वालों ने स्वामी जी महाराज का कहा करना तो दूर जिधर वे रहते थे और जहां आकर व्याख्यान देते थे उधर को (जब तक स्वामी जी महाराज काशी में रहे) कभी हवा भी नहीं खाई ॥

के माधुर्य की कोई उनके व्यवहार और पारमार्थिक विज्ञान की कोई उनकी देश वत्सलता की· कोई उनके करुणान्वित चित्त की· कोई उनके आनंदित मन करदेने की प्रशंसा करता था और कोई कहता था कि भाई सरस्वती तो मानो इनकी दासी ही होगई है· कोई कहता था कि यह उनकी पूर्ण तपस्या का बल तेज प्रभाव और प्रतिफल है· कोई कहता था कि ये तो पूरे योगीश्वर हैं· कोई कहता था कि हमने आज तक ऐसा निस्पृह निर्भय निःशंक वक्ता और प्रतापशाली मनुष्य देखाही नहीं· कोई उनको अपर सूर्य कोई अपर ब्रह्मा· अपर शेष अपर शंकराचार्य कह २ कर अपने चित्त को संतुष्ट करता था और सबके सब कहते थे कि देखो यहां के पंडित लोग कैसे स्वार्थी· मत्सरी और अहंकारी हैं जो इन महानुभाव को व्यर्थ नाना प्रकार से दूषित करते हैं· कहो इनमें कहीं किसी दोष का लेश भी है- इसका समाधान उसी समय उनके साथी दूसरे भाई यह करते थे कि भाई मोटी मसल जगत में यह चली आती है कि "दुनिया ठगिये मक्कर से – रोटी खइये शक्कर से,, सो बिना ऐसी पूर्ण विद्या बुद्धि और तपोबल के अपनी प्रतिष्ठा बचा कर चार दिन चैन से बिताने का सर्वोत्तम उपाय दयानंद की निंदा के सिवाय- भला सोचो तो सही और क्या हो सक्ता है। यह सुन वाह क्या कही। ऐसा कह कर सब एक साथ खूब हँसे, और फिर बोले कि भाई बहुत ठीक बात यही है- इस प्रकार नित्य नया निर्णय कर २ के हँसते और शोक भी करते थे —

बंधुगण-श्रीमान् ने केवल १४ व्याख्यान [illegible] देने का विज्ञापन दिया था तदनुसार चैत्र कृष्ण [illegible] को उनका अंतिम व्याख्यान हुआ पीछे बहुत से भक्तों ने-मिलकर एक विनय पत्र नीचे लिखे आशय का श्रीमान् के सन्मुख प्रविष्ट किया॥

हे। कृपानिकेतन आप को इन १४ व्याख्यानो के देने में जो श्रम हुआ उसकी उपक्रिया हम किसी प्रकार कर नहीं सके-निःसंदेह आपकी इस अनुपम अनुकम्पा से हमारे अनेक जन्मों का अंधकार मिट गया परंतु इस अपूर्व अमृत-पान से हम भक्त जनों के चित्त की तृप्ति नहीं हुई इस कारण हम सब उपकृत जन आपकी सेवा में अनेक प्रणाम और धन्यवाद पूर्वक सविनय प्रार्थना करते हैं कि यदि आप अपनी स्थिति पर्यंत कुछ व्याख्यान देना और स्वीकार करें तो हमारा बड़ाही अहो भाग्य होगा॥

॥ इस्पर ॥

एक दिन कितनों ही को परम पश्चात्ताप के साथ यह कहते सुना कि भाई अत्यंत धिक्कार है हमारी इस मूढ़ मति पर जिन्होंने आज तक इन महानुभाव की महिमा ही न जानी-हालां कि ये कई बार यहां आचुके और अब भी देखो ६ मास से विराजमान हैं-स्वार्थी लोग अब भी रुकमार रहे हैं-इन्हीं की बहकावट का यह फल है कि इन परम पूज्यों के चरणों की शरण और उनके अपूर्व उपदेश रूपी अमृत के आस्वादन से हम लोग आज तक वंचित रहे॥

श्रीमान् ने अति प्रमुदित चित्त से आज्ञा दी कि महाशयों यद्यपि मेरी यात्रा का समय समीप होने के कारण मुझे अब अवकाश नहीं रहा तथापि विदित करो कि आप लोगों का उत्साह भंग न होने की दृष्टि से मैं आनंद पूर्वक व्याख्यानों का देना और स्वीकार करता हूं—यह बात तुम में से कोई एक पुरुष इसी समय उच्चस्वर से पुकार कर समस्त सभासदों को सुनादो कि वह आगामि मंदवार से इसी समय और इसी स्थान में होंगे—चार दिन बीच में है तावत् तुम्हारा बुढ़वा मंगल का मेला भी समाप्त करलो॥ इस प्रकार स्वीकार हुआ सुनते ही समस्त सभासदों ने एक साथ खूबही आनंद ध्वनि की—पश्चात् नमस्ते, धन्यवाद और जय ध्वनि करते हुए सब निज२ स्थानों कोगये॥ इन व्याख्यानों के समाप्ती के अंतिम दिवस उसी स्थान में श्रीमान् के सन्मुख समस्त सभासदों ने बड़ी धूमधाम के साथ आर्य समाज का समारोपण किया परंतु शोक कि वह थोड़े ही दिन चल चला कर बंद हो गया—इसका मुख्य कारण वही पोप लीला अर्थात् उनका मत्सर और द्रोह—वह कौनसा नगर है जहां इन लोगों ने आर्य समाज स्थापित हुआ सुन वहां के सभासदों पर नाना प्रकार के विघ्न नहीं ला डाले जब सर्वत्र ऐसाही हुआ तो फिर काशी वालों का विशेष वृत्तांत कहना ही क्या है—बनारस और बनारसी कहां प्रसिद्ध नहीं—और जगह तो पोपलीला—पोपोंही की उपजीविका है परंतु काशी ऐसे नगर

में तो कोई ऐसा पेशादार ही नहीं जिसकी उपजीविका का मूल पोप लीला न हो - ऐसे ठौर आर्य धर्म का प्रचार करना सर्वथा मनुष्य शक्ति से बाहिर है - ऐसे अपूर्व समर्थ तो केवल यही एक श्रीमान् स्वामी जी महाराज थे जिन्होंने ऐसे स्थानों पर भी हज़ारों मनुष्यों को हो सका उस रीति सुसंस्कृत करके अपना विजय स्तंभ गाड़ ही दिया और इन काशी वालों को तो मानो उन्हों ने पूरा पर्दा नशीन कर के ही बिठाल दिया था जैसे उसमें बैठी हुई बीबी साहिबा चिड़ २ कर हरकिसी को गालियां देती रहती हैं - वैसाही श्रीमान् के सन्मुख सदा इन काशी वालों का चरित्र दृष्टि गोचर रहा - दूर सेही इन्हों ने ख़ूब ढोल बजाए परंतु कभी कोई सन्मुख न आए अर्थात् जब तक श्रीमान् वहां विराजमान रहे बराबर ये लोग घर बैठ उनको नाना प्रकार की गालियां देते और छपवाते रहे॥

परंतु धन्य श्रीमान् जो उस अवस्था में भी परम प्रमुदित रहकर अनेक विध इन ऐसों के कल्याण और मंगल की ही लालसा में निरंतर सुचेष्टित रहे - परंतु ये कुछ ऐसे अपूर्व विद्वान और बुद्धिमान् देखे कि फिर भी न समझे - परिणाम इसका यह हुआ कि सारा जगत् इनको अत्यंत घृणा और निंदा करने लगा एवमेव न्यायानुगामी संपादक जन इनकी असभ्यता पर अतीव उपहास करके प्रसंग वश कभी खर कभी स्वार्थी कभीपेटार्थू कभी अर्थदास कभी काग कभी शृगाल कभी ग्रामसिंह और कभी वेद विधातक देश विनाशक आदि इनको लिख बैठते हैं इसका निदर्शन अभी ऊपर नवम मयूख के आदि अंत में

अन्यथा कर दिया है देख लिया जाय॥

बंधुगण। यहां तक जो कुछ लिखा वा लिखना है वह कुछ इसलिये नहीं कि इन लोगों ने श्रीमान् स्वामी जी महाराज का उपदेश नहीं माना वा उनसे इन्हों ने भला बुरा कहा किन्तु सर्वत्र इनका सर्वथा आचरण अन्यथा देखकर अपने चित्त का शोक दर्साया है क्योंकि जब इन में कोई विद्वत्ता का लक्षण ही न पाया जाय तो कौन कह सकता है कि ये विद्वान् हैं - वह समय गया जब केवल इदं भवति इदं न भवति आदि के कथन मात्र से रे विद्वान् कहे जाते थे - इस काल में तो जब तक उनकी कर्त्तव्यता में देशोपकार न देखा जायगा कभी वे विद्वान् नहीं कहावेंगे - क्या इनके गुरुजी अर्थात् पं० बालशास्त्री जी महाराज कुछ कम विद्वान् थे काशी भर में वही बड़े थे - परन्तु उनके मरण पर समाचार पत्रों में ऐसा लेख अवलोकन करने में आया - कि जिसका शोक कभी हम लोगों के चित्त से दूर नहीं हो सकता जैसे लिखा है कि इन्हों ने भी शास्त्रों में धूल झोंक धनी राजा बाबुओं को खूब लूटा खाया और उड़ाया अन्त को पामर लोगों के समान ये भी जैसे आये वैसे मुंह बाये चले गये परंतु लोकोपकार रूप महान् वृक्ष की जड़ हरी रखने की बुद्धि से कभी अपने जीतेजी एक चुल्लू पानी तक उन्हों ने न छोड़ा तो इतर - अन्य काम उनसे ऐसा हुआ इत्यादि॥ इस कारण मत्पुरुषों की आकांक्षा यह है कि आगे को उनके सच्छिष्यादि तो भी सुचेत हो जायं - सो भी आशा पूरी होती नहीं दीखती है इसके किसी पं० मोहन लाल काशी निवासी ने भी स्वामी जी से कोई

गुरा न पाया ॥

आप्त ग्रंथों में लेख है "विषादप्यमृतं ग्राह्यं बालादपि सुभाषितम् तथाच दुर्जनो दोष मादत्ते दुर्गन्धमिव शूकरः" बतावें उक्त पं० जी इन वाक्यों का अर्थ क्या है और किसका विषय है जो इन उपदेशों पर चले यदि मूर्खों का विषय बतावें तो बस हमारा पूरा समाधान है और पंडितों का बतावें तो उनका साफ पांडित्य डूबता है क्योंकि प्रथम वाक्यानुकूल उनका आचरण ही नहीं पाया जाता किंतु द्वितीय वाक्यानुकूलाचरणी वे अवश्य प्रकार सिद्ध होते हैं - इन्हीं मिश्र जी ने एक पुस्तक रची है उसका नाम महामोह विद्रावण रख कर स्वयं न जाने क्यों लोकरावण बने महात्मा जी ने उस में कोई एक भी ऐसा विषय न लिखा कि जिससे कभी किसी मनुष्य को सन्तोष होता आद्योपांत दुर्वचनों से भर मारा है - धन्य महाशय धन्य - यद्यपि इसका खंडन हो चुका तथापि निश्चय है कि वे लज्जित न हुए होंगे क्योंकि पूरा समाधान ऐसे पंडितों का तभी होता है जब दूसरा प्रति पक्षी भी वैसा ही दुर्वचनी मिले सो आर्यों में कहां ? अस्तु इनका परिश्रम सफल होने के अर्थ यहां आगे इनका कुछ सुलेख लिख दिया है जान लिया जाय कि काशी में सबके सब इस कोटि और कसौटी के विद्वान् विराजमान हैं अतएव काशी विदुषनी कहाती है - हा !!! शोक ॥ इन्होंने देश और धर्म के द्वेषी राजा शिव प्रसाद की अत्यंत प्रशंसा लिखी है उसको देख विद्वानों को यह श्लोक स्मरण होता है "उष्ट्राणां विवाहेषु गर्धभा यत्र गायका। परस्परं प्रशंसंति अहोरूप महोध्वनिः ॥१॥" अर्थ यह है कि ऊंटों के विवाहों में गधे ऊंटों के रूप की और ऊंट गधों को स्वर की परस्पर प्रशंसा करते हैं ॥

॥ घटं भिंद्यात् पटं छिंद्यात् एस भाँगेहूणं चेत ॥
॥ येन केन प्रकारेण प्रसिद्धः पुरुषो भवेत् ॥ १ ॥

स्पष्टार्थ इसका यह है कि बिना विद्या और गुण बाहुल्य के जिस किसी को अपने मुहल्ले में प्रसिद्ध होना अभीष्ट हो वह अपने घर के बर्तन फोड़ कर बाहर फेंके और जिसको अपने ग्राम वा नगर में अपनी प्रसिद्धी कर लेना अपेक्षित हो वह बाज़ार में खड़ा होकर अपने शरीर के कपड़े फाड़ फूड़ कर नंगा नाचे और जो देश देशांतरों में प्रसिद्ध होना चाहता हो तो वह गधे की सवारी करे अथवा उसी से मिलता जुलता कोई अन्य काम करना सोचले। ठीक इसी महा मंत्र के अनुसार ये पंडिताध्यक्ष सुचेष्टित हुए हैं क्योंकि अब तक इनको कोई जानता भी तो नहीं था कि कहां का कौन किस गली में रहता है इसलिये आपको यही एक सूझ गई। हमको बड़ी हंसी आती है इनका पांडित्य देखकर न जाने के लोटा झुका कर आप प्रवृत्त हुए हैं महात्माजी स्वयं महा असंस्कृत ग्रंथ बनाया संस्कृत में। अस्तु सर्व साधारण को समझने के लिये उसका यहां कुछ भाव भाषा में प्रकाशित किया जाता है - निश्चय है कि इतने ही से उनका पांडित्य और आंतरीय अभिप्राय सब लोग अच्छे प्रकार बूझ लेवेंगे पुनः अधिक देखने की किसी को कुछ इच्छा न होगी। इसकी केवल भूमिका तर्गत वाक्यों पर ही मूळ कर देने योग्य बहुत से प्रश्नोत्तर हो सके हैं परंतु इस ग्रंथ कार को व्यर्थ पिष्टपेषण करना ईप्सित नहीं इससे जितना उचित इतना अवश्य लिख दिया है - इतनेही से उनको

तमाम भूमिका फिसल गई- कहो जिसकी भूमिकाही फिसली उसकी इमारत कहां रही॥

॥ लोक रावण भूमिका (७)॥

इस प्रकार है कि पल्वलोत्थित आदि लिखे दस विशेषण विलसित अर्थात् वराह समान आकार और चरित्र का एक कोई भिक्षुवेष धारी काशी में आया उसको यह गज़ब धृष्टता और चाह कि यहां के विद्वान् गुरु से शास्त्रार्थ करें- यह सुन भारत राज कुल रत्नायित आदि ६ विशेषणयुत काशी नरेश ने कहा कि मेरी इस विदुषमती काशी में आकर वैठा · पंडित मन्य· नास्तिक यदि यहां से विमुख गया तो मेरी बड़ी भारी अपकीर्ति होगी अतः संवत् २६ के कार्तिक शुक्ला १३ मंगल वार के दिन सायंकाल के समय घटिकाद्वय मात्र में पंडितों से मुंडी के प्रश्नों का उत्तर और करतालो दिलवाकर (जनकर तालिबद्धलां सभां विसर्ज्ज जनकवत राजा) जीत बताते घर आए जनक समान राजा ईश्वरी प्रसाद नारायण जी॥ + खिद्यतगात्र + अनधीत शास्त्र +

(७) हा- बंधुगण, प्रतिष्ठा शूकरीविष्ठा में सने हुए हमारे लोकरावण जी देखिये पहलेही कौर मक्खी लीलगए अर्थात् स्वामी जी महाराज की निंदा करने चले थे सो चौकड़ी भूलकर ऐसा रूपक लिखगए कि जिससे श्रीमान्को मानो अपने दश्शावतारों में गिना बैठे। क्यों नहो सत्य, सत्यही है। यही प्रथम ग्रासे मक्षिकापातः। दोष कहाता है। आगे चलकर होशियार होना उचित था सोभी न हुआ अर्थात् जितना लिखा, सब मिथ्या प्रचुर और परस्पर विरुद्ध है इतनी स्याकरभी अर्थ सिद्ध नहोतो इससे अधिकतर कौन शोक है सत्य कहा है "विद्यादंभः स्त्यागी..."

३ ४ ५ ६
+ अवशिष्ठ साहस मा + गर्हणापात्र + वेदहुतच्छेत्ता + मुद्र
मुंडी हारा-तोभी वालो के भांति ... पालरों मे घूमता अपनी-
जीत बताता हुआ व अमेरिका वालों के साथ फिर एक-
बार काशी में आया वहां किसी बाग में बैठा हुआ था कि-
इतने में वहां जगत् विख्यात यश कर्नल अलकाट से मिल-
ने चतुर शिरो रत्नायित राजा शिवप्रसाद गए-उन्होंने व-
हां इसके मत और मति की परीक्षा, वेद व ब्राह्मण शब्दा
र्थ के बहाने से की मुंडी की बात चीत बहुत भद्दी थी पर-
तु प्रवचन प्रपंच चातुरी को लिये कटाक्ष करते राजा शिव
प्रसाद बोले कि यों मुझ मंदमति के समझ में बिना लेख नहीं
आने की (१) मुंडी ने भी स्वी कार किया परंतु पत्रोत्तर उसके-

---

(१) इस एक ही वाक्य में जिसे चतुर कहा उसी को मंद मति सिद्ध किया इन्हीं रा
की प्रशंसा सब देशने और ही प्रकार की है और इन्हीं का वर्णन इस ग्रंथ के
प्रथम खंड के अंत पर और द्वितीय खंड के पृष्ठ ६ से १० तक और त० खं
के २८६ पृष्ठ में आया है और इसी पुरुषने अपने तिमिर प्रकाशक तृती खं-
ड में काशी आदि के विद्वान् और यहां के श्रुतिस्मृति पुराणादि ग्रंथ और य-
हां का धर्म कर्म तथा इनके यावत् देव तीर्थ मत और अवतारों की निंदा
अपरमित लिखकर इनको और इनके आदि पुरुषों को परम भ्रष्ट बुद्धी, गो-
मांस भक्षी जारज, महामूर्ख, जंगली राजाओं की प्रजा और मद्यपी सिद्ध करके
स्वार्थ सिद्ध किया है-परंतु काशी नरेश के यहां से कभी २ अपनी हांमे हां मिला-
देने वालों को टका दिला देते हैं तिस्पर ये धर्म द्रोही ... को इतनी प्रशंसा में
... पा जो हंस
[illegible]

कपट, कौटिल्य, निंदा मात्सर्य और अभिमान से भरे हुए थे (२) तो भी राजा नम्र रहे और उन्हों ने निवेदन नाम की पुस्तक छपवा कर उसके और सर्व आर्य समाजियों के पास भेजी॥ इसने उसके उत्तर में भ्रमोच्छेदन (वस्तुतः भ्रमोत्पादन) छपवाया - उसमें शपथ लिखी कि अतः पर मैं कभी काशी के किसी पंडित से शास्त्रार्थ न करूंगा (३) इसने यह उचित ही किया नहीं तो कहीं किसी पंडित को गुष यदि आजाता तो इसे बचने को कहीं ठौर न मिलता अब यह फार्सी और अंग्रेज़ी पढ़े हुए मूर्खों को बहकाता फिरता है (४) मेरे चित्त का इसको वेद प्र-

---

कि इन साहब के साथ एक बार फिर वह काशी में आया - ये वही अलकाट हैं जो अमेरिका से स्वामी जी का प्रताप सुन उनसे पढ़ने को इस देश में आए अब सोचना चाहिये कि जो पुरुष इन श्रीमान् साहब और देश के द्वेषी राजा साहब को सर्वोपरि प्रतिष्ठित और स्वामी जी को अधिकतर बुरा बतावे वह कैसा क्या है॥

ये वास्तव में धर्मज्ञ होते तो राजा साहब की किताब का खंडन करके उनका अच्छे प्र० धर्मद्वेषी प्रसिद्ध करदेते॥

(२) सत्य है जिसको समस्त जगत् शिरोमणि दुर्वर्ग कहे और जो कभी अपने लिये मैं को छोड़ हम तक न कहे वही तो मत्सरी और अभिमानी कहाता है, पंडित जी को दिन में बिना मशाल के सूझता ही न हो तो क्या हो आपको प्रत्यक्ष में भी प्रमाणापेक्षा रहती है तो कहां से आ। अब भी उनके वे पत्र मौजूद हैं॥

(३) वाह आप तो बड़े ही सत्यवक्ता हैं क्या उसी लेख पर आप आशा मोदक खाते हो जिसने पं० बालशास्त्री जी और स्वामी विशुद्धानंद जी को और उनके साथ सब काशी के पंडितों का छोड़ा है दौड़े हैं॥

(४) ऐसाही लेख दामोदर शास्त्री ने हरिश्चंद्र चंद्रिका में किया था उसका उत्तर हमने खंड के प्रथम मयूख में मोक्षरतन लिखा है उसको आपभी देख शांत हूजिये परंतु लज्जित होने की नहीं ठहरी है॥

तारगा दुखाती है एतदर्थ मेरा यह सब उद्योग है अन्यथा मेरी इस क्षुद्र के साथ क्या महिमा थी सिंह, शृगाल वा मशकों से कभी नहीं भिड़ता परंतु उसका जातीय स्वभाव यह है कि वह विपक्षी को देख नहीं सक्ता तद्वत् अधर्म निवारणार्थ इसवादानन्द के साथ मेरी यह प्रवृत्ति है जानिये (५) इति भूमिका ॥

बंधुगण - इस प्रकार भूमिका पूरी करके आगे इसके जिस ज़ोर शोर के साथ इनमहापुरुष ने प्रतिशब्द प्रतिवाक्य खूब छिले गढ़े मन माने दुर्वचनों से अपनी परम प्रशंसित पुस्तक के २५ पृष्ठ रंग रंगा कर वेद भाष्य भूमिका के अवलोकन से उत्पन्न हुआ अपना क्रोधानल शांत किया - यह सब प्रकार आपके ध्यान में भली भांत आ गया होगा साथही इसके यह भी विदित हो गया होगा कि प्रतिज्ञा इनकी केवल छल और कपट से अपूरित थी - इस प्रकार के धर्मात्मा और विद्वान् काशी में निवास करते हैं ॥

इसपर आप महाशयों का यह (प्रश्न) कि इन्होंने किमर्थ ऐसा किया (उत्तर) स्वार्थ सिद्ध्यर्थ (प्रश्न) उसे किस रीति

(५) यह तो कहिये आप ऐसे विद्वान् और धर्मात्मा होकर काशी के किस मोहरी को अब तक प्रकाशित करते रहे, जिससे जिधर देखो उधर काशी की थू २ हो रही है, इस कारण अब आपके विद्वान् और धर्मात्मा होने में कोई शंका करे तो भले ई करे परंतु आपके लेखानुसार आप काशी के नागरिक सिंह होने में तो सब अच्छे प्रकार निःसंदेह हैं तनक कंजरों के लहू से बचे रहैं, इतनी आवश्यकता शेष है सत्य तो यह है कि जिन नेत्रों से वेद भाष्य भूमिका देखी जाती वे नेत्र विधाता ने इन काशी वाले ऐसे मनुष्यों को दिये ई नहीं हैं॥ इति लोक ए

सिद्ध किया (उत्तर) रीति वही पिष्टपेषण अर्थात् ब्राह्मण ग्रंथ-रामतापिनी-गोपालतापिनी-और नृसिंहतापिनी आदि भी वेद हैं (प्रश्न) प्रमाण क्या है (उत्तर) वही बाबा वाक्यम्-अर्थात् हमारे कात्यायनादि बापदादे और परदादे आदि ई पीढ़ी का कथन (प्रश्न) फल क्या होगा (उत्तर) वही वैदिक धर्म विर्श्वतिक सनातन पुराण धर्म प्रतिपालन जिस्का कि उस डाढ़ीजार दयानंद ने खोज मार दिया है न कहीं से त्राण हाथ लगता है न आमंत्रण, न कोई सभा न कुछ संभावना, न आद्धनपक्ष, न वसंत पूजा न पुराण, न दान न कुदान, न दक्षिणा न भक्षण, न कोई शांति न अनुष्ठान-झूठी व्यवस्था तक (पक्षी और प्रतिपक्षियों को) लिखदेना हम सबों ने स्वीकार कर लिया सो भी कोई अंधा पूछने को नहीं आता ऐसी हम काशी वालों की दुरवस्था है (८) बहुत कुछ जालफंद पुरखे लोग रच गये और उनसे ४ बांस अधिक हम बढ़ गये-तोभी कुछ लाभसा पदार्थ दृष्टि गोचर नहीं-ऐसा कुछ दयानंद का उपदेश सब को लग गया जो जलकर भस्म-

---

(८) वास्तव्य में इसी प्रकार ये लोग पक्षी और प्रतिपक्षी दोनों को अपनी ओर से वाक्यों को गढ़ गढ़ कर व्यवस्था देकर दोषियों और निर्दोषियों को एक मार्ग पर चलाकर उनका धन बराबर लूटते हैं-इनके यहां किसी बात का निबेध नहीं जैसी दक्षिणा वैसी धनी की इच्छानुसार उसको व्यवस्था लिख कर देदेते हैं। ऐसी दुरवस्था कर रहे हैं इसका सर्वत्र खूब खाका उड़ रहा है इसका कुछ उदाहरण आगे काशी माहात्म्य में लिखा देख मिलेगा॥

जुगा जाता है-सोचते २ यह सूझ गया कि उसकी निंदा में कुछ रच डाले (सर्वं प्रयत्नेन सफलम्) सो यह ग्रंथ बन गया इसको राजा शिव प्रसाद ने तो बहुत ही पसंद किया देखिये कैसा क्या भाग्योदय होता है-तीर लगगया तो कुछ दिन मौजा उड़ावेंगे और इस पुस्तक का अधिक प्रचार करने से सब काशी वालों को भी लाभ होने की संभावना है-अहो हरेरिच्छा बलीयसी॥

(प्रश्न) क्यों जी जब यहां दयानंद थे और छः मास तक वे शास्त्रार्थ करने का बराबर सं०२६ में विज्ञापन पर विज्ञापन देते रहे तब क्यों आपने ऐसा कोई उद्योग न किया जिससे कि उनको सं०२६ के भांत परास्त कर देते-देखो अब तुम्हारी इसी पुस्तक पर अजमेर समाज ने कैसा खंडन लिखा है-वह लिखता है कि लोकरावण जी उस समय किस भिट्टे में छिपे थे अब मुहर्रमी फ़क़ीर के समान हाय हम न भए २ जो कहते फिरते हो इससे क्या होना है-भलेई अपने मुंह मियां मिट्ठू बनो कुछ भी लाभ न होगा-स्वामी जी को वेद प्रतारक कह कर आप उद्धारक प्रसिद्ध होना चाहते थे सो चौबे के दुबे हो बैठे "धाता यथा पूर्व मकल्पयत," इस वेद वाक्य में इतिहास बताकर-ब्राह्मणभाग में वेदत्व लाना चाहते थे सो तो रहा एक ओर मंत्रभाग का भी अनादित्व खो दिया इत्यादि बहुत सा लेख उन्हों ने तुम्हारी पुस्तक बनी थी तभी लिखा था परंतु तीन वर्ष होचुके तुमने कुछ भी उत्तर नहीं दिया ऐसी हार पर हार हो फिर भी धन्य वा-

प्रतिष्ठा तुम चाहो सो कैसे हो सक्ती है ॥
(उत्तर) भाई कहते तुम सब सत्य हो परंतु क्या करें उस-का तो कुछ उत्तर ही नहीं सूझता ऐसा उन्होंने एकही पकड़ करके हमारा सब परिश्रम व्यर्थ कर दिया ऐसे ये दयानंदी प्रबल हैं कहो क्या करें ॥
और जो तुमने दयानंद को हराने की वार्ता कही सो मित्र वर्ष सं० २६ में तो हम निरे स्तनंधयी थे अभी थोड़े दिनों से उत्तीर्ण हुए हैं - खाने पीने के दिन थे सो मूड़के मुड़ाते ही ओला पड़े अर्थात् सर्वत्र दयानंद मयी हो गयी गुरु जी (बालशास्त्री) ऐसे बड़े २ विद्वानों का तो सामर्थ्य ही नहीं था हम क्या चीज़ हैं जो दयानंद को हराने जाते - काशी का नाम ही नाम जानो सार कुछ भी नहीं हमने जो सं० २६ में काशी वालों ने दयानंद को जीत लिया लिखा सो वह सब केवल हमारा प्रवचन प्रपंच पटुत्व ही जानो और समझलो कि हमने सत्य को ताक में धर कर अपना सब काम चलाया है मिथ्या बात उसके सन्मुख नहीं चल सक्ती थी अतएव सं० २६ में किसी ने उसका सामना नहीं किया। सत्य तो यही है कि वह एक अजेय और अद्वितीय पुरुष रहा है परंतु यह सब वार्ता घर में ही कहने की हैं बाहर की एक नहीं अन्यत्र तो हम वैसाही कहेंगे जैसा कि लिखा है और हमही एक क्या सब काशी भर की यही व्यवस्था है॥
(प्रश्न) पंडित जी ऐसी अधर्म की मत कहो - हमने तो काशी में हज़ारों मनुष्यों को स्वामी जी का दम भरते स्वनेत्रों

से देखा है (उत्तर, होंगे अवश्य हम भी जानते हैं परंतु इन में पंडित एक भी न होगा पंडित ऐसा कहे क्या? और तो बेचारा खाय क्या (प्रश्न) पं० जी परमात्मा ने ज्ञान, बुद्धि और विचार (जिनसे कि सत्यासत्य जाना जाता है) मनुष्य मात्र को जब समभाव से दे रक्खा है फिर पंडित क्या और अपंडित क्या पंडित ने रोटी को पानी, और पानी को रोटी, कहा तो कौन माने लेता है और इतने पर भी यदि वह हठवा दुराग्रह न छोड़ेगा अर्थात् वैसा ही कहता चला गया तो कहो जगत् में मूर्ख संज्ञा सच मुच किस की होगी और कौन पंडित कहावेगा. स्वार्थवश, पढ़ा लिखा लिख गया हो तो नीचे लिखे वचनों को देख लो (९) फिर कहो कि ऐसी दशा हुए पीछे वह पंडिताभिमानी क्या खावेगा और कैसे जियेगा ॥१॥

इतना सुनते ही आकाशपृष्ठीवी लोकरबस जी महाराज खा पछाड़ गिर पड़े उस दिन से उनकी बड़ी बुरी दशा सुनी जाती है- कोई शशमेरु ऐसा हठवा टक टकायते नाम का गाढ़ रोग मानो उनके पड़ गया है- अब इनके लिये भी कोई वैसा

(९) साक्षात् श्री कृष्ण जी महाराज आदि कहते हैं कि " पंडिताः समदर्शिनः तथाच पठकः पाठक श्चैव ये चान्ये शास्त्रचिन्तकाः। सर्वे व्यसनिनो मूर्खा यः क्रियावान् स पंडितः ", अर्थात् बिना लोकोपकारादि क्रिया के जितने पढ़े लिखे पंडित कहाते हों उन सब को मूर्ख और क्रियावान् मूर्खों को पंडित जानो- उसी प्रकार समदर्शी पुरुष भी पंडित कहे जाते हैं ॥

इसी के अनुसार कबीर दास ने भी कहा है (पोथी पढ़ २ जग मुआ पंडित हुआ न कोय)

ही गोवैद्य अपेक्षित हुआ जैसाकि भेड़राजा के पागलपन निवा-
रणार्थ सर्वसाधारण मनुष्यों ने विज्ञापन देकर सूचित किया है-
यदि सर्वसंमत हो तो वैसाही एक विज्ञापन इनकी शांत्यर्थ अ-
वश्य दे दिया जाय और कदाचित् किसी प्रकार से किसी पुलिस
देवताने अबोधनिवारण के संपादक श्री० ए० वर्मा जी की भांत इ-
नकी भी खबर लेली तो फिर कुछ भी कसर शेष न रहेगी- बस यही
दो दैवी अथवा मानुषी उपाय इनऐसों के सुधार की आशा दिला-
ते हैं- देखिये क्या होता है परमात्मा कुशल करे क्योंकि लक्षण-
इनका अच्छा नहीं- अंत को यही कहना पड़ता है कि भाई बु-
रे कामका बुरा फल न हो तो वह बुरा क्यों ?॥

॥ विद्याविनयदा नित्यं साचे दविनया वहा॥
॥ किं कुर्मो किं प्रति ब्रूमो गरदायां स्वमातारि॥१॥

अर्थ यह है कि जैसे किसी की विद्या-विनयादि सद्गुणों से अ-
पने आधारभूत का पुरुष को च्युत करके उससे लोकरावण जी
की भांति अविद्यादि देश विनाशक काम करावे अथवा किसी
बालक की माता अपने दूध पीते बालक को दूध न पिलाकर
विष घोल पिलावे- तो कहो चुप रहने वा शोक करने के सिवा-
य और क्या किया वा कहा जाय॥

ठीक ऐसी ही दुर्दशा और व्याप्ति इन काशी वालों की देख भार-
त निवासी अति विस्मित हो रहे हैं कदाचित् कहो कि एक लो-
करावण को देख सब काशी के विद्वानों को क्यों नरक में डा-
लते हो? तो इसका उत्तर यह है कि प्रायः वहां सब ऐसे ही
एक से एक बढ़कर भरे हैं जिसका चित्त चाहे वह परीक्षा क-

रले और यह बात ऊपरके प्रश्नोत्तरों से स्प स्पष्ट है तथा इन
समस्त पंडितों का हस्ताक्षरी वह व्यवस्था पत्र साक्षी है जि
से पं० श्रीगोपाल संवत् २५ के अंत में काशी जाकर लाये-
थे उसमें फ़र्रुख़ाबाद के एक सशंकित धनी की बड़ी रक़म
काशी वालों को उक्त पंडित घूंस में दे आये थे तब मिला था
अस्तु उसकी पास श्री गोपाल और ठीक उसकी नक़ल ग्रंथ
गोपाल के पास है। दूसवार के प्रथम [illegible]
देखिये उस समय तक इन काशी वालों ने स्वामी जी को दे-
खा तक नहीं था तथापि बिना बात उनको धूर्त नास्तिक मू-
र्ख छली दुराचारी क्रूर कपटी आदि शतशः दुर्वचन बेधड़-
क लिख डाले - गालीगाली और गलबजबहसी का नाम काशी
का पंडिताव - भला यह क्या सभ्यता है कि श्रीमान् इनका-
भला चाहें और ये मरणोन्मुख सन्निपाती के समान नाम-
सुनते ही उस भारतार्ति विनाशक सद्वैद्य को गाली देने लग-
जायें ऐसा काम तो कभी कोई नीच और चांडाल तक नहीं
करता अहा!!! इनके ऐसे परम निंद्य चरित्रों से यहां के नरेश
सहित हमारी परम प्रशंसनीया काशी अत्यंत कलंकित हो-
गई और वे स्वयं भी किसी काम के नहीं रहे। इस बात का आ
र्यो वर्त्त के समस्त न्यायशीलों को अत्यंत शोक है - यहां तक
इन्होंने अति की कि ख़ास काशी प्रयाग के रहने वाले बाबू ह
रिश्चंद्रादिकों ने भी अपने पत्रों में इनके स्वार्थानुसंधानता
आदि प्रवत् असद् व्यवहार ख़ूब ही प्रकाशित कर छोड़े हैं
(*) तथापि जिनको लज्या स्पर्श न करे और जिनका अ-

र्योस्तु नः केवलम् - यहीएक सिद्धांत हो उनसे क्या क-
हा जाय - ऐसे ये दक्षिणाशप्रवृत्त विषयलंपट और शि-
श्नोदर परायण सर्वत्र उपस्थित हो रहे हैं। परमात्मा इनको
और इनके आश्रय पर चलने वाले इनऐसी वृत्ती के सम-
स्त नगर नगरांतरीय हमारे देश निवासी बंधुवर्गों को बु-
द्धि को पावन करे॥

बंधुगण — यहां तक इस लंबे चौड़े ग्रंथ और वा-
राणसी प्रसंग के लिख दिखाने का मूल आशय केवल य-
ही है कि परमात्मा ने अपने इसजगत् के सुधार का भा-
र ब्राह्मण

जाति अर्थात् विद्वानों के आधीन रक्खा है और उसी अनु-
क्रम पर चलने चलाने से हमारा यह भारत बर्ष इस भूमं-
डल भर में अनंत काल तक सुख्यात और आनंदित रहा-
और इसी महा कारण के कारण ब्राह्मणों के बाप दादों के उ-
पकार स्मरण से उनके कुल मात्र में समुत्पन्न महा मूर्ख बाल-
क और ब्राह्मण नाम धारी मात्र अब तक सब को इस देश-
में राजाओं से भी अधिकतर मान्य और वंद्य रह कर म-
हाराज कहलाया परंतु जिस कारण इनकी यह प्रभुता हुई
वह कारण अब इनसे हजारों कोस पीछे पड़ा रह गया अ-
तः "मूले नष्टे नैव पुष्पं फलंच„ इनका सुख भी गया औ-
र प्रतिष्ठा भी गई और देखते ही देखते रही सही भी अब -

जाती है - यह हानि केवल इन्ही की नहीं हुई किंतु इनके - साथ अपने सब देश की भी हो गई इससे सिद्ध हुआ कि - जो देश के बनाव का पूरा कारण था वही देश बिगाड़ का भी पूरा हेतु है - ऐसी विवेक दशा में जिस किसी को पुनश्च देश सुधार अभिमत हो तो सोचना चाहिये कि उसको - प्रथम क्या कर्त्तव्य होगा ? कहोगे कि वही मूल कारण का - सुधार - सो मूल ठहरे ब्राह्मण - तो अवश्य हुआ कि प्रथम वेही सुधारे जायं।

ठीक इसी न्याय के अनुकूल क्रिया करने वाले परम दया - लु श्रीमान् स्वामी जी महाराज के साथ ब्राह्मणों ने ऐसा सर्वत्र सार्वकाल कुत्सित व्यवहार किया जैसा कि कई - ठौर ऊपर दिखा चुका - तथापि कभी किसी पर क्रोध वा रोष वा द्वेष श्रीमान् ने नहीं किया और न ऐसा कोई अ - सद् व्यवहार उन्होंने अपने किसी अनुयायी को करने दि - या और यदि कहीं किसी अपने को किसी प्रकार का कुछ - भी विरुद्ध करते देखा वा सुना तो अवश्य उस पर श्रीमा - न् संतप्त हुए परंतु कभी ऐसे पुरुष की उन्हों ने पीठ नही ठोकी (१०) और न कभी किसी अपने विरोधी से प्रत्यक्ष -

(१०) जैसी किसी एक प्रिय विद्यार्थी ने आकर कहा कि महाराज आज फलां जगह पर फलां पंडित मुझ से उलझकर यों आपकी निंदा करने लगा तब मैं ने भी उसको ऐसे २ उत्तर दिये - यह सुन आपने क्रुद्ध होकर कहा कि तेरा यह काम कभी तू प्रशंसा के योग्य मत समझ क्योंकि जब अद्य जगत् ब्रह्मा,

वा परोक्ष उन्होंने दुर्वचन कहे परंतु इन भेड़ राजा ऐसे कपटी व्यर्थाभिमानी और दुराचारी आदि पुरुषों को (जिन्होंने समझाने पर भी नहीं माना) श्रीमान् ने कोण भी न

विष्णु और महेशादि की भी निंदा से नहीं चूका , तो मैं क्या चीज़ हूं जिसकी निंदा तू न सुन सका, कभी तुझ ऐसे मनुष्य से जगत के भलाई की आशा नहीं हो सकती अतः सावधान हो-१

एवं संवत् ३७ की बात है कि आपने फ़र्रुखाबाद में आकर यहां के आर्य सभाजियों से अपनी यह अप्रसन्नता जतलाई कि तुम लोगों ने अपने समाज के विरोधियों को जो अदालत से शिक्षा दिलाई वह तुम्हारा काम अति बुरा हुआ समझो-२

फिर आपने देखा कि यहां की अंतरंग सभा न्याय से काम नहीं करती, प्रति दशा में पुरुष विशेष का मुह ताका करती है इस कारण मुझको उसके शामिल काम करना स्वीकृत नहीं है तो आपने उस पर एक सी मासक सभा नियत करके नीचे लिखे अनुसार पत्र मेरे नाम लिख भेजा कि इसके अनुसार काम होता रहे -३ आपने जहां कहीं देखा कि फलां पुरुषों ने कई बार समझाने पर भी निंद्य काम करना नहीं छोड़ा तो आप बेधड़क उनको उनके कर्मानुसार (जैसे आइये वेश्या विलासी जी आदि) विशेषणों से हज़ारों मनुष्यों की सभा में पुकारने लगे परंतु कभी किंचित् मात्र उनके प्रसिद्ध महत्व पर आपने कुछ स्थिति नहीं की- तथैव अपने व्याख्यानों के बीच स्पष्ट पुकार कर सर्वत्र राजसभा तक के बीच कह २ दिया कि वेश्या एक कुतिया के समान स्त्री है उस पर आसक्त होना कुत्तों ही का काम है, न मनुष्य का और लड़कों पर मोहित होने वाले को निरे

हीं छोड़ा। तथा दूर से वा घर बैठ कर प्रतिष्ठा हांकने वा-
ले पंडितों को भी वे ख़ूब ताव देते रहे इसलिये कि इसी तर-
ह कदाचित् कोई एक बार सन्मुख आजाय - प्रथमारंभ में
जो कुछ जहां तहां झपेट में आने वाले थे सो आगए पर-
न्तु जब से उनको इनका तेज बल और पराक्रम विदित हु-
आ तब से फिर नहीं कहीं कोई उनके सन्मुख हुआ - स-

शूकर और कौए ही होते हैं - हज़ारों धिक्कार है ऐसे कुकर्मियों पर - ४

आपने कहीं सुना कि हमारा फलां पंडित गया में मूंछें मुड़वाकर पिंडमर्द-
न कर आया तो उसी क्षण सहारनपुर, मेरठ आदि के समाजों को लिख भेजा
कि वह पूरा पोप है कभी उसका उपदेश असर नहीं करेगा - ५

ख़ूब जानते थे कि मुन्शी जी और उनके चेले सर्पप्रकृति के मनुष्य हैं छे-
ड़ते ही काटने को दौड़ेंगे परंतु इसका कुछ भी भय न करके स्पष्ट सर्वत्र स-
ब को लिख भेजा कि उनका लेख असंमत और दोषप्रद है इसलिये कभी
किसी को उनका विश्वास न करना चाहिये - ६

इसी प्रकार मेरी अशुद्धी के पकड़ने वाले मेरे आक्षेपक को जैसा कुछ मे-
रे विषय में स्पष्ट लिख दिया और मुझसे अप्रसन्न हुए तद् भी सब इस
मयूख के आरंभ ही में प्रकाशित कर चुका हूं - ७

इत्यादि शतशः उदाहरण इसके जाग्रत हैं कहां तक कोई लिख सकता
है। सिद्धांत इस समस्त लेख का यही है कि यह जगत् जैसा दुरंगा स्वयं
हो रहा है वैसा ही वह स्वामी जी को बताता रहा परंतु जिन्होंने उनको
नित्य सहवास से जाना है उन्होंने सदैव उनको एकरस और एकह-
रंग देखा व बताया और बतावेंगे॥

मुख आना कैसा घर बैठ कर ही प्रतिष्ठा बचाना बेचारों को कठिन हो गया इस प्रकार शास्त्री लोग अपना शा - (शास्त्रार्थ) छोड़ स्त्री हो घर बैठे ॥

यदि कहो कि इस शास्त्रार्थ की इतनी चाह स्वामी जी महाराज को क्यों थी ? तो उत्तर इसका यह है कि धर्मविषयक भ्रान्ति मिटजाने के अर्थ श्रीमान् को उसकी चाह थी,

---

॥ ऊपर विवर्णित स्वामी जी महाराज के पत्र की प्रति ॥

ओ३म्

॥ पंडित गोपालराव हरि आनंदित रहो ॥

मैं आशा करता हूं कि जो २ बातें करनी आपके लिये नीचे लिखता हूं सो २ आप यथावत् स्वीकार करेंगे ॥

(१) जो "मीमांसकोपसभा,, नियत की गई है उसके ५ सभासद निश्चित किये गये हैं। एक आप बाबूजी लाला जगन्नाथप्रसाद लाला रामचरन लाला निर्भयरामजी और इनकी अनुपस्थिति में क्रमशः यथा आपके लाला नारायनदास मुख़्तार लाला हरनारायण पुरो० मन्नीलाल लाला कालीचरन और लाला निर्भयराम के कोई पुत्र अर्थात् तीनों में से एक जो उपस्थित हो नियत किये गये हैं ॥

(२) जहां तक बने और आप उपस्थित हों तो व्याख्यान भी समाज मंदिर में करें

(३) जो मासिक पुस्तक निकलता है वह भी आपके हाथ से बने या अच्छा बने पर शुद्ध करदेंगे तो भी अच्छा होगा इति ॥ आषाढ़ कृष्णा ८ बुधवार संवत १९२७ विक्रमी

(दयानन्द सरस्वती)

वैसा होने से सबको अपना वास्तविक धर्म विदित होकर उसके अनुकूल चाल चलने से समस्त भारतवर्ष की बहुत जल्द भलाई हो सक्ती थी, सो बात यहां के स्वार्थी पंडितों ने नहीं होनेदी, इसका शोक भारत वर्ष के समस्त ज्ञानवान् - बुद्धिवान् देशहितैषियों को अत्यंत है और अतएव वे सब स्वामी जी महाराज को अंतःकरण से अहर्निश धन्यवाद देते और उनके कथन पर चलने को अपने देश निवासियों से प्रार्थना करते हैं - और इसी कारण श्री स्वामी जी महाराज के कुछेक गुण और उनके विरोधियों के दुर्गुण सबके सन्मुख वे पसार २ कर धर रहे हैं - जिनके कान आंख मन और बुद्धि काबूमें होंगे, वे अवश्य अपने विवेक बल से सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग कर सक्ते हैं परंतु यह काम पक्षपात में सने हुए मनुष्यों से कभी नहीं हो सक्ता, अस्तु अब इस देशहितैषी को विशेष वक्तव्य कुछ नहीं - रहा - हां इस अंतिम प्रसंग के पुष्ट्यर्थ देशांतरीय व नगरांतरीय सत्पुरुषों का कुछ विचारांश दिखलाना परमावश्य है उसको दिखलाकर अपने इस ग्रंथ को समाप्त करता है॥

बंधुगण - प्रथम मयूखद्वारा प्रसिद्ध करचुका हूं कि संवत् १९३२ विक्रमी में श्रीमान् की यात्रा बंबई प्रांत में हुई थी - उनदिनों उधर के पूनासितारा नाशिक सूरत बंबई बड़ोदा और अमदाबाद आदि सब नगरों के पंडितों की वैसीही दशा हुई थी जैसी कि इधर काशी कलकत्ता

दि नगरों की वर्णन कर चुका हूं अर्थात् उधर भी कभी कोई -
पंडित चारो वेदों की संहिता में से कोई एक भी मंत्र ऐसाला-
कर श्रीमान् को न दिखा सका जिससे मूर्ति पूजन वैदिक क-
र्म सिद्ध होता - जिधर देखो उधर अंतिम प्रमाण सबका
" मंत्र ब्राह्मणयोर्वेद नामधेयम्,, अथवा धांधली की बातें।
परिणाम में उधर के बहुत से न्यायशीलों ने श्रीमान् स्वामीजी
महाराज के विजय का यथावत् वृत्तांत गुजराती और महाराष्ट्री
भाषा में मुद्रित कर छोड़ा उनमें से काशी कलकत्ता समान प्रसि-
द्ध, पूना और बंबई नगरों का कुछ वृत्तांत यहां उदाहरणार्थ लि-
या गया है। लोकहितवादी, नामक ग्रंथ ४० पृष्ठों का केवल -
इसी विषयक फ़र्वरी सन १८८३ ई० में तय्यार हुआ है उसके
थोड़े से पृष्ठों का आशय ज्यों का त्यों महाराष्ट्री भाषा में धरकर
उसका भाव पीछे से इस भाषा में खोल दिया है॥

॥ अथ प्रमाणांतराणि ॥

(१)

(पूना लोकहितवादी)

सारांश स्वामी दयानंद सरस्वती जी महाराज या काळीं अपो-
काहीं विलक्षण वक्तृत्व पूर्ण विद्वान् आणि साधू होऊन गेले
त कि ज्यांची स्तुति आमच्यानी पूर्णपणें होऊं सकत नाहीं
या करतांच समस्त भूमंडलावर चहूंकडे त्यांचे निर्मल की-
र्तीचा पसारा थोड्याच दिसांत नीटपणें होऊन गेला -
स्वामी जी ने आपले वेद भाष्या च्या आरंभापूर्वी जो वेदभा-

अभूमिका तयार केली ती शुद्ध चित्तानी वाचली असता कोणाचीही वेद वा धर्म विषयक शंका अवशिष्ट रहात नाहीं- अशी सर्वोत्कृष्ट साधारणारी बालबोध सुविचार पूर्वक तिहिची रचना त्यांनी केली आहे- ज्याला वेदाचें महत्व विदित करूण घेणे असेल त्यानी ती अवश्य बघावी, अशी आम्ही करतों (*) स्वामी जी ने जें वेद भाष्य चालिवलें होतें तें खऱ्या वेदार्थाला किती धरून होतें व पूर्वी महीधर वगैरे प्राचीन भाष्यकारानी जीं वेदभाष्यें लिहिलीं तीं किती अंशानी व कोठें कोठें चुकलीं होतीं याचा स्फोट, त्यांणीं आपल्या भूमिकेंत सोदाहरण केला आहे- या भूमिकेवरून अनेक अज्ञात व महत्वाच्या गोष्टी कळोन लोकांतील मिथ्याचार व खोट्या समजुती कशकशा प्रकारानें आपला अमल आजपर्यंत सर्व भारतवर्षावर बसवीत आल्या आहेत व त्यांजविषयीं शास्त्री पंडित वगैरे ज्ञानी व विद्वान् लोकांनीं किती औदासिन्य आणि हेलसांड अथवा निर्ममत्व दाखविलें हें नक्कीच करून घेते॥

(*) देखो काशी आदि के पंडित जन कि जो मान् नाना हिन्दकारा जी का लिखते हैं और समझ कि वे भाष्य भूमिका के देखने को से दिव्य नेत्र और निर्मलचित्त की आवश्यकता होती है आप को उसे नहीं गम्यों आदवें और चुने मन व विद्वेल चित्त से देखा चाहें सो भला कैसे देखसके हैं- तुम्हीं लोगों पर तो यह श्लोक किसी धर्मात्मा ने कहा है॥ जिनका दृष्टी परांत्रेन हस्तौ दग्धौ मांस ग्रहात् ॥ मनो दग्धं परस्त्रीभिः कथं सिद्धिर्भविष्यति ॥ १ ॥

अलीकडे दोन हजार वर्षांपासून ब्राह्मणांनीं जे चोकून ठेविलें आहे कीं वेद व शास्त्रें हीं आपलें गुप्तधन असून त्याजकडे आपल्या वाचून कोणी ढुंकून देखिल बघूं नये, त्याविरुद्ध स्वामीजीचें मत असें कीं, ज्या जीवाला बुद्धिमत्ता आहे त्याणें खुशाल वेदशास्त्राचा अभ्यास करावा तें त्यांचें सांगणें सर्वांस विषम वाटून सर्व ब्राह्मणमंडळी पिसाळून त्यांजवर आपल्या रागाची आग पांखडी, यांत, मोठेंसें कांहीं नवल नव्हतेंच, दयानंद जीचें प्रतिपादन कधींही लेचे पेचें नसून ठांसून व साधार असे परंतु तें शांतपणें आणि विचार पूर्वक ग्रहण करण्याचें ज्ञान कोणास नसल्या मुळें ब्राह्मणांत आणि दयानंद जी मध्यें वैमनस्यें आणि तंटे पडत - या वरूनच ब्राम्हणांचा अनुदार स्वभाव आणि स्वामी जी चा उदार प्रकृति ठळठळीत दिसते हें ज्ञातें लोग सहज जाणतील याचें कारण उघड आहे कीं स्वामी जीला कोणत्याही प्रकार चा पाश, लोभ, भिंघेपणा आणि पारतंत्र्य नव्हतें या मूळेंते कोणाचीही भीड़ व भीति वा मर्यादा न ठेवतां त्याचाला व वेदशास्त्राला जें संमत तें धड़ाकून सांगत असत - त्यांच्या जवळ कापट्याचा लेशही नसे कोणीही त्यांचेकडे शंका घेऊन गेला तरी त्याचें त्यांजकडून योग्य रीती ने समाधान होत असे ॥

आजपर्यंत त्यांजकडे एकंदर ज्या ज्या शंका आल्यात त्यांची त्यांची समाधानें त्यांनी आपल्या वे० भा० भू० आणि सत्यार्थ प्रकाश नामक ग्रंथामधें नोट करून लिहून ठेविलेलीं

आहेत तीं अशीं सर्वमान्य होतकीं त्यांला पाहून सर्वांचीम तें गळतात आणि सर्वोपरि स्वामी जी याचे सिद्धांत राहतो - त्यांच्या व्याख्यानांत सर्वधर्मीचे व सर्वमतांचे लोक खुशाल येत असत आणि सर्वां समक्ष करायचें तसें आपलें उपपादन व मंडन बेधड़कते करीत - याचप्रमाणें सर्वत्र सार्वकाल निःशंक एकाकी फिरून व ज्यांशी त्यांशी शास्त्रार्थ करून सात समुद्रा पार त्यांनी आपली कीर्ति पताका फड़फड़ून दिली लंदन आणि आमेरिका अर्थात् पाताला पर्यंत त्यांचा विजय दुंदुभी वाजून राहिला आहे ॥

हिन्दुस्तानातील कित्येक राजे, व संस्थानिक, व लक्षावधि ज्ञाते व समजदार लोक आप आपले वैष्णवादिमत सोडून भक्ति पूर्वक स्वामी जीला अनुसरलेत यावत् भारत वर्षांतील मोठे मोठे अतिरथी महारथी अपरिचित शास्त्री आणि पंडित लोकांच्या गोटामधें बेधड़क सिंहवत् जाऊन बसणें व जातांजातांच त्यांच्याशी वाग्युद्ध करून तात्काल त्यांला परास्त करून हांसत उठणें व सर्वत्र आपलाच पक्ष ठेवणें, (श्री) स्वामी जी

(श्री) नाशिक पुणें अमदाबाद इंदुर मुंबई बडोदें काशी प्रयाग पटना व कलकत्या सारखे परम प्रसिद्ध विद्यापीठ नगराचे पंडितांची फेरिवल जेव्हां हीच अवस्था जाहली तेव्हां इतर नगरांची गोष्ट काय ह्मणावी, कोणच्यानेंही स्वामी जी महाराजाचे प्रतिपादनावर प्रतिवाद होऊं सकला नाहीं सगळेच लब्ध प्रतिष्ठ स्वामी जीचें विद्वत्तंत्र बघून असे कांहीं ग्रामीण सारखे गांगरून गेलेत कीं पुढें गुणज्ञ होऊन आपली प्रतिष्ठा ठेवायाची देखिल बुद्धी त्यांला न सुचली शेवटीते परम अधीर परम अशांत परममत्सरग्रस्त अत्यंत अश्लील व अन्याय्य कर्म करण्यांत प्रवृत्त होऊन पतित जाहलेत अस्तु हरीरिच्छा बलीयसी ॥

महाराजांचें केवढें धारिष्ट्य, आणि विद्या व तपोबल ? इत-
केंही असूनते डौली नव्हते, त्यांचे समाग में कामापुर्ते दोन ती-
न शिष्यमात्र सदैव रहायचेन। ते प्राचीन ऋषिमुनी समान
सत्पथानुवर्ती, शुद्धमत संस्थापक, सच्चे देशानुरागी, पूरे योगी
अद्वितीय विद्वान् स्पष्ट व यथार्थ वक्ते, परम निस्पृह, जितेंद्रि-
य व जितारिषड्वर्ग, वैराग्यशाली तपोनिधी होते यास्तव -
त्यांला इतकी पूज्यता समस्त भूमंडलावर आली आणि सर्व
भारत वर्षाचे लहान मोठे समजदार राजे महाराजे आणिवि-
द्वज्जन आदि सर्वप्रकारचे ज्ञाते लोका कडून त्यांला अनुपम
सन्मान मिळाला ॥ ‡ ॥ यद्यपि सांप्रत काळीं यथें विशुद्ध
वा ब्रह्मचारी आणि गुजरांतेमधें स्वामी नारायण उर्फ सहजा-
नंद चांगले साधू जाहलेत परंतु त्यांला यांच्या सारखी पूर्ण
विद्या नव्हती म्हणोन हे त्यांवरील पायरी वर बसणारे महा
थोर साधू होत, यांला वैदिक मत संस्थापक अपर शंकरा-
चार्य सर्वांनी निःभ्रांत समजलें पाहिजे - अलीकडे पौराणिक

॥ ‡ ॥ ई० सन १८७७ च्या जान्वरी महिन्यांत महाराणी सरकारच्या चक्रवर्तिनी पद धा-
रणाचे संबंधाने लार्ड लिटन या प्रतिनिधीचे अध्यक्षते खालीं दिल्ली नगरांत जो बड़ा दर्बा-
र जाहला त्या महासभारंभात श्रीमन् पंडितवर्य्य स्वामी दयानंद स० जी महाराजही
तेथें आमंत्रिन केल्ले गेले होते - भाग्योदय बलानें आमचे ही ते वेळेस तेथें जाणें जाह-
लें त्यायोगाने आम्ही स्वनेत्रानें हा सर्व चमत्कार पाहिला ते वेळेस व स्वामी जीने बा-
बू केशवचंद्रसेना च्याही चित्तांत वेदांचा प्रभाव नीट ठांसून त्याचे नेत्र उघडून दि-
ले होते ॥

धर्म चालू जाहल्यापासून वैदिक धर्माची पायमाली जाह-
ली, पुराणाच्या कथा अयुक्त व असंगत एव मेव मूर्तिपू-
जा, ही अवैदिकी अज्ञान आणि अनर्थसूचक आहे ह्मणो-
न आपण सर्वांनी ती सोडावी, असा स्वामी जीं चा उपदेश
आयकून-पोटभरू भट्टभिक्षुकांस व शास्त्री वैदिक आदि पुराण-
मंडळांस सर्वत्र अत्यंत विषम वाटून ते सर्व स्वामी जीशी द्वे-
ष करूं लागले त्यांनीच आपले पोटा साठी श्रीमान् स्वामी द-
यानंद सरस्वती जी महाराजा सारखे जगत्पूज्य महात्म्या-
ची निंदा शुरू केलीव ते लोक त्या महापुरुषाला नास्तीक
पाखंडी व ईसाई ह्मणात। ही गोष्ट म्हटली ह्मणजे नवीज-
हली असाही हेतू नाहीं-जितके जेथें सुधारक जाहलेत
त्यांवर निरंतर अश्याच घोर विपत्ती सर्वत्र आल्यान(*)
ही वार्ता इतिहास वे त्यांला नीटपणी माहीत, प्रत्यक्ष ही
आपण स्वनेत्रांनी बघलों नसलाच चमत्कार ह्याही एक हो-
य। येणेकारून जरीं कांही से अज्ञलोकांचे मनांत त्या महा-
पुरुषाविषयीं अपूज्य ता आली तरीं कदापि त्या पूर्णप्रता-
प शालीच्या मनांत आपले आरंभित कामात कधी तिळमा-
त्र तिरस्कार उत्पन्न जाहला नाहीं अशी मानापमानांत

(*) कितके ही लोक म्हणतात वा समजतात कीं स्वामी जी ने मूर्ति पूजनादि धर्मम-
ताचीं खंडने केलींत, म्हणून एथील समस्त शास्त्री आदि भिक्षु मंडल त्यांवर रा-
गवले होते। असल्या सशंकितांनी आमचे या प्रश्ना चे उत्तर विचारावें की तुकारामा-
नी तसें काहीं एक न केलें असतां त्या गरीब साधूची रामभट वाघोलकरास

तुल्यता ठेवोन तेनिरंतर परमोत्साह पूर्वक सर्वत्र वाग-
लेत आणि उत्तर हिन्दुस्तानांतील समस्त नगरांत त्यां
चे उपदेशाने आर्य्यसमाज जमलेन ॥

ई० सन १८७५ च्या जून जुलाई महिन्यात एथी-
ल प्रतिष्ठित आणि संभावित थोर विद्वान् आणि गृहस्थ
मंडळी चे निमंत्रणानुसार श्रीमान् स्वामी जी महाराज पु
णें मुक्का मी येऊन गेले होते तेसुमारीं एथें हिन्दू लोकांत
त्यांची पंधरा सोळा व्याख्याने ऐकण्यांत आलींत काय-
ती श्रोतृ जनाची दाटी आणि त्या अपूर्व वक्त्याचे उप-

रवे चांडाल प्रकृतीचे ब्राह्मणलोकानीं काय म्हणोन मार्गांत चालताना निरंतर पो
णमार केली ? आणि किमर्थ तस्ले लोक त्याच्याशी सतत छलबाजी करीत रा
हिले ? आणि काय म्हणोन त्यांनी त्याचे अभंग चंद्रभागेत बुडवलेत ? हीच-
दशा विलायतेमधें लूथर, कोपर्निकस, ग्यालिलियो आणि साक्रेटिस आदि देश-
सुधारक सत्पुरुषांची आपल्यास विद्वान् व बुद्धिवान् आणि पूर्णधर्मज्ञ प्रसि-
द्ध करणारे तेथील लोकानी करून सोडली पोबटीं हेच अपमान करणारे लोक
महान् मूर्ख, धूर्त, मत्सरी दांभिक आणि चांडाल ठहरुन अपमान भोगणारे तुका-
राम आदि या जगामधें देवासारखे परमपूज्य जाहलेत ॥

हाच न्याय प्राहण्या लोकानी श्रीस्वामी जीचा अपमान करणाऱ्या लोका वि-
षयीं सिद्ध केला, यालाच सदैव सर्वलोक ठीक समजतील, कारण कीं इतिहास-
क्रमावरून हेंच सिद्ध होते कीं चांगल्या मनुष्याच्या अस्तित्वांत त्याचे गुण घे-
णारे व समजणारे मनुष्य फारच कमती असतात परंतु दोषदर्शकांची संख्या सांगवत
नाहीं तेही खरे नवेत किंतु दांभिक ॥

देश आणि व्याख्यानाची धाटी वर्णन कावी, ते सगळीं येथील सत्पुरुषांनी स्वामी जी चा बहुतच उत्तम सन्मान केला- एक दिवस त्यांला गजारूढ करोन मोठ्या थाटानीं समस्त पुण्यनगरांत मिरवोन आणले होतें- परंतु येथील चटोर, दांडगे अविचारी, मतलबी घातुक, आणि मत्सरी लोकांला स्वामी जीचा तो सत्कार फारच असह्य होऊन त्यांलोकानी नाहीं करायचीं तीं सर्वकामें केलींत शेवटीं पुलिसाची मदद घ्यावी लागली याचा विशेष विस्तार आम्हास लिहिणे इष्ट नाहीं कारण कि ज्यांनी जसे केलें त्यांनी तसे प्रायश्चितही नीट भोगलें- परंतु पुण्या सारखे विद्या पीठ नगरांत लोकांनी असे अनुचित कर्म करून

आपला मोठच अलौकिक आणि उपहास करून घेतला ॥

प्रसिद्ध आहे कीं स्वामी जी मधें लुब्धतृष्णा अगदीन होतीम्हणोन ते निस्पृह आणि निर्लोभ पणोंनी बेधड़क आपलें चोख मत लोकांला देत असत, ही गोष्ट स्वार्थी लोकांस कशी आवडावी- कुलोपाध्यायाला यजमानास असें मत कळविलें तर आपलें पौरोहित्य बंद होईल अशी भीति असते, शास्त्री बावालामीं असा शास्त्राधार सांगितला तर लोकांमध्यें आपली अप्रतिष्ठा होईल, अशी काळजी असते, आणि ग्रहस्थाला आपण अमुक आचार्य सांगत असलेल्या आचारा प्रमाणें न वागलों तर चार लोकांत असलेलें आपलें वजन जाऊन सर्वत्र उपहास होईल असा वचक

असतो एतावता निर्भीडपणाचें आणि मनाला खरें वाटणारें मत घेऊन त्याप्रमाणें आचरण करण्याचें धैर्य व अदांभिकता कोणामध्येंच सांपडत नाहीं- तशा प्रकारचे पाश अथवा लोलुप होण्या सारखें कारण - स्वामीजीस काहींच न होतें तेव्हां यांशी आणि सांप्रत समयाचे भिक्षुक लोकांशी कसे पटावें- एतदर्थ त्यां लोकांनी जसा चहूंकडे स्वामीजीशी विरोध केला, त्यापेक्षा काहीं जास्तच प्रकार येथील लोकांच्या दृष्टिगोचर झाला, असल्या लोकांची अशी असद् बुद्धी असतां त्यांची पाठ थोपडणारे येथील नामांकित तीन पुरुषाला पाहून आमचे चित्ताला बहुत खेद वाटतो त्यांतही निबंधमालाकार सर्वोपरि म्हणावे लागतात ॥ वर लिहिले तीन ग्रहस्थांत प्रथम प्रोफेसर रामकृष्ण गोपाळ भांडारकर यांचा आक्षेप आणि शंका नुस्त्या तोंडातोंडी निघाल्या होत्या सबब त्यांचे मत त्यांचे जवळच राहिलें समजावें। द्वितीय आक्षेपक के० वा० विष्णुशास्त्री पंडित यांनी आपल्या इंदुप्रकाशांत एकदां स्वामीजी च्या विरुद्ध काहीं लेख लिहिला होता परंतु पुढे त्यांला स्वामीजीची जाडी विद्वत्ता आणि तपोबल समजून ते लवकरच वाटेवर आलेत पुनः त्यांनी तसें काहीं एक केलेही नाहीं " इतकेंच नाहीं, तर त्यांच्या तोंडून आम्ही स्वामीजींची अनेक वेळां स्तुती आयकली व तदनंतर त्यांनी निरंतर आपले इंदु-

प्रकाशांत अमदाबाद आदि नगराकडे स्वामीजीला संप्राप्त झालेला मान व सुयश, सविस्तर लिहून प्रकाशित केलें आणि आमच्याशी समक्ष भाषणांत ही त्यांनी स्वामीजी विषयीं आपली परमपूज्य बुद्धी दाखवली- येणें करून विचारले पाहिजें कीं इंदुप्रकाशाचे संपादक, शास्त्रीबुवाची विचारशक्ती कितीक शुद्ध व प्रशंसनीय होती, पुनः समजलें पाहिजें कीं आरंभी लोक स्वामीजीला कशे समजून बसत होते मग शनैः शनैः त्यांची बुद्धी त्यांविषयीं कशी पालटत होती, असा प्रकार अनेकांचा पाहिला गेला, याचें यथार्थ वर्णन ठाणें येथील सूर्योदयाख्य पत्रांत बघणें असेल त्यानी बघवें। आतां राहिले तृतीयपुरुष कै० वा० दुसरे विष्णुशास्त्री (*) चिप्लोणकर (निबंधमालेचे संपादक) यांचा स्वयं मरोत्तर स्वामीजी वर एक सारखा कटाक्ष चालू होता हे थोर विद्वान् असून दीर्घ द्वेषे आणि न भूतो नभविष्यति मधले स्वामीजीचे विरोधी असत यद्यपि या काळीं ते दोघ राहिले नाहींत परंतु त्यां उभयतांचे लेख समक्ष विद्यमान आहेत, त्या वर समालोचना केली पाहिजे। कारण कीं चिप्लोणकर (निबंधमालाकार) याणी अनेकांच्य निंदा आणि आक्षेप स्वामीजीवर केलेत याविषयीं उदासीन राहणें अ-

(*) हे गृहस्थ स्वामीजी हून ३ वर्ष पूर्वींच वारलेत याचा ही अम्हांस शोक अधिकतर आहे-जर . स्वामीजी महाराजाचें मरण काला पावे तो वांचते तर या समयीं अवश्य शुद्ध होऊन जाते त्यांचे सकलंक मरणा या चा शोक अम्हास अति दुःख

म्हास अप्रशस्त वाटत नाहीं, इतकेंच कायतें कर्तव्य आतां आम्हास करणे अवशिष्ट राहिलें आहे तितके करोन आम्ही हा आपला ग्रंथ आटोपतों ॥

असा ऊह करून पुढें बहुत काहीं या बद्दल आपला यथावत् विचार आणि विवेक कर्तां कर्तां शेवटीं लोकहितवादी ने आपला हा निर्णय सिद्ध केला कीं चिप्लोणकर बुवा मधें प्रथमोक्त विष्णुशास्त्रीजी सारखी विवेचनाशक्ती न होती अथवा यथार्थ करणें वा लिहिणें त्यांला इष्टच न होतें किंवा तसें केल्यानी घोरविपत्ती आपले आंगावर येईल अशी कांही दशहत आणि वचक त्यांच्या चित्तांत वागत होती; सबब ते समस्त विघ्न वृंदाहून विपरीत वागले। कहीं च कोनसो श्रीमान् स्वामीजी महाराजाची जशी काहीं बढे जाणो ह्यायची ती त्यांच्या अस्तित्वकालीं सर्वत्र या भारतवर्षांत पूर्णपणें होऊन त्यांच्या मागेंही तशीच सदोदित कीर्ति त्यांची या जगावर होऊन राहिली आहे आणि पुढेंही निरंतर ती उत्तरोत्तर वृद्धिंगत राहील असा विवेकीजनास त्या योगीश्वराचें निष्कपट काम असल्या मुळे पूर्ण विश्वास आहे। अस्तु पुढील लोकानी आमचे परममित्र चिप्लोणकर बुवा सारखें अविवेक आणि साहसाचे काम कदापि सहसा करूनये कारण कीं तसें करणारा पुरुष स्वयं कलंकित होऊन तो आपल्या वंशीलाही कलंकित करतो यास्तव असले काम कदापि स-

द्बुद्धीचे म्हणावत नाहीं, असा सिद्धांत आहे ॥

जसा गजेंद्रारूढ चक्रवर्त्तीच्या स्वारीचा गज, ग्रामसिंहाच्या भोंकल्याने किंचित् मात्र डगमगत नाहीं तसाच आमचा हा परमस्तुत्य महादिग्गज, वर लिहिलेले लोकांच्या नानारूप कुचेष्टेने क्वापि डगमगला नाहीं- असले जगत्पूज्य महानुभावाशीं आमचे पुण्यासारखे परमसभ्य नगरांत कदापि कोणी असें छल केलें न पाहिजे होतें परंतु कुटाळ, स्वार्थी आणि मत्सरी लोकानी आपल्या बरोबर या नगरालाही अत्यंत कलंकित करोन सोडिलें। अस्तु ज्या ग्रामामधें सूज्ञाची बहुतशी घरें असतात तेथें माहारवाडी ही असते असें समाधान करोन घेतलें तरी ही गोष्ट फार वाईट जाहली म्हणोन एथील बहुतेक सज्जन आणि विद्वान् लोकानी स्वामीजी जवळ जाऊन आपला बहुतसा खेद दर्शिवला परंतु धन्य तो तपोनिधी, ज्याचें धैर्य किंवा गांभीर्य किंवा शौर्य- यायोगाने लवमात्र कच्चरलें से कोणाच्या पहाण्यांत न आलें। अरे जो पुरुष रात्रंदिवस भारतवर्षीय मनुष्य मात्राला ऐहिक व पारमार्थिक पूर्ण सुख कसे प्राप्त होईल या चिंतेंत निमग्न राहून उपदेश करे आणि ज्यांच्या समस्त येताहाणी रामानुज, कमलनयनाचार्या सारखे मी मी म्हणविणारे विद्वानाची फें फें उडाली, त्यास अज्ञ वा प्रमादी समजणारे वा समजविणारे कोण कसे काय

शहाणे वा चतुर होत याचा तरी तुम्ही कोणी काहीं वि-
चार करा- यानंतर येथील एका उद्योगी पुरुषानी स्वा-
मीजीचे व्याख्यान माळेचीजी टिप्पणी तयार केली
आहे तीवरोन स्वामीजीच्या प्रौढ व स्वतंत्र विचाराची
व तर्क शास्त्रीची कमाल तेव्हांच समजते ह्मणोन निला-
वधा जेणे करोन शांती होय॥
विलायते मधें विद्या वा बुद्धि चे सागर आडामस्मिथ, बे-
कन मिल्ल वगैरे महा पंडित धुरीराजसे होऊन गेलेत,
आणि ज्या प्रमाणे पूर्वी आपल्याकडे कणाद, गौतम किं-
वा शंकराचार्यो सारखे वेदवेदांगपारग व धर्मसंस्थापक
होऊन गेलेत त्यांच्या तोडीची ही स्वामीजींची मूर्ति हो
ती असे म्हणायांत आम्हास लवमात्र शंका वाटत ना-
हीं॥
एवंच जाणालें पाहिजे कीं असले सत्पुरुषरूप सुवर्णा
च्या परीक्षणार्थ आमचे एथील चिप्लोणकरा सारखे म-
त्सरी पुरुष, घनश्याम शिला (कसौटी) होत, त्यांवर आ-
मच्या सुवर्णाची नीट पारख होऊनतें चोख ठहरलें,
ज्यास चाह असेल त्यानी संग्रह करावा- इत्यलम्॥
बंधुगण- स्पष्टार्थ इसलेख लोकवादी का यह है कि
श्रीमान् स्वामी दयानंद सरस्वतीजी महाराज इसकाल-
में ऐसे अद्वितीय विद्वान् बुद्धिवान् और ज्ञानवान् व
धर्मात्मा तपोनिधी हुए कि जिन्होंने एकाकी समस्त भ-
रतखंड में चलफिरकर समस्त शास्त्री पंडित विद्वान्

और जैनी ईसाई मुसल्मीनान आदि यावत् मतवादि-
यों को शास्त्रार्थ के द्वारा परास्त करके उनके मतों को मि-
थ्या और अपने वैदिक मत को सत्य व सनातन सिद्ध-
कर दिखाया। तथैव इन्होंने अपने प्रशंसित वेदों का
ऐसा सभ्यमान्य ठीक२ भाष्य बनाया कि जिनसे हमारे
परममान्य वेदों का वह कलंक साफ छुट गया जोकि
सायन महीधरादिकृत भाष्यों से उनको लगाथा। इसी
प्रकार स्वामीजी महाराज की बनाई हुई वेदभाष्य भू-
मिका ऐसी परमाद्भुत वस्तु है कि जिसके अवलोकन से
वेद और धर्म विषयक किसी की कोई भी शंका शेष नहीं
रहती इतनाही नहीं किंतु वेदों का प्रताप और महत्व भी
सबके चित्तमें अच्छे प्रकार प्रकाशित होकर उनकी
श्रद्धा अपने वैदिक धर्म पर जमजाती है। ऐसे सर्वो-
त्तम वैदिक धर्म की इस देश में पामाली होने का का-
रण-पौराणिक धर्म है, वह केवल दो हज़ार वर्ष से
यहां चल हुआ सभी से यह देश, दुर्दशा में पड़गया
है, इस कारण मूर्ति पूजनादि अवैदिक धर्म का परित्या-
ग और अपने सनातन धर्म का स्वीकार करे बिना अ-
ब कभी भारत वर्षको अवस्था यथापूर्व सुखप्रद नहीं
हो सक्ती, ऐसी अहर्निश चिंता स्वामीजी के चित्त में
रहती थी और उसी के अनुकूल उन्होंने समस्त उद्योग
परिश्रम और उपदेश करके सबको जागृत किया। इसी
कारण वे सर्वत्र सबको परमप्रिय और पूज्य हुए, और

इसी से यहां के क्या राजा क्या प्रजा अर्थात् लाखों मनुष्य उनके अनुयायी होकर उनकी प्रशंसा में प्रवृत्त होगए, अतएव यहां के अनेक छोटे बड़े नगरों में उनके समाज स्थापित होगए अतएव उनकी सुयश-पताका सातोसमुद्रों के पार फहरा रही है अतएव उनका यशोदुंदुभी पाताल (अमेरिका) पर्यंत ठंठना रहा है अतएव उनको सबलोग अमर कहते हैं अतएव उनके यावत् गुणों की प्रशंसा में सैकड़ों मन कागद रंग गया और रंगता जाता है अतएव उनको भारतवर्ष के परम सुयोग्य विज्ञवरों से पूर्ण सन्मान मिला ॥

यद्यपि इधर विष्णुबाबा ब्रह्मचारी तथा गुजरात में स्वामीनाराय इन्हीं दिनों अच्छे साधू होगए परंतु इनको नहीं पाते- जैसे विलायत में विद्या व बुद्धि के सागर अडमस्मिथ- वेकन- मिल्ल वगैरे पंडित धुरीण होगए और जैसे इधर अपने यहां कणाद गोतम और शंकराचार्यादि वेदवेदांग पारग हुए, ठीक उनके जोड़ीको यह मूर्ति थी, ऐसा कहते हमको अणुमात्र शंका नहीं होती- परंतु इनके इस महत्व समझनेकी जिनको विद्या वा बुद्धि परमात्माने नहीं दी उन्होंने अथवा मत्सरी स्वार्थी और चटोर ब्राह्मणों ने केवल अपने पापी पेट वा स्वार्थ वा प्रतिष्ठादि के विचार पर उनके साथ जैसा काशी आदि अन्य नगरों में विरोध

किया वैसाही बरन उससे कुछ अधिक पूनावालों नेभी क-
रके इस परम सुप्रसिद्ध सम्राट् पुण्यनगर को कलंकित कर-
लिया - यदि कहें कि ऐसा नहीं किंतु धर्म की हानि देखकर उ-
पद्रव किया, तो यह उनका दंभ है धर्म के बचाव के लिये
ताली और गाली का देना अथवा धोबी के गधे को सजा
कर पालकी में चढ़ाना प्रतिष्ठित कर्म नहीं कहाता-जै-
से वेदशास्त्ररूपशास्त्रों से स्वामीजी तुमसे लड़कर तुमको
पराप्त करते थे उसी प्रकार वाग्युद्ध करके तुम भी उन-
को परास्त करते, सो तो कहीं किसी एकसे न हुआ, शास्त्रा-
र्थ में जब रामानुज कमलनयनाचार्य सरीखे बड़े२ अ-
भिमानियों की क्षणमात्र में कलई उड़गई और वे हक्का
बक्का से होगए तो उनके पिछलगू तुम बेचारे भला क्या
कर सक्ते हो राजा के मरने वा हारने से सबकी हार जै-
से हुई कहाती है वैसी व्यवस्था तुम्हारी है कहो
अब व्यर्थ गाल बजाए क्या होता है॥

फिरभी हमको इनके इस असभ्य कर्मपर कुछभी शोकवा
आश्चर्य नहीं क्योंकि इतिहास वेत्ता पुरुष सब जानते
हैं कि देशसुधारक साधू और विद्वानों पर सदैव ऐसी
और इससे भी अधिक आफतें आती रही हैं उन सबको
झेलकर कामकर लेने वाले ही पूर्ण पुरुष कहाते हैं और
वेही सदा सबको स्मरणीय और पूज्य होते हैं इसपर दृ-
ष्टांत तुकाराम साधू आदि का देकर लोकहितवादी ने लि-
खा कि हां हमको पूना के उन तीन नामी पुरुषों पर अ-

(२ ...त० ...

...ामीजी

विवे... ...नृऐसे

...ं ...न बंबई में थे

...छ पंडित राम-

...ैसे ठठुगढ़ निवासी पंडित पुलानीलालजी थे, फिर कि-

...ी-ये महाशय भी स्वामीजी महाराज से बड़ाभारी वि-

...ध रखते थे- एक दिवस राजकीय कार्यवश यह ग्रंथ-

...थकार उनके ग्राम में पहुंचा - ...कि वह कौनसा वैदि-

...ापसे हमारे पंडितजी मिलने का ... होता है तब शास्त्री

...ैने कहा कि बड़े आनंद की बात है ...ने लगे, स्वामी

...धीन को सायंकाल के अनंतर अवकाश हो सकता ...ई वे-

तदनुसार पंडितजी ७ बजे रात्रि पर आये, वास्तव्य में

उस समय पंडितजी की समझ यही कहती थी कि-

स्वामीजी का सब काम अनर्थ कारक हो रहा है परि-

णाम में रात्रभर की जुटंत में पंडितजी परम मुग्ध हो-

कर धन्यवाद देने लग गए उसदिनसे उन्होंने इस...

शरीर के साथ अपना अतिशय प्रेमभाव प्रकाशित कर

रक्खा है अहर्निश बेधड़क स्वामीजी ... ...बालकि-

वेत्र वर्णन कर रहे हैं ...ा पूछने हैं और आप बांच...

डित उमादत्तजी ... ...भा और शास्त्रार्थ की ...

ग्रंथ कहीं आपके दृष्टि पड़गया।

त्यंत शोक है जिन्होंने पू[illegible] स्वामीजी से विरोध [illegible] उपद्रव करने वालों का प[illegible] स्वामीजी को वैसाही बुराबताया जैसा कि ऊपर[illegible] उनमें से एक तो ज़बानी बक[illegible] ने अपने रंदुभका पा में एकवार बहुत कु[illegible] लेख लिखते तो लिखडाला परंतु पीछे से वे [illegible] शा में आकर स्वामीजी की प्रशंसा में प्रवृत्त होकर निर्मल होगए इसलिये उनके मुख की कारोंच मानों धुलगई - अब रहगई परमे शोच्य दशा, निबंधमाला के संपादक पं० विष्णु शास्त्री चिप्लोणकरजी महाशय की इनकी बुद्धिपर बहुत कुछ विचार करते २ स्पष्ट करदिया कि इनमें भला बुरा जानने वाली विवेचना शक्तिही नहीं थी, अथवा वैसा विवेक करना उनको इष्ट न था, अथवा वैसा करने में उनपर कोई आफत आपड़ने का उनको भारी डर था, कुछ हो स्वामीजी महाराज की जैसी कुछ बड़े आशा होने की थी वह उनकी विद्या व तपोबल से अच्छे प्रकार समस्त भारतखंड में उनके समक्ष होगई और वे अब नहीं रहे तोभी निर्मल सुकीर्ति उनकी चहुं ओर फैल रही है और उनका उपकार स्मरण इस भारतखंड पर यावत् भूमंडल रहेगा - वास्तव्य में उनका उपदेशादि सब काम प्राचीन महर्षियों के समान इस काल में होगया ।। धन्य वह जननी जिसकी कुक्षी में ऐसा यह अमोल्य भारत रत्न उत्पन्न हुआ इति ।।

...ों में चास ...
...स लेकर घोटा ...
...लिखे ...न अल्पज्ञ ...
...ते रहे, ...की यही युक्ति
...बहु... असभ्य ... है ... शऊर आ...
इसी तरह धूर्तता के ... , गाल...
प्रजा की आंखमें धूर ... जा...
असलियत को इसी तरह पर छिपा...
मूर्ख हीन दीन प्रजा का शिकार ...
सो अब इस उन्नीसवीं शताब्दी में
...ली नहीं है, पढ़े लिखे लोगों की
...भुज की सी बे सिर पैर की बातों में ...
...हो सकती हमको दयानन्द से कुछ प्रयोजन
नहीं न हम सर्वांश में उनके मतके पोषक हैं न हम
को किसी तरह का वास्ता उनसे है, परंतु इतना कहेंगे
कि दयानन्द महज़ तनहा फक़ीर आदमी है सच्चे जीसे
देश की भलाई चाहता है उनकी ज़ात से मुल्क को बहु
त ... लाभ पहुंचा है, चतुर्भुज तथा इस समय के
...या सिवा अपना मतलब निकाल लेने
...को कौनसा लाभ पहुंचाते हैं, जिसे
...प्रत ग्रन्थ अनुमानि न
...संवत् १९३१ विक्रमी॥

रामलाल

स्थान बं

जिन दिनों संवत् ३२ वि० में स्वामी
तो रानी के रायपुर के रहने वाले
लाल षट्शास्त्रीजी थे। सब ठौर व
हम मूर्ति पूजन, वैदिक मंत्रों के प्र
दवेंगे- एकदिन सभाके बीच स्वामी
नी प्रतिज्ञा के अनुसार बताइये
क मंत्र है जिससे मूर्तिपूजन सिद्ध
जी पुराण और स्मृतियों के श्लोक सुना
जीने कहा ये सब अमान्य ग्रंथों के वचन हैं को
दिक प्रमाण याद होय तो कहिये तब शास्त्रीजीने मनु-
के वे श्लोक सुनाये जिनमें देव और प्रतिमा आदि श
ब्द आये हैं, स्वामीजीने उनका अर्थ वास्तव्य में वह
नहीं यह है, ऐसा कहकर समझाया और फिर कहा कि
वैदिक प्रमाण बोलो, फिरभी शास्त्रीजी
के बहुत से प्रमाण कहने लगे वैदि
भी न बोले तब सभाके मध्यस्थ
रामलालजी -
र

नहीं " आग्रान्ग्रष्ठः कोविद्वानाचष्टे," के सदृश आप
शास्त्रार्थ कर रहे हैं इतने पर भी जब बहुत विलंब
तक उन्हों ने ठीक उत्तर नदिया तब सर्व संमत्यनु-
सार भाऊजी शास्त्री सभाधीश ने सभाका विसर्जनकि-
या- ... एक मूर्ति प्रकाशक ना-
म... प्रसिद्ध किया कि स्वामीजी मुक
... परंतु वास्त... ने इस शास्त्रार्थ
...दिवस तक स्वामीजी महाराज बंब-
... रहे थे उस समय तक कभी किसीने
... से निर्मूल बकना और लिखना मा-
... पंडितों का महत् पांडित्य है ॥
...रकने लिखा कि यही महाशय मु-
...र मिलगए तो उन्हों ने मेरे प्रथम
...पष्ट कहा कि भाई सत्य वार्ता तो यही
... सन्यासी हैं उनको किसी की कुछ
...न्हों ने वेदादि सच्छास्त्रों का बहुकाल
...कि प्रकार विचार के साथ अध्ययन किया
... सामर्थ्यवान् और अतिशय बुद्धिवान् हैं, उ-
... यावत्कथन शास्त्रानुसार सत्यही सत्य है पर-
...री शक्ति नहीं कि उनके समान कुछभी जग-
... कहसकें क्योंकि गृहस्थहैं, हमको अनेक बातों
की अपेक्षा रहती है फिर हम स्वामीजी के समान
कैसे कुछ कहसक्ते हैं संसार में कुछ औरही क्यों

(१) इतनेही लोग सामने हो-

॥ अथ विदुष्मती माहात्मे रह पश्चात् निर्वा

॥ हरिश्चंद्र चंद्रिका मासक्रम

॥ सन

पत्रमथा

[काशीस्थानबु ...क्षित

बुभुक्षित दीक्षित, गप्प पंडित, रा
गोपाल शास्त्री, माधव शास्त्री, आदि
खाते तथा दीक्षितपुत्र सर्वभक्षके
की नजबीज़ कराते हुए गप्पा उड़ाते
में महाशय(*) कोतवाल(अर्थात्
वाला) आकर चौक मेंसे दीक्षित
महाशय। काहो- बुभुक्षित दीक्षित
क्षित।(इतना सुनतेही हाथ का पा...
कोण आहे?(महाशय आगे बढ़ता है) वाः
...आहेस काय? काय बाबा आज किती ब्राह्म

(*) जैसे घंटी का शब्द सुनतेही मछलियां पानी मेंसे दौड़कर चु
ये ऊपर आजाती हैं उसी प्रकार इस कोतवाल के शब्द की प्रतीक्षा
र ये काशी वाले सब प्रकार के विद्वान् रहा करते हैं और ... चे इस तीन
सतकर्म की सेवा और खुशामद भी ये लोग केवल निमंत्रण के ...
करते हैं- इसका बहुत कुछ निदर्शन इसी नाटक में आया है॥

में उन्होंने रचा छोटासा

कर उमादत्तजी के समीप भेजा

भी सुनाया- नाम इस ग्रंथ का "स-

न्मतेन्दु,, आपने रक्खा है॥

ग्रंथ केवल पं० उमादत्त मति खंडक श्री न-

र्मदेश्वर हमारे परमप्रिय बाजपेयीजी के आल-

की पुस्तक रचना पूर्ण संदर्भक है अतः उसके कुछ

से डर कर भाग न दिये दिये हैं॥

के पीछे बहुत मतिबोधितोहं- निःशंक मत्र स्फु-

ई में विराजमान पूर्णाम्॥ ज्ञात्वा विचार्य तदुदीरित

च्छू नहीं की, चीहत्यं नवस्त्व पर मेव विभाव्यते मे॥१॥

ब आज कुछ नेतु मत्सरेण न दोषयुक्तेन हृदा वदा-

मि॥ विद्वज्जने मध्यधिया विचार्य यत्सत्य युक्तं त-

के पासनीयम्॥२॥ श्रीमद्दयानन्द सरस्वती गृह्ने-न

म० के उत्तर में भवद् गृह्ने तथा॥ मध्यस्थ बुद्ध्या तव

है कि स्वामीजी लेख विद्वन् विलिखामि किञ्चित्॥३॥

पर वा नहीं उतो विरचितवान् सन्मतेंदु नामानं॥ग्रंथं

तक स्वनीमत्तं यत्र मतानां न निर्णयः क्वापि॥४॥ श्री

बड़े दयानन्द सरस्वती कृते श्रीवेदभाष्यार्क समप्रकाशे

नका दृढत्वाह्रिज सन्मतेंदुः सर्वात्मना धूसरतां विधत्ते

नु हम ॥५॥ इत्यादि

न में इति प्रमाणान्तराणि

फली हुई है उसके विरुद्ध क
जांय तात्काल आ जीविका जात
ह कैसे होय ॥ दे० हि० अ० ॥

(३)

मौसक

॥ पंडित चतुर्भुज और स्वामीदयानन्द ॥

यह पंडित चतुर्भुज वर्षमें एक बार यहां माघ मेला के दिनों में आय दयानन्द के विरुद्ध अपने मनकी जो कुछ चाहते हैं बकझिक जाते हैं, चाहो उसका कुछ असर हो या नहो, कोई समझदार उनकी बात पर कान दे या नदे, पर ये व्यर्थ की टांय २ करने से नहीं चूकते सो क्यों, अवश्य इसमें चतुर्भुज का कोई गुप्त मतलब है यह तो प्रसिद्ध बात है कि चतुर्भुज में दयानन्द की सी विद्या नहीं है तब ये अपने को किस तरह संसार में उजागर कर रोटी कमा खायं, कुछ न था यही एक युक्ति सूझ गई ये अपने को राज पौराणिक कह कर प्रसिद्ध किये हैं पर पूछना चाहिये कि यह पंडित राजकी उपाधि आपको किसने दी है, शक्रोपि लघुतां याति स्वयं विख्याप यन् गुणान् ॥ इसी वह कि जहां कहीं पड़

धूर्त ब्राह्मणों को मिलाय सौ पचास आदिमियों को कहीं पर इकट्ठा कर हू हा गाल घंघोटा कर कराय चम्पत हुए, इन दिनों के अशिक्षित अल्पज्ञ ब्राह्मणों ने अब हिन्दू मतके क़ायम रखने की यही युक्ति सो चली है कि न कुछ विद्या का काम है न शऊर आलियाक़त चाहिये, बस इसी तरह धूर्तता के बल, गाल घंघोटा कर कराय प्रजा की आंखमें धूर झोंकते जायं और हिन्दू धर्म की असलियत को इसी तरह पर छिपाते हुए मन मानना मूर्ख हीन दीन प्रजा का शिकार कर २ मारते खाते रहें सो अब इस उन्नीसवीं शताब्दीमें यह बात चलने वाली नहीं है, पढ़े लिखे लोगों को किसी तरह चतुर्भुज की सी बे सिर पैर की बातों में श्रद्धा नहीं हो सकती हमको दयानन्द से कुछ प्रयोजन नहीं न हम सर्वांश में उनके मतके पोषक हैं न हम को किसी तरह का वास्ता उनसे है, परंतु इतना कहेंगे कि दयानन्द महज़ तनहा फक़ीर आदमी है सच्चे जीसे देश की भलाई चाहता है उनकी ज़ात से मुल्क को बहुत कुछ लाभ पहुंचा है, चतुर्भुज तथा इस समय के निर्विद्य ब्राह्मण सिवा अपना मतलब निकाल लेने के देश या जनपद को कौनसा लाभ पहुंचाते हैं, जिसे सोच समझ हम अपनी पक्ष पात शून्य अनुमति न प्रकाश करें ॥ माघ शुक्ला ५ संवत् १९३९ विक्रमी॥

(५)

विवेकी विद्वान् ऐसे होते हैं

जैसे ठठ्ठगढ़ निवासी पंडित पुनानीलालजी वाजिपेयी- ये महाशय भी स्वामीजी महाराज से बड़ा भारी विरोध रखते थे- एक दिवस राजकीय कार्यवश यह ग्रंथकार उनके ग्राम में पहुंचा- तहां लोगों ने कहाकि आपसे हमारे पंडितजी मिलने की इच्छा रखते हैं- मैंने कहा कि बड़े आनंद की बात है परंतु इस पराधीन को सायंकाल के अनंतर अवकाश हो सक्ता है- तदनुसार पंडितजी ७ बजे रात्रि पर आये, वास्तव्य में उस समय पंडितजी की समझ यही कहती थी कि स्वामीजी का सब काम अनर्थ कारक हो रहा है परिणाम में रात्रभर की जुटंत में पंडितजी परम मुग्ध होकर धन्यवाद देने लग गए उसदिनसे उन्होंने इस शरीर के साथ अपना अतिशय प्रेमभाव प्रकाशित कर रक्खा है अहर्निश बेधड़क स्वामीजी का प्रभाव सर्वत्र वर्णन कर रहे हैं- इतने में यहां के प्रसिद्ध पंडित उमादत्तजी का बनाया हुआ सन्मतेंदु नामक ग्रंथ कहीं आपके दृष्टि पड़गया तो आप बहुत रिव-

न्न इस और उसके खंडन में उन्होंने एक छोटासा ग्रंथ संस्कृत में बनाकर उमादत्तजी के समीप भेज दिया पुनः मुझेभी सुनाया- नाम इस ग्रंथ का "सन्मतेंदुस्वर्भानु,, आपने रक्खा है॥

उक्त ग्रंथ केवल पं० उमादत्त मति खंडक ही नहीं है किंतु हमारे परमप्रिय वाजपेयीजी के आंतरीय सद्भावकाभी पूर्ण संदर्शक है अतः उसके कुछ श्लोक नीचे निदर्शनार्थ लिखदिये हैं॥

गोपालराव हरिणा प्रतिबोधितोहं- निःशंक मत्र श्रुति बोधितब्रह्म पूर्णम्॥ ज्ञात्वा विचार्य तदुदीरितमीड्य देहं- वेदं नवस्त्व पर मेव विभाव्यते मे॥१॥

न वैर बुद्ध्या नतु मत्सरेण न रोषयुक्तेन हृदा वदामि॥ विद्वज्जने मैध्यधिया विचार्य यत्सत्य युक्तं तदुपासनीयम्॥२॥ श्रीमद्दयानन्द सरस्वती गृहे-न भोजनं मेस्ति भवद् गृहे तथा॥ मध्यस्थ बुद्ध्या तव सन्मतेंदु- विलोक्य विद्वन् विलिखामि किंचित्॥३॥

अल्पज्ञोमादत्तो विरचितवान् सन्मतेंदु नामानं॥ग्रंथं हानि निमित्तं यत्र मतानां न निर्णयः क्वापि॥४॥ श्रीमद्दयानन्द सरस्वती कृते श्रीवेदभाष्यार्क समप्रकाशे॥ उमादिदत्तद्विज सन्मतेंदुः सर्वात्मना धूसरतां विधत्ते ॥५॥ इत्यादि

इति प्रमाणानराणि

(१)

॥ ...ती माहात्म्यम् ॥

॥ हरिश्चंद्र चंद्रिका मास अप्रेल ॥

॥ सन् १८७५ ई० ॥

[काशी स्थान बुभुक्षित दीक्षित की बैठक]

बुभुक्षित दीक्षित, गप्प पंडित, रामभट्ट, चंबूभट्ट, गोपाल शास्त्री, माधव शास्त्री, आदि लोग पान बीड़ा खाते तथा दीक्षितपुत्र सर्वभक्ष के हाथ भांग बूटी की तजवीज़ कराते हुए गप्पा उड़ाते बैठे हैं। इतने में महाशा (*) कोतवाल (अर्थात् निमंत्रण करने वाला) आकर चौक मेंसे दीक्षित को पुकारता है॥

महाशा। काहो– बुभुक्षित दीक्षित आहेत ? बुभुक्षित। (इतना सुनतेही हाथ का पान रख कर) कोण आहे ? (महाशा आगे बढ़ता है) आः महाशा न् आहेस काय ? काय बाबा आज किती ब्राह्मण

(*) जैसे घंटी का शब्द सुनतेही मछलियां पानी मेंसे दौड़ कर चुगा के लिये ऊपर आजाती हैं उसी प्रकार इस कोतवाल के शब्द की प्रतीक्षा में निरंतर ये काशी वाले सब प्रकार के विद्वान् रहा करते हैं और इस तीन कौड़ी के आदमी की सेवा और खुशामद भी ये लोग केवल निमंत्रण के हेतु असीम किया करते हैं– इसका बहुत कुछ निदर्शन इस नाटक में आया है॥

ब्राह्मण आमच्या तडात देतोस ? सरदारनी किती
काय सांगितलेत (थोड़ा ठहर कर) कायरे ठोक्या चे
कमन्यांत सहस्त्र भोजन कुणाच्या यजमाना चे चाल्लें
आहे ? महाश। दीक्षित जी। आज ब्राह्मणाची अशी
मारामार झाली की मी काहीं सांगू सकत नाहीं कोणतो
पचड़ा।। बुभुक्षित। खरेच काय मारामार झाली ? अच्छा
ये तर बैठकेंत नीट सांग व्यवस्था। आण काहीं ब्रा-
ह्मण आणलेस किंवा हात हलवीत च आलास ? म-
हाश। (बैठक में बैठकर जल मांगता है) दीक्षित जी
थोड़स पाणी द्या, तहान बहुत लागली आहे। बुभुक्षि
त। अच्छा भाई थोड़ासा ठहर अत्तां उनातून आला
आहेस बूटी ही वणतेच आहे पाहिजे तर बूटीचे-
च पाणी पी।। अच्छा सांग तर कसे काय ब्राह्मण
किती मिळाले ?-महाश। गुरु, ब्राह्मण तो आज पच्ची
स निकाले, चार लोग आपके शागीर्द हैं कि और कि-
सीके। चंद्रभट्ट। (बड़े आनंद से) क्या भाई सच कहो-
२५ ब्राह्मण मिळाले ?-महाश। हो गुरु। पंचवीसब्रा-
ह्मण तर नुस्ते सहस्त्र भोजनाचे, परंतु आज चे वसन्त
पूजे चे तर शिवायच- आणखीन सभे करतां तर पेच
लावलाच आहे। पण- गोपाळशास्त्री और माधवशा-
स्त्री। (घबड़ा कर) काय महाश पण कां ? सभेचे का-
म कोणा कड़े आहे ? आणखीन सभा कधी होणार ?
आं ? । महाश। पण इतकेच कि हा यजमान पाप न-

गरांत रहातो, आणि याला एक कन्या आहे ती गतभर्तृका असून सकेशा आहे आणि तीर्थस्थली तर क्षौर करावें अवश्य, परंतु क्षौरें करून कन्येची शोभा जाईल या करितां जर कोणी असा शास्त्रीय आधार दाखवील तर एक सहस्र रुपयांची सभा करायांचा त्याचा विचार आहे वथा कामांत धर्नुंदिल शास्त्रींनी हात घातला आहे। गप्प पंडित। आः तो ऐसी क्षुल्लक बात के हेतु शास्त्राधार का क्या काम है? इसमें तो बहुत से आधार मिलेंगे। माधवशास्त्री। हां पंडित जी आप ठीक कहते हैं क्योंकि हम लोगों का वाक्य और ईश्वर का वाक्य समान ही समझना चाहिये "विप्रवाक्ये जनार्दनः" "ब्राह्मणो मम दैवतं" इत्यादि। गोपाल शास्त्री। ठीक च आहे आणि जर कदाचित् असल्या दुर्घट कामानी आम्ही लोक दृष्ट्यानिंद्य झालों तथापि वंद्य च आहों, कारण श्रीमद्भागवतांत ही लिहिले आहे-"विप्रं कृतागसमपि, नैव द्रुह्येत कश्चनेत्यादि" गप्प पंडित। हां जी और इसमें निंद्य होने का भी क्या कारण? इसमें शास्त्र के प्रमाण बहुत से हैं और युक्ति तो हई हैं, पहिले यही देखिये कि इस क्षौर कर्म से दो मनुष्यों को अर्थात् वह कन्या और उसके स्वजन इनको बहुतही दुःख होगा और उसके प्रतिबंध से सबको परम आनंद होगा तब यहां इस वचन को देखिये "येन केनाप्युपायेन यस्य कस्यापि देहिनः

संतोषं जनयेत् प्राज्ञ स्तदेवेश्वर पूजनम्” बुभुक्षित।
और ऐसे बहुत से उदाहरण भी इसी काशी में होने आ-
ए हैं तथा काशी खंड में ही कहा है “येषां क्वापिगति
र्नास्ति तेषां वाराणसी गतिः” चंबूभट्ट। मूर्खतओर
में भी प्रमाण है “अथवा बाल लवनं जीवनाईन व-
र्द्धयेत्” तथा संतोष सिंधु का वाक्य “सकेशं वाहि सं-
स्थाप्या यदि स्यात्तोषदा नृणाम्” महाशु। दीक्षितजी
बूटी झाली- लौकर करा, अजून बहुत ब्राम्हण सांगा-
वयचे आहेत। बुभुक्षित। घे अत्ता घे, कहकर छानने
की तैयारी करते हैं। चंबूभट्ट।(इन सबों को अपने२
काम में निमग्न देखकर) बों मग महाशा आवेरीस
या तड़ाचे किती ब्राम्हण सहस्त्र भोजना चे, व वसन्त-
पूजे चे किती? महाशु। यंध्या सहस्त्र भोजना कड़े आणि
१० वसंत पूजे कड़े- माधव शास्त्री। आणि सभेचे?-
महाशु। सभेचे ता मी सांगीतलेल कि धनतुंदिल शा-
स्त्री चे अधिकारांत आहे, ते दोन तीन दिवसांनी बंदो-
बस्त करतील। गप्प पंडित। क्यों महाशु इस सभा में
कोई गौड़ पंडित भी है वा नहीं? महाशु। पंडित जी य-
ह बात छोड़ दीजिये इसमें तो केवल दाक्षिणात्य, द्र-
विड़ और क्वचित् तैलंग होंगे हां कदाचित् उक्त शा-
स्त्री जी एक दो सम्माति गौड़ों को लेना चाहेंगे तो हो
सकता है। गप्प पंडित। भाई माधव शास्त्री अब य-
ह सभा हमको दिलवाना आपके हाथ है। माधव

शास्त्री। हां पंडित जी प्रयत्न करूंगा। बुभुक्षित। (बूटी-पीकर जातेहुए महाशय के पीछे दौड़ कर) अरे महाशय २ दक्षिणा काय आहे। महाशय, चार अंगुली-) दिखाता हुआ जाता है॥

इत्यादि बहुत सा इनका उदरचरित्र दिखलाकर इस-के आगे हरिश्चंद्रजी ने इनकी बहुत कुछ शिश्नपरा-यणता सुष्ठु रीति से प्रदर्शित की है, जिससे स्पष्ट है कि ये विद्वज्जन इस प्रकार मुफ्त का माल चावश्कर वेश्याओं का नाच तमाशा और पारखी आदि दुर्व्यस-नों में भी खूब आसक्ती रखते हैं-ऐसी दशा में उनको भंगड़ी आदि कहना तो कुछ बातही नहीं क्योंकि इस-के लिये तो मानों वे वैदिक प्रमाण रखते हैं-हा-॥ शोक॥

(२)

॥ प्रयागस्थ हिन्दीप्रदीपांतर्गत काशीकी॥

(व्यवस्था की दुरवस्था)

॥ महाराज महामोह और कुलपांशनाचारी ॥

महामोह। आचारी जी आप तो जानते ही हैं मेरे महा-मोह का परदा फाश होगया सब कलई खुल गई अ-

ब लोग मेरा नाम लेते गालियां देते हैं तो अब आप कोई ऐसी व्यवस्था लिख दीजिये जिस्में अंधे, गूंगे हिन्दुस्तानियों में किसी तरह कुछ तो रोब क़ायम रहे। कुलपांशन। महाराज यह कौन सी बात है ख़ास कर बोरहे भोलानाथ की इस नगरी काशी में, अरे क़लम अपनी कागज़ अपना सुफेदी पर स्याही चढ़ाते क्या लगता है दक्षिणा मात्र होनी चाहिये- आप जानते हो "दाम करै सब काम" बाम्हनों की पोथियां टकसाल हैं, जैसा चाहो वैसा वचन गढ़ते जाओ- हम पर किसका आंकुस। महामोह। हां दक्षिणा तत्क्षण, न तेरह नगद न बाईस उधार, पर इतना समझे रहिये जो इस शुभ व्यवस्था पर दस्तख़त न करेंगे उनकी दक्षिणा आज से बंद। कुलपांशन। तो अब आप पंडितों को जमा कीजिये मैं व्यवस्था तैयार किये देता हूं। व्यवस्था। महाराज महामोह की आज्ञा है कि यह समय बड़ा नाजुक है इस्में दो बातों का ख्याल सब को रखना चाहिये- एक तो यह कि जात जाय, धर्म जाय, देश उजड़े, जगत् भर रसातल के तल में अंतर्ध्यान हो जाय, पर अपने मतलब का ध्यान न छूटे- इति प्रथमः कल्पः॥

दूसरे यह कि जैसे हो रुपया मिले, कहां का पाप, कहां का पुण्य, कहां का नर्क, कहां का स्वर्ग- कहो अधर्म को धर्म कहें, पाप को पुण्य कहें, दिन को रात कहें, कहो कौआ को हंस करदें और हंस को कौआ, केवल रुपया मि-

लता जाय- ईमानदारों का ईमान रुपया- दीनदारों का दीन रुपया- न बाप न भैया- सबसे बड़ो रुपैया "जले रूप्यं, स्थले रूप्यं, रूप्यं पर्वत मस्तके। व्यवस्था मूलकं रूप्यं, सर्वं रूप्यमयं जगत्- इति द्वितीयः कल्पः॥

महामोह। धन्य आचारीजी महाराज, यह व्यवस्था तो खा तिरखाह मेरे मतलब की है- लीजिये ३) दस्तखत कीजिये। कुलपांशन। तथास्तु। संमतिरत्राथै धोंधू शास्त्रिणः इदं पत्रं योन मनुते सपापीयान्। संमतिरत्रहाहूराम शास्त्रिणः- यह पत्र जो न माने सो पापी। संमतिरत्र उलूक भट्टस्य। पाप, पुराय का ज़िम्मेदार रुपया। संमतिरत्र भाऊ भट्टस्य। हमको भावा सोई साजा इस्में किसका साभा। संमतिरत्र बेदीन त्रिवेदिनः। जिनने हम को रुपया दीन, दीन हमारो उसने लीन। मन में भावा सोई कीन काहे का पांच काहे का तीन। संमतिरत्र कृतांत शर्मणः। कियो आज हम सब को अंत। तासो हमारो नाम कृतांत। संमतिरत्र क्षुद्रबुद्धेः। क्षुद्रबुद्धी ने यही ठाना। रुपये कैसी ताने गाना। संमति इस्में दुरात्मा शास्त्री की यथा नामस्तथा गुणः। संमतिरत्र कुक्कुट मिश्रस्य। दो रुपये में महीने भर घी खाय डंड पेलेंगे। संमति इस्में महामहो सोपाध्याय की। भगवान् करे ऐसी व्यवस्था रोज़ बना करे। महामोह महाराज की जैजैकार। संमतिरत्र गर्दभानंद चतुर्वेदिनः। तोंद पर हाथ फेरते हुए। सर्वं चौपट हुं फट् स्वाहा॥

(३)

॥भारतेन्दु वृंदावन॥

इनको महाराजा जम्बू ने संध्या पर फटकारा (फिर) इन्हों ने शैव वैष्णवों के विवाद में दोनों पक्ष से रिशवत ली। कायस्थों को बे तकल्लुफ़ क्षत्रिय बनाया। मांस न खाने पर इक्कीस जन्म पशुयोनि होने का उपदेश किया और अंत में देव मूर्ति का अदालत में जाना निर्दोषी ठहर कर सब जगत् में सदैव के लिये अपना काला मुंह कर लिया और साफ़ हिन्दूधर्म का पट्टा पलट दिया सो जुदा। धन्य काशी। धन्य वाराणसी। तेरे पंडितों पर कलियुग सवार। और तेरी व्यवस्थाओं से सारा हिन्दुस्तान बरबाद! लोग स्वामी दयानंद को केवल मूर्ति पूजन न मानने के कारण बुरा कहते हैं। पर इन काशी के पंडितों पर हज़ारों दयानन्द। किरोड़ों केशवचंद्र और अरबों औरंगज़ेब वार डालिये। स्वामी विरजानंदजी ने सच कहा था " कथं काशी विदुष्मती " पंडितो याद रखना " वयस्ते नरकं यान्ति यावच्चंद्र दिवाकरौ,, ॥

(४)

(बङ्ग पञ्चां ऽ म्रत)

।। काशी के पंडितों की क्या दशा होगी ।।

लो अब क्या बाक़ी रहा कहने को बड़े धर्म मूर्त्ति साक्षात् युधिष्ठिर के अवतार पाण्डित्य में अति प्रवीण बहुजाय तो वृहस्पति के भी कान काटने का दावा करें। बात २ में शिव शिव राम राम पर कुहराम मचा देवें। पर काम पड़े पर अपने देश के पूरे अहित बन जावें। थोड़ा रुपया कर दीजिये, लालच दिखाइये छल झूठ कपट सब पर स्पष्ट पड़ेंगे, बस फिर क्या है, वही हर गंगा, चाहे जिस बात पर व्यवस्था लिखवा लीजिये, हस्ताक्षर करवा लीजिये, यद्यपि हम इन लोगों के चरित्र पहिले ही जानते थे। आज फिर वही उनके स्वार्थरत स्वभाव का टटका उदाहरण यह मिला कि अभी जिन बाबू सुरेन्द्रनाथ बनरजी के कारावास और चीफ़ जस्टिस नोरिस साहब के विचार पर, सारे भारतवर्ष ने सन्ताप ज्वाला निकाली थी, धर्म पर हस्तक्षेप की पुकार की थी बाबू साहब के लिये सहानुभूति प्रकाश की थी, हा, इस सबके विरुद्ध, मिस्टर नोरिस के विचार की पोषकता और उनकी प्रसन्नता के लिये, काशी के ५३ पंडितों ने व्यवस्था लिख दी, ये कौन हैं। केवल छुट भइये पंडित ही नहीं किंतु काशी नरेश की धर्म सभा के विख्यात

शास्त्री हैं। इस व्यवस्था में यह प्रतिपन्न किया है कि मु-
हई व मुद्दाले की प्रसन्नता से मूर्ति का अदालत में जाना
कुछ हिन्दूधर्म की निन्दा नहीं है। छिः यदि मुहई मुद्दाले
अपनी२ अनभिज्ञता, स्वार्थपरता, दुराग्रहतादि किसी विशे
ष कारण से घृणित चेष्टा करे तो यह क्या धर्मबाधा नहीं
कहलायेगी, यदि ऐसा न होता तो नगर२ प्रति क्यों पुकार
मचती, इस से बढ़कर और कोई प्रमाण हस्तक्षेपता का
नहीं है। सुनते हैं कि यह सारी करतूत, राजा शिवप्रशाद
सितारे हिन्द की थी, जो हो, कुछ - आश्चर्य्य की बात न-
हीं है। क्योंकि यह अच्छे प्रकार प्रकाशित है कि राजा
साहब गौर वर्णो के परमभक्त हैं दूसरे आज दिन महारा
ज काशीराज के मुख्य परामर्शक भी हैं और पंडितों की
आज दिन यह दशा है कि दो रुपये मुट्ठी में लेकर खन
खना दीजिये फिर इन्हें चाहे जिसे ओर घुमा दीजिये
मन मानती व्यवस्था पर हस्ताक्षर करवा लीजिये
देशभर के पोथी पत्रों का नाम सुनलीजिये जब प्रस
न्न होंगे हां हां यथार्थ, सत्य, अमुक शास्त्री जी भी ऐ
साही कहते हैं इत्यादि माने छोड़ देंगे, और जब रुष्ट
होंगे तो अच्छे२ पंडितों के शुद्ध सत्य पक्ष पर भी धम
चोल मचा बातों ही बातों में टाल देंगे बरंच खण्डन
करने पर उपस्थित होजायंगे। जब यह दशा है तो इन
दिव्य मूर्ति विशाल बुद्धियों ने जो कुछ किया थोड़ाही
है। किन्तु अ जानिये महाराज काशिराज को क्या सूझ

कि अपनी वृद्धावस्था में, यह अपयश लिया। इस में संदेह नहीं कि सहवर्त्ती मित्रविलास के कथनानुसार काशी की नाक कटगयी!!! हा! स्वार्थ परता तूने क्या नहीं किया आगे इसके भारतमित्र का बहुत कुछ विचारांश लिख, प्रकाशित किया कि हा।।। ५३ पं० से किसी एक की भी बुद्धि इस समय सहायक न हुई सबने मिलकर काशी का कृष्णमुख करलेनाही उचित समझा॥

॥ इति काशी महात्म्य ॥

बंधुगण — देखा आपने काशी माहात्म्य - कैसा स्पष्ट काशी के विद्वानों के गुण, कर्म, स्वभाव का दिखाने वाला यह स्वच्छ आदर्श हो रहा है। जबकि इनकी यह दशा है तो फिर इनके पीछे चलने वाले "अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः" के समान इतर इस देश के विद्वानों वा अविद्वानों की लीला का कहना ही क्या है॥

अतएव गुणज्ञ जन इनसे घिन करके इन पर हृपोलशंखी कहावतों को फबाते हैं, अतएव महाराज भर्तृहरि जी आदि ज्ञानवानों ने "विप्रा कुमार्गे रताः - वेद विक्रय - जीविनः - धनार्जनार्थ मभ्यस्त विद्यामद विमोहिताः" आदि वाक्यावली इन ऐसों की गुण प्रशंसा में लिख छोड़ी हैं, अतएव समस्त विदेशीय अभिज्ञ जन हमारे इस भारतखंड को अहमकानहिंद अर्थात निर्बुद्धियों के रहने

का मुल्क कहने लग गये हैं, अतएव अविद्या, अनेक छल भूट, चोरी, जारी और जालसाजी आदि अनंत अनर्थ कारी काम तथा पातक, उपपातक, और महापातक आदि की वृद्धी होकर यह देश परतंत्रता को भोगता हुआ रसातल को जा रहा है॥

कहां तक लिखूं- इनकी असद् बुद्धि और अज्ञता का उदाहरण क्या इस से भी बढ़कर कोई और होगा कि इस देश और धर्म के परम विरोधी राजा साहब रूप-ने तिमिरनाशक तृतीय खंड में इनकी और इनके धर्म, कर्म, तथा वेदादि यावत् ग्रंथों आदि की अपार निंदा लिख समस्त देश देशांतरों में इनकी अपकीर्ति बढ़ावें, उन्हीं की ये लोग प्रशंसा लिखें और जो स्वामीजी महाराज ऊपर लिखे आदि इनके समस्त कलंकों को छुड़ाकर इनको देवताओं की कोटी में लाकर गिनावें अर्थात् स्पष्ट कहें और स्पष्ट लिखें कि "विद्वांसो हि देवाः" और इसी प्रकार इनके वेद और देश की महिमा सर्वत्र प्रकाशित करें उनकी ये लोग सर्वत्र निंदा फैलावें और उनसे बराबर द्वेष करें॥

इत्यादि इनके सब चरित्र और लक्षणों से क्या प्रतीत करना चाहिये इसका विचार स्वयं यहां के विचार शील करलेवें इति दिग् ॥

जिस प्रकार यह ऊपर का लेख काशीवालों की बुद्धि का नितांत प्रदर्शक है- उसी प्रकार नीचे लिखा

लेख स्वामीजी महाराज के गुण गौरवों का मानो
अद्भुत है क्योंकि उक्त लेख उस पुरुष के हस्त
है जिसने प्रतिज्ञा कर छोड़ी है इस बात को कि च
जिस नरक में चाहो जितने दीर्घ काल तक परमा
निवास क्यों न दे परंतु दयानंद और दयानंदीयों की
वत् शरीरपात, बनेगी उतनी मिथ्या बुराई लिखूं
वही कट्टर विरोधी भ्रष्टप्रतिज्ञ होकर अपने इसी
में श्री स्वामीजी २ करके लिखे यह परमाश्चर्य की
न अथवा स्वामीजी महाराज के सत्कर्म का पूर्ण प्रम
है॥

(अपूर्व लेख)

॥ मित्रविलास लाहौर सन् [illegible] का ॥

॥ अंक २१ ॥

सदैव प्रति दिवाली को सब आर्य अपनी २ स
में एकत्र हो श्री स्वामी दयानंद सरस्वती जी का गु
वाद किया करें और मन खोल के धन दें जिससे
स्वामीजी का स्मारकचिन्ह अनायास पूर्ण हो, न
ताली पीटने से कुछ लाभ न होगा आर्य समाजों
म लेना चाहिये कि उनकी खातिर उनके स्वामी

क्या २ कष्ट और परिश्रम नहीं उठाये यदि उनको भुला कर ये सब लोग ऐसे निर्लज्ज हो जायंगे कि एकस्मारक चिन्ह भी अपने गुरुजी के नाम का नहीं बना सकेंगे तो और को लाभ पहुंचाने की इनसे क्या आशा हो सकती है गुरु भक्ति दिखानी इसे हम परम प्रशंसनीय समझते हैं और इसी लिये बड़ी उत्कंठा से उसदिन की प्रतीक्षा कर रहे हैं जबकि वे हजारों नई सभ्यता से सज्जित लोग कुछ गुरुभक्ति दिखाने में कमर बांधेंगे और गपोड़ संखी ही बनना हो तो उनकी इच्छा, परंतु यदि दमड़ी २ भर भी गुरुभक्ति इनलोगों में होगी तो अब प्रथ जिस २ प्रकार के अमीर लोग दयानंदी समाजों में हैं वैसी ही अमीरी गुरुभक्ति भी इनकी ओर से प्रगट होनी चाहिये- और धन एकत्र करने की यदि युक्ति उनको विदित न हो तो हम बताते हैं कि वे लोग अपने गुरुजी की समाधि बना उसमें स्वामीजी की मूर्ति पधरा देवें तहां विवाहादि उत्सवों में अपने २ वित्तानुसार धन चढ़ावें इस द्रव्य से कालिज क्या बृहत् कालिज हो सक्ता है ॥

देशहितैषी - प्रिय पाठको यद्यपि हमारी सम्मति उक्त सहयोगी के लेख पर सर्वांश नहीं है और न हमको इन शब्दों पर जोकि आर्यों को कहे हैं रोष करना उचित है क्योंकि यदि हमने इस महद्कार्य अर्थात् वैदिक कालिज को सांगोपांग पूर्ण कर दिखाया तो अनेक हमारी प्रशंसा करेंगे नहीं तो एक भित्तविलास ही क्या तुम स्वयं

परस्पर एक दूसरे को निर्लज्ज कहते न लज्जाओगे अस्तु हम सं० मित्रविलास को उसके इस कर्तव्य पर (कि जन्म भर में आज उसने निष्कपट हो स्वामीजी को श्रीमद्दयानंद सरस्वती इत्यादि शब्दों से पुकारा और एक मात्र सच्चे मन से देशहितैषिता पर परामर्श दिया) अनेक धन्यवाद देते और कहते हैं कि भाई श्रीस्वामीजी महाराज का उद्योग खास किसी एक जथा के लिये नहीं था बरन वे सम्पूर्ण भारत के हितैषी थे, यदि ऐसा पुरुष किसी अन्य देश वा अन्य जथा के मध्य उत्पन्न हुआ होता तो हम नहीं कह सक्ते कि उस देश के निवासी क्या२ उपकार न करलेते परंतु हम अपने इस अभागे भारत पर शोक करते हैं कि जहां के मनुष्य अपने परम मित्र को शत्रु तुल्य जानने और अपने पैर में आप कुल्हाड़ी मार अपना सर्व नाश करलेने कोही सद्धर्म और उन्नति समझते रहे॥

देखिये बंधुगण परिणाम में हमारे परममित्र देशहितैषी ने भी अपना वैसाही शोक भारतवासियों की असहबुद्धि पर प्रकाशित किया जैसा कि स्थालांतरों में अन्य सत्पुरुषों का लिख दिखाया है, सिद्धांत सबका यही एक है कि हुआ सो हुआ आगे के लिये तोभी हमारे भाई सुचेत हो जायं और सोचें कि आर्यावर्त भर के हज़ारों अज्ञ वा पेटार्थू हम पंडितों ने केवल स्वार्थवश होकर श्रीमान् जगदुपकारक स्वामीजी महाराज के

साथ नानाप्रकार का छल कपट दुराग्रह और पक्षपात किया उससे स्वयं सर्वत्र समझदारों के समीप कलंकी और महापातकी ठहरे परंतु श्रीमान् स्वामीजी महाराज को कुछ भी हानि न होकर वे उन सबको परास्त करते हुए अपनी तपस्या, सत्यता और पूर्ण विद्वत्ता के प्रबल प्रभाव से यहां से लंदन (*) और आमेरिका तक समस्त देश देशांतरों में जैसे कुछ कि आदरणीय और सुविजयी होना चाहिये थे वैसे अच्छे प्रकार से हुए तथैव भूमंडलभर में उनका सब ज्ञानवान् लोग अनेक विध सुयश और हमारा अपयश गान कर रहे हैं अतः अब तो भी हम सब लोग स्वकलंक छुड़ाने के लिये सन्मा

(*) देखिये श्रीमान् का प्रतापबल कि उनको शरीर परित्याग किये चतुर्थवर्ष है तथापि जिधर देखो उधर उनके प्रशंसात्मक ग्रंथ बन रहे हैं और उसीप्रकार नित्यनये आर्य समाज जहां तहां बैठते जाते हैं—इहतो यह है कि इस वर्ष जैसा इधर कलकत्ता में समाज स्थापित हुआ उसीप्रकार उधर विलायत में लंदन ऐसी विधर्मियों की राजधानी में आर्य समाज स्थापित होगया उस्में प्रति रविवार को बड़ी धूमधाम के साथ वैदिक व्याख्यान होते हैं जिस्में बड़े बड़े प्रतिष्ठित अंग्रेज़ आते और व्याख्यनों को सुन सुन कर वैदिक मार्ग को बराबर सराहते हैं—और तत्रस्थ परम प्रतिष्ठित आर्यों का राजगृह में बड़ा मान है—वे वहां समाज मंदिर बनाने की तय्यारी में लग रहे हैं अभी वहां पर यहां का एक ब्राह्मण मरा तो उसकी दाह क्रिया वैदिक रीति से उन्होंने की यह नया उदाहरण वहांपर आर्यों ने समुपस्थित किया इसका उनको सब वहां वाले सभ्य धन्यवाद दे रहे हैं ॥

र्गी पर आजायं अर्थात् श्रीमान् परमदयालु स्वामीजी महाराज के उपदेशों के अनुकूल चलकर स्वदेश की भलाई करने में तत्पर होजायं, इसीसे नर जन्म की सफलता होसक्ती है अन्यथा कदापि नहीं ॥

बस बंधुगण - अब मैं उस परमाद्भुत चरित्र को समाप्त करता हूं जिसका वर्णन मुझ ऐसे किंचित्त शतवर्ष में भी पूर्ण नहीं कर सक्ते हैं परंतु सत्पुरुषों का कथन है कि "सर्वे सत्ये प्रतिष्ठितम्" सत्य ऐसी कुछ अद्भुत वस्तु है कि जिसके ग्रहण से थोड़ेही में अपार और अपरमित का समावेश होजाता है, हां समझने वालों में वैसी पवित्र बुद्धी चाहिये जिससे कि संकेत मात्र में सब यथावत् जान लिया जा सक्ता है कहा भी है कि "अप्रतिबोधे श्रोतारि वक्तुर्वाक्यं प्रयाति वैकल्यम्" अर्थात् श्रोताओं के होने से वक्ता का परिश्रम व्यर्थ हो जाता है सारांश यह है कि सत्य वक्ता और चित्त श्रोताओं के संयोग से ही सर्व कार्यों की सिद्धी हो सक्ती है नहीं तो नहीं ऐसा सृष्टिक्रम है परंतु परम शोक का विषय है कि इन बातों का विवेक और विचार भारतखंड से साफ उठगया अब तो यहां काव्य रचना जितनी मिथ्या लिखी जाय उतनीही कविराज की प्रशंसा होती है जैसे तु० कृ० रा० में कुंभकर्ण की प्रशंसा में "योजन चार मूछ रहे ठाढे-भागवत में राजा नृग की प्रशंसा में "यावन्त्यः सिकता भूमौ आदि- इत्यादि काव्य रचना में परम प्रसिद्ध पंडितवर

गंगाधर शास्त्री तैलंग विरचित पं० बालशास्त्री जी का जीवन चरित्र देखने योग्य है (*) यह पुस्तक ४० पृष्ठ की संस्कृत भाषा में है - पं० बालशास्त्री जी और उनके शिष्य मंडी के राजा विजयसेन की प्रशंसा लिखते २ यह प्रकाशित किया है कि इन दोनों के समान इस जगत् में कोई देखा न सुना परन्तु वास्तव्य में बालशास्त्रीजी को लोगों ने इस भरतखंड में जैसा कुछ समझा है सब इस ग्रंथ में कई ठौर प्रकाशित हो चुका है उसी प्रकार उनके शिष्य मंडी वाले को भी यहां के दस वर्ष तक के लड़के अच्छे प्रकार जानते हैं कि वे यथार्थ में अथवत् नाम मात्र के पहाड़ी (जंगली) राजा हैं ... वैभव और उपहास्य प्रकृति को महीमहेंद्र, पुण्य शौर्य, सार्थाभिधादि विशेषण देकर शास्त्रीजी का ... व दिखाना जगत् में स्वयं असीम उपहास्य ... वेदन वित्तों का काम नहीं, अथवा इनकी इस प्रकार प्रशंसा इस ग्रंथ में लिखने का यह हेत्वंतर कदाचित् होय कि जैसा इस बेचारे परम मुग्ध को अब तक परम निठुर हो बालशास्त्रीजी ने लूटा वैसाही उसका रहा सहा धन हमारे हाथ आजाय, क्योंकि बालशास्त्री के पीछे काशी में विशेष विख्यात अब हमी हम तो हैं - कुछ हो इन लोगों की वृत्ति और आचरण सरासर विद्वत्ता के विरुद्ध है सत्य कहा है "गुरवो बहवः सन्ति शिष्यवित्तापहारकाः" परमात्मा बचावे इन गुरुलोगों

(*) इस असद् काव्य का उदाहरण आगे ... दो श्लोक धर कर दिखाया गया है साथही उसके सत्काव्यत्व का भी निदर्शन कराया है

के फंदे से भारत के भोले राजाबाबुओं को ॥

बंधुगण-इन काशी, प्रयाग और पूना आदि नगरों के विद्वानों से अपना बहुत कुछ नैकट्य है अर्थात् उनका व अपना खाना पीना आदि व्यवहार तथा शरीर संबंध एक होने के कारण उनकी चहुं ओर होती हुई निंदा देख सुन, अपना चित्त बहुकाल से अतीव खिन्न हो रहा था अतः उन समस्त आत्मीयों को समझाकर सुचेत करना अपना परम धर्म समझ यह सर्व परिश्रम किया गया है। इतने पर भी यदि वे भाग्यवश न मानेंगे तो भी जगत् में इस पर विचार करने वालों की न्यूनता न रहेगी ...त् कोई न कोई माई के लाल अवश्य इन ले... फल कर छोड़ेंगे ऐसा इस ग्रंथकार को उस सर्व... तथा ... कृपा से पूर्ण विश्वास है अतएव चलते चल... इस विषय को यहां एतदर्थ छेड़ दिया है कि आगाड़ी के लिये इस देश से मिथ्या काव्यरचना का प्रचार उठ जाय तो भी अवश्य विद्वानों की अतिशय शोभा और प्रतिष्ठा का हेतु होगा क्योंकि स्पष्ट कहा है "नान्रतात् पातकं परम्" इस पर यदि विद्वानों ने ही ध्यान दिया तो फिर कौन देवेगा ॥

॥ के० वा० श्रीयुत बाल ॥

॥ शास्त्रीजीका जीव ॥

॥ नचरित्र ॥

वृद्धानां समुपासने रघुपति, र्नीतौ तु वाचस्पतिः, सद्धर्मा-
चरणे च धर्मतनयः, श्रीहर्ष सूक्तोक्तिषु ॥ त्यागे कर्णवि-
वर्णता वहेगुणो लक्ष्म्यां कुवेराधिको नास्माभिः सदृशो-
ऽस्य कोपि विबुधो दृष्टः श्रुतो वाधुना ॥१॥
हस्वा मप्यनुयाति यस्य बिजयः सेना समित्संजयो लि-
म्पन् शीतगिरिं सितेन यशसा पिष्टं पिनष्टीव यः॥
सोयं खंडितवैरिमंडलधनु र्मंडीधराखंडलो धत्ते मूर्ध्नि
सुवर्णरत्नघटितां कोटीर वद्द यन्नरम ॥२॥

॥अहह॥ स्याद् गंगाधर शास्त्रिणः कीर्तिरियं विद्वज्ज-
नानां मुदे ॥

बंधुगण- दोसौ से अधिक श्लोक संख्यात्मक
ग्रंथ में से यहां पर स्थाली पुलाकन्यायवत् निदर्शना-
र्थ केवल दो श्लोक लिये गयेहैं, तनक सोचिये तो स-
ही इनका भाव क्या है ? पश्चात् उनमें से भी विस्तार
भयात् बहुतसा अंश छोड़कर केवल चारही बातों का
शास्त्रीजी से प्रश्न किया जाय कि क्या सचमुच पं० बा०

शास्त्रीजी धनमें कुबेर से अधिक और दान में कर्ण व
सूरत बिगाड़ देने वाले पुरुष काशी में होगये हैं, त
थैव बतावें ग्रंथकार जी महाशय कि मंडीवाले राजा
ने कहां २ तीरन्दाज़ी करके (*) किन २ राजाओं परा
जय प्राप्त किया और किन विशेष गुणों वा कारणों
वह इन्द्र सम पराक्रमी लिखा गया है। ऐसी विचि
और असंभव रचना रच श्रीयुत गंगाधर शास्त्रीजी
महाराज आशा करते हैं कि मेरी यह करतूत विद्वज्
नों को प्रीतिप्रदा हो- कहो कैसे वह पुष्पवती वा
कूष्माण्डायिता होसक्ती है, छिः॥

अस्तु अब तनक निरपक्ष हो आगे निहार कर देखें
श्रीशास्त्रीजी महाराज सतकाव्य रचना को, कि जि
समें कोई एक भी अक्षर पकड़के योग्य नहीं, और
यही लक्षण श्रीमान् स्वामीजी महाराज के रत्नाव
भाषा ग्रंथकारों में भी चाहो जहां लौट पलट कर देख
लें, कभी कहीं तर्कित दोष अर्थात् अत्युक्ति नहीं पाई
जावेगी, ऐसोंही को सतकवि और सत्कृष्य कहते हैं

(*) जिसके धनुष्य की इतनी प्रशंसा लिखी उस बेचारे ने कभी धनुर्बाणों को ह
थ सेभी नहीं छुआ- हां निःसंदेह यह राजा अपने यहां समुपस्थित द्रव्यपंडितों
से अपनी बाल भौंरी और भ्रकुटी व नेत्रों को दिखा २ कर तारीफ कराता रहता है
तद्रूप धनुर्बाणों से यदि किसी का विजय किया हो तो वेही गुण लेखनीय
थे, सो लिखे नहीं। यह द्वितीय प्रमाद है॥

ोर ऐसेही पुरुष आप्त कहाकर निरंतर माननीय हो
ाते हैं अन्यथा कभी कोई काव्य विद्वज्जनों को प्रीति
ः नहीं होता, कारण यह है कि ऐसा करने से अपा
ा पुरुष के वास्तविक गुणों का पता नहीं चलता और ऐ
स्तावक सर्वत्र विद्वत्समाज में आतिनिंद्य ठहराते
, इसलिये ... प्रार्थना की जाती है कि हे भाई ब्र
ाण अपना प्रत्येक काम विवेकयुक्त करो जिससे तु
ारा कहीं उपहास न हो॥

(पुनस्तदेव प्रकृतम्)

ः पाखंड मतैक खंडनरतो वेदाख्यशास्त्रैः शुभैः। शा
ाणां बलवद्बलेन सततं संसेव्यमानो युधि॥
त्पक्षः परिपन्थिछलेन विजयस्तंभान् समारोपयन्।
स्त्वन्यः पुरुषो हि तेन सदृशो लभ्येत कुत्राधुना
॥१॥ अज्ञान तिमिरव्रजनाशको यो वेदोपदेशकदिन
ुति रस्तमापत्॥ तत्कृत्य मार्यगणः कथितुं स
र्थो धैर्यं विधेय मवलंब्य तदुक्तियुक्तीः॥२॥(*)

बंधुगण। जिन श्रीमान् जगन्मान्य महानुभा
व के यत्किंचित् गुणगान में यह लघुग्रंथ सिद्ध हु
ा उन्हीं के प्रशंसात्मक ये ऊपर लिखे दो श्लोक हैं-

* ॥ भाषा काव्य भी देखिये॥
ृया को सागर आनन्द में विकसत सुख विद्या को निधान पूर्व ऋषिन स-

चलने चलाते इनका भी कुछ स्पष्टार्थ सुन लीजिये-स
वि लिखते हैं कि पाषाण नौकाश्रितत्वात्- विपत्ति मह
दधि में डूबते हुए इस परमवृद्ध भारत का समुद्धार क
ने की बुद्धि से जिसने शास्त्रों का बल लेकर वेदरूपी
स्त्रों से सदा समरांगण में अपने सन्मुख आये हुए वि
क्षियों के पाखंडमत रूप अपार सैन्यदल को अनेक
छिन्न भिन्न करके सर्वत्र सर्व दिशाओं में सत्यस सम
त समाजरूपी विजयस्तंभों को बहुत गहरी नीव लगा
समारोपित कर दिया उनके समान पुरुषार्थी अन्यपुरुष
इस जगत् में हम भारत निवासियों को, हा!!! अब क
मिलेगा ॥ पुनश्च हे आर्यगण जिस, अज्ञान जनित य
न्त तिमिर कार्यों के विनाशक, वेदोपदेशकसूर्य ने, इस
सार के अनेक अपरिमित उपकार सिद्ध किये वह संप्र
अस्त होगया और उसके गुणग्रामों का यथावत् वर्ण
करने वाला इस अवनितल पर इस समय कोई है नहीं
ऐसी शोकदशा में पतित, परमार्त भारत को सर्वथा यह हा

मान है। बाणी को है जिव्हा पर निवास, प्रकाशमान करत है विलास, शोक
सब जहान है॥ देवासुर समरमध्य, सत्यकी कृपाण लिये, धारण किये विद्या
को मानों धनुबाण है। याही ने विजय कीन्हो दीनो सब कपट खोलि, स्वामीद-
यानंदजीको प्रगट प्रमाण है ॥१॥ सत्यतो यह है कि लोगों ने आलसंडकोच
ल पर जो यशोगान किया है उसमें भी अत्युक्ति छ पाई है॥

त है कि वह धैर्यावलंबी होकर अपने परमगुरु
उक्ति युक्ति अर्थात् उसके कहे लिखे परमपावन
। (नुसखों) को अच्छे प्रकार ढूंढ़खोजकर अपने
न्ना क सन्मुख लाकर धरे पश्चात् उनको खूब पहुंसम
कर तदनुकूल अपना शुद्ध आचरण करके निर्दोष व
ामय होकर दोनों लोकों का सुख लहे इति ॥

॥ अथ विज्ञानाष्टकम् ॥

मद्दयानंद गुरुं परात्परं भजामहे सन्तत मिष्ट सिद्धिदम्
तीरयन्तः प्रणिपत्य सादरं तादात्म्यगाः स्युर्विगत द्विधा-
ा: ॥१॥ संसारस्यौषधं नित्यं यो न वेत्ति विमूढधीः॥ सगु
निर्गुणं वापि को न्यस्तस्मा दचेतनः ॥२॥ अथवा सर्वदेहे-
समवस्थित मीश्वरम् ॥ न जानाति विमूढात्मा को न्यस्त-
ादचेतनः ॥३॥ ब्राम्हणत्वं प्राप्य लोकेस्मिन् न पिबेद् ब्रम्ह
रसम् ॥ तृष्णाशांतिस्तस्य नास्ति बहुमात्रस्नतो द्ववैः॥४॥
र्म,ज्ञानं द्वयं लोके प्रमाणं वर्तते खलु॥ कर्मणो प्यधिकं
नं तद्वया त्पतित श्च्युतः ॥५॥ ब्राम्हणत्वं प्राप्य लोकेऽ
र् सद्गुरो रुपदेशतः॥ न जानाति परं ब्रम्ह तद्विना पतित
ः॥६॥ अद्वैतेन विना मोक्षो न जीवस्येति निश्चयः॥ तस्मा
त मीशानं गुरुं वंदामहे वयं ॥७॥ इह सकललोकैः सेव्यमानो
म,विदित सकल वेदः सर्वशास्त्रार्थवेत्ता। मताविदखिलका-
ायं नराणां हत्वा, दिशतु परमतत्वोद्धार मोक्षं स एव॥८॥

इति विज्ञानाष्टकम्

॥ अथान्तिमो विनयः ॥

आकल्प मेतत् परमार्थ बोधकं श्रीमद्दयानंद गुरोः सच्चिद्वृत्तमुक्तिप्रद मस्तु लोके, संसेवितं चार्यजनैर अद्वैतार्थप्रदं लोके अद्वैतार्थानुचिंतकैः ॥ गुरुकीर्तिप्रकाश्यं भवति ध्रुवम् ॥ २ ॥ गोपालरावहरिणा गुरोर्विजय मुत्तम रचितं येतु गृण्हन्ति लोके धन्या भवन्ति ते ॥ ३ ॥

(ओ३म्)

शंनो मित्रः शं वरुणः शंनो भवत्वर्यमा ॥ शंन इन्द्रो बृहस्पतिः विष्णुरुरुक्रमः ॥ १ ॥ ओं शांतिः शांतिः

॥ युगवेदांक चंद्रेऽब्दे ज्येष्ठे मासे सितेदले ॥
॥ राकायां रविवारे च ग्रंथोयं पूर्णतां गतः ॥ १ ॥

मितीज्येष्ठशुक्ला १५ सं० १९४४ वि०

संवत् ४ दयानन्दी —⊙— ता० ५-७-८७ ई०

विनायक मुकुन्दाख्यौ लक्ष्मीयो यस्य द्वौ सुतौ ॥
मुद्राकितं स कुरुते जानकी हरिजः कविः ॥ १ ॥

इति श्रीमत् परमहंस परिव्राजकाचार्य वर्य्य श्रीमान् पुण्य श्लोक शिखामणि स्वामी दयानंद सरस्वती दिग्विजयार्कीय तृतीय खंडे आत्मनिवेदनं नाम द्वादशो मयूखः ॥ १२ ॥ समाप्तोयं दिग्विजयार्काख्यः

अथ मदीयं वृत्तम्

प्रारम्भे - प्रथम बहुजन्म से इस ग्रंथकार का घराना भागवत सांप्रदायी होने के कारण इसका भी भक्तिभाव उसी के अनुकूल हो रहा था - अन्नोदकवशात् मथुरा में निवास पाया तो अतीव पुलकित हुआ उस दिन से वहां प्रत्यह परम भक्ति पूर्वक दोनों काल यमुनास्नान, संध्योपासन शिलार्च्चन भागवतादिका श्रवण व कीर्तन, मंदिरों का दर्शन, व आंकी करते और गोकुल, वृन्दावन, गोवर्द्धन, नंदगांव, बर्साने आदि स्थानोंके बहुवार सब प्रकार के उत्सवादि चरित्र और लीला देखते २ मनही मन संदेह हुआ कि हे भगवान् - यह क्या चरित्र और कैसा यह व्रज मंडल महाक्षेत्र है जहां सौ में दस पांच स्त्री पुरुषों को छोड़ और सब जिधर देखो उधर पापरतही दीखपड़ते हैं और इनसे अधिक बुरा आचरण इनके परम पूज्य आचारी, पुजारी, संत, महंत, कथक्कड़ और दोनों प्रकार के गुसांई लोगों का हो रहा है - यदि धर्म और धर्मस्थान इनको कहें तो पाप और पातकस्थान किनको कहना चाहिये - और सद्गति का काम वास्तव्य में क्या है क्या नहीं - इस अरुचि, शोक और सोच विचार में बहुत सा काल व्यतीत होकर भगवत् कृपा से मेरी बदली मथुरा से झांसी को फिर थोड़े दिन पीछे इटावे में हो आयी तहां कुछ काल पीछे बंबई के विष्णुबावा कृत वेदोक्तधर्मप्रकाश नाम का ग्रंथ मेरे हाथ लगा मानों मुझ डूबते हुए को वह बड़ा भारी एक सहारा मिला और उससे बहुत कुछ कर्तव्याकर्तव्य सूझने लगा इसके अनंतर अर्थात् ७ बर्ष पीछे मेरी बदली इस ज़िला फ़र्रुख़ाबाद को हो आई तहां संवत् २५ से श्रीमान् परम सद्गुरु स्वामीजी महाराज का समागम बारंबार पाकर अत्यन्त निर्मल और निःशंक हो गया अतः अपने शुद्धान्तःकरण से उनका गुण गान करते नहीं अघाता और अपना पूर्ण भाग्योदय

दय भी समझ रहा हूं और अतएव असभपुरःसर प्रार्थना करता हूं
इन महानुभाव के उपदेशों पर चलने ही से भारत की पूर्ण भला
मानो- मानो- मानो और सदैव स्मरण रक्खो कि आज दिन जो
यहां इसकी भलाई का काम हो रहा है वा आगे होगा वह सब इन्हीं
चितावनी का प्रतिफल है चाहो वह आर्य्य समाजियों के द्वारा
चाहो किसी और के विशेषु किम्बहुनेति शम् ॥

विरजानन्द दण्डी
सन्दर्भ पुस्तकालय
पुस्तक परिग्रहण क्रमांक 833
दयानन्द महिला महाविद्यालय, कुरुक्षेत्र